BAHN401CCT

हिंदी गद्य साहित्य

बी. ए.(हिंदी)

(चतुर्थ सेमेस्टर के लिए)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© **Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad**

Course : Hindi Gadya Sahitya

ISBN: 978-93-95203-81-4

First Edition: June, 2023

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	June, 2023
Copies	:	1000
Copy Editing	:	Dr. Wajada Ishrat, MANUU, Hyderabad Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Times & Business Enterprises, Hyderabad

Hindi Gadya Sahitya

For

B.A. Hindi

4th Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक	**इकाई संख्या**
• **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा,** असोसिएट प्रोफ़ेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, टी. नगर, चेन्नै	1, 2
• **डॉ. पूर्णिमा शर्मा,** हिंदी काउंसलर, डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद	3, 4
• **प्रो. गोपाल शर्मा,** पूर्व प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग, अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथियोपिया	5, 6
• **डॉ. शशिबाला,** हिंदी अध्यापक, केंद्रीय विद्यालय, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, शिवरामपल्ली, हैदराबाद	7, 8
• **डॉ. सुषमा देवी,** प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, सिकंदराबाद	9, 10
• **डॉ. मंजु शर्मा,** अध्यक्ष, हिंदी विभाग, चिरेक इंटरनेशनल स्कूल, हैदराबाद	11,12
• **डॉ. डॉली,** असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, गुरुनानक महाविद्यालय, चेन्नई	13,14
• **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी,** प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सेंट एंस जूनियर एंड डिग्री कॉलेज फॉर गर्ल्स एंड वुमेन, मलकाजगिरी, हैदराबाद	15,16
• **डॉ. वाजदा इशरत,** अतिथि प्राध्यापक/ असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा), दू. शि. नि., मानू	17,18
• **अविनाश के.,** असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(कॉण्ट्राक्चुअल), डॉ.बी.आर. अंबेडकर सार्वत्रिक विश्वविद्यालय, हैदराबाद	19, 20
• **डॉ. चंदन कुमारी,** पूर्व प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स श्री ए.के. दोषी महिला कॉलेज, जामनगर	21, 22
• **डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया,** असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज, मायाबंदर (अंडमान निकोबार)	23, 24

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम –समन्वयक	10

खंड/इकाई		**विषय**	**पृष्ठ**
खंड 1	**:**		
इकाई 1	:	आधुनिक हिंदी गद्य का विकास	13
इकाई 2	:	उपन्यास : परिभाषा, स्वरूप और तत्व	26
इकाई 3	:	स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यास	39
इकाई 4	:	स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास	52
खंड 2	**:**		
इकाई 5	:	जैनेंद्र : एक परिचय	66
इकाई 6	:	'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : कथासार	78
इकाई 7	:	'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : पात्र एवं चरित्र चित्रण	89
इकाई 8	:	'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : परिवेश एवं भाषा-शैली	101
खंड 3	**:**		
इकाई 9	:	कहानी : परिभाषा, स्वरूप और तत्व	112
इकाई 10	:	हिंदी कहानी : उद्भव और विकास	123
इकाई 11	:	निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व	135
इकाई 12	:	निबंध : उद्भव और विकास	147
खंड 4	**:**		
इकाई 13	:	प्रेमचंद और उनकी कहानी कला	159
इकाई 14	:	'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण	174
इकाई 15	:	जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला	185
इकाई 16	:	'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन	199

खंड 5 :

इकाई 17 : यशपाल और उनकी कहानी कला 213

इकाई 18 : ‘परदा ’कहानी : तात्विक विवेचन 224

इकाई 19 : उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला 234

इकाई 20 : ‘वापसी’ (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन 247

खंड 6 :

इकाई 21 : रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध 261

इकाई 22 : ‘लोभ और प्रीति’ (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना 274

इकाई 23 : हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध 287

इकाई 24 : ‘कुटज’ (हजारीप्रसाद द्विवेदी) की विवेचना 302

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना **316**

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/ असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा), दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/ असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा), दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना सन् 1998 ई. में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यता प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने का सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां है जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों

की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचार चलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए ह्रदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।

पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 5 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'हिंदी गद्य साहित्य' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के 'बी.ए (हिंदी) - चतुर्थ सत्र' के दूरस्थ माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग(यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी में गद्य लेखन 19वीं शताब्दी के मध्य अर्थात आधुनिक युग में शुरू हुआ। इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य हिंदी गद्य की विकासयात्रा के साथ विभिन्न गद्य विधाओं के स्वरूप से छात्रों को परिचित कराना है। साथ ही उन्हें विभिन्न गद्य पाठों के विश्लेषण, आस्वादन और समीक्षा करने की दृष्टि देना भी इसका प्रयोजन है। इन लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए संपूर्ण सामग्री को छः खंडों में संयोजित 24 इकाइयों के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

पुस्तक के पहले खंड में आधुनिक हिंदी गद्य के विकास का संक्षिप्त ब्योरा देने के बाद उपन्यास विधा पर चर्चा की गई है और आज़ादी से पहले और बाद के उपन्यास साहित्य के विभिन्न चरणों का परिचय दिया गया है। दूसरे खंड में एक प्रमुख उपन्यासकार के रूप में जैनेंद्र का परिचय देते हुए उनके कालजयी उपन्यास 'त्यागपत्र' पर विशेष समीक्षात्मक इकाइयाँ रखी गई हैं। तीसरा खंड कहानी और निबंध पर केंद्रित है, जहाँ इन दोनों विधाओं के शास्त्रीय स्वरूप और उद्भव तथा विकास पर प्रकाश डाला गया है। चौथे खंड में दो प्रमुख कहानीकारों के रूप में प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानीकला के बारे में बताते हुए उनकी एक-एक प्रतिनिधि कहानी का तात्विक विवेचन किया गया है। इसी प्रकार पाँचवाँ खंड यशपाल और उषा प्रियंवदा की कहानीकला और उनकी एक-एक प्रतिनिधि कहानी के तात्विक विवेचन पर आधारित है। पुस्तक का छठा खंड हिंदी के दो प्रमुख निबंधकारों आचार्य रामचंद्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पर आधारित है। इसमें इन दोनों की निबंध कला पर चर्चा करने के उपरांत इनके एक-एक प्रतिनिधि निबंध की विवेचना की गई है।

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी के छात्रों के लाभार्थ तैयार की गई इस समस्त पाठ सामग्री में विषय और प्रस्तुति की गुणवत्ता का निर्वाह करते हुए भाषा की सुबोधता और सहज प्रेषणीयता को ध्यान में रखा गया है। आशा की जाती है कि इस पाठ्यक्रम के अध्ययन से विद्यार्थियों की साहित्यिक समझ और भाषिक क्षमता दोनों में विस्तार होगा।

इस पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन लेखकों, विद्वानों, पुस्तकों, पत्रिकाओं और संदर्भ सामग्रियों से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञता प्रकट करते हैं।

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

हिंदी गद्य साहित्य

مولانا آزاد نیشنل اُردو یونیورسٹی
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 1 : आधुनिक हिंदी गद्य का विकास

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिंदी गद्य का विकास
1.3.1 गद्य की पृष्ठभूमि
1.3.1.1 ब्रजभाषा गद्य
1.3.1.2 खड़ी बोली गद्य
1.3.2 आधुनिक हिंदी गद्य का उद्भव और विकास
1.3.3 भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.5 छायावाद युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.6 छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.3.7 स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक
1.4 पाठ सार
1.5 पाठ की उपलब्धियाँ
1.6 शब्द संपदा
1.7 परीक्षार्थ प्रश्न
1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

आधुनिक काल को गद्य काल भी कहा जाता है। रामचंद्र शुक्ल ने इस काल को 'गद्य काल' कहा क्योंकि इस काल में गद्य का विकास हुआ। आधुनिक काल में अर्थात उन्नीसवीं शताब्दी में पद्य के स्थान पर गद्य को बढ़ावा मिला। उस समय के रचनाकारों ने समाज सुधार एवं जन जागरण के लिए गद्य का सहारा लिया। आधुनिक काल से पूर्व भी कुछ गद्य रचनाएँ प्राप्त हुई हैं लेकिन उनका विशेष महत्व नहीं है। गद्य का वास्तविक विकास आधुनिक काल से ही माना जाता है। छात्रो! इस इकाई में आधुनिक हिंदी गद्य के विकास की स्थिति पर चर्चा करेंगे।

1.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस पाठ्यक्रम के प्रथम इकाई में आधुनिक हिंदी गद्य के विकास के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- आधुनिक हिंदी गद्य के उद्भव और विकास के बारे में जान सकेंगे।
- हिंदी गद्य की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
- ब्रज भाषा तथा खड़ी बोली गद्य के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज की भूमिका पर प्रकाश डाल सकेंगे।

● विभिन्न युगों के प्रमुख गद्यकारों के योगदान को रेखांकित कर सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिंदी गद्य का विकास

छात्रो! वस्तुतः लोक से प्राप्त अनुभव और स्वभाव ही साहित्य का कच्चा माल है। इसे साहित्यकार अपनी कल्पना के माध्यम से एक नए रूप में प्रस्तुत करता है। लेकिन हर अभिव्यक्ति को साहित्य नहीं कहा जा सकता। आधुनिक काल से पहले काव्य का प्रचलन था। आधुनिक काल के आगमन के साथ ही गद्य का विकास होने लगा। आइए, गद्य के इस विकास पर चर्चा करेंगे।

1.3.1 गद्य की पृष्ठभूमि

उन्नीसवीं शताब्दी से पूर्व हिंदी साहित्य में गद्य की रचनाएँ अधिक नहीं थीं। उस समय साहित्य की भाषा ब्रज थी। भावों की अभिव्यक्ति काव्य-भाषा में होती थी लेकिन बोलचाल की भाषा तो गद्य ही थी। हिंदी गद्य के विकास की दृष्टि से ब्रज भाषा एवं खड़ी बोली गद्य में रचित रचनाओं के बारे में भी चर्चा करेंगे।

1.3.1.1 ब्रज भाषा गद्य

आधुनिक काल से पूर्व साहित्य की भाषा ब्रज भाषा ही रही। अतः आधुनिक काल से पूर्व जो गद्य रचनाएँ प्राप्त होती हैं उनकी भाषा ब्रज भाषा ही है। ब्रज भाषा में जब काव्य सृजन हो रहा था उसी समय जन साधारण में ब्रज भाषा का गद्य रूप विकसित होने लगा। साहित्यिक भाषा और बोलचाल की भाषा में अंतर होता है। संत, महात्मा, कवि आदि अपने-अपने मत या संप्रदाय के संदेश को जनता तक पहुँचाने के लिए ब्रज की बोलचाल की भाषा को अपानाने लगे। 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने यह स्पष्ट किया है कि हिंदी पुस्तकों की खोज में हठयोग और ब्रह्मज्ञान से संबंध रखने वाले कई गोरखपंथी ग्रंथ प्राप्त हुए हैं, जिनका रचना काल 1300 ई. के आसपास है। अतः इसमें संदेह नहीं कि हिंदी गद्य का प्रारंभिक रूप गोरखपंथी साधुओं की रचनाओं में मिलता है। यह राजस्थानी और ब्रज भाषा का मिश्रित भाषा रूप है।

ध्यान देने की बात है कि भक्तिकाल में कृष्णभक्ति शाखा के भीतर गद्य ग्रंथ मिलते हैं। गोसाईं विट्ठलनाथ ने 'शृंगार रस मंडन' नामक ग्रंथ में ब्रज भाषा गद्य का प्रयोग किया है। इसके गद्य रूप को रामचंद्र शुक्ल अपरिमार्जित और अव्यवस्थित मानते हैं। उदाहरण के लिए भाषा का स्वरूप देखें -

> "प्रथम की सखी कहतु है। जो गोपीजन के चरण विषै सेवक की दासी करि जो इनको प्रेमामृत में डूबि कै इनके मंद हास्य ने जीते हैं। अमरूत समूह ता करि निकुंज विषै शृंगाररस श्रेष्ठ रसना कीनौ सो पूर्ण होत भई।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, पृ.277)

इसके बाद दो और ग्रंथ लिखे गए - 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता'। इनका रचनाकाल विक्रम की 17वीं शताब्दी का उत्तरार्ध माना जाता है।

इनमें वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा प्रकट करने वाली कथाएँ अंकित हैं। इन कथाओं की भाषा बोलचाल की ब्रज भाषा है। एक उदाहरण देखें -

> "सो श्री नंदगाम में राहतो हतो। सो खंडन ब्राह्मण शास्त्र पढ्यो हतो। सो जीतने पृथ्वी पर मत हैं सबको खंडन करतो; ऐसो वाको नेम हतो।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, रामचंद्र शुक्ल, पृ.277)

संवत 1660 के आस-पास नाभादास ने ब्रज भाषा में 'अष्टयाम' नामक पुस्तक की रचना की थी। इसमें भगवान राम की दिनचर्या का वर्णन है। संवत 1680 के आस-पास वैकुंठमणि शुक्ल ने ब्रज भाषा गद्य में 'अगहन माहात्म्य' और 'वैशाख माहात्म्य' नामक दो छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ लिखीं। संवत 1767 में संस्कृत से कथा लेकर सुरति मिश्र ने 'बैताल पच्चीसी' लिखी। उस युग में ब्रजभाषा में गद्य की रचनाएँ कम लिखी जाती थीं। इसका प्रमुख कारण यह हो सकता है कि ब्रजभाषा में गद्य की क्षमता का विकास न हो पाना। ब्रजभाषा का क्षेत्र भी सीमित था। वह ब्रज क्षेत्र के बाहर संपर्क भाषा के रूप में स्थापित नहीं हो पाई। अतः गद्य का विकास उस तरह से नहीं हो पाया जिस तरह से होना चाहिए था। इसलिए खड़ी बोली ही गद्य की भाषा के रूप में विकसित हुई।

बोध प्रश्न

- हिंदी गद्य का प्रारंभिक रूप किनकी रचनाओं में मिलता है?
- वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा प्रकट करने वाली कथाएँ किन ग्रंथों में अंकित हैं?
- 'शृंगार रस मंडन' की भाषा के संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का क्या कथन है?
- 'बैताल पच्चीसी' के रचनाकार कौन हैं?

1.3.1.2 खड़ी बोली गद्य

ब्रज भाषा गद्य की परंपरा कई कारणों से आगे नहीं बढ़ पाई। ब्रज भाषा के स्थान पर खड़ी बोली गद्य का विकास होने लगा। क्योंकि खड़ी बोली जन साधारण की बोलचाल की भाषा थी। धीरे-धीरे खड़ी बोली पद्य और गद्य की भाषा बनने लगी। ब्रज भाषा के बाद खड़ी बोली में साहित्य सृजन होने लगा। इसका क्षेत्र भी विस्तृत था। तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों ने भी खड़ी बोली के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

खड़ी बोली 14 वीं शती में दिल्ली और उसके आस-पास के क्षेत्रों में बोली जाने लगी थी। मुगल काल में संपर्क भाषा के रूप में खड़ी बोली का प्रयोग प्रारंभ हुआ। उनकी मातृभाषा फारसी थी। फारसी मिश्रित खड़ी बोली की एक नई शैली का जन्म हुआ जिसे हिंदुई, हिंदवी आदि नामों से जाना जाने लगा। अमीर खुसरो ने चौदहवी शताब्दी में खड़ी बोली में पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखीं।

अमीर खुसरो के बाद खड़ी बोली का विकास दक्षिणी राज्यों के रचनाकारों ने किया। दक्खिनी हिंदी के रूप में अनेक ग्रंथों की रचनाएँ हुईं। 1635 ई. में मुल्ला वजही ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सबरस' की रचना की। अकबर के समय गंग कवि ने 'चंद छंद बरनन की महिमा' नामक एक पुस्तक खड़ी बोली में लिखी थी।

वस्तुतः खड़ी बोली हिंदी का गढ़ मेरठ है। हिंदी साहित्य के इतिहास में जो स्थान अठारह सौ सत्तावन की क्रांति का है वही स्थान इस जनपद की साहित्यिक चेतना का है। हापुड़ क्षेत्र के बाबूगढ़ छावनी के समीप स्थित गाँव रसूलपुर में संत गंगादास का जन्म 1823 ई. में बसंत पंचमी के दिन हुआ था। ये आधुनिक काल में 'खड़ीबोली के प्रथम कवि' हैं। इन्हें 'खड़ी बोली के पितामह' भी कहा जाता है।

अठारहवीं शताब्दी में रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योगवशिष्ठ' नाम का गद्य ग्रंथ खड़ी बोली में लिखा था। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'भाषा योगवशिष्ठ' परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक है और रामप्रसाद निरंजनी प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक।

बोध प्रश्न

- खड़ी बोली के पितामह कौन हैं?
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक कौन सी है?
- मुगल काल में किस भाषा शैली का विकास हुआ?

1.3.2 आधुनिक हिंदी गद्य का उद्भव और विकास

आधुनिक हिंदी खड़ी बोली गद्य के विकास में फोर्ट विलियम कॉलेज (1800) की भूमिका को नहीं भुलाया जा सकता। भारत में अंग्रेजों ने अपना राज्य स्थापित किया। उस समय उन्हें भारत की भाषा सीखने की आवश्यकता हुई। इस हेतु उन्हें उर्दू और हिंदी दोनों प्रकार की पुस्तकों की आवश्यकता हुई। इसलिए फोर्ट विलियम कॉलेज की ओर से जॉन गिल क्राइस्ट के निर्देश में उर्दू और हिंदी गद्य पुस्तकें लिखने की व्यवस्था की गई। लेकिन उसके पहले भी हिंदी खड़ी बोली में गद्य की कई पुस्तकें लिखी जा चुकी थीं। मुंशी सदासुखलाल की 'ज्ञानोपदेशावली' और इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' लिखी जा चुकी थीं।

छात्रो! भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के कारण कई परिवर्तन सामने आने लगे। उनका प्रभाव भारतीय जनजीवन पर पड़ने लगा। इनमें से कुछ परिवर्तनों का संबंध हिंदी गद्य के विकास के साथ है। इनमें कुछ कारण इस प्रकार हैं -

अ. धर्म : भारत धर्मनिरपेक्ष देश है। यहाँ सभी धर्मों के लोग समान रूप से मिलकर इस देश के विकास में योगदान देते हैं। भारत में ईसाई मिशनरियों की संख्या बढ़ने लगी और उनकी गतिविधियाँ बढ़ने लगीं। इन गतिविधियों ने हिंदी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन धर्म प्रचारकों ने प्रचार के लिए हिंदी गद्य में छोटी-छोटी पुस्तकें तैयार की। बाइबल का हिंदी गद्यानुवाद किया गया। इसने भी हिंदी गद्य के विकास में महती भूमिका निभाई।

आ. पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन : अंग्रेज अपनी सुविधा हेतु मुद्रण, यातायाता और दूरसंचार के साधनों का प्रयोग करने लगे। अनेक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। पुस्तकें प्रकाशित होने लगीं। परिणामस्वरूप हिंदी गद्य लेखन तेजी से विकसित होने लगा। 1826ई. में पंडित जुगल किशोर शुक्ल ने हिंदी के प्रथम साप्ताहिक पत्र 'उदंत मार्तंड' का प्रकाशन प्रारंभ किया। लेकिन 1827 ई. में यह बंद हो गया। 1829 ई. में 'बंगदूत' का प्रकाशन प्रारंभ

हुआ। 1845 ई. में 'प्रजामित्र', 'बनारस अखबार' तथा 1846 ई. में 'मार्तंड' का प्रकाशन हुआ। इन पत्र-पत्रिकाओं ने हिंदी गद्य को खूब विकसित और परिमार्जित किया।

इ. **शिक्षा का प्रसार** : मैकाले ने भारत में 1835 ई. में शिक्षा प्रसार के लिए अंग्रेजी शिक्षा पद्धति की नींव रखी। इससे पूर्व भारत में फारसी और संस्कृत के माध्यम से शिक्षा दी जाती थी। 1823 ई. में आगरा कॉलेज की स्थापना हुई। इसमें हिंदी शिक्षण का विशेष प्रबंध हुआ। 1824 ई. में फोर्ट विलियम कॉलेज में हिंदी पढ़ाने का विशेष प्रबंध किया गया। 1825 ई. से लेकर 1862 ई. के बीच शिक्षा संबंधी अनेक पुस्तकें हिंदी में प्रकाशित हुईं। उनमें से प्रमुख हैं पं. वंशीधर की पुष्पवाटिका, भारत वर्षीय इतिहास और जीविका परिपाटी।

ई. **समाज सुधार आंदोलन** : आधुनिक काल समाज सुधार का काल था। इसी काल में भारतीय समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों को दूर करने के लिए अनेक आंदोलन हुए। जनता तक अपनी बात को पहुँचाने के लिए समाज सुधारकों के लिए जनभाषा की आवश्यकता पड़ी। हिंदी गद्य के विकास में दयानंद सरस्वती (आर्य समाज), राजा राममोहन राय (ब्रह्म समाज), केशवचंद्र सेन (प्रार्थना समाज), विवेकानंद आदि समाज सुधारकों का योगदान उल्लेखनीय है।

बोध प्रश्न

- हिंदी गद्य के विकास के कुछ प्रमुख कारण बताइए।
- हिंदी गद्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं की क्या भूमिका रही?
- हिंदी के प्रथम साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन कब प्रारंभ हुआ? उस पत्र का नाम बताइए।

छात्रो! आपने गद्य के विकास के कुछ प्रमुख कारण जान ही हुके हैं। आइए, अब हम प्रारंभिक गद्य लेखन की चर्चा करेंगे।

फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद जॉन गिल क्राइस्ट ने हिंदी और उर्दू में पुस्तकें लिखवाने के लिए अनेक विद्वानों की नियुक्ति की। सदासुखलाल 'नियाज' फारसी के अच्छे कवि और लेखक थे। इन्होंने 'विष्णु पुराण' के उपदेशात्मक प्रसंग लेकर एक पुस्तक लिखी थी। इसके बाद उन्होंने श्रीमद्भागवत कथा के आधार पर 'सुख सागर' की रचना की। इसकी गद्य व्यवस्थित थी। इंशा अल्ला खाँ ने 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' लिखी। लल्लू लाल ने 'प्रेम सागर', 'बैताल पच्चीसी', 'सिंहासन बत्तीसी' आदि ग्रंथ लिखे। सदल मिश्र ने 'नासिकेतपाख्यान' लिखी। इसमें संदेह नहीं कि भारतेंदु के पूर्व खड़ी बोली गद्य को आगे बढ़ाने में सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, लल्लू लाल और सदल मिश्र प्रमुख हैं।

इसी प्रकार आधुनिक हिंदी गद्य के विकास में भारतेंदु से पहले दो राजाओं, राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' और राजा लक्ष्मण सिंह का योगदान उल्लेखनीय है। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' 'आम फहम और खास पसंद' भाषा के प्रबल पक्षधर थे। 'आम फहम' से उनका अभिप्राय है जनता की भाषा और 'खास पसंद' का अर्थ है उस जमाने का अरबी-फारसी पढ़ा शिक्षित समाज। वे ऐसी हिंदी चाहते थे जिसमें अरबी-फारसी के शब्दों का अधिक प्रयोग हो। इनकी कृतियों में राजा भोज का सपना, आलसियों का कोडा, वीरसिंह का वृत्तांत, अंग्रेजी अक्षरों को सीखने का उपाय, हिंदुस्तान के पुराने राजाओं का हाल आदि उल्लेखनीय हैं। राजा लक्ष्मण

सिंह हिंदी और उर्दू को दो अलग-अलग भाषाएँ मानते थे। उन्होंने 1841 में आगरा से 'प्रजा हितैषी' नामक पत्र निकाला। उन्होंने सरल, सुबोध और सरस हिंदी का आदर्श उपस्थित किया।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु के पूर्व खड़ी बोली गद्य को आगे बढ़ाने वालों का नाम बताइए।
- किस रचनाकार ने सरल, सुबोध और सरस हिंदी का आदर्श उपस्थित किया?

1.3.3 भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य-लेखक

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध तक हिंदी गद्य का व्यापक प्रसार हुआ। साहित्य रचना के पर्याप्त अवसर भी प्राप्त हुए। इसी समय भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850 ई.-1885 ई.) ने साहित्य के क्षेत्र में कदम रखा। इन्होंने हिंदी गद्य को एक नई दिशा दी। रामचंद्र तिवारी के अनुसार भारतेंदु हरिश्चंद्र 'आधुनिक हिंदी साहित्य के जन्मदाता और भारतीय नवोत्थान के प्रतीक' हैं तो रामविलास शर्मा अनुसार 'हिंदी की जातीय परंपरा के संस्थापक'। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने खड़ी बोली गद्य को साहित्यिक रूप प्रदान किया और इसी साहित्य के माध्यम से उन्होंने जन जन तक अपनी बात पहुँचाई। 'कवि वचन सुधा' (1867), 'हरिश्चंद्र मैगजीन' और 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' के माध्यम से उन्होंने हिंदी साहित्य को नया आयाम प्रदान किया। उन्होंने गद्य के विविध विधाओं जैसे नाटक, निबंध, समालोचना आदि में नई परंपरा का सूत्रपात किया। वे भाषा के विकास के प्रबल पक्षधर थे। उनका मानना था कि

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को शूल।

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने समय के अनेक गद्य लेखकों को प्रेरित किया। उनके संबंध में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का कथन है कि "साहित्य के एक नवीन युग के आदि में प्रवर्तक के रूप में खड़े होकर उन्होंने यह भी प्रदर्शित किया कि नए या बाहरी भावों को पचाकर इस प्रकार मिलाना चाहिए कि अपने ही साहित्य के विकसित अंग से लगें। प्राचीन नवीन के इस संधिकाल में जैसी शीतल कला का संचार अपेक्षित था वैसी ही शीतल कला के साथ भारतेंदु का उदय हुआ, इसमें संदेह नहीं।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.315)

भारतेंदु के कुछ मौलिक नाटक हैं वैदेही हिंसा हिंसा न भवति, प्रेम योगिनी, भारत दुर्दशा, नील देवी, अंधेर नगरी आदि। उन्होंने अनेक नाटकों का अनुवाद भी किया है। उनकी रचनाओं में प्रबल रूप से समाज सुधार और देशभक्ति की भावना को देखा जा सकता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के जीवन काल में ही लेखकों का एक मंडल तैयार हो गया। उन्हें भारतेंदु मंडल के नाम से जाना जाता है। भारतेंदु युग के प्रमुख गद्य लेखकों में बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन, प्रताप नारायण मिश्र, श्रीनिवास दास, राधाकृष्ण दास, जगन्नाथ दास रत्नाकर, बालमुकुंद गुप्त आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सभी लेखकों ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बालकृष्ण भट्ट ने 'हिंदी प्रदीप' के माध्यम से गद्य का विकास किया। वे अपने युग के सशक्त प्रगतिशील लेखक थे। उनके निबंध विचारात्मक होते हैं। मनोवैज्ञानिक विषयों पर गंभीर चिंतन का कार्य प्रारंभ करने का श्रेय भट्ट जी को जाता है। शुक्ल जी का कथन है कि "वे स्थान-

स्थान पर कहावतों का प्रयोग करते थे, पर उनका झुकाव मुहावरों की ओर अधिक रहा है। व्यंग्य और वक्रता उनके लेखों में भी भरी रहती हैं और वाक्य भी कुछ बड़े होते हैं। ठीक खड़ी बोली के आदर्श का निर्वाह भट्ट जी ने भी नहीं किया है। पूरबी प्रयोग बराबर मिलते हैं।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.318)। वे आँख, नाक आदि विषयों पर ललित निबंध भी लिखे। उनके उपन्यासों में सौ अजान एक सुजान तथा नूतन ब्रह्मचारी उल्लेखनीय हैं तो नाटकों में चंद्रसेन, शिशुपाल वध और पद्मावती।

प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' पत्रिका के माध्यम से हिंदी गद्य को आगे बढ़ाया। उनकी भाषा में व्यंग्यपूर्ण वक्रता को देखा जा सकता है। बालमुकुंद गुप्त ने हिंदी निबंध को समृद्ध किया। प्रेमघन ने आनंद कादंबिनी, नागरी नीरद जैसे साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी में आलोचना का सूत्रपात किया। 'परीक्षा गुरु' के लेखक श्रीनिवास दास ने कथा साहित्य के लिए बोलचाल की भाषा के प्रयोग का मार्ग प्रशस्त किया। इन लेखकों के साहित्य में राष्ट्रभक्ति को भलीभाँति देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- आधुनिक हिंदी के जन्मदाता कौन हैं?
- भारतेंदु मंडल के साहित्यकारों की प्रमुख प्रवृत्ति क्या है?
- भारतेंदु हरिश्चंद्र के संबंध में रामचंद्र शुक्ल का क्या विचार है?
- मनोवैज्ञानिक विषयों पर गंभीर चिंतन का कार्य किसने प्रारंभ किया?
- प्रेमघन ने किन साहित्यिक पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी में आलोचना का सूत्रपात किया?

1.3.4 द्विवेदी युग के प्रमुख गद्य-लेखक

इसमें संदेह नहीं कि भारतेंदु युग के लेखकों ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। खड़ी बोली को गद्य की भाषा के रूप में स्थापित किया। अनेक मौलिक एवं अनूदित ग्रंथ तैयार किए। फिर भी इनकी गद्य की भाषा में कई त्रुटियाँ थीं। इन त्रुटियों को दूर करने का श्रेय महावीर प्रसाद द्विवेदी को जाता है। इन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा को परिमार्जित किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी और सरस्वती एक दूसरे के पर्याय बन चुके थे।

1900 में सरस्वती पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। 1903 से लेकर 1920 तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व में इस पत्रिका ने प्रतिष्ठा प्राप्त की। उस समय राष्ट्रीय स्वर को दिशा देने में सरस्वती पत्रिका का हाथ है। इतना ही नहीं विज्ञान के क्षेत्र में भी प्रवेश करके यह सिद्ध किया कि हिंदी में भी कठिन से कठिन विषय को प्रस्तुत करने की क्षमता है। हिंदी गद्य विधाओं को संपन्न बनाने में इस पत्रिका ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भाषा में व्याप्त अनगढ़पन और अराजकता को दूर करके उसे सुगढ़ बनाने में इस पत्रिका का योगदान उल्लेखनीय है। महावीर प्रसाद द्विवेदी की इच्छा थी कि खड़ी बोली हिंदी अपना मानक रूप ग्रहण करे क्योंकि इसके अभाव में महान साहित्य की रचना संभव नहीं है। इसीलिए वे सरस्वती में प्रकाशन के लिए आने वाली रचनाओं की भाषा को सुधार करके उन्हें शुद्ध रूप प्रदान करते थे।

द्विवेदी जी ने अपने समय की राष्ट्रीय चेतना और नवजागरण की भावना को आत्मसात किया। इसीलिए वे मध्य युगीन आदर्शों का विरोध करते थे और रीतिकालीन कलारूपों को

अस्वीकार। उन्होंने अपने युग के साहित्यकारों से साहित्य को समाज से जोड़ने के लिए कहा। उनका मानना है कि देश की उन्नति के बारे में जानना हो तो उस देश के साहित्य का अवलोकन करना चाहिए। उन्होंने सरस्वती के माध्यम से प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, माधव मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, पद्मसिंह शर्मा, रामचंद्र शुक्ल, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध आदि के साहित्य को समाज तक पहुँचाया।

द्विवेदी युग में निबंध, नाटक, उपन्यास, कहानी, आलोचना आदि क्षेत्रों में अनेक साहित्यकार सामने आएँ। इस युग में नाटक के क्षेत्र में अंग्रेजी, बांग्ला और संस्कृत के नाटक अनूदित होकर हिंदी में आए। मौलिक नाट्य लेखन में चौपट चपेट, मयंक मंजरी (किशोरीलाल गोस्मावी), रुकमिणी परिणय (अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध') जैसे नाटक लिखे गए। ये सभी सामान्य नाटक थे जिन पर फारसी थियेटर का प्रभाव पड़ा।

उपन्यास के क्षेत्र में देवकीनंदन खत्री ने महत्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने चंद्रकांता और चंद्रकांता संतती के नाम से तिलिस्मी और ऐय्यारी उपनास लिखे। उन्होंने उर्दू-हिंदी के मिश्रित रूप को स्वीकारा। बाद में प्रेमचंद ने इसी भाषा रूप को अपने लेखन में अधिक विकसित किया। किशोरीलाल गोस्वामी ने छोटे-छोटे 65 उपन्यास लिखे। उन्होंने 'उपन्यास' नामक एक मासिक पत्र भी निकाला। इनके उपन्यासों में चपला, तरुण तपस्विनी, तारा, रज़िया बेगम, लीलावती, लवंगलता आदि उल्लेखनीय हैं। हरिऔध ने ठेठ हिंदी का ठाठ, अधखिला फूल, लज्जाराम मेहता ने हिंदू धर्म, आदर्श दंपति आदि उपन्यास लिखे।

द्विवेदी युग में कहानी के क्षेत्र में चंद्रधर शर्मा गुलेरी, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, राधिकाप्रसाद सिंह, प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद उल्लेखनीय हैं। निबंध के क्षेत्र में बालमुकुंद गुप्त, पूर्णसिंह और आलोचना के क्षेत्र में रामचंद्र शुक्ल इसी युग का देन है। बालमुकुंद गुप्त ने व्यंग्य और विनोद की शैली को अपनाया। उनकी रचना 'शिवशंभू का चिट्ठा' प्रसिद्ध है।

इन विधाओं के अतिरिक्त आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, यात्रा साहित्य, रेखाचित्र आदि नवीन विधाओं का सूत्रपात इस युग में हुआ।

बोध प्रश्न

- गद्य के विकास में 'सरस्वती' का क्या योगदान है?
- द्विवेदी युग के प्रमुख साहित्यकारों का नाम बताइए।

1.3.5 छायावाद युग के प्रमुख गद्य-लेखक

छायावादी युग में राजनीतिक दृष्टि से महात्मा गांधी का नेतृत्व जनता को सत्य, अहिंसा और असहयोग के माध्यम से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रेरणा एवं शक्ति प्रदान कर रहा था। 1919 ई. के प्रथम अवज्ञा-आंदोलन की असफलता, जलियाँवाला कांड तथा भगतसिंह की मृत्यु जैसी घटनाओं से जनता का मनोबल कम नहीं हुआ था। साइमन कमीशन के बहिष्कार तथा नमक-कानून-भंग जैसे जन आंदोलनों से इस तथ्य की पुष्टि होती है। (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.549)। सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों का प्रभाव छायावाद युग के गद्य साहित्य पर भी दिखाई देता है। द्विवेदी युग में हिंदी गद्य का व्याकरण सम्मत परिमार्जित

रूप स्थिर हो चुका था। अतः विभिन्न गद्य विधाओं का विकास स्वाभाविक था। इसलिए छायावाद युग का गद्य साहित्य द्विवेदी युग की तुलना में अधिक विकासशील और समृद्ध रहा।

नाटक साहित्य की दृष्टि से इस युग को 'प्रसाद युग' कहना उचित होगा। यद्यपि प्रसाद 1918 के पूर्व से ही नाटकों की रचना आरंभ कर दी थी, पर उनकी आरंभिक रचनाएँ (सज्जन, कल्याणी-परिणय, प्रायश्चित आदि) अपरिपक्क थीं। छायावाद युग में रचित अजातशत्रु, स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि नाटकों के माध्यम से प्रसाद ने हिंदी नाटक साहित्य को विशिष्ट स्तर और गरिमा प्रदान की। कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से प्रसाद के प्रमुख नाटक तीन हैं - स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि हिंदी नाटक को साहित्यिक भूमिका प्रदान करने का प्रयास सर्वप्रथम भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था। इस युग के अन्य नाटककारों में हरिकृष्ण प्रेमी (रक्षाबंधन, प्रतिशोध), लक्ष्मीनारायण मिश्र (अशोक, संन्यासी, मुक्ति का रहस्य, सिंदूर की होली), रामकुमार वर्मा (बादल की मृत्यु), उपेंद्रनाथ अश्क (लक्ष्मी का स्वागत) आदि उल्लेखनीय हैं।

हिंदी उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में छायावाद युग को 'प्रेमचंद युग' कहा जाता है। सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, निर्मला, गबन, कर्मभूमि और गोदान जैसे उपन्यासों के माध्यम से प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास साहित्य को मनोरंजन के स्तर से ऊपर उठा कर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया। "उन्होंने सामयिक समस्याओं को अपने उपन्यासों का आधार बनाने के बावजूद जीवन की सहज-सामान्य धारा को उचित महत्व दिया।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.560)। उन्होंने ईदगाह, नमक का दरोगा, पूस की रात, कफन जैसी अनेक कहानियों का सृजन किया। उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' नाम से आठ भागों में संकलित हैं। शिल्प और भाषा की दृष्टि से भी उन्होंने हिंदी कथा-साहित्य को विशिष्ट स्तर प्रदान किया। इस युग के अन्य गद्य लेखक हैं चतुरसेन शास्त्री, शिवपूजन सहाय, बेचन शर्मा उग्र, जैनेंद्र, भगवतीचरण वर्मा, राधिकारमण प्रसाद सिंह, वृंदावनलाल वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुदर्शन, विष्णु प्रभाकर, चंद्रगुप्त विद्यालंकार आदि।

निबंध और आलोचना के क्षेत्र में इसे 'शुक्ल युग' कहा जाता है। आचार्य शुक्ल के निबंध 'चिंतामणि' नाम से संलित हैं। अन्य साहित्यकारों में गुलाबराय, शांतिप्रिय द्विवेदी, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, श्यामसुंदर दास, रामकुमार वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं।

इस युग में विभिन्न गद्य विधाओं की उन्नति हुई। "प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद तथा रामचंद्र शुक्ल इस युग के ऐसे कृतिकार हैं, जिन्होंने एकाधिक गद्य-विधाओं को समृद्ध करने में उल्लेखनीय योगदान दिया।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ. 590)। यह युग काव्य के क्षेत्र में ही नहीं बल्कि गद्य के क्षेत्र में भी समृद्ध रहा।

बोध प्रश्न

- कलात्मक उत्कर्ष की दृष्टि से प्रसाद के प्रमुख नाटकों के नाम बताइए।
- प्रेमचंद की कहानियाँ किस नाम से संकलित हैं?
- छायावाद युग में किन कृतिकारों ने गद्य की विधाओं को स्मृद्ध किया?

1.3.6 छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक

हिंदी गद्य साहित्य की दृष्टि से यह युग सर्वांगीण उन्नति का युग है। इसी युग में भारत ने पराधीनता की बेड़ियाँ तोड़ी। इस युग में विभिन्न गद्य विधाओं का बहुमुखी विकास हुआ। इस युग के लेखकों ने कथासाहित्य, नाटक, आलोचना के साथ-साथ रिपोर्ताज और इंटरव्यू जैसे नए साहित्यिक विधाओं के माध्यम से भावों को अभिव्यक्त करने लगे। इस युग में राष्ट्र के नव निर्माण पर बल दिया जाने लगा। "कथ्य की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए सर्वथा नए प्रतीक, उपमान अथवा बिंब ही प्रयुक्त नहीं हुए अपितु फ्लैशबैक, चेतना-प्रवाह आदि शैलियों का भी प्रयोग किया गया।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.659)

इस युग के लेखक वस्तुतः मानव-मन के सूक्ष्म संवेदनाओं को सशक्त रूप से अभिव्यक्त करते थे। इस युग के गद्य साहित्य काव्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से वैविध्यपूर्ण है। इस युग के प्रमुख नाटककार हैं जगदीश माथुर (कोणार्क, पहला राजा), धर्मवीर भारती (अंधा युग), लक्ष्मीनारायण लाल (मादा कैक्टस, तीन आँखों वाली मछली), मोहन राकेश (आषाढ़ का एक दिन, लहरों का राजहंस), हरिकृष्ण प्रेमी (आहुति, स्वप्नभंग), जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद (समर्पण), चंद्रगुप्त विद्यालंकार (न्याय की रात), नरेश मेहता (सुबह के घंटे), मन्नू भंडारी (बिना दीवार का घर), ज्ञानदेव अग्निहोत्री (नेफ़ा की एक शाम) आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचंद के बाद हिंदी उपन्यास कई मोड़ों से गुजरता हुआ दिखाई पड़ता है। इस युग में साहित्यकारों ने अनेक प्रयोग किए। इस क्षेत्र में अज्ञेय (शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप), इलाचंद्र जोशी (घृणामयी, संन्यासी, ऋतुचक्र), यशपाल (दादा कामरेड), रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' (चढ़ती धूप), भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा), अमृतलाल नागर (बूँद और समुद्र, अमृत और विष), हजारी प्रसाद द्विवेदी (बाणभट्ट की आत्मकथा), रांगेय राघव (मुर्दों का टीला), नागार्जुन (रतिनाथ की चाची, बालचनमा), फणीशवरनाथ रेणु (मैला आंचल), रामदरश मिश्र (पानी की प्राचीर), धर्मवीर भारती (गुनाहों का देवता), निर्मल वर्मा (अंधेरे बंद कमरे) आदि का नाम उल्लेखनीय हैं। कहानी के क्षेत्र में विष्णु प्रभाकर, रामदरश मिश्र, निर्मल वर्मा, इलाचंद्र जोशी, रांगेय राघव, मार्कण्डेय आदि उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- कथ्य की कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए साहित्यकार क्या करते हैं?

1.3.7 स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखक

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद लोगों का मोहभंग होने लगा। मूल्य टूटने लगे। वैयक्तिक महत्वाकांक्षाएँ बढ़ने लगीं। ऐसे में साहित्यकारों ने यथार्थ स्थितियों को उजागर किया। मोहन राकेश ने 'अंधेरे बंद कमरे' के माध्यम से आस्थाविहीन समाज तथा अनिश्चित की स्थिति में लटके हुए मनुष्य को रेखांकित किया। इस दृष्टि से 'वे दिन' (निर्मल वर्मा), 'मछली मरी हुई' (राजकमल चौधरी), 'डाक बंगला' (कमलेश्वर), 'अपने से अलग' (गंगा प्रसाद विमल), 'यह पथ बंधु' (नरेश मेहता), 'राग दरबारी' (श्रीलाल शुक्ल), 'आपका बंटी' (मन्नू भंडारी), 'धरती धन न अपना' (जगदीश माथुर), 'चित्तकोबरा' (मृदुला गर्ग), 'आधा गाँव' (राही मासूम रज़ा), 'गोबर गणेश' (रमेशचंद्र शाह) आदि उपन्यास उल्लेखनीय हैं।

इस युग में कहानी को लेकर अनेक साहित्यिक आंदोलन हुए। कुछ प्रमुख कहानी आंदोलन हैं - नई कहानी (मोहन राकेश), अ-कहानी (गंगा प्रसाद विमल), सचेतन कहानी (महीप सिंह), समांतर कहानी (कमलेश्वर)। इसी समय आधुनिकताबोध की प्रवृत्ति उभरी। इसके परिणामस्वरूप "भुवनेश्वर की 'सूर्यपूजा' और 'भेड़िए' शीर्षक कहानियों को जैनेंद्र, अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी ने पल्लवित किया। 1950 के बाद की कहानियों में क्रमशः वैयक्तिकता का दबाव बढ़ता गया।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं. नगेंद्र, पृ.728)। प्रगतिवादी विचारधारा के प्रतिनिधि कहानीकार हैं यशपाल। अज्ञेय ने व्यक्ति के आत्मसंघर्ष का चित्रण किया है। इलाचंद्र जोशी ने अपनी कहानियों में मनोवैज्ञानिक केस हिस्ट्री प्रस्तुत की है। अमृतराय, मोहन राकेश, विष्णु प्रभाकर, भैरवप्रसाद गुप्त, राजकमल चौधरी, श्रीकांत वर्मा, उषा प्रियंवदा, महीप सिंह आदि इस युग के उल्लेखनीय साहित्यकार हैं।

कथा-साहित्य के साथ-साथ यात्रा-साहित्य, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, बाल साहित्य, लघुकथा आदि अनेक विधाओं का सूत्रपात हुआ है। आज का युग विमर्शों का युग है। स्त्री, दलित, आदिवासी, वृद्ध, किन्नर, किसान, अल्पसंख्यक, पर्यावरण आदि अनेक विमर्श साहित्य के केंद्र में हैं। प्रभा खेतान, अनामिका, मैत्रेयी पुष्पा, कृष्णा अग्निहोत्री, मृदुला सिन्हा, ओमप्रकाश वाल्मीकि, पुन्नी सिंह, सुशीला टाकभौरे, रणेन्द्र, रमेश उपाध्याय, मौआ माझी आदि अनेक साहित्यकार सामने आ रहे हैं। हिंदी गद्य-साहित्य का विकास निरंतर हो रहा है।

बोध प्रश्न

- कुछ प्रमुख कहानी आंदोलनों के नाम बताइए।

1.4 पाठ सार

छात्रो! आप इस पाठ के अध्ययन से इस बात से परिचित हो चुके हैं कि आधुनिक काल वास्तविक रूप से गद्य के विकास का काल है। इस काल से पहले भी हिंदी साहित्य में गद्य लेखन के कुछ ग्रंथ प्राप्त होते हैं। लेकिन इनका परिमार्जित नहीं है। अठारहवीं शताब्दी में रामप्रसाद निरंजनी ने 'भाषा योगवशिष्ठ' नाम का गद्य ग्रंथ खड़ी बोली में लिखा था। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 'भाषा योगवशिष्ठ' परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक है और रामप्रसाद निरंजनी प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक। आरंभिक गद्य लेखकों में सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, लल्लूलाल और सदल मिश्र प्रमुख हैं। इसी काल में हिंदी गद्य के स्वरूप को लेकर एक बहस भी छिड़ी। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' जहाँ हिंदी में अरबी-फारसी शब्दों को स्वीकार करने के पक्षधर थे वहीं राजा लक्ष्मण सिंह इन्हें हिंदी में स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे। भारतेंदु ने मध्यम मार्ग अपनाकर खड़ी बोली को गद्य के लिए अपनाया। आगे के साहित्यकारों ने इसी खड़ी बोली को साहित्यिक रूप में विकसित किया। भरातेंदु युग, द्विवेदी युग, छायावाद युग, छायावादोत्तर युग, स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों ने हिंदी गद्य के अनेक विधाओं को समृद्ध किया।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. हिंदी गद्य का प्रारंभिक रूप गोरखपंथी साधुओं की रचनाओं में मिलता है। यह राजस्थानी और ब्रज भाषा का मिश्रित भाषा रूप है।
2. 1635 ई. में मुल्ला वजही ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सबरस' की रचना की।
3. अकबर के समय गंग कवि ने 'चंद छंद बरनन की महिमा' नामक एक पुस्तक खड़ी बोली में लिखी थी।
4. आधुनिक काल में परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक 'भाषा योगवशिष्ठ' है। इसकी रचना रामप्रसाद निरंजनी ने की थी।
5. फोर्ट विलियम कॉलेज ने जॉन गिल क्राइस्ट के निर्देशन में हिंदी में पुस्तकें तैयार कराईं, जिससे हिंदी गद्य शैली का बहुत विकास हुआ।
6. भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना के कारण कई परिवर्तन सामने आने लगे। उनका प्रभाव भारतीय जनजीवन पर पड़ने लगा।
7. हिंदी गद्य के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान रहा।
8. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने जन साधारण की भाषा को साहित्य के लिए अपनाया। बाद के साहित्यकारों ने भी इसी भाषा को विकसित किया।

1.6 शब्द संपदा

1. अनगढ़पन = शिष्टता का अभाव
2. धर्मनिरपेक्ष = जो सभी धर्मों को समान मानता हो
3. परिमार्जित = स्वच्छ किया हुआ
4. हठयोग = नाथपंथियों में योग का एक प्रकार जिसमें कुंडलिनी जागरण कराकर सकारात्मक तक ले जाया जाता है।

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी गद्य के विकास के प्रमुख कारणों पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी गद्य के विकास में महावीर प्रसाद द्विवेदी और सरस्वती पत्रिका की भूमिका की चर्चा कीजिए।
3. स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों पर प्रकाश डालिए।
4. छायावादोत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों के बारे में लिखिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी गद्य के उदय की पृष्ठभूमि विवेचित कीजिए।
2. ब्रज भाषा गद्य के बारे में चर्चा कीजिए।

3. भारतेंदु युग के गद्य लेखकों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. छायावाद युग के कौन-सी सामाजिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर पड़ा? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'अष्टयाम' के रचनाकार कौन हैं? ( )
   (अ) विट्ठलनाथ (आ) नाभादास (इ) वैकुंठमणि शुक्ल (ई) सुरति मिश्र
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किसे प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक माना है? ( )
   (अ) रामप्रसाद निरंजनी (आ) गंगादास (इ) अमीर खुसरो (ई) सुरति मिश्र
3. आधुनिक काल में 'खड़ी बोली के पितामह' किसे कहा जाता है? ( )
   (अ) रामप्रसाद निरंजनी (आ) गंगादास (इ) अमीर खुसरो (ई) सुरति मिश्र
4. हिंदी के प्रथम साप्ताहिक पत्र का क्या नाम है? ( )
   (अ) बनारस अखबार (आ) मार्तंड (इ) उदंत मार्तंड (ई) प्रजामित्र
5. 'नासिकेतोपाख्यान' के रचनाकार कौन हैं? ( )
   (अ) सदल मिश्र (आ) लक्ष्मण सिंह (इ) वियोगी हरि (ई) इंशा अल्ला खाँ

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'परीक्षा गुरु' के लेखक............हैं।
2. मनोवैज्ञानिक विषयों पर गंभीर चिंतन का कार्य प्रारंभ करने का श्रेय............ को जाता है।
3. 'ध्रुवस्वामिनी' के रचनाकार .... हैं।
4. 'शिवशंभू का चिट्ठा' के रचनाकार............ हैं।
5. प्रतापनारायण मिश्र ने .... पत्रिका के माध्यम से हिंदी गद्य को आगे बढ़ाया।

III. सुमेल कीजिए -

1. राजा लक्ष्मण सिंह	(अ) भारतीय नवोत्थान के प्रतीक
2. अज्ञेय	(आ) सरस्वती
3. महावीर प्रसाद द्विवेदी	(इ) प्रजा हितैषी
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र	(ई) नदी के द्वीप

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 2 : उपन्यास : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मूल पाठ : उपन्यास : परिभाषा, स्वरूप और तत्व
2.3.1 उपन्यास : अर्थ और परिभाषा
2.3.2 उपन्यास : तत्व
2.3.3 उपन्यास : प्रकार
2.3.4 उपन्यास का रचनागत वैशिष्ट्य
2.4 पाठ सार
2.5 पाठ की उपलब्धियाँ
2.6 शब्द संपदा
2.7 परीक्षार्थ प्रश्न
2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि हिंदी साहित्य के आधुनिक काल को गद्य काल कहा जाता है। इस काल में गद्य साहित्य का उत्तरोत्तर विकास हुआ। साहित्य मनुष्य की संवेदनात्मक क्षमता का परिणाम है। साहित्य पाठक के हृदय को कोमल और संवेदनशील बनाता है। आधुनिक काल में साहित्य की अनेक विधाओं का विकास हुआ है। इस इकाई में आप उपन्यास साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस इकाई में उपन्यास के स्वरूप के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- उपन्यास के अर्थ को समझ सेकेंगे।
- अनेक विद्वानों ने उपन्यास की जो परिभाषाएँ दी उन्हें जान सकेंगे।
- इन परिभाषाओं के आधार पर उपन्यास के स्वरूप को जान सकेंगे।
- उपन्यास के तत्वों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- उपन्यास की रचना विधान को समझ सकेंगे।
- उपन्यासों के विविध प्रकारों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : उपन्यास : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

आधुनिक काल में गद्य की अनेक विधाओं का विकास हुआ है। इनमें से प्रमुख है उपन्यास। इसका दायरा विस्तृत है। इसमें यथार्थ एवं कल्पना मिश्रित कहानी को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत

किया जाता है। उपन्यास किसे कहते हैं? इसके क्या-क्या तत्व हैं? कितने प्रकार के हैं? आदि विषयों पर आगे चर्चा करेंगे।

2.3.1 उपन्यास : अर्थ और परिभाषा

छात्रो! उपन्यास के अर्थ और परिभाषा पर ध्यान केंद्रित करने से पहले इस शब्द पर विचार करेंगे। 'न्यास' शब्द में 'उप' उपसर्ग जुड़ने से उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति हुई। 'उप' उपसर्ग का अर्थ है समीप तथा 'न्यास' शब्द का अर्थ है रखना। अतः कहा जा सकता है कि उपन्यास का शाब्दिक अर्थ है 'समीप रखना'। आपके मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि किसके समीप रखना? उत्तर स्पष्ट है - मानव जीवन के समीप, क्योंकि उपन्यास में मानव जीवन का चित्रण होता है। इस विधा में मनुष्य के आस-पास के परिवेश को देखा जा सकता है।

'उपन्यास' शब्द संस्कृत की 'अस' धातु से बना है, जिसका अर्थ है 'रखना'। इसमें 'उप' और 'नि' उपसर्ग हैं, और 'धत्र' अर्थ प्रत्यय का प्रयोग है। इस प्रकार मोटे रूप में उपन्यास का अर्थ है उप स्थापन। इस विधा के विकास के साथ इस शब्द के अनेक लाक्षणिक अर्थ बनते गए, अलग-अलग भाषाओं में उपन्यास का शब्दगत अर्थ अलग-अलग है। अंग्रेजी में इसे 'नॉवेल' कहा जाता है तो गुजराती में 'नवल कथा' तथा तेलुगु में 'नवला', मराठी में 'कादंबरी', उर्दू में 'नाविल' तथा बांग्ला में 'उपन्यास' कहा जाता है। हिंदी में अंग्रेजी के 'नॉवेल' के अर्थ में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

कहा जाता है कि हिंदी में उपन्यास विधा बांग्ला के माध्यम से अंग्रेजी से आई। अतः अंग्रेजी में इस विधा के संबंध में क्या कहा गया है यह जानना भी अनिवार्य है। आइए! हम देखेंगे कि विभिन्न कोशों में इस शब्द का क्या अर्थ दिया गया है।

न्यू वेबस्टर डिक्शनरी : A lengthy fictitious prose narrative having an almost unlimited range of subject matter and varied techniques containing one or more plot (उपन्यास एक ऐसे कल्पित गद्य विधा है जिसके विषय की सीमा असीम है, शिल्प कौशल में वैविध्य है और उसके एक या अनेक कथानक हो सकते हैं।)

केंब्रिज लर्नर्स डिक्शनरी : Novel (n) : A book that tells a story about imaginary people and events. (उपन्यास एक ऐसी पुस्तक है जो काल्पनिक लोगों अथवा घटनाओं के बारे में कहती है।)

मेक्डोनल शब्दकोश के अनुसार उपन्यास का अर्थ है - intimation, statement, declaration, discussion.

वर्धा शब्द कोश के अनुसार उपन्यास वह कल्पित और लंबी कहानी है जो अनेक पात्रों और घटनाओं से युक्त हो तथा जिसमें जीवन की विविध बातों का चित्रण किया गया हो।

हिंदी शब्द सागर के अनुसार उपन्यास शब्द का अर्थ है 'पास रखी धरोहर'।

संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में उपन्यास शब्द अनेक अर्थों में प्रकट हुआ है - जैसे पास लाना, धरोहर, अमानत, प्रस्ताव, प्रमाण, उपक्रम, संधि का प्रकार, कल्पित या लंबी कहानी।

आइए! अब हम हिंदी एवं अंग्रेजी विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

ई.एम. फोस्टर का मत है कि जीवन के गुप्त रहस्यों को अभिव्यक्त करने की विशेषता सबसे अधिक उपन्यास में है।

श्यामसुंदर दास की मान्यता है कि उपन्यास मनुष्य के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा है। उपन्यास आज के युग की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है।

प्रेमचंद उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझते हैं। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।

गुलाबराय की मान्यता है कि उपन्यास कार्य-कारण शृंखला में बंधा हुआ गद्य कथानक है। इसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार होता है। वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक व कालपनिक घटनाओं द्वारा मानव जीवन के सच को उद्घाटित किया जाता है।

आचार्य नंददुलारे वाजपेयी उपन्यास को आधुनिक युग का महाकाव्य मानते हैं।

देवराज उपाध्याय के अनुसार उपन्यास मानव जीवन का स्वच्छ और यथार्थ गद्यमय चित्र है। इसमें मानव जीवन के रहस्यों का उद्घाटन किया जाता है। उपन्यासकार यह कार्य सफल चरित्र-चित्रण द्वारा करता है।

अज्ञेय का मत है कि उपन्यास व्यक्ति के अपनी परिस्थितियों के साथ संबंध की अभिव्यक्ति के उत्तरोत्तर विकास का प्रतिनिधित्व करता है।

अतः उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उपन्यास उस रचना को कह सकते हैं जो मानव जीवन के किसी विशेष पक्ष को हमारे निकट रखे। उपन्यास मानव समाज की विषमताओं, समस्याओं और बढ़ती आवश्यकताओं को अभिव्यक्त करता है। यह एक ऐसी गद्य विधा है जिसमें कलात्मकता के साथ जीवन की व्याख्या रहती है। इसका उद्देश्य मनोरंजन भी है और साथ ही यथार्थ को उजागर करना भी। सामान्य रूप से उपन्यास को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है - उपन्यास एक ऐसी गद्य विधा है जिसे जीवन का महाकाव्य कहा जा सकता है, क्योंकि यह मानव जीवन के समूचे परिदृश्य को कल्पनात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है।

बोध प्रश्न

- उपन्यास का शाब्दिक अर्थ क्या है?
- प्रेमचंद ने उपन्यास को किस प्रकार परिभाषित किया है?
- आप उपन्यास को किस प्रकार परिभाषित करेंगे?
- उपन्यास को जीवन का महाकाव्य क्यों कहा जाता है?

2.3.2 उपन्यास : तत्व

छात्रो! आप समझ ही चुके हैं कि उपन्यास में मानव जीवन की परिस्थितियों का अंकन होता है। उपन्यासकार किसी काल्पनिक अथवा वास्तविक घटना का चित्रण करता है। उस घटना को रोचक तरह से प्रस्तुत करने के लिए कथा की आवश्यकता होती है। उस कथा को विस्तार देने में पात्र सहायक सिद्ध होते हैं और उन पात्रों के बीच संवाद कायम होना जरूरी है। इसी प्रकार परिवेश भी महत्वपूर्ण है। और तो और कहने का ढंग और उद्देश्य भी उपन्यास को

रचने में सहायक सिद्ध होते हैं। इस प्रकार कथानक, चरित्र, संवाद, परिवेश, शैली और उद्देश्य उपन्यास के प्रमुख तत्व हैं। वस्तुतः उपन्यास के तत्वों को अलग-अलग करना उसी तरह है जिस तरह वनस्पति विज्ञान में फूल की पंखुड़ियों को अलग-अलग करके अध्ययन किया जाता है। बुनावट को जानने के लिए ऐसा करना तर्कसंगत है। तो आइए, इन तत्वों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

कथानक

कथानक अथवा वस्तु उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व है। इसे अंग्रेजी में 'प्लॉट' कहा जाता है। विभिन्न महत्वपूर्ण घटनाओं को लेखक एक क्रम में जब प्रस्तुत करता है तो उसे कथावस्तु कह सकते हैं। यह उपन्यास का महत्वपूर्ण तत्व है। पाश्चात्य विद्वान विलियम हेनरी हडसन के अनुसार उपन्यास में घटनाएँ परिस्थितियों के अनुसार घटती हैं तो कुछ देशकाल में किन्हीं व्यक्तियों के द्वारा की जाती हैं। जो घटित होता है और जो किया जाता है, इन सबको मिलाने से जो चीज बनती है उसे कथावस्तु या प्लॉट कहा जाता है। कुछ लेखक कथावस्तु को प्रमुखता नहीं देते फिर भी यह उपन्यास का मूल आधार है। यह नींव की तरह काम करता है। इसी पर उपन्यास का समूचा कलेवर निर्मित होता है। उपन्यास में मानव जीवन को समग्रता में प्रस्तुत किया जाता है। अतः एक मुख्य कथा होती है और साथ ही अनेक प्रासंगिक उप-कथाएँ भी होती हैं। उदाहरण के लिए प्रेमचंद के उपन्यास 'गोदान' में होरी, धनिया की कथा मुख्य है तो गोबर, मालती, मेहता, मातादीन आदि की प्रासंगिक उप-कथाएँ साथ-साथ चलती हैं।

उपन्यास की कथा चरित्र को विकसित करने वाली होनी चाहिए। कथा को विस्तार देते समय यह ध्यान रखना अनिवार्य है कि कहीं कोई प्रसंग असंगत और अप्रासंगिक न हो। उपन्यास की कथा चरित्र को विकसित करने वाली होनी चाहिए। काल्पनिक और अविश्वसनीय लगाने वाली घटनाओं से बचना चाहिए। पहले के उपन्यासों में कथा के आरंभ से अंत तक एक शृंखला होती थी। अर्थात आरंभ, मध्य और अंत होता था। लेकिन आज ऐसा नहीं है। आज कथा का आरंभ किसी भी घटना या वर्णन आदि से हो जाता है। कभी-कभी किसी पात्र के अंतर्द्वंद्व से कथा की शुरूआत होती है या कभी संवादों से कथा शुरू होती है। यह भी आवश्यक नहीं कि कथा का कोई निश्चित अंत हो। अर्थात कथा का समापन कहीं भी हो सकता है। कभी-कभी लेखक समापन पाठक पर छोड़ देते हैं।

बोध प्रश्न

- कथावस्तु किसे कहते हैं?
- प्रासंगिक उप-कथाओं से आप क्या समझते हैं?

चरित्र चित्रण

कथावस्तु में जिन घटनाओं का उल्लेख किया जाता है वे कुछ व्यक्तियों के जीवन में घटित होती हैं और कुछ लोगों के द्वारा की जाती हैं या सहन की जाती हैं। और पुरुष या स्त्रियाँ जो इस घटनाक्रम को आगे बढ़ाते हैं वे 'ड्रैमेटिक परसोनी' अथवा चरित्र समूह का निर्माण करते हैं। कहने का आशया है कि उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में पात्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाते

हैं। जिन व्यक्तियों के जीवन की घटना को लेकर कथा का विकास किया जाता है, वे पात्र कहलाते हैं। पात्रों के चरित्र की विशेषताओं का चित्रण ही चरित्र चित्रण कहलाता है। किसी भी कथा में पात्रों की आवश्यकता होती है क्योंकि उनके बिना घटना का चित्रण असंभव है। इसलिए चरित्र चित्रण उपन्यास के महत्वपूर्ण तत्वों में से एक है। कथा के अनुरूप ही पत्रों का चयन किया जाता है। पात्रों के चयन के अनुरूप ही चरित्र चित्रण भी होता है। पात्र भी अलग-अलग होंगे। कुछ पात्र आदर्श होते हैं, कुछ काल्पनिक होते हैं, कुछ यथार्थ होते हैं, कुछ पात्रों में व्यक्तित्व की प्रधानता होती है। कुछ पात्रों में वर्ग विशेषताएँ होती हैं। कुछ पात्र बहिर्मुखी व्यक्तित्व के होते हैं तो कुछ अंतर्मुखी। बहिर्मुखी व्यक्तित्व के पात्र वे होते हैं जो किसी भी स्थिति में तत्काल प्रतिक्रिया करने को तैयार हो जाते हैं। ये खूब मिलनसार होते हैं। हर काम में रुचि लेते हैं और जरा-जरा सी बात पर चिंतित नहीं होते। वे ज्यादा बातचीत करना पसंद करते हैं और दूसरों की बातों से जल्दी प्रभावित हो जाते हैं। इनके विपरीत अंतर्मुखी व्यक्तित्व वाले पात्र होते हैं। अंतर्मुखी व्यक्ति प्रतिक्रिया करने से पहले झिझकता है। वह संकोची स्वभाव का होता है। वह नई स्थितों को पसंद नहीं करता। कभी-कभी उनसे डरता भी है। वह एकांत-प्रेमी होता है। लोगों से बहुत कम संपर्क रखता है। वह विचार और कल्पनाप्रधान होता है। ज्यादा संवेदनशील होता है। जारा-सी बात भी उसे जल्दी चुभ जाती है और वह चिंतित हो जाता है। वह जिद्दी भी होता है और बहस करना पसंद करता है। अंतर्मुखता और बहिर्मुखता उस व्यक्ति के व्यवहार से पता चलता है।

उपन्यासकार चरित्र चित्रण के लिए कई तरह की विधियाँ अपनाता है। सबसे पहले वह पात्र द्वारा किए जाने वाले कार्यों के माध्यम से चरित्र निर्माण करता है। पात्र के मन में उठने वाले विचार या भावनाओं के माध्यम से भी उसका चरित्र स्पष्ट होता है। एक पात्र दूसरे पात्र के बारे में जो कुछ कहता है वह भी पात्र के चरित्र चित्रण में सहायक सिद्ध होता है। कभी-कभी लेखक स्वयं पात्र के बारे में स्पष्ट करता है।

बोध प्रश्न

- कथा को आगे बढ़ाने में चरित्र चित्रण किस प्रकार सहायक सिद्ध होता है?
- ड्रैमेटिक परसोनी अथवा चरित्र समूह का निर्माण किस तरह से होता है?
- अंतर्मुखी और बहिर्मुखी व्यक्तित्व के बारे में आप क्या जानते हैं?

संवाद

पात्रों के बीच संवाद कायम होने से कथा को विस्तार मिलता है। पात्र आपस में जो बातचीत करते हैं उन्हें संवाद या कथोपकथन कहा जाता है। कथा को विस्तार मिलने के साथ-साथ रोचकता भी प्राप्त होती है। पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने में संवाद सहायक बनते हैं। पात्रों की आयु, शिक्षा, रुचि एवं स्वभाव के अनुरूप संवाद योजना होनी चाहिए।

बोध प्रश्न

- संवाद योजना किस प्रकार होनी चाहिए?

परिवेश

परिवेश के अंतर्गत देशकाल अथवा स्थान और समय आता है जहाँ उपन्यास की कहानी चलती है। कथावस्तु के अनुरूप ही परिवेश का वर्णन करना चाहिए। जहाँ तक हो सके उपन्यासकार स्वाभाविकता लाने के लिए परिवेश के यथार्थ रूप को प्रस्तुत करता है। अर्थात यदि कथा गाँव की है तो पूरा परिवेश ग्रामीण होना चाहिए। कहने का आशय है कि गाँव की कथा हो तो गाँव के घर, गलियाँ, चौपाल, खेत-खलिहान, रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज, मेले-त्योहार, संस्कार आदि की जानकारी देने से ही लेखक ग्रामीण जीवन को सही अर्थों में रचना में प्रस्तुत कर सकता है। अनुभव और जानकारी के बल पर परिवेश का चित्रण हो तो उपन्यास में स्वाभाविकता का पुट मिलता है।

बोध प्रश्न

- परिवेश चित्रण किस प्रकार होना चाहिए?

भाषा-शैली

शैली का अर्थ है रचना करने का ढंग। लेखक की रुचि और विषयवस्तु के कारण शैली में परिवर्तन होता है। उपन्यास में कथावस्तु, पात्र और परिवेश के अनुरूप ही संवादों की भाषा होनी चाहिए। भाषा प्रयोग से कथा जीवंत हो उठती है। सरल और बोलचाल की भाषा प्रयोग रचना को सहज एवं स्वाभाविक बनाता है। हर लेखक की अपनी निजी शैली होती है। कथावस्तु और उद्देश्य को ध्यान में रखकर लेखक आवश्यकतानुसार व्याख्यात्मक, विश्लेषणात्मक, पत्रात्मक, संवादात्मक, प्रत्यक्ष कथन, परोक्ष कथन, डायरी शैली और पूर्वदीप्ति (flashback) शैली का प्रयोग करते हैं। इसे कथन भंगिमा भी कहा जा सकता है। चित्रा मुद्गल का उपन्यास 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपरा' पत्रात्मक शैली लिखा गया उपन्यास है।

बोध प्रश्न

- किस प्रकार का भाषा प्रयोग रचना को सहज बनाता है?

उद्देश्य

उपन्यास के उद्देश्य को प्रतिपाद्य भी कहा जाता है। अपने उद्देश्य को सहज रूप से पाठकों तक पहुँचाने में ही उपन्यासकार की सफलता सिद्ध होती है। कथावस्तु की प्रस्तुति द्वारा उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए। उद्देश्य कथित होने से उपदेश बन जाता है। 'गोदान' में किसानों का शोषण व्यंजित हुआ है, न कि प्रेमचंद द्वारा कहा गया है।

उपन्यास लेखन में इन तत्वों के अतिरिक्त लेखक का दृष्टिकोण, उनके विचार और अनुभव आदि भी कुछ मायने रखते हैं। अतः उपन्यास के तत्वों को बाँटकर देखना न्याय संगत नहीं होगा। ऐसी स्थिति में उपन्यास को दो तत्वो में बाँटा जा सकता है - 1. कथा तत्व और 2. संरचना तत्व। कथा तत्व के अंतर्गत कथा, घटनाएँ, अनुभव, लेखक का दृष्टिकोण, विचार और उद्देश्य स्वतः समाहित हो जाएँगे तथा संरचना तत्व के अंतर्गत चरित्र चित्रण, परिवेश, कथन भंगिमा (शैली), भाषा आर संवाद आ जाते हैं। ये सभी तत्व एक-दूसरे पर निर्भर हैं और एक-

दूसरे को सहायता देते हैं। क्योंकि कथा या वस्तु, घटनाओं का संयोजन आदि संरचना तत्व पर निर्भर रहते हैं। कहा जाए तो उपन्यास में आई हुई कहानी/ कहानियाँ एवं घटनाएँ एक सूत्र में पिरोई गई होनी चाहिए। उनमें कसाव होना चाहिए। उनकी रचना कौतूहलतापूर्ण होनी चाहिए। वास्तविकता के प्रति आग्रह होना चाहिए। घटनाओं में गति होनी चाहिए। कथा की अभिव्यक्ति प्रभावपूर्ण होना चाहिए। कथन भंगिमा और परिवेश कथा के अनुरूप होने चाहिए। इन तत्वों का सही प्रयोग करने से उपन्यासकार अपने उद्देश्य में सफलता पा सकते हैं। इस संदर्भ में निर्मल वर्मा का यह कथन उल्लेखनीय है - "उपन्यास का गठन लेखक तैयार नहीं करता, स्वयं उसकी दृष्टि उसे निर्धारित करते हैं - जैसे नदी पहले अपना पाट तैयार करके नहीं बहती, स्वयं बहने के दौरान उसका पाट बनता जाता है।"

बोध प्रश्न

- उपन्यासकार अपने उद्देश्य में कब सफल हो सकता है?
- उपन्यास के विभिन्न तत्वों का उल्लेख कीजिए।

2.3.3 उपन्यास : प्रकार

उपन्यास विधा का वर्गीकरण उपन्यास के तत्वों अर्थात कथावस्तु, पात्रों के चरित्र चित्रण, परिवेश, भाषा-शैली और प्रतिपाद्य के आधार पर किया जा सकता है।

(क) कथावस्तु के आधार पर

हर उपन्यास का कथानक अलग-अलग होता है। कोई उपन्यास पुराण कथा से संबंधित हो सकता है तो कोई तत्कालीन यथार्थ से। समकालीन यथार्थ से संबंधित उपन्यासों में कथावस्तु पारिवारिक हो सकती है, सामाजिक और राजनैतिक भी। अतः कथावस्तु को दृष्टि में रखकर उपन्यासों के कुछ वर्ग बन सकते हैं। जैसे ऐतिहासिक, पारिवारिक, सामाजिक, पौराणिक आदि।

ऐतिहासिक उपन्यास

इस वर्ग के उपन्यासों में कथा का आधार इतिहास प्रसिद्ध घटना होती है। उनकी कथावस्तु अतीत से जुड़ी होती है। ऐसे उपन्यासों में यह आवश्यक नहीं होता कि इतिहास सम्मत सच्ची घटना को ही कथावस्तु का आधार बनाया जाए। इसमें कल्पना द्वारा कथा को विस्तार दिया जा सकता है। लेकिन इस बात पर ध्यान अवश्य देना चाहिए कि समकालीन जीवन की समस्याएँ अतीत की घटना के आधार पर प्रस्तुत हों। उदाहरण के लिए 'बाणभट्ट की आत्मकथा' (हजारी प्रसाद द्विवेदी) में बाणभट्ट के युग की कथा के माध्यम से आज के समाज में व्याप्त जातिप्रथा, धार्मिक विद्वेष, युद्धोन्माद आदि पर तीखा प्रहार किया गया है। कुछ प्रमुख ऐतिहासिक उपन्यास हैं मृगनयनी (वृंदावनलाल वर्मा), चारुचंद्रलेखा (हजारी प्रसाद द्विवेदी), दिव्या (यशपाल) आदि।

बोध प्रश्न

- ऐतिहासिक उपन्यासों की विशेषताएँ बताइए।

पारिवारिक उपन्यास

जिस उपन्यास में प्रमुख रूप से परिवार की समस्या या घटना को कथावस्तु का आधर बनाया जाए उसे पारिवारिक उपन्यास कह सकते हैं। परिवार समाज की इकाई है। अतः इस प्रकार के उपन्यासों को सामाजिक उपन्यासों के अंतर्गत भी रखा जा सकता है। प्रेमचंद के उपन्यास 'निर्मला' में अनमेल विवाह के कारण परिवार में उत्पन्न समस्या को दर्शाया गया है। कुछ और उदाहरण हैं झरोखे (भीष्म साहनी), गुंठन (गुरुदत्त), बुनियाद (मनोहर श्याम जोशी), पाँच आँगनों वाला घर (गोविंद मिश्र) आदि।

बोध प्रश्न

- पारिवारिक उपन्यास से क्या अभिप्राय है?

सामाजिक उपन्यास

सामाजिक समस्या या घटना को लेकर लिखे जाने वाले उपन्यासों को सामाजिक उपन्यास कह सकते हैं। पीढ़ी अंतराल, भ्रष्टाचार, सामाजिक रूढ़ियाँ, मूल्य ह्रास, समस्याएँ आदि को इस तरह के उपन्यासों में प्रमुख रूप से उजागर किया जाता है। प्रेमचंद के सभी उपन्यास सामाजिक हैं। कुछ उदाहरण हैं- सेवासदन (प्रेमचंद), ममता (जयशंकर प्रसाद), बूँद और समुद्र (अमृतलाल नागर), नंगातलाई का गाँव (विश्वनाथ त्रिपाठी), समुद्र में खोया हुआ आदमी (कमलेश्वर), पलटू बाबू रोड (फणीश्वरनाथ रेणु), आदमी स्वर्ग में (विष्णु नागर), जिंदगीनामा (कृष्णा सोबती) आदि।

बोध प्रश्न

- सामाजिक उपन्यासों में किन चीजों को देखा जा सकता है?

पौराणिक उपन्यास

जिस उपन्यास में कथा का आधार पौराणिक हो वह पौराणिक उपन्यास कहलाता है। इन तरह के उपन्यासों में कथा का आधार तो पुराण संबंधीत होता है लेकिन उद्देश्य आधुनिक परिप्रेक्ष्य को उजागर करना होता है। कुछ पौराणिक उपन्यास हैं अनामदास का पोता (हजारी प्रसाद द्विवेदी), वसुदेव (नरेंद्र कोहली), परितप्त लंकेश्वरी (मृदुला सिन्हा) आदि।

बोध प्रश्न

- पौराणिक उपन्यासों के उदाहरण बताइए।

(ख) चरित्र चित्रण के आधार पर

किसी उपन्यास में मुख्य चरित्र को केंद्र में रखकर कथा का विस्तार किया जाता है तो उसे चरित्र प्रधान उपन्यास कह सकते हैं। प्रेमचंद का प्रसिद्ध उपन्यास 'निर्मला' उपन्यास चरित्र प्रधान उपन्यास है। इसका प्रमुख पात्र स्त्री है। पूरी कथा उसके जीवन से संबंधित है। चरित्र प्रधान उपन्यास में एक केंद्रीय चरित्र के साथ-साथ अनेक गौण चरित्र होते हैं। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को चित्रित करने के लिए घटनाओं और प्रसंगों की रचना की जाती है। पात्रों के मनोभावों को विस्तार दिया जाता है। अज्ञेय, जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी आदि के उपन्यास इसी कोटी के माने जा सकते हैं।

बोध प्रश्न

- चरित्र प्रधान उपन्यास क्या है?

(ग) परिवेश के आधार पर

हर उपन्यास में कोई न कोई परिवेश अवश्य होता है। लेकिन जिस उपन्यास में अन्य तत्वों की अपेक्षा परिवेश की प्रधानता होती है उसे परिवेश प्रधान उपन्यास के अंतर्गत रखा जा सकता है। इन उपन्यासों में कोई नायक या नायिका प्रधान नहीं होते। आंचलिक उपन्यासों को परिवेश प्रधान उपन्यास कहा जा सकता है। उदाहरण के लिए फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल'। बिहार के पूर्णिया क्षेत्र की आंचलिकता को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। परिवेश के आधार पर लिखे गए उपन्यासों को महानगरीय, शहरीय, कसबाई, ग्रामीण आदि विभिन्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

- परिवेश प्रधान उपन्यासों की क्या विशेषता है?

(घ) वर्णन शैली के आधार पर

वर्णन शैली के आधार पर उपन्यासों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है - घटना प्रधान और भाव प्रधान।

घटना प्रधान उपन्यास

जिस उपन्यास में घटना की प्रधानता हो वह घटना प्रधान उपन्यास है। ऐसे उपन्यासों में कथा की रोचकता घटना के विकास से साथ जुड़ी हुई रहती है। जासूसी, ऐय्यारी, तिलिस्मी उपन्यास इसी वर्ग में आते हैं। देवकीनंदन खत्री के चंद्रकांता, चंद्रकांता संतती आदि उपन्यासों को इस श्रेणी के अंतर्गत रख सकते हैं।

भाव प्रधान उपन्यास

जिन उपन्यासों में भावनात्मक संघर्ष को कथा का आधार बनाया जाता है उन्हें भाव प्रधान उपन्यास कह सकते हैं। ऐसे उपन्यासों में पात्रों के मन में उठने वाले भावों का चित्रण किया जाता है। उदाहरण के लिए जैनेंद्र का उपन्यास 'सुनीता'।

(च) प्रतिपाद्य के आधार पर

रचनाकार के दृष्टिकोण और रचना के उद्देश्य के आधर पर इस वर्ग के उपन्यासों को बाँटा जा सकता है। रचनाकार की दृष्टि या तो आदर्शवादी होती है या यथार्थवादी। जब आदर्श को केंद्र में रखकर रचना की जाती है तो उस उपन्यास को आदर्शवादी उपन्यास कहा जाता है। प्रेमचंद के आरंभिक उपन्यास इसी वर्ग के अंतर्गत आते हैं। जब जीवन के यथार्थ को उजागर किया जाता है तो ऐसे उपन्यासों को यथार्थवादी उपन्यास कहा जाता है। जब मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर उपन्यास लिखा जाता है तो उसे मनोवैज्ञानिक उपन्यास कह सकते हैं। जब नए मूल्यों की खोज की जाती है तो प्रयोगशील उपन्यास कह सकते हैं। यंत्रीकरण और औद्योगीकरण के कारण आए परिवर्तनों के आधार पर लिखे गए उपन्यासों को आधुनिकता बोध के उपन्यास कह सकते हैं।

बोध प्रश्न

- प्रतिपाद्य के आधार पर उपन्यासों को किस प्रकार विभाजित किया जा सकता है?

2.3.4 उपन्यास का रचनागत वैशिष्ट्य

छात्रो! अब तक आप उपन्यास के स्वरूप, तत्व और भेदों से परिचित हो ही चुके हैं। और यह भी जान चुके हैं कि उपन्यास किसे कहते हैं। उपन्यास आधुनिक जीवन के यथार्थ को बहुत निकटता से पहचानकर उसे हमारे समक्ष प्रस्तुत करता है। उपन्यास को किसी एक सुनिश्चित परिभाषा में बाँधना आसान कार्य नहीं। फिर भी उसको पारिभाषित करते हुए कहा जाता है कि उपन्यास आधुनिक गद्य की वह विधा है जो यथार्थ को बहुत सहज रूप से प्रस्तुत करता है। रचनाकार अपने अनुभव जगत को कल्पना से जोड़कर घटनाओं को इस तरह पिरोता है कि पाठक के समक्ष चित्र उभरने लगते हैं। उपन्यास के पात्र जीवंत होते हैं। घटनाएँ भी हमारे बीच की होती हैं। अतः उपन्यास पढ़ते समय हम सब किसी न किसी तरह से कथा के साथ जुड़ ही जाते हैं। कभी कभी तो हम स्वयं पात्र भी बन जाते हैं।

छात्रो! आपमें से बहुत लोगों ने कोई न कोई उपन्यास अवश्य पढ़ा होगा। पहले के उपन्यासों में चमत्कार, तिलिस्म आदि से भरपूर अजीब घटनाओं का समावेश रहता था। घटना प्रधान उपन्यासों का भरमार था। पाठक को उस प्रकार के उपन्यासों से आनंद मिलता था। अपने उद्देश्य की पूर्ति भी लेखक घटनाओं के माध्यम से ही करता था। इसकी तुलना में आज का उपन्यासकार वास्तविकता को पाठकों के समक्ष लाने का प्रयास कर रहा है। इसलिए वह अपने पात्रों का चरित्र चित्रण इस प्रकार करता है कि वे काल्पनिक न लगे। पात्रों में सजीवता लाने का भरपूर प्रयास किया जाता है। आज का उपन्यासकार जीवन के यथार्थ को अपने अनुभव जगत के माध्यम से रचना में प्रस्तुत कर रहा है।

उपन्यास का जन्म पश्चिम में हुआ। पश्चिम के उपन्यासकारों ने उपन्यास को नया रूप प्रदान किया। समय के साथ-साथ उपन्यास विधा लोकप्रियता प्राप्त करती गई और समयानुरूप परिवर्तन भी आते गए। उपन्यास की रचना प्रक्रिया पर विचार करते हुए सोचा गया कि उपन्यास क्या है? मानव जीवन से इसका क्या संबंध है? इसे किस उद्देश्य से लिखा जाता है? तो आइए, पहले इन प्रश्नों के उत्तर खाजने का प्रयास करेंगे ताकि उपन्यास के रचना वैशिष्ट्य को आसानी से समझ सकेंगे।

उपन्यास में एक प्रधान कथा के इर्द-गिर्द अनेक उप-कथाएँ बुनी जाती हैं। इसमें जीवन का व्यापक चित्र अंकित होता है। कथा को विस्तार देने के लिए पात्रों के चरित्र का चित्रण किया जाता है। उसके लिए अनेक घटनाओं का समावेश करना पड़ता है। उपन्यास की रचना वैशिष्ट्य पर विचार करेंगे तो आप पाएँगे कि -

1. उसमें किसी घटना का विस्तृत वर्णन रहता है।
2. किसी स्थान विशेष और समय से घटना का संबंध होता है।
3. हर रचनाकार घटना को अपने ढंग से प्रस्तुत करता है।
4. यह घटना किसी पात्र या पात्रों से संबंधित होती है।
5. पात्र आपस में वार्तालाप करते हैं।
6. रचनाकार किसी न किसी उद्देश्य से ही रचना का सूत्रपात करते हैं।

किसी भी उपन्यास में इन बातों का समावेश होना आवश्यक है।

बोध प्रश्न

- उपन्यास के रचना वैशिष्ट्य पर ध्यान देने से क्या स्पष्ट होता है?

2.4 पाठ सार

छात्रो! आप इस इकाई को सावधानीपूर्वक पढ़ा होगा। आपने देखा कि उपन्यास गद्य साहित्य की एक लोकप्रिय विधा है। जिस बात को पद्य में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता उसे उपन्यास के माध्यम से सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है। जन-जीवन के अत्यधिक निकट होने के कारण आरंभिक समय से लेकर वर्तमान समय तक उपन्यास ने अपनी जनप्रियता को बनाए रखा है।

आप जान ही चुके हैं कि उपन्यास के महत्वपूर्ण तत्व हैं कथावस्तु, चरित्र चित्रण, परिवेश, संवाद, भाषा-शैली और उद्देश्य। उपन्यास के स्वरूप निर्धारण में इन तत्वों का योगदान महत्वपूर्ण है। आपने इस इकाई में उपन्यास की विविध परिभाषाओं से भी परिचित हो चुके हैं जिससे उपन्यास के स्वरूप का अंदाजा लगाया जा सकता है। सामान्य रूप से कहा जा सकता है कि उपन्यास उस रचना को कह सकते हैं जो मानव जीवन के किसी विशेष पक्ष को हमारे निकट रखे। वह मानव समाज की विषमताओं, समस्याओं और बढ़ती आवश्यकताओं को सफल रूप से अभिव्यक्त करता है।

तत्वों के आधार पर उपन्यासों को सामाजिक, ऐतिहासिक, पारिवारिक, चरित्र प्रधान, घटना प्रधान, भाव प्रधान, पौराणिक, मनोवैज्ञानिक, ग्रामीण, आंचलिक, शहरी, आधुनिकता बोध से युक्त आदि वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहले के उपन्यासों पर दृष्टि केंद्रित करने से यह बात स्पष्ट होती है कि कथा का शृंखलाबद्ध ढंग से विस्तार होता है। अर्थात आरंभ, मध्य और अंत सुनिश्चित होता है। लेकिन अब ऐसी स्थिति नहीं है। कथा कहीं से भी आरंभ हो सकती है और कहीं भी अंत।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. 'न्यास' शब्द में 'उप' उपसर्ग जुड़ने से उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति हुई। 'उप' उपसर्ग का अर्थ है समीप तथा 'न्यास' शब्द का अर्थ है रखना। अतः कहा जा सकता है कि उपन्यास का शाब्दिक अर्थ है 'समीप रखना'।
2. उपन्यास में मानव जीवन का चित्रण होता है। इस विधा में मनुष्य के आस-पास के परिवेश को देखा जा सकता है।
3. अलग-अलग भाषाओं में उपन्यास का शब्दगत अर्थ अलग-अलग है। हिंदी में अंग्रेजी के 'नॉवेल' के अर्थ में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग किया जाता है।
4. उपन्यास एक एसी गद्य विधा है जिसे 'जीवन का महाकाव्य' कहा जा सकता है, क्योंकि यह मानव जीवन के समूचे परिदृश्य को कल्पनात्मकता के साथ प्रस्तुत करता है।

5. उपन्यास के प्रमुख रचना तत्व हैं - कथावस्तु, चरित्र चित्रण, संवाद, परिवेश, भाषा-शैली और उद्देश्य।
6. मोटे तौर पर उपन्यास को दो तत्वों में बाँटा जा सकता है - 1. कथा तत्व और 2. संरचना तत्व।
7. कथा तत्व के अंतर्गत कथा, घटनाएँ, अनुभव, लेखक का दृष्टिकोण, विचार और उद्देश्य स्वतः समाहित हो जाएँगे तथा संरचना तत्व के अंतर्गत चरित्र चित्रण, परिवेश, कथन भंगिमा (शैली), भाषा आर संवाद आ जाते हैं। ये सभी तत्व एक-दूसरे पर निर्भर हैं और एक-दूसरे को सहायता देते हैं।
8. उपन्यास विधा का वर्गीकरण उपन्यास के तत्वों अर्थात कथावस्तु, पात्रों के चरित्र चित्रण, परिवेश, शैली और प्रतिपाद्य के आधार पर किया जाता है।

2.6 शब्द संपदा

1. अंतर्मुखी = आत्मकेंद्रित
2. अप्रासंगिक = विषय से असंबद्ध
3. कलेवर = आकार
4. तिलिस्मी = जादू या चमत्कार का वर्णन हो
5. बहिर्मुखी = बाहर की दुनिया में रुचि लेना वाला

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. उपन्यास की परिभाषाओं के आधार पर उसके स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
2. 'उपन्यास को जीवन का महाकाव्य कहा जाता है।' इस उक्ति को उपन्यास के रचना तत्वों के आधार पर निरूपित कीजिए।
3. उपन्यासों के विभिन्न प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. उपन्यास किसे कहते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. उपन्यास के रचना वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।
3. उपन्यास की कथा को आगे बढ़ाने में पात्रों की भूमिका निरूपित कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'नंगातलाई का गाँव' के रचनाकार कौन हैं? ( )
   (अ) प्रेमचंद (आ) विश्वनाथ त्रिपाठी
   (इ) यशपाल (ई) चित्रा मुद्गल
2. 'आदमी स्वर्ग में' किस प्रकार का उपन्यास है? ( )
   (अ) सामाजिक (आ) पौराणिक
   (इ) ऐतिहासिक (ई) पारिवारिक
3. 'मैला आँचल' किस प्रकार का उपन्यास है? ( )
   (अ) कथावस्तु प्रधान (आ) परिवेश प्रधान
   (इ) इतिहास प्रधान (ई) चरित्र प्रधान
4. पत्रात्मक शैली में लिखा गया उपन्यास कौन सा है? ( )
   (अ) चंद्रकांता (आ) बाणभट्ट की आत्मकथा
   (इ) नाला सोपारा (ई) गोदान
5. इनमें से कौन-सा तत्व कथा तत्व नहीं हैं? ( )
   (अ) कथा (आ) घटनाएँ
   (इ) कथन भंगिमा (ई) अनुभव

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. जीवन के .... को अभिव्यक्त करने की विशेषता सबसे अधिक उपन्यास में है।
2. जन-जीवन के अत्यधिक निकट होने के कारण आरंभिक समय से लेकर वर्तमान समय तक उपन्यास ने अपनी..................... को बनाए रखा है।
3. पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने में .... सहायक बनते हैं।
4. उपन्यास एक ऐसी गद्य विधा है जिसे जीवन का........... कहा जा सकता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. चारुचंद्रलेख	(अ) प्रेमचंद
2. बुनियाद	(आ) नरेंद्र कोहली
3. सेवासदन	(इ) मनोहर श्याम जोशी
4. वसुदेव	(ई) हजारी प्रसाद द्विवेदी

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. साहित्यिक विधाएँ - पुनर्विचार : हरिमोहन
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र

इकाई 3 : स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यास

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ : स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यास
3.3.1 हिंदी का पहला उपन्यास
3.3.2 आरंभिक उपन्यास : भारतेंदु युग
3.3.3 आरंभिक उपन्यास : द्विवेदी युग
3.3.4 प्रेमचंद का आगमन और योगदान
3.3.5 प्रेमचंद युगीन उपन्यास
3.3.6 प्रेमचंदोत्तर उपन्यास : प्रगतिवाद काल
3.3.7 प्रेमचंदोत्तर उपन्यास : प्रयोगवाद काल
3.4 पाठ सार
3.5 पाठ की उपलब्धियाँ
3.6 शब्द संपदा
3.7 परीक्षार्थ प्रश्न
3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

छात्रो! अब तक के अध्ययन से आप हिंदी गद्य की विकास यात्रा और उपन्यास के तत्वों से परिचित हो चुके हैं। आप इस इकाई में हिंदी के आरंभिक उपन्यासों की जानकारी प्राप्त करेंगे। आप जान चुके हैं कि उपन्यास एक ऐसी सशक्त गद्य विधा है जिसके माध्यम से तमाम परिस्थितियों का चित्रण बखूबी किया जा सकता है। इस इकाई के अध्ययन से आप यह जान जाएँगे कि स्वतंत्रता से पूर्व स्वाधीनता आंदोलन के दौरान देश में जो उथल-पुथल मचा हुआ था उसकी अभिव्यक्ति हिंदी उपन्यासों में किसी न किसी रूप में हुई है।

3.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस इकाई में स्वतंत्रता के पूर्व के हिंदी उपन्यासों के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- हिंदी साहित्य के पहले उपन्यास के संबंध में रोचक तथ्यों को जान सकेंगे।
- हिंदी के प्रारंभिक उपन्यासों के बारे में समझ सकेंगे।
- भारतेंदु और द्विवेदी युग के उपन्यासों के बारे में चर्चा कर सकेंगे।
- प्रेमचंद के योगदान पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- प्रेमचंद युगीन उपन्यास साहित्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यास का विकास समझ सकेंगे।

- प्रगतिवाद और प्रयोगवाद काल के हिंदी उपन्यासों के बारे में चर्चा कर सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यास

छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि उपन्यास गद्य साहित्य की सशक्त विधा है। इसका फलक विस्तृत होता है। साहित्यकार इस विधा के माध्यम से मानव जीवन की तमाम परिस्थितियों को बखूबी उजागर करता है। हिंदी उपन्यास के विकास क्रम को अध्ययन की सुविधा हेतु प्रारंभिक, स्वतंत्रतापूर्व और स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास के रूप में विभाजित किया जा सकता है। इस इकाई में आप स्वतंत्रतापूर्व हिंदी उपन्यासों का अध्ययन करेंगे।

3.3.1 हिंदी का पहला उपन्यास

हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास किसे माना जाए इस संबंध में विद्वानों में मत भेद है। रामस्वरूप चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' में यह बताया कि "उपन्यास अपने आरंभ से माध्यमगत रूप में सामाजिक यथार्थ-चित्रण से जुड़ा हुआ है। प्रायः हर साहित्य में तिलिस्मी, ऐयारी, रहस्य और चमत्कार-प्रधान किस्सों से अलग होकर उपन्यास जब अपने पूर्ण-रूप 'रोमांस' से भिन्न एक स्वतंत्र कला-रूप के तौर पर स्थिर होता है तो उसका प्रधान उपजीव्य समाज की विविध विषमताएँ और समस्याएँ ही बनती हैं। हिंदी साहित्य के संदर्भ में ये समस्याएँ दो रूपों में उपजती हैं। एक तो अपनी जातीय रूढ़ियों के कारण और दूसरे विदेशी यूरोपीय संस्कृति की चुनौती सामने आने से। यह संयोग से कुछ अधिक है कि हिंदी का प्रथम मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु' (1882) सांस्कृतिक और जातीय संघर्ष की कथा-वस्तु को उठाता है।" (पृ. 136)।

गोपाल राय यह मानते हैं कि गौरीदत्त द्वारा लिखित उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) को प्रथम उपन्यास का दर्जा मिलना चाहिए। लेकिन इसकी कथावस्तु को लेकर विवाद है कि इसे उपन्यास कहा जाए या लंबी कहानी। कुछ विद्वान श्रद्धाराम फुल्लौरी द्वारा रचित 'भाग्यवती' (1877 में इसकी रचना हुई और 1887 में प्रकाशित) को हिंदी का प्रथम उपन्यास मानते हैं। रामचंद्र शुक्ल ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में यह लिखा है कि "अंग्रेजी ढंग का मौलिक उपन्यास पहले पहल हिंदी में लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु' ही निकला था।" (पृ. 310)। इससे पूर्व 1881 में राधाकृष्ण दास का उपन्यास 'निःसहाय हिंदू' लिखा जा चुका था लेकिन इसका प्रकाशन 1890 में हुआ। 1886 में प्रकाशित बालकृष्ण भट्ट के 'नूतन ब्रह्मचारी' को प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास कहा जाता है।

बोध प्रश्न

- हिंदी का प्रथम मौलिक उपन्यास कौन-सा है?
- हिंदी का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास कौन-सा है?

3.3.2 आरंभिक उपन्यास : भारतेंदु युग

हिंदी साहित्य के इतिहास के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हिंदी उपन्यासों की परंपरा आरंभ होती है। इसका जन्म एक तरह से सुधारवादी

आंदोलन और पुनरुत्थान कालीन स्थितियों के कारण माना जा सकता है। इस विधा में मनुष्य के समस्त पक्षों का समावेश होता है।

भारतेंदु युग हिंदी उपन्यास साहित्य का उद्भव काल है। इस युग के लेखकों पर अंग्रेजी एवं बांग्ला उपन्यासों का प्रभाव था। इस युग के उपन्यासों में मुख्य रूप से तीन प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं – 1. सामाजिक सुधार, 2. तिलिस्मी, ऐयारी, जासूसी तथा रोमानी प्रवृत्ति, 3. अनुवाद।

इस युग के अधिकांश उपन्यासों में समाज सुधार की भावना को देखा जा सकता है। ये उद्देश्यपरक उपन्यास हैं। आरंभ में लेखक अपना उद्देश्य स्पष्ट कर देते हैं। सामाजिक कुरीतियों को सामने लाकर उनका विरोध करना तथा आदर्श समाज एवं परिवार की स्थापना करना इस युग के उपन्यासों का प्रमुख लक्ष्य था। बालकृष्ण भट्ट, श्रीनिवास दास, किशोरीलाल गोस्वामी, राधाकृष्ण दास, लज्जाराम शर्मा आदि इस धारा के मुख्य उपन्यासकार हैं। दूसरी प्रवृत्ति है ऐयारी और तिलिस्मी। देवकीनंदन खत्री, गोपालदास गहमरी, ठाकुर जगमोहन सिंह के उपन्यासों में प्रमुख रूप से इस प्रवृत्ति को देखा जा सकता है। तीसरी प्रवृत्ति है अनुवाद। हिंदी में उपन्यास विधा का आविर्भाव अंग्रेजी एवं बांग्ला उपन्यासों के प्रभाव से हुआ। पहले हिंदी में जो उपन्यास आए उनमें अनुवाद अधिक थे। शेक्सपीयर, रवींद्रनाथ ठाकुर, शरतचंद्र चट्टोपाध्याय, बंकिमचंद्र चटर्जी आदि उपन्यासकारों के उपन्यास हिंदी पाठकों के समक्ष अनुवादों के माध्यम से आए।

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास' में यह स्पष्ट किया है कि आधुनिक युग के उपन्यास लेखन भारतेंदु युग से ही आरंभ हो गया था। भारतेंदु ने 'पूर्णप्रकाश और चंद्रप्रभा' नाम के सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास लिखा था। इसमें पूर्ण प्रकाश नायक है और चंद्रप्रभा नायिका। इस उपन्यास का प्रधान उद्देश्य है वृद्ध-विवाह का खंडन और स्त्री शिक्षा का समर्थन। "इस उपन्यास में भारतेंदु ने नारीजाति के नवीन अभ्युदय का संदेश दिया और दीर्घकालीन से चली आती हुई सड़ी-गली रूढ़ियों का विरोध किया।" (पृ. 219)।

लाला श्रीनिवास दास के उपन्यास 'परीक्षा गुरु' को शुक्ल जी ने अंग्रेजी ढंग का पहला मौलिक उपन्यास कहा है। इसका प्रथम संस्करण कब प्रकाशित हुआ इसकी कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है लेकिन इसका दूसरा संस्करण 1886 में हुआ था।

राधाकृष्ण दास का 'निःसहाय हिंदू' (1886), बालकृष्ण भट्ट का 'नूतन ब्रह्मचारी' (1886), 'सौ अजान और एक सुजान' (1892), मेहता लज्जाराम शर्मा का 'स्वतंत्र रमा और परतंत्र लक्ष्मी' (1899), किशोरीलाल गोस्वामी के 'त्रिवेणी' (1889) और 'लवंगलता' (1890), गोपालराम गहमरी का 'बड़ा भाई और सास पतोहू' (1898) आदि उपन्यास इसी समय लिखे गए।

इस काल के उपन्यास लेखकों पर बांग्ला और संस्कृत साहित्य का प्रभाव दिखाई देता है। प्रतापनारायण मिश्र, राधाचारण गोस्वामी, गदाधर सिंह, राधाकृष्ण दास, कार्तिक प्रसाद खत्री आदि ने बांग्ला ने अनेक उपन्यासों के अनुवाद किए। "यह परंपरा बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण तक अबाध रूप से चलती रही। इस प्रकार उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक हिंदी गद्य की

सर्वतोमुखी उन्नति हो चुकी थी। आधुनिक ढंग के नाटकों और उपन्यासों का सूत्रपात हो चुका था, नए ढंग के निबंध लिखे जा रहे थे, वैयक्तिक दृष्टिकोण की प्रतिष्ठा हो चुकी थी, और देश की भिन्न-भिन्न भाषाओं से प्रेरणा लेकर नए-नए साहित्यांगों की सृष्टि का बीज बोया जा रहा था।" (हजारी प्रदास द्विवेदी, हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास, पृ. 220)

तिलिस्मी और ऐयारी उपन्यासों में देवकीनंदन खत्री के उपन्यास 'चंद्रकांता' (1882) और 'चंद्रकांता संतति' (चौबीस भाग 1986) लोकप्रिय हैं। इन उपन्यासों के अनुकरण पर और भी कई उपन्यास लिखे गए थे। हिंदी को लोकप्रिय बनाने में इन उपन्यासों का बहुत बड़ा हाथ है, क्योंकि इन उपन्यासों को पढ़ने के लिए कई लोगों ने हिंदी सीखी। जासूसी उपन्यासों में गोपालराम गहमरी के 'अद्भुत लाश' (1896) और 'गुप्तचर' (1899) उल्लेखनीय हैं।

इस युग में महत्वपूर्ण धारा सामाजिक उपन्यासों की है। इसकी शुरूआत 'परीक्षा गुरु' से हुआ था। "इस युग के सर्वप्रथम उपन्यास लेखक किशोरीलाल गोस्वामी माने गए हैं। गोस्वामी जी ने मानवीय प्रेम के विविध पक्षों के उद्घाटन में ही अपनी शक्ति का अपव्यय किया। वस्तुतः जीवन के यथार्थ को कला में ढालने वाले उपन्यासों के रचना का वातावरण अभी नहीं बन पाया था। इस शैली का आरंभ आगे चल कर द्विवेदी युग में हुआ।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 462)

बोध प्रश्न

- उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हिंदी उपन्यासों की परंपरा का आरंभ किन कारणों से हुआ?
- भारतेंदु युग के उपन्यासों की मुख्य प्रवृत्तियाँ क्या थीं?
- भारतेंदु युग के उपन्यासों का प्रमुख लक्ष्य क्या था?
- भारतेंदु के उपन्यास 'पूर्णप्रकाश और चंद्रप्रभा' का मुख्य उद्देश्य क्या था?
- भारतेंदु युग के प्रमुख उपन्यासकारों के नाम बताइए।

3.3.3 आरंभिक उपन्यास : द्विवेदी युग

द्विवेदी युग में रचित गद्य साहित्य के मूल में सांस्कृतिक चेतना है। विदेशी शासन के प्रति जनता के असंतोष में वृद्धि हुई। "राष्ट्रीय चेतना क्रमशः विकसित होती हुई एक निश्चित लक्ष्य – पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति की सिद्धि के संकल्प में परिणत हुई, जिसकी अभिव्यक्ति इस युग के साहित्य में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में ध्यान आकृष्ट करती है। ××× आलोच्य काल में आर्यसमाज और सनातन धर्म दोनों का द्वंद्व चलता रहा, किंतु यह निर्विवाद है कि धार्मिक-सामाजिक क्षेत्र में क्रमशः उदारता और सहिष्णुता की भावनाएँ फैलती जा रही थीं। यह राजनीतिक जागरूकता, आर्थिक समझदारी, सामाजिक-धार्मिक उदारता तथा राष्ट्रप्रेम मुख्यतः शिक्षित मध्यवर्ग की जनता के जागरण का परिणाम था।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 495)। इस काल के गद्य साहित्य के प्रत्येक विधा में अंतर्निहित चेतना एक ही है - राष्ट्रीय जागरण और समाज सुधार की भावन।

द्विवेदी काल में सामाजिक जीवन की यथार्थ समस्याओं को लेकर गंभीर उपन्यासों की रचना कम हुई। इस युग में पाठक रहस्यमयी घटनाओं के कारण एक अपरिचित संसार में

भटकते रहते थे। प्रवृत्ति भेद के आधार पर इस काल के उपन्यासों को पाँच वर्गों में बाँटा जा सकता है – तिलिस्मी-ऐयारी, जासूसी, घटनाप्रधान, ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यास।

छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि तिलिस्मी और ऐयारी उपन्यासों की परंपरा देवकीनंदन खत्री द्वारा भारतेंदु युग में ही आरंभ हो गई थी। द्विवेदी युग में भी यह परंपरा जीवित रही। देवकीनंदन खत्री के 'काजर की कोठरी' (1902), 'अनूठी बेगम' (1905), 'गुप्त गोदना' (1906), 'भूतनाथ' (प्रथम छह भाग 1906) आदि उपन्यास इसी युग में आए। हरेकृष्ण जौहर के 'मयंकमोहिनी' या 'मायामहल', 'कमलकुमारी', 'भयानक खून' और रामलाल वर्मा के 'पुतली महल' भी उल्लेखनीय हैं। देवकीनंदन खत्री के पुत्र दुर्गाप्रसाद खत्री ने 'भूतनाथ' के शेष भागों को लिखकर इस परंपरा को आगे बढ़ाया।

जासूसी उपन्यासों के प्रवर्तक के रूप में गोपालदास गहमरी को जाना जाता है। इन्होंने अंग्रेजी के प्रसिद्ध जासूसी उपन्यासकार आर्थर कानन डायल से प्रभावित होकर उनके प्रसिद्ध उपन्यास 'ए स्टडी इन स्कारलेट' (1887) को 'गोविंदराम' (1905) शीर्षक से हिंदी में रूपांतरित भी किया। 'सरकटी लाश' (1900), 'चक्करदार चोरी' (1901), 'जासूस की भूल' (1901), 'जासूस पर जासूसी' (1904), 'जासूस चक्कर में' (1906), 'इंद्रजालिक जासूस' (1910), 'गुप्त भेद' (1913), 'जासूस की ऐयारी' (1914) आदि उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। रामलाल वर्मा, किशोरीलाल गोस्वामी आदि ने भी इस क्षेत्र में कुछ प्रयोग अवश्य किए।

घटना प्रधान उपन्यासों में वस्तुतः किसी रहस्यमय कोने का उद्घाटन किया जाता था। विट्ठलदास नागर का 'किस्मत का खेल' (1905), बाँकेलाल चतुर्वेदी का 'खौफ़नाफ़ खून' (1912), निहालचंद वर्मा का 'प्रेम का फल या मिस जौहरा' (1913), प्रेमविलास वर्मा का 'प्रेममाधुरी या अनंगकांता' तथा दुर्गाप्रसाद खत्री का 'अद्भुत भूत' (1916) इसी शैली के उपन्यास हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी, गंगाप्रसाद गुप्त, जयराम दास गुप्त और माध्यवप्रसाद शर्मा इस काल के उल्लेखनीय ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं। किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा' व 'क्षात्रकुलकमलिनी', 'सुल्तान रजिया बेगम' व 'रंगमहल में हलाहल' और 'लखनऊ की कब्र' व 'शाही महलसरा' इस काल के चर्चित ऐतिहासिक उपन्यास हैं। गंगाप्रसाद गुप्त के ऐतिहासिक उपन्यासों में 'नूरजहां', 'कुमारसिंह सेनापति' और 'हम्मीर' उल्लेखनीय हैं तो जयराम प्रसाद गुप्त के 'काश्मीर पतन', 'नवाबी परिस्तान' व 'वाजिद अली शाह', 'मल्का चाँद बीबी' आदि प्रसिद्ध हैं। इस युग के सशक्त ऐतिहासिक उपन्यासकार हैं किशोरीलाल गोस्वामी। "उपन्यास-रचना में इनका उद्देश्य प्रेम का विज्ञान प्रस्तुत करना था। इसलिए इनके द्वारा रचित ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानक भी प्रेम की विविधता एवं रहस्यमयता के इर्द-गिर्द घूमते रहते हैं। इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास-सम्मत सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों का चित्रण नहीं हुआ है तथा अनेक स्थलों पर कालदोष भी आ गया है।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 499)

इस काल के सामाजिक उपन्यासकारों में लज्जाराम शर्मा (आदर्श दंपति, आदर्श हिंदू), किशोरीलाल गोस्वामी (लीलावती व आदर्श सती, चपला व नव्य समाज, पुनर्जन्म व सौतिया

डाह), अयोध्यासिंह उपाध्याय (अधखिला फूल), राधिकारमण प्रसाद (नवजीवन व प्रेमलहरी) आदि उल्लेखनीय हैं। इस युग के सामाजिक उपन्यासों में सुधारवादी जीवन दृष्टि प्रधान है।

द्विवेदी युगीन उपन्यासों की परंपरा ने आगे चलकर प्रेमचंद की उपन्यास रचना के लिए पृष्ठभूमि प्रस्तुत की। सामाजिक उपन्यासों का लक्ष्य समाज सुधार था। प्रेमचंद ने भी इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर उपन्यास लिखने लगे। उनके उपन्यास 'प्रेमा' (1907), 'रूठी रानी' (1907) और 'सेवादसन' (1918) इसी युग में प्रकाशित हुए।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युगीन प्रमुख ऐतिहासक रचनाकरों के नाम बताइए।
- द्विवेदी युगीन सामाजिक उपन्यासों का प्रमुख लक्ष्य क्या था?
- द्विवेदी काल के गद्य साहित्य में अंतर्निहित चेतना क्या थी?
- द्विवेदी काल के गद्य लेखकों का प्रधान लक्ष्य क्या था?
- प्रवृत्ति के आधार पर द्विवेदी काल के उपन्यासों को किस प्रकार बाँटा जा सकता है?
- जासूसी उपन्यासों के प्रवर्तक कौन हैं?

3.3.4 प्रेमचंद का आगमन और योगदान

हिंदी उपन्यास साहित्य के संदर्भ में छायावाद युग को प्रेमचंद युग कहा जाता है क्योंकि 'सेवासदन' का प्रकाशन हिंदी उपन्यास क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण घटना थी। द्विवेदी युग के उपन्यासों में अजीबोगरीब घटनाओं के द्वारा पाठकों में कुतूहल पैदा किया जाता था। यथार्थ को अभिव्यक्त करने के लिए साधन नहीं मिले। अतः हिंदी साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद के आगमन से उपन्यास विधा सशक्त रूप से विकसित होने लगा। प्रेमचंद ने भारतीय जनता की समस्याओं को समझकर उन्हें उपन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त किया। इसीलिए उनके उपन्यास आम जनता की व्यथा-कथा को उजागर करते हैं। प्रेमचंद पर महात्मा गांधी का प्रभाव दिखाई देता है। उन्होंने महात्मा गांधी की पुकार पर सरकारी नौकरी तक छोड़ दी।

प्रेमचंद के संदर्भ में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कुछ रोचक तथ्यों को उजागर किया। अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास' में उन्होंने स्पष्ट किया कि प्रेमचंद अपने आपको सदा मजदूर समझते थे। प्रेमचंद कहा करते थे - "मैं मजदूर हूँ, मजदूरी के बिना मुझे भोजन करने का अधिकार नहीं।" इसका यह अर्थ नहीं कि "उन्हें मजदूरी करना लाजिमी था, बल्कि इसलिए कि उनके दिमाग में कहने लायक इतनी बातें आपस में धक्का-मुक्की करके निकलना चाहती थीं कि वे उन्हें प्रकट किए बिना रह नहीं सकते थे। उनके हृदय में इतनी वेदनाएँ, इतने विद्रोह भाव और इतनी चिनगारियाँ भरी थीं कि उन्हें सम्हाल नहीं सकते थे। उनका हृदय अगर इन्हें प्रकट न कर देता तो वे शायद पहले ही बंधन तोड़ देते।" (हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास, पृ. 228)।

प्रेमचंद का व्यक्तित्व सरल था। वे धार्मिक आडंबरों को ढोंग समझते थे। उनकी दृष्टि में मनुष्यता सबसे श्रेष्ठ है। वे पददलित, निस्सहाय, निरीह, अपमानित और शोषित जनता की आवाज थे। पाठकों को सहज रूप से झोंपड़ियों से लेकर महलों तक, छोटे-छोटे खोमचेवालों से लेकर उच्च पद पर आसीन व्यक्तियों तक ले जाने की कला प्रेमचंद में विद्यमान थी।

प्रेमचंद का अपना एक निजी जीवन दर्शन था। वे यह मानते थे कि यदि गरीब इंसान या आम आदमी यह अनुभव कर सकें कि संसार की कोई भी शक्ति उन्हें नहीं दबा सकती तो वे निश्चय ही अजेय होंगे। इसके लिए तो बस उन्हें अपने भीतर की शक्ति को पहचानना होगा। बाहरी बंधन को वे दो प्रकार के मानते थे। एक का नाम संस्कृति है तो दूसरे का संपत्ति। एक का वाहक धर्म है तो दूसरे का राजनीति। प्रेमचंद इन दोनों को मनुष्यता के बाधक मानते थे। इसीलिए उन्होंने 'गोदान' में मेहता के मुख से कहलवाया है कि "मैं भूत की चिंता नहीं करता, भविष्य की परवाह नहीं करता। भविष्य की चिंता हमें कायर बना देती हैं। भूत का भार हमारी कमर तोड़ देता है। हममें जीवन शक्ति इतनी कम है कि भूत और भविष्य में फैला देने से वह क्षीण हो जाती है। हम व्यर्थ का भार अपने ऊपर लादकर रूढ़ियों और विश्वासों तथा इतिहासों के मलबे के नीचे दबे पड़े हैं। उठने का नाम नहीं लेते।" (गोदान, पृ. 179)

प्रेमचंद के अनुसार प्रेम मानसिक गंदगी को दूर करके संघर्ष करने की शक्ति प्रधान करता है। जब प्रेमचंद के पात्र प्रेम करने लगते हैं तो वे सेवा की ओर अग्रसर होते हैं तथा अपना सर्वस्व त्याग देते हैं क्योंकि जहाँ सेवा और त्याग नहीं, वहाँ प्रेम भी नहीं। प्रेमचंद ने आरंभ में आदर्शवादी उपन्यासों का सृजन किया। लेकिन धीरे-धीरे वे यथार्थ की ओर मुड़े। उनके लेखन को 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' के नाम से जाना जाता है। 'सेवासदन' (1918), 'प्रेमाश्रम' (1921), 'रंगभूमि' (1925), 'कायाकल्प' (1926), 'निर्मला' (1927), 'गबन' (1931), 'कर्मभूमि' (1932) और 'गोदान' (1936) उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। उनका अधूरा उपन्यास है 'मंगलसूत्र' (1936)।

भाषा और शिल्प की दृष्टि से प्रेमचंद ने उपन्यास साहित्य को विशिष्ट स्तर पर पहुँचाया। उनके उपन्यासों की भाषा बोलचाल की भाषा (हिंदुस्तानी) है। पात्रों एवं परिवेश के अनुरूप उनके उपन्यासों में भाषा वैविध्य को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद के उपन्यासों में क्या पाया जाता है?
- प्रेमचंद के अनुसार मनुष्य के बाहरी बंधन क्या है?
- प्रेमचंद का व्यक्तित्व कैसा था?
- प्रेमचंद के लेखन को किस नाम से जाना जाता है?
- प्रेमचंद का अधूरा उपन्यास कौन-सा है?

3.3.5 प्रेमचंद युगीन उपन्यास

प्रेमचंद युगीन लेखकों की संख्या बहुत ज्यादा है। लेकिन यहाँ कुछ प्रमुख उपन्यासकारों और उनके उपन्यासों की चर्चा करेंगे। विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' ने प्रेमचंद का अनुकरण करते हुए 'माँ' और 'भिखारिणी' शीर्षक उपन्यास लिखे। प्रेमचंद के अनुकरणकर्ताओं में चतुरसेन शास्त्री और प्रतापनारायण श्रीवास्तव प्रमुख हैं। चतुरसेन शास्त्री ने 'हृदय की परख' (1918), 'हृदय की प्यास' (1932), 'अमर अभिलाषा' (1932) और 'आत्मदाह' (1937) शीर्षक उपन्यासों की रचना की। 'विदा' (1929) और 'विजय' (1937) प्रतापनारायण श्रीवास्तव के आदर्शवादी उपन्यास हैं। 'विदा' में उच्च वर्गीय समाज का चित्रण है तो 'विजय' में विधवा समस्या का चित्रण है।

शिवपूजन सहाय का 'देहाती दुनिया' (1926) शीर्षक उपन्यास रूढ़ि को तोड़ने की दिशा में साहसिक कदम था। बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'चंद हसीनों के खतूत' (1927), 'दिल्ली का दलाल' (1927), 'बुधुआ की बेटी' (1928), 'शराबी' (1930) आदि उपन्यासों में समाज की बुराइयों को प्रस्तुत किया था। ऋषभचरण जैन भी उग्र की भाँति समाज के वर्जित विषयों पर कलम चलाई। उन्होंने 'दिल्ली का कलंक', 'दिल्ली का व्यभिचार', 'वेश्यापुत्र' आदि उपन्यासों की रचना की।

प्रेमचंद के समकालीनों में जयशंकर प्रसाद प्रसिद्ध थे क्योंकि उन्होनें कविता और नाटक के साथ-साथ 'कंकाल' (1929) और 'तितली' (1934) की रचना द्वारा उपन्यासकार के रूप में अपना एक निजी स्थान अर्जित कर चुके थे। जहाँ 'तितली' ग्रामीण और कृषक जीवन को उजागर करता है वहीं 'कंकाल' के पात्र असामान्य हैं। वे असामान्य मनोविज्ञान के सिद्धांतों के अनुरूप पात्रों को गढ़ लेते थे। लेकिन उपन्यासकार के रूप में सफल नहीं हो पाए क्योंकि उनकी भाषा उपन्यास रचना के अनुरूप नहीं थी बल्कि वह जरूरत से ज्यादा आडंबर युक्त थी।

'परख', 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' जैनेंद्र के प्रमुख उपन्यास हैं। उनके उपन्यासों की कहानी अधिकतर परिवार के इर्द-गिर्द घूमती है। जैनेंद्र अपने पात्रों को पहेली बनाकर छोड़ देते थे। उन्होंने हिंदी उपन्यास को नई भाषा और नया शिल्प प्रधान किया। उनकी भाषा स्वगत आलाप (खुद से बात करना) है।

इस युग के अन्य उपन्यासकारों में भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा, 1934), राधिकारमण प्रसाद (राम-रहीम, 1937), सियाराम शरण गुप्त (गोद, 1932), भगवतीप्रसाद वाजपेयी (प्रेमपथ, अनाथ पत्नी), वृंदावन लाल वर्मा (संगम, कुंडलीचक्र), राहुल सांकृत्यायन (शैतान की आँख, सोने की ढाल), सूर्यकांत त्रिपाठी निराला (अप्सरा, अलका, प्रभावती, निरूपमा) आदि उल्लेखनीय हैं। इन लेखकों ने परवर्ती लेखकों के लिए मार्गदर्शन किया।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद सफल उपन्यासकार क्यों नहीं बन सके?
- जैनेंद्र की भाषा किस प्रकार की है?
- प्रेमचंद युगीन प्रमुख रचनाकारों का नाम बताइए।

3.3.6 प्रेमचंदोत्तर उपन्यास : प्रगतिवाद काल

प्रेमचंदोत्तर युग हिंदी गद्य के सर्वांगीण उन्नति का युग है। इस युग में भारत ने पराधीनता की बड़ियों को तोड़कर स्वाधीनता की सुखद साँस ली। 'शेखर : एक जीवनी' (अज्ञेय) के प्रकाशन के साथ-साथ हिंदी उपन्यास की दिशा में नया मोड़ा आया। कुछ आलोचकों ने इसकी प्रशंसा की तो कुछ आलोचकों ने इसे असंबद्ध माना। कुछ भी हो कथा, शिल्प और भाषा की दृष्टि से यह परंपरा से हटकर एक नया प्रयोग था। इसे ही आज आधुनिकता की संज्ञा दी जाती है। "इसका मूल मन्तव्य है - स्वतंत्रता की खोज। यह खोज अपने को सबसे काट कर नहीं की गई है, बल्कि अन्य संदर्भों में, यानी मानवीय परिस्थितियों के बीच की गई है। उसकी तलाश में शेखर अनेक प्रकार के आंतरिक संघर्षों से जूझता और भीतरी तनावों से गुजरता है, किंतु अपने निषेधात्मक रोमेंटिक विद्रोह को लेकर वह बहिर्मुखी नहीं हो पाता। फलस्वरूप सारा संघर्ष

मौखिक होकर रह जाता है, क्रिया (एक्ट) में नहीं बदलता।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 689)।

प्रेमचंदोत्तर युगीन उपन्यासों को ऐतिहासिक, व्यक्तिवादी, मानवतावादी, प्रकृतवादी, मनोविश्लेषणवादी, यथार्थवादी, स्वच्छंदतावादी, सामाजिक और आंचलिक वर्गों में रखा जा सकता है। इनके अतिरिक्त कई उपन्यासों को आधुनिकता और जनवाद के केंद्र में रखा जा सकता है। यद्यपि इस युग के उपन्यासों को एक निश्चित प्रवृत्ति के अंतर्गत रखना कठिन है लेकिन उपर्युक्त वर्गीकरण महज अध्ययन की सुविधा के लिए किया जाता है।

सामाजिक उपन्यासकारों में भगवती चरण वर्मा (चित्रलेखा, टेढ़े मेढ़े रास्ते, आखिरी दाँव, भूले बिसरे चित्र, रेखा, सीधी सच्ची बातें तथा सबहिं नचावत राम गोसाईं), भगवती प्रसाद वाजपेयी (टूटा टी सेट, चलते-चलते, विश्वास का बल, सपना बिक गया), अमृतलाल नागर (बूँद और समुद्र), उदयशंकर भट्ट (शेष-अशेष), सियाराम शरण गुप्त (गोद, अंतिम आकांक्षा), विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', सेठ गोबिंददास तथा विष्णु प्रभाकर (निशिकांत, तट के बंधन), यशपाल (दिव्या, दादा कामरेड, झूठा सच) प्रमुख हैं। उपन्यासकार के रूप में भगवती चरण वर्मा को प्रतिष्ठित करने वाला उपन्यास 'चित्रलेखा' पाप और पुण्य की समस्या को नाटकीय शैली में उपस्थित करता है।

मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में व्यक्ति के बाह्य संघर्ष के स्थान पर आंतरिक संघर्ष पर अधिक बल दिया जाता है। इस वर्ग के उपन्यासकारों में जैनेंद्र का नाम अग्रपंक्ति में लिया जाता है। इनके अतिरिक्त अज्ञेय (शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप), इलाचंद्र जोशी (घृणामयी, मुक्तिपथ, सुबह के भूले, जहाज के पंछी, निर्वासित), देवराज (पथ की खोज, बाहर-भीतर, रोड़े और पत्थर, अजय की डायरी), धर्मवीर भारती (गुनाहों का देवता, सूरज का सातवाँ घोड़ा), प्रभाकर माचवे (परंतु, साँचा), नरेश मेहता (डूबते मस्तूल), भरत भूषण अग्रवाल (लौटती लहरों की बाँसुरी), निर्मल वर्मा (वे दिन) आदि प्रमुख उपन्यासकार हैं।

इस युग में ऐतिहासिक उपन्यासों के दौर में इतिहास संबंधी एक नया दृष्टिकोण सामने आया। इस श्रेणी के उपन्यासकारों में वृंदावनलाल वर्मा (झांसी की रानी, कचनार, मृगनयनी, अहिल्याबाई), हजारीप्रसाद द्विवेदी (बाणभट्ट की आत्मकथा, चारुचंद्रलेख, पुनर्नवा, अनमदास का पोथा), राहुल सांकृत्यायन (सिंह सेनापति), रांगेय राघव (मुर्दों का टीला) आदि उल्लेखनीय हैं।

ग्रामांचल के उपन्यासों को आंचलिक कहकर सीमित कर दिया जाता है। फणीश्वरनाथ रेणु (मैला आंचल), नागार्जुन (बलचनमा), उदयशंकर भट्ट (सागर, लहरें और मनुष्य), रामदरश मिश्र (पानी का प्राचीर, जल टूटता हुआ, सूखता हुआ तालाब), हिमांशु श्रीवास्तव (रथ के पहिए), राजेंद्र अवस्थी (जंगल के फूल), विवेकी राय (बबूल), सच्चिदानंद धूमकेतु (माटी की महक) इस श्रेणी के उल्लेखनीय उपन्यासकार हैं।

इस युग में मन्मथनाथ गुप्त, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतराय, लक्ष्मीनारायण लाल, राजेंद्र यादव आदि अनेक उपन्यासकार सामने आए।

बोध प्रश्न

- 'शेखर : एक जीवनी' का मूल मन्तव्य क्या है?
- प्रेमचंदोत्तर युग के कुछ प्रमुख उपन्यासकारों और उनके उपन्यासों का नाम बताइए।
- मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में किस पर बल दिया जाता है?

3.3.7 प्रेमचंदोत्तर उपन्यास : प्रयोगवाद काल

हिंदी साहित्य में प्रयोगवाद वस्तुतः आधुनिक विचारधारा है। प्रगतिवाद के जनवादी दृष्टिकोण को विरोध करने की दृष्टि से यह सामने आया। नए प्रतीकों, नए उपमानों एवं नवीन बिंबों के प्रयोग उपन्यासों में भी होने लगे। प्रगतिवाद काल में जैनेंद्र और अज्ञेय ने प्रयोगों में कहानी और चरित्र का पूरा ध्यान रखा। लेकिन इस दौर में "कहानी का तत्व क्षीण हो गया, जिससे कथानक का पुराना रूप विघटित हो गया तथा अपने क्रियाशील के प्रति सचेत एवं तराशे हुए पात्र नहीं रह गए।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 699)। इस दौर में उपन्यासों में नए शिल्प देखने को मिला। शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' (बहती गंगा), गिरिधर गोपाल (चाँदनी रात के खंडहर), सर्वेश्वर दयाल सक्सेना (सोया हुआ जल) के उपन्यास इसी श्रेणी के हैं।

इन उपन्यासों के अतिरिक्त आधुनिकता बोध के उपन्यास सामने आए। "आस्थाहीन समाज, अनिश्चय की स्थिति में लटके हुए इंसान और आत्मनिर्वासन की अभिव्यक्ति देने की पहल मोहन राकेश ने अपने उपन्यास 'अंधेरे बंद कमरे' (1961) में की। इसके अनुसार प्रेम कोई शासवात उदात्त मूल्य नहीं रह गया, वैयक्तिक महत्वाकांक्षाएँ और आधुनिक जीवन की सफलताएँ प्रेम की आंतरिक विवशता में दरारें पैदा कर देती हैं।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 700)। 'वे दिन' (निर्मल वर्मा), 'मछली मर गई' (राजकमल चौधरी), 'दूसरी बार' (श्रीकांत वर्मा), 'एक पति के नोट्स' (महेंद्र भल्ला), 'डाक बंगला' (कमलेश्वर), 'अपने से अलग' (गंगा प्रसाद विमल), 'पचपन खंबे लाल दीवारें' (उषा प्रियंवदा) आदि उल्लेखनीय हैं।

स्वतंत्रता के बाद स्थितियाँ बदलीं। बदलते सामाजिक स्थितियों तथा परिणामस्वरूप उत्पन्न सामाजिक समस्याओं को लेकर उपन्यास लिखे जाने लगे। उपन्यास एक ऐसी सशक्त साहित्यिक विधा बन चुका है जिसमें समाज की तमाम परिस्थितियों को देखा जा सकता है। छात्रो! स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों के बारे में आप अगली इकाई में अध्ययन करेंगे।

बोध प्रश्न

- प्रयोगवाद काल के उपन्यासों की क्या विशेषता है
- प्रयोगवाद काल के कुछ प्रमुख उपन्यासों और उपन्यासकारों के नाम बताइए।

3.4 पाठ सार

छात्रो! आपने इस इकाई में स्वतंत्रापूर्व हिंदी उपन्यासों का अध्ययन कर चुके हैं। आप समझ ही चुके होंगे कि प्रारंभिक उपन्यास का कालखंड 1877 से 1918 तक माना जाता है। हिंदी साहित्य के पहले उपन्यास के संबंध काफी मतभेद हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार लाला श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरु' (1882) हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास है। इसमें सांस्कृतिक और जातीय संघर्ष का चित्रण है।

भारतेंदु और द्विवेदी युग के उपन्यासों में सुधारवादी चेतना को प्रमुख रूप से देखा जा सकता है। इस युग में अनेक उपन्यासकारों ने ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर हिंदी उपन्यास विधा को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रेमचंद युग में हिंदी उपन्यासों में अनेक आयाम सामने आए। वस्तुतः प्रेमचंद ने भारतीय जनता की समस्याओं को समझकर उन्हें उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्त किया। अतः उनके उपन्यास आम जनता की व्यथा-कथा को उजागर करने में सफल हैं। इस युग में अनेक साहित्यकारों ने आम जनता की पीड़ा को पाठकों के समक्ष रखा। प्रेमचंदोत्तर उपन्यासों में नए प्रतीकों, नए उपमानों और नवीन बिंबों के प्रयोग होने लगे। भाषा और शिल्प की दृष्टि से नवीन प्रयोग होने लगे।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हिंदी उपन्यासों की परंपरा का प्रारंभ हुआ। इसका जन्म सुधारवादी आंदोलन और पुनरुत्थान कालीन स्थितियों के कारण माना जाता है।
2. हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास है लाला श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरु' (1882)।
3. बालकृष्ण भट्ट कृत 'नूतन ब्रह्मचारी' को प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास माना जाता है।
4. भारतेंदु युग हिंदी उपन्यास साहित्य का उद्भव काल है। इस युग के अधिकांश उपन्यासों में समाज सुधार की भावना को देखा जा सकता है। ये उद्देश्यपरक उपन्यास हैं।
5. भारतेंदु युग के उपन्यासों का प्रमुख लक्ष्य था - सामाजिक कुरीतियों को सामने लाकर उनका विरोध करना तथा आदर्श समाज एवं परिवार की स्थापना करना।
6. द्विवेदी युग में रचित गद्य साहित्य के मूल में सांस्कृतिक चेतना और सुधारवादी जीवन दृष्टि है।
7. प्रेमचंद ने भारतीय जनता की समस्याओं को समझकर उन्हें उपन्यास के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। अतः उनके उपन्यास आम जनता की व्यथा-कथा को उजागर करते हैं।
8. प्रेमचंदोत्तर युग हिंदी गद्य की सर्वांगीण उन्नति का युग है। नए प्रतीकों, नए उपमानों और नवीन बिंबों के प्रयोग उपन्यासों में भी होने लगे।

3.6 शब्द संपदा

1. अभ्युदय = उन्नति, उत्थान
2. उपजीव्य = जिसके सहारे जीवन चले, आश्रय
3. ऐतिहासिक = इतिहास से संदर्भित
4. ऐयारी = चालाकी, वेश बदलकर काम निकालना
5. कुरीति = समाज या व्यक्ति को हानि पहुँचाने वाली अनुचित रीति
6. जासूसी = गुप्तचरी
7. तिलिस्मी = अलौकिक व्यवहार

8. रूढ़ि = परंपरा, प्रथा

9. संस्कृति = परंपरा से चली आ रही आचार-विचार

10. सर्वांगीण = जो सभी अंगों से युक्त हो, हर दृष्टि से हर बात में

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु युगीन आरंभिक उपन्यासों की मुख्य प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
2. द्विवेदी युगीन उपन्यासों की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा कीजिए।
3. हिंदी उपन्यास क्षेत्र में प्रेमचंद के योगदान को रेखांकित कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी के प्रथम उपन्यास के संबंध में प्रकाश डालिए।
2. प्रेमचंदोत्तर हिंदी उपन्यासों की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
3. प्रमुख मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों की विशेषताओं को बताते हुए प्रमुख उपन्यासों का उल्लेख कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. रामचंद्र शुक्ल के अनुसार हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास कौन-सा है? ( )
   (अ) भाग्यवती (आ) परीक्षा गुरु (इ) नूतन ब्रह्मचारी (ई) देवरानी जेठानी की कहानी
2. 'अद्भुत लाश' उपन्यास के लेखक कौन हैं? ( )
   (अ) देवकीनंदन खत्री (आ) भारतेंदु हरिश्चंद्र
   (इ) गोपालराम गहमरी (ई) लाला श्रीनिवास दास
3. 'काजर की कोठरी' के लेखक कौन हैं? ( )
   (अ) देवकीनंदन खत्री (आ) भारतेंदु हरिश्चंद्र
   (इ) गोपालराम गहमरी (ई) महावीर प्रसाद द्विवेद
4. इनमें से एक जैनेंद्र का उपन्यास नहीं है? ( )
   (अ) सुनीता (आ) त्यागपत्र (इ) परख (ई) चित्रलेखा

5. भगवती चरण वर्मा के किस उपन्यास में पाप और पुण्य की समस्या पर प्रकाश डाला गया है? ( )

(अ) भूले बिसरे चित्र (आ) टेढ़े-मेढ़े रास्ते (इ) चित्रलेखा (ई) आखिरी दाँव

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. भारतेंदु ने .... नाम के सर्वप्रथम सामाजिक उपन्यास लिखा था।
2. द्विवेदी युग में रचित गद्य साहित्य के मूल में .... चेतना है।
3. जासूसी उपन्यास के प्रवर्तक .... हैं।
4. 'शेखर : एक जीवनी' का मूल मन्तव्य .... है।
5. मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में व्यक्ति के .... पर अधिक बल दिया जाता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. लाला श्रीनिवासदास	(अ) डादा कामरेड
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी	(आ) नदी के द्वीप
3. अज्ञेय	(इ) पचपन खंबे लाल दीवारें
4. यशपाल	(ई) बाणभट्ट की आत्मकथा
5. उषा प्रियंवदा	(उ) परीक्षा गुरु

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 4 : स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास
4.3.1 स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज
4.3.2 बदलता ग्रामीण परिवेश
4.3.3 औद्योगीकरण का प्रभाव
4.3.4 पंचवर्षीय योजनाएँ
4.3.5 स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास
4.3.5.1 सामाजिक उपन्यास
4.3.5.2 व्यक्तिवादी उपन्यास
4.3.5.3 मनोविश्लेषणवादी उपन्यास
4.3.5.4 आंचलिक उपन्यास
4.3.5.5 मिथकीय उपन्यास
4.3.5.6 ऐतिहासिक उपन्यास
4.3.5.7 अस्तित्ववादी उपन्यास
4.3.5.8 हाशियाकृत समाज से संबद्ध उपन्यास
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्द संपदा
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

छात्रो! आप यह जान चुके हैं कि स्वाधीनता आंदोलन के कारण संपूर्ण समाज में सामाजिक और राजनैतिक उथल-पुथल मचा हुआ था। हिंदी साहित्यकारों ने उन तमाम परिस्थितियों को आत्मसात किया और साहित्य के माध्यम से उन्हें अभिव्यक्ति दी, जनता को जागरूक किया और देश की स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने हेतु उन्हें प्रेरित किया। उस समय जनता के पास एकमात्र उद्देश्य था स्वतंत्रता। उस समय का तमाम साहित्य राष्ट्रीय मूल्यों से ओतप्रोत था। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद स्थितियाँ बदलीं। जनता का मोहभंग हुआ। परिणामस्वरूप उदासीनता के लक्षण दिखाई देने लगे। अवसरवादिता और लोभ की प्रवृत्ति मध्यवर्ग में पनपने लगी। शोषक और समाजविरोधी तत्व बढ़ने लगे। औद्योगीकरण और बाजारवाद के कारण सामाजिक स्थितियाँ बदलने लगीं। निम्नवर्ग और मध्यवर्ग बुरी तरह से पिसने लगा। कुछ समुदाय हाशिये पर जीवन यापन करने पर मजबूर हो गए। अतः अनेक

संवेदनशील साहित्यकारों ने अपनी आवाज बुलंद की। इस इकाई में आप स्वतंत्रा के बाद उत्पन्न सामाजिक स्थितियों और उन स्थितियों को उजागर करने वाले उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे।

4.2 उद्देश्य

छात्रो! आप इस इकाई में स्वतंत्रता के बाद के हिंदी उपन्यासों के बारे में पढ़ने जा रहे हैं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- स्वतंत्रता के बाद भारत में उपन्न सामाजिक स्थितियों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- समूचे परिवेश में जो बदलाव आया उसे समझ सकेंगे।
- औद्योगीकरण और उसका प्रभाव तथा विकास हेतु निर्मित पंचवर्षीय योजनाओं के बारे में बता सकेंगे।
- स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास और उनकी प्रवृत्तियों के बारे में स्पष्ट कर सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास

छात्रो! आप स्वतंत्रतापूर्व उपन्यासों के बारे में अध्ययन कर ही चुके हैं। उस समय के कुछ प्रमुख उपन्यासकार स्वातंत्र्योत्तर काल में भी सक्रिय रहें। स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों के बारे में जानकारी प्राप्त करने से पहले स्वतंत्रता के बाद उत्पन्न सामाजिक स्थितियों के बारे में जानना आवश्यक है क्योंकि उनका अंकन साहित्य में होता है। तो आइए, पहले हम स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में उत्पन्न स्थितियों के बारे में जान लें।

4.3.1 स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज

स्वस्थ समाज का निर्माण तभी संभव होगा जब किसी प्रकार की विषमता, कटुता और भेदभाव न हो। ऐसा तभी संभव है जब हर नागरिक को समान सुविधाएँ प्राप्त होंगी। इसमें दो राय नहीं कि स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारतीय समाज का विकास हुआ। 15 अगस्त, 1947 में प्राप्त स्वतंत्रता से संपूर्ण देश में खुशी की लहर दौड़ पड़ी। लेकिन आजादी के बाद हमें भारत-पाक विभाजन के रूप में एक बिखरा हुआ भारत मिला जिसके बारे में कभी कल्पना भी नहीं की थी। विभाजन के बाद आशा थी कि भारत और पाकिस्तान के बीच दृढ़ संबंध स्थापित होंगे लेकिन वह आज तक भी सपना ही बनकर रह गया। फिर भी सशक्त राजनैतिक नेता देश की भागडोर संभाले। पर स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरंत बाद महात्मा गांधी की हत्या से देश को बड़ा झटका लगा।

विभाजन के बाद भारत को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपना स्थान बनाने के लिए प्रतिस्पर्धा के दौड़ में संघर्ष करना पड़ा। 26 जनवरी, 1950 को भारतीय संविधान का निर्माण हुआ। इसके साथ ही भारत को गणतंत्र घोषित किया गया। जनता के मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई।

गरीबी और आर्थिक पिछड़ेपन के रूप में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश के सामने बड़ी समस्या खड़ी हुई। सामान्य जनता, किसान और मजदूरों की स्थिति बदतर होती गई। इस

समस्या को दूर करने के लिए अनेक योजनाएँ बनाई गईं। लेकिन जमींदारी उन्मूलन से लेकर भूदान आंदोलन तक किसी भी योजना से जनता को विशेष लाभ नहीं हुआ। तमाम संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद जाति-पाँति, ऊँच-नीच, छुआछूत आदि विषमताएँ समाज में फैलने लगीं। भारत-पाकिस्तान विभाजन के कारण हिंदू-मुस्लिम वैमनस्य बढ़ता ही गया। विस्थापन और पुनर्वास की समस्या के कारण सांप्रदायिक विद्वेष भी पनपने लगा। विभाजन और महँगाई से उत्पन्न बेरोजगारी के कारण आर्थिक स्थिति बाधित हुई। पूँजीवादी व्यवस्था बढ़ने लगी। स्वतंत्रता के बाद अवनति को रोकने का संघर्ष अधिक हो गया। किसान आंदोलनों को सरकार द्वारा कुचला गया। तेलंगाना किसान आंदोलन इसका ज्वलंत उदाहरण है। जनता का समर्थन भी कम होता था क्योंकि मध्यवर्ग में यह भावना पनपने लगी कि स्वतंत्रता के बाद सब कुछ ठीक हो जाएगा। अतः संघर्ष करने की कोई जरूरत नहीं। यही प्रवृत्ति राजनैतिक तथा साहित्यिक क्षेत्र में भी दिखाई देने लगी।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के दो वर्ष बाद देश को आजादी मिली। उस समय शिक्षित वर्ग में अवसरवादिता की प्रवृत्ति पनपने लगी। इस प्रवृत्ति के कारण वे राजनीति तथा समाज से विमुख होते गए। दूसरी ओर फासिस्ट शक्तियों का पराजय हुआ। रूस ने साम्यवादी व्यवस्था को स्वीकार किया। रूस की बढ़ती शक्ति से अमेरिका को विशेष चिंता हुई और उसने शीत युद्ध का ऐलान किया। परिणामस्वरूप अस्तित्ववादी चेतना से प्रेरित आधुनिकतावादी साहित्य और सिद्धांतों का प्रसार हुआ। भय, कुंठा, अकेलापन, अजनबीपन, संत्रास, निरर्थकता, मृत्युबोध आदि साहित्य में मुख्य रूप से उभरने लगे। अपसंस्कृति के साथ-साथ मूल्यहीनता तेजी से पनपने लगी।

1975 की इमेर्जेंसी, शोषण और दमन के बावजूद जनता में आत्माविश्वास बढ़ने लगा। शोषित जनता में असंतोष और आक्रोश बढ़ने लगा। भय दूर होने लगा। परिणामस्वरूप सत्तातंत्र का भय बढ़ता गया। अनेक साहित्यिक विधाओं में इसका अंकन होने लगा। बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों अर्थात (1980-2000) में उपन्यास केंद्रीय विधा के रूप में विकसित हुआ। इक्कीसवीं सदी में दलित, स्त्री, आदिवासी, अल्पसंख्यक, किन्नर जैसे हाशियाकृत समुदाय परिधि से केंद्र की ओर आने लगे। इन समुदायों पर खुलकर लिखा जाने लगा। साथ ही अन्य प्रवृत्तियों को लेकर गंभीर उपन्यास लिखे गए। छात्रो! आगे संक्षिप्त रूप में इन पर चर्चा करेंगे।

बोध प्रश्न

- स्वतंत्रता के बाद देश को झटका क्यों लगा?
- विस्थापन और पुनर्वास की समस्या के कारण क्या पनपने लगा?
- बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों के साहित्य में किस प्रकार की प्रवृत्तियाँ दिखाई देने लगीं?

4.3.2 बदलता ग्रामीण परिवेश

आप जानते ही हैं कि भारत कृषि प्रधान देश है। अतः गाँवों पर ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए महात्मा गांधी का ध्यान सबसे पहले गाँवों की ओर गया। उन्होंने देश के शिक्षित वर्ग को गाँव के विकास और सुधार के लिए प्रेरित किया। गाँवों के विकास के लिए अनेक योजनाएँ

बनीं जिनके माध्यम से गाँवों में शिक्षा का प्रसार हुआ। पंचायत, सहकारी बैंक, कृषि और चिकित्सा आदि क्षेत्रों का विकास होने लगा।

कृषि विकास योजनाओं के अंतर्गत सिंचाई साधनों के विकास, बागबानी, भूमि विकास, सूखे क्षेत्र विकास, वृक्षारोपण, मुर्गी पालन, भेड़ पालन, लघु उद्योग एवं खादी का विकास आदि के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की गई। इससे ग्रामीणों को रोजगार भी मिल सका। ग्रामोद्योग के क्षेत्र में भी प्रगति हुई। गाँवों के विकास में औद्योगिक और व्यापारिक संगठनों की भूमिका अग्रणी रही। बाढ़ नियंत्रण योजना से किसानों को राहत मिली। गाँवों में बिजली पहुँची, अच्छी फसल उगने लगी, पैदावार बढ़ती गई। अतः यह कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता के बाद कृषि और ग्राम उद्योग के क्षेत्र में विकास हुआ।

बोध प्रश्न

- ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए जो योजनाएँ बनाई गईं उनसे क्या लाभ हुआ?

4.3.3 औद्योगीकरण का प्रभाव

स्वतंत्रता के बाद सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों में बदलाव आने लगा। देश का वातावरण बदल गया। औद्योगीकरण के कारण हर क्षेत्र में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। इसके कारण देश की अर्थ व्यवस्था में भी वृद्धि हुई। औद्योगिक क्षेत्र में भारत विश्व के सभी देशों के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित कर चुका था। औद्योगीकरण के कारण अर्थव्यवस्था का मुख्य केंद्र कृषि से हटकर उद्योग की ओर परिवर्तित होने लगा। कच्चे माल को तकनीकी रूप से उपयोगी वस्तुओं में परिवर्तित किया जाने लगा। उत्पादन में वृद्धि होने के कारण रोजगार के अवसर भी बढ़ने लगे।

औद्योगीकरण का संबंध उत्पादन की प्रक्रिया से है। इस शब्द का प्रयोग व्यापक एवं संकुचित दो अर्थों में होता है। व्यापक रूप में इसका अर्थ है कि देश के संपूर्ण आर्थिक संरचना को परिवर्तित करना। संकुचित रूप में इसका अर्थ है निर्माण उद्योगों की स्थापना एवं विकास करना। देश की अर्थव्यवस्था पर औद्योगीकरण के प्रभाव को निम्नलिखित आरेख के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है -

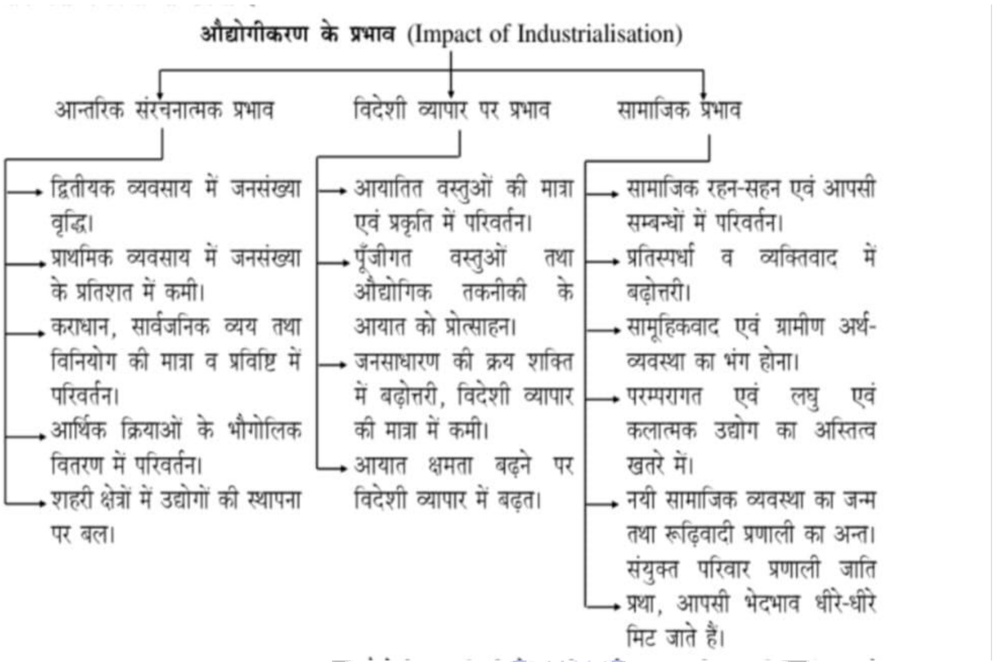

बोध प्रश्न

- औद्योगीकरण किसे कहा जाता है?
- औद्योगीकरण के कारण देश की अर्थ व्यवस्था पर क्या प्रभाव हो सकता है?

4.3.4 पंचवर्षीय योजनाएँ

भारत में पंचवर्षीय योजनाओं की शुरूआत जवाहरलाल नेहरू के समय में ही हो गई थी। 1951 में भारत की पहली पंचवर्षीय योजना शुरू की गई थी और 2017 की 12वीं पंचवर्षीय योजना अंतिम थी। हैरोड-डोमर मॉडल पर आधारित प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-1956) का मुख्य ध्यान देश के कृषि विकास पर था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-1961) का मुख्य लक्ष्य देश के औद्योगिक विकास था। तीसरी योजना (1961-1966) का मुख्य लक्ष्य अर्थव्यवस्था को गतिमान और आत्मनिर्भर बनाना था। चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-1974) का लक्ष्य स्थिरता के साथ विकास और आत्मनिर्भरता की स्थिति प्राप्त करना था। इस योजना के दौरान अर्थात 1971 के चुनावों के दौरान इंदिरा गांधी ने 'गरीबी हटाओ' का नारा दिया था। लेकिन यह योजना असफल रही। पाँचवीं योजना (1974-1979) में कृषि को प्राथमिकता दी गई थी। इसके बाद उद्योग और कारखानों को। छठी योजना (1980-1985) का मूल उद्देश्य गरीबी उन्मूलन और तकनीकी आत्मनिर्भरता प्राप्त करना था। इस योजना ने भारत में आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत की थी। इसी योजना के समय नाबार्ड बैंक (1982) की स्थापना हुई थी। सातवीं योजना (1985-1990) के उद्देश्यों में आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था की स्थापना और रोजगार के पर्याप्त अवसर पैदा करना शामिल था। आठवीं योजना (1992-1997) में मानव संसाधन विकास जैसे रोजगार, शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई थी। देश में उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की शुरूआत हुई थी। नौवीं योजना (1997-2002) का मुख्य लक्ष्य था न्याय और समानता के साथ विकास। दसवीं योजना (2002-2007) का लक्ष्य अगले 10 वर्षों में भारत की प्रति व्यक्ति आय को दुगना करना

था। ग्यारहवीं योजना (2007-2012) का लक्ष्य तेज और अधिक समावेशी विकास था। बारहवीं योजना (2012-2017) का उद्देश्य गैर कृषि क्षेत्र में 50 मिलियन नए काम के अवसर पैदा करना था। भले ही सरकार ने 2017 से पंचवर्षीय योजनाएँ बनाना बंद कर दिया लेकिन भारत के आर्थिक विकास में इन योजनाओं का योगदान अतुलनीय है।

बोध प्रश्न

- पंचवर्षीय योजनाओं का उद्देश्य क्या है?

4.3.5 स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास

स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में उत्पन्न सामाजिक एवं राजनैतिक स्थितियों का अंकन हिंदी उपन्यासों में होने लगा। अध्ययन की सुविधा हेतु स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों को निम्नलिखित रूप से विभाजित किया जा सकता है -

4.3.5.1 सामाजिक उपन्यास

समाज से ली गई विषयवस्तु पर आधारित उपन्यासों को सामाजिक उपन्यास की संज्ञा दी जाती है। आजादी से पहले सभी आंदोलन समाज सुधार और देश की आजादी पर केंद्रित थीं। अतः साहित्य में भी इन्हीं का अंकन होता था। लेकिन आजादी के बाद जनता की उदासीनता, सामाजिक विसंगतियाँ, रूढ़िवादी मान्यताएँ आदि साहित्य के माध्यम से अभिव्यक्त होने लगे। भगवती प्रसाद वाजपेयी, उपेंद्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर, यशपाल, रामेश्वर शुक्ल अंचल, रांगेय राघव, प्रेमचंद आदि अनेक उपन्यासकार तत्कालीन समाज का चित्र प्रस्तुत करने लगे।

नागार्जुन ने अपने प्रसिद्ध उपन्यासों 'रतिनाथ की चाची' (1949), 'बलचनमा' (1952), 'बाबा बटेसरनाथ' (1954), 'दुखमोचन' (1956), 'कुंभीपाक' (1960) आदि के माध्यम से ग्रामीण जीवन को केंद्र में रखकर स्वातंत्र्योत्तर सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्य को प्रस्तुत किया। 'गंगा मैया' (भैरव प्रसाद गुप्त) शीर्षक उपन्यास में किसानों और जमींदारों के बीच का संघर्ष अंकित है। गंगा के कछार में सामूहिक खेती की योजना बनती है। मटरू की खेत को जमींदारों से बचाने के लिए किसान एकजुट होकर संघर्ष करते हैं। इस उपन्यास में विधवा पुनर्विवाह को भी दर्शाया गया है। इसी प्रकार वृंदावन लाल वर्मा के उपन्यास 'अमर बेल' (1953) में जमींदारी उन्मूलन, सहकारिता आंदोलन आदि का चित्रण है। 'अलग-अलग वैतरणी' (1967) में शिवप्रसाद सिंह ने स्वातंत्र्योत्तर गाँवों की वर्ण व्यवस्था पर आधारित जाति प्रथा की विषमता का यथार्थपरक अंकन किया है। 'जल टूटता हुआ' में रामदरश मिश्र ने अपने पात्र के माध्यम से यह चिंता व्यक्त की कि गाँव टूट रहा है, मूल्य टूट रहे हैं, सत्य टूट रहे हैं, कोई किसी का नहीं, सब अकेले हैं। राही मासूम रज़ा ने अपने प्रसिद्ध उपन्यास 'आधा गाँव' (1966) में 1937-1952 तक के 15 वर्षों के काल खंड में हिंदू-मुस्लिम और भारत-पाक विभाजन के कारण घटित घटनाओं का मर्मस्पर्शी अंकन किया है। सांप्रदायिक जहर को 'झूठा सच' (यशपाल), 'तमस' (भीष्म साहनी), 'जहरबद्ध' (अब्दुल बिस्मिल्लाह) आदि उपन्यासों में भी चित्रित किया गया है। जगदीश चंद्र का 'धरती धन न अपना', 'घास गोदाम', 'मुट्ठी भर कांकर' आदि उपन्यासों में दलित एवं निम्न वर्गीय किसान-मजदूर के यथार्थ को नई तरह से प्रस्तुत किया गया है। कृष्णा सोबती के

उपन्यास 'जिंदगीनामा' में स्वाधीनता आंदोलन की गतिविधियों के साथ-साथ स्वतंत्रता प्राप्ति तक के पंजाब की सामाजिक हलचल और सांस्कृतिक परिदृश्य का अंकन है।

यह कहा जा सकता है कि स्वातंत्र्योत्तर सामाजिक उपन्यासों में तत्कालीन सामाजिक विसंगतियाँ, जमींदारी उन्मूलन, किसान-मजदूर संघर्ष, टूटते बिखरते गाँव, बदलते मूल्य आदि का बखूभी चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- सामाजिक उपन्यास किसे कहा जाता है?
- सामाजिक उपन्यासों की विशेषताएँ बताइए।

4.3.5.2 व्यक्तिवादी उपन्यास

स्वतंत्रता के बाद साहित्य के केंद्र में व्यक्ति में आ गया। ध्यान से देखा जाए तो यह स्पष्ट होता है कि व्यक्तिवादी उपन्यासों का श्रीगणेश प्रेमचंद कालीन उपन्यासों में स्वतंत्रता से पहले ही हो चुका था लेकिन स्वतंत्रता के बाद जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, अज्ञेय, भगवती चरण वर्मा, नरेश मेहता आदि उपन्यासकारों के उपन्यासों में वैयक्तित्क चेतना बखूबी मुखरित हुई। व्यक्तिवादी उपन्यासों के पात्र अहं केंद्रित आत्मविश्वासी होते हैं। अतः जीवन, मृत्यु, ईश्वर, प्रेम, विवाह, समाज आदि से संबंधित धारणाएँ उनकी निजी अनुभवों से ओत-प्रोत होती हैं। इन उपन्यासों में व्यक्तित्व की महत्ता को रेखांकित किया जा सकता है।

व्यक्तिवादी पात्रों के जीवन में व्याप्त निराशा के कारण ईश्वर, भाग्य और पुनर्जन्म के प्रति आस्था उत्पन्न होता है। 'नदी के द्वीप' (अज्ञेय) उपन्यास में रेखा वैवाहिक जीवन की यातनाओं से गुजरती है। अतः उन कटु अनुभवों के आधार पर वह भविष्य के सपने देखना व्यर्थ समझती है तथा वर्तमान में ही विश्वास रखती है। वह क्षण की अनुभूति को ही यथार्थ मानती है। इसी प्रकार 'डूबते मस्तूल' (नरेश मेहता) की रंजना भी क्षण में ही विश्वास रखती है। रंजना के माध्यम से नरेश मेहता कहते हैं कि 'प्रत्येक क्षण का सत्य ही सत्य है और पूरा जीवन इन छोटे-छोटे संपूर्ण खंड सत्यों का यौगिक विस्तार फैलाव है।' 'मुक्तिपथ' (इलाचंद्र जोशी), 'व्यतीत' (जैनेंद्र), 'रेखा' (भगवती चरण वर्मा), 'टूटा टी सेट' (भगवती प्रसाद वाजपेयी) आदि कुछ प्रमुख व्यक्तिवादी उपन्यास हैं।

बोध प्रश्न

- व्यक्तिवादी उपन्यासों की विशेषताएँ बताइए।
- व्यक्तिवादी पात्र कैसे पहचान सकते हैं?

4.3.5.3 मनोविश्लेषणवादी उपन्यास

इस वर्ग के उपन्यासों में पात्रों के चरित्र-चित्रण का सूक्षम मनोवैज्ञानिक अध्ययन और विश्लेषण प्रस्तुत किया जाता है। इस तरह के उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं के साथ-साथ वैयक्तिक समस्या और व्यक्ति पर उनका प्रभाव तथा व्यक्ति के मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण होता है। व्यक्ति के जीवन में अतृप्त इच्छाओं एवं निराशाजनक भावनाओं के कारण कुंठाओं का जन्म होता है। प्रेम, विवाह और यौन संबंधों को लेकर समाज में जो रूढ़ मान्यताएँ हैं उन पर अनास्था रखने वाला व्यक्ति मानसिक संघर्षों से ग्रस्त होता है। यह भी देखा जा सकता है कि अतृप्त

वासनाएँ उसे कुंठित और मानसिक रोगी बना सकती हैं। इन सभी पहलुओं का चित्रण उपन्यासों में हुआ है।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में आधुनिक मानव की परिवर्तित मान्यताओं एवं स्वच्छंद प्रेम प्रवृत्ति का चित्रण दिखाई देता है। 'शेखर : एक जीवनी' (अज्ञेय), 'नदी के द्वीप' (अज्ञेय), 'अपने अपने अजनबी' (अज्ञेय), 'जहाज का पंछी' (इलाचंद्र जोशी), 'संन्यासी' (इलाचंद्र जोशी), 'सुनीता' (जैनेंद्र), 'परख' (जैनेंद्र), 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) आदि मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों के उदाहरण हैं।

बोध प्रश्न

- मानोविश्लेषणवादी उपन्यासों की विशेषताएँ बताइए।

4.3.5.4 आंचलिक उपन्यास

आंचलिक उपन्यासों में नायक या नायिका नहीं होते बल्कि परिवेश ही नायक होता है। हिंदी में 'अंचल' शब्द का सीधा सा अर्थ है जनपद या क्षेत्र जो अपने आप में एक पूर्ण भौगोलिक इकाई है। अतः अंचल विशेष के अपने रीति-रिवाज, संस्कार, जीवन प्रणाली, परंपराएँ और मान्यताएँ आदि होती हैं। आंचलिक उपन्यासों का विषय क्षेत्र ग्राम एवं भारत के अज्ञात अंचल होता है। इन उपन्यासों के संबंध में अपना मत व्यक्त करते हुए रामदरश मिश्र ने कहा है कि "आंचलिक उपन्यास तो अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है। उसका संबंध जनपद से होता है ऐसा नहीं, वह जनपद की ही कथा है।" फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल', नागार्जुन का 'रतिनाथ की चाची', 'वरुण के बेटे', रांगेय राघव का 'कब तक पुकारूँ', शिवप्रसाद सिंह का 'अलग-अलग वैतरणी', शिवपूजन सहाय का 'देहाती दुनिया' आदि प्रमुख आंचलिक उपन्यास हैं।

बोध प्रश्न

- आंचलिक उपन्यासों की विशेषताएँ बताइए।

4.3.5.5 मिथकीय उपन्यास

साहित्य और मिथक एक-दूसरे के पूरक हैं। यदि साहित्य को सभ्य मनुष्य का यथार्थ माना जाए तो मिथक आदिम मनुष्य का। मिथक का धार्मिक कृत्यों से अटूट संबंध होता है। मिथक शब्द अंग्रेजी के मिथ शब्द के हिंदी रूपांतरण है। सामान्य रूप से मिथ एक मिथ्या कथा है जिसकी सच्चाई की परीक्षा नहीं की जा सकती। देवी-देवताओं, विश्व की उत्पत्ति तथा लोक विश्वासों आदि से इसका संबंध होता है। यह एक ऐसा विश्वास है जिसे बिना तर्क के स्वीकार कर लिया जाता है।

मिथकीय उपन्यासों की कथा 'रामायण' और 'महाभारत' आदि पर आधारित होती हैं। इन उपन्यासों की विशेषता यह होती है कि मिथकीय चरित्र वर्तमान संदर्भों को अभिव्यक्त करते हैं। वर्तमान संदर्भ को व्यक्त करने के कारण ये उपन्यास प्रासंगिक बन जाते हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों (बाणभट्ट की आत्मकथा, चारुचंद्रलेख, पुनर्नवा आदि) में मिथकों, आद्य बिंबों के माध्यम से कथा को आगे बढ़ाया गया है।

नरेंद्र कोहली के 'दीक्षा', 'अवसर', 'संघर्ष की ओर' आदि उपन्यासों में रामकथा को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है। इनमें लौकिक स्तर पर राक्षस पूँजीपति वर्ग का

प्रतिनिधि है तो राम एवं वानर सेना मजदूर वर्ग का। भगवान सिंह ने 'अपने अपने राम' में राम के संबंध में एक नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। प्रणव कुमार वंद्योपाध्याय ने 'पदातिक' उपन्यास में राम को मानवीय कथा भूमि पर प्रतिष्ठित कर परंपरा और आधुनिकता के बीच समन्वय पर बल दिया है। मृदुला सिन्हा के उपन्यास 'परितप्त लंकेश्वरी', 'सीता पुनि बोली' आदि भी मिथकीय उपन्यास ही हैं।

बोध प्रश्न

- मिथक किसे कहा जाता है?
- मिथकीय उपन्यासों की क्या विशेषता है?

4.3.5.6 ऐतिहासिक उपन्यास

इतिहास और साहित्य दोनों की अपनी-अपनी सीमाएँ होती हैं। इतिहास में तथ्यों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जबकि ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास के तथ्यों को ग्रहण किया जाता है और कथा की रोचकता बनाए रखने के लिए कल्पना का भी सहारा लिया जाता है। हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यासों में देशभक्ति का स्वर प्रधान है। हिंदी में दो प्रकार के ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गए हैं - कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास और इतिहास प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास।

कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास का आधार कम मात्रा में होता है। कहीं-कहीं तो ऐतिहासिक पात्रों का केवल नामोल्लेख किया जाता है, कहीं-कहीं परिवेश ऐतिहासिक होता है तो घटनाएँ और पात्र काल्पनिक। आचार्य चतुरसेन शास्त्री का 'वैशाली की नगरवधू', 'वयं रक्षाम', राहुल सांकृत्यायन का 'सिंह सेनापति', वृंदावनलाल वर्मा का 'कचनार' और 'टूटे काँटे' आदि कल्पना आधारित ऐतिहासिक उपन्यास हैं।

इतिहास प्रधान उपन्यासों में कल्पना की अपेक्षा ऐतिहासिक तथ्यों पर ज़ोर दिया जाता है। वृंदावनलाल वर्मा के 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई', 'अहल्याबाई', 'माधवजी सिंधिया', सत्यकेतु विद्यालंकार के 'आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य' आदि इसी श्रेणी के उपन्यास हैं।

बोध प्रश्न

- ऐतिहासिक उपन्यासों की क्या विशेषता है?
- इतिहास और कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यासों में क्या अंतर है?

4.3.5.7 अस्तित्ववादी उपन्यास

अस्तित्ववादी दर्शन में मृत्यु से साक्षात्कार महत्वपूर्ण बिंदु है। मृत्यु की आशंका से उत्पन्न भय, संत्रास, निराशा और पीड़ा इसके मुख्य तत्व हैं। दुख की परिस्थितियों में व्यक्ति को उसके अस्तित्व का बोध होता है। इससे स्वार्थ भावना का विकास होता है। ऐसा भी देखा जाता है कि स्वार्थ प्रवृत्ति में लिप्त व्यक्ति अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु पर-पीड़न में सुख अनुभव करता है। ऐसे व्यक्तियों में हर क्षण महत्वूर्ण होता है। निराश की स्थिति में मनुष्य ईश्वर, जीवन, मृत्यु, स्वर्ग, नरक आदि विषयों पर जिज्ञासा व्यक्त करता है।

अज्ञेय का उपन्यास 'अपने अपने अजनबी' अस्तित्ववादी धारा का एक प्रमुख उपन्यास है। उषा प्रियंवदा के उपन्यास 'रुकोगे नहीं राधिका' तथा 'पचपन खंभे लाल दीवारें', सुरेश

सिन्हा के 'एक और अजनबी' आदि में स्त्री के अस्तित्व की सोचनीय स्थिति का अंकन है। व्यक्ति अपने वैयक्तिक अनुभूतियों को महत्वपूर्ण और सार्थक मानता है और वह अपने अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाए रखना चाहता है। अत्यंत विवशता की स्थिति में वह समझौता करने के लिए बाध्य होता है। स्वार्थ और अहं में लिप्त आधुनिक मानव निराशामय जीवन जीता हुआ अस्तित्व के प्रति सचेत रहता है।

बोध प्रश्न

- अस्तित्ववादी दर्शन के मुख्य तत्व क्या हैं?

4.3.5.8 हाशियाकृत समाज से संबद्ध उपन्यास

हाशियाकरण का अर्थ है किसी व्यक्ति या समुदाय को हाशिये पर या किनारे पर ढकेल देना। ये यक्ति या समुदाय मुख्यधारा से कटे हुए रहते हैं। ये गरीब और कमजोर होते हैं। अतः इन्हें हीन दृष्टि से भी देखा जाता है। आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता के कारण आज अनेक ऐसे समुदाय साहित्य के केंद्र में आ चुके हैं जो आज तक हाशिये पर थे। उनमें से प्रमुख हैं स्त्री, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक, किन्नर और वृद्ध। ये समुदाय सदियों से शोषित थे। शिक्षा के कारण इनमें चेतना जगी। असंतोष के कारण उनके भीतर आक्रोश की भावना जागने लगी। परिणामस्वरूप समय के साथ-साथ अपने मूलभूत मानवाधिकारों के लिए, अपनी अस्मिता एवं अस्तित्व के लिए ये संघर्ष करने लगे। यह संघर्ष साहित्य के क्षेत्र में विमर्श के नाम से सामने आया। अनेक संवेदनशील साहित्यकारों ने इन समुदायों के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुए साहित्य सृजन किया और इन समुदायों के दुख-दर्द को अभिव्यक्त किया। स्त्रीवादी साहित्यकार और दलित साहित्यकार सहानुभूति के लेखन को नहीं मानते। उनके अनुसार स्वानुभूति का साहित्य ही स्त्री और दलित साहित्य है। लेकिन इस सच से मुँह नहीं मोड़ा जा सकता है कि सहानुभूतिपरक साहित्य भी महत्वपूर्ण है।

स्त्री विमर्श की दृष्टि से मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब', 'छितकोबरा', 'मिलजुल मन', चित्रा मुद्गल का 'आँवा', मैत्रेयी पुष्पा का 'इदन्नम', 'अल्मा कबूतरी', 'चाक', प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता', कृष्णा सोबती का 'सूरजमुखी अंधेरे में', नासिरा शर्मा का 'शाल्मली', 'ठीकरे की मंगनी', अनामिका का 'आईना साज़', सूर्यबाला का 'यामिनी कथा' आदि उल्लेखनीय हैं। दलित विमर्श की दृष्टि से जयप्रकाश कर्दम का 'छप्पर', ओमप्रकाश वाल्मीकि का 'जूठन' उल्लेखनीय है तो अल्पसंख्यक विमर्श की दृष्टि से राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव', अनवर सुहैल का 'पहचान', मंजूर एहतेशाम का 'सूखा बरगद'। संजीव का 'जंगल जहाँ शुरू होता है', 'पाँव तले दूब', 'फांस', मधुकर सिंह का 'बाजात अनहद ढोल', मैत्रेयी पुष्पा का 'झूलानट' आदि में आदिवासियों का संघर्ष है तो 'समय सरगम' (कृष्णा सोबती), 'गिलीगड्डू' (चित्रा मुद्गल), 'उस चिड़िया का नाम' (पंकज बिष्ट), 'रेहन पर रग्घू' (काशीनाथ सिंह), 'दौड़' (ममता कालिया), 'पत्थर और पानी' (रवींद्र वर्मा), 'वसीयत' (सूरज सिंह नेगी) आदि में वृद्धों की व्यथा-कथा का अंकन हुआ है। 'यमदीप' (नीरजा माधव), 'गुलाम मंडी' (निर्मला भुराडिया), 'किन्नर कथा' (महेंद्र भीष्म), 'मैं पायल' (महेंद्र भीषम), 'तीसरी ताली' (प्रदीप सौरभ), 'पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नाला सोपारा' (चित्रा मुद्गल), 'ज़िंदगी 50-50' (भगवंत अनमोल), 'मैं भी औरत हूँ' (अनसूया त्यागी),

'अस्तित्व की तलाश में सिमरन' (मोनिका देवी) आदि उपन्यास किन्नरों के जीवन और उनके संघर्ष को व्यक्त करती हैं।

बोध प्रश्न

- हाशियाकरण का क्या अर्थ है?

4.4 पाठ सार

छात्रो! आप इस इकाई को पढ़ने के बाद स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों के बारे में अपना विचार व्यक्त करने में सक्षम होंगे। आपने स्वतंत्रता के बाद के भारतीय समाज की सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों से भी परिचित हो चुके हैं। आजादी के बाद स्थितियाँ बदलीं। जनता का मोहभंग हुआ। स्वार्थी नेताओं के कारण जनता बुरी तरह से पिसने लगी। आजादी के बाद हमें भारत-पाक विभाजन के रूप में एक बिखरा हुआ भारत मिला जिसके बारे में कभी कल्पना भी नहीं की थी। विभाजन के बाद आशा थी कि भारत और पाकिस्तान के बीच दृढ़ संबंध स्थापित होंगे लेकिन ऐसा कुछ नहीं हो पाया। इतना ही नहीं औद्योगीकरण के कारण ग्रामीण और शहरी परिवेश में बदलाव नजर आने लगा। सारा भारत बाजार में बदल गया। सरकार ने भारत के विकास के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनाईं। संवेदनशील साहित्यकारों ने उपन्यासों के माध्यम से इन परिस्थितियों को बखूबी चित्रित किया है। परिणामस्वरूप स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों को अध्ययन की सुविधा हेतु सामाजिक, ऐतिहासिक, मिथकीय, व्यक्तिवादी, मनोविश्लेषणवादी, आंचलिक, अस्तित्ववादी और हाशियाकृत समाज से संबद्ध उपन्यासों के रूप में विभाजित किया जाता है। यह विभाजन कथ्य के अनुरूप है। छात्रो! इस इकाई में सूत्र रूप में इन तथ्यों की ओर संकेत मात्र किया गया है।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आजादी के बाद हमें भारत-पाक विभाजन के रूप में एक बिखरा हुआ भारत मिला।
2. विस्थापन और पुनर्वास की समस्या के कारण सांप्रदायिक विद्वेष पनपने लगा। इसका अंकन अनेक उपन्यासों में हुआ।
3. भारतीय समाज में जाति-पाँति, ऊँच-नीच, छुआछूत आदि विषमताएँ फैलने लगीं। स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकारों ने इनका चित्रण किया और पाठकों को चेताया।
4. भय, कुंठा, अकेलापन, अजनबीपन, संत्रास, निरर्थकता, मृत्युबोध आदि साहित्य में मुख्य रूप से उभरने लगे।
5. भारतीय समाज में अपसंस्कृति के साथ-साथ जो मूल्यहीनता तेजी से पनपने लगी उस पर भी उपन्यासकारों ने अपना ध्यान केंद्रित किया।
6. आजादी के बाद जनता की उदासीनता, सामाजिक विसंगतियाँ, रूढ़िवादी मान्यताएँ आदि सामाजिक उपन्यासों के माध्यम से अभिव्यक्त होने लगीं।
7. व्यक्तिवादी उपन्यासों के पात्र अहं केंद्रित आत्मविश्वासी होते हैं। अतः जीवन, मृत्यु, ईश्वर, प्रेम, विवाह, समाज आदि से संबंधित धारणाएँ उनकी निजी अनुभवों से ओत-प्रोत होती हैं।

8. मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं के साथ-साथ वैयक्तिक समस्या और व्यक्ति पर उनका प्रभाव तथा व्यक्ति के मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण होता है।
9. आंचलिक उपन्यासों में परिवेश ही नायक होता है।
10. मिथकीय उपन्यासों की कथा रामायण और महाभारत आदि पर आधारित होती हैं।
12. हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यासों में देशभक्ति का स्वर प्रधान है।
13. स्त्री, दलित, अल्पसंख्यक, आदिवासी, वृद्ध और किन्नर जैसे समुदाय साहित्य के केंद्र में आ चुके हैं।

4.6 शब्द संपदा

1. अपसंस्कृति = ऐसा आचार या पद्धति जो उच्च या श्रेष्ठ मूल्यों के विरुद्ध हो, अनुचित संस्कृति
2. अल्पसंख्यक = कम जनसंख्या वाला समुदाय
3. अवसरवादिता = मौकापरस्ती
4. अस्तित्ववाद = साहित्य-कला आदि में व्यवहृत एक विशेष दार्शनिक सिद्धांत जो मनुष्य के अस्तित्व को आकस्मिक उपज मानता है, क्षण को महत्व देता है और मृत्यु, संत्रास, कुंठा आदि के भीतर से ही उसके सही अर्थ की तलाश करता है।
5. उदासीनता = खिन्नता
6. औद्योगीकरण = व्यवस्था को उद्योग प्रधान बनाने की प्रक्रिया
7. किन्नर = देवलोक का एक देवता जो एक प्रकार का गायक था और उसका मुंह घोड़े के समान होता था। वर्तमान समय में हिजड़ा के लिए शिष्टोक्ति
8. चेतना = ज्ञान, बुद्धि
9. प्रतिस्पर्धा = प्रतियोगिता
10. बाजारवाद = वह मत या विचारधारा जिसमें जीवन से संबंधित हर वस्तु का मूल्यांकन केवल व्यक्तिगत लाभ या मुनाफे की दृष्टि से ही किया जाता है
11. मिथक = लोक काल्पनिक कथानक, पौराणिक कथा
12. विसंगति = संगति का अभाव, समकालीन जीवन की वह स्थिति जहाँ प्रत्येक मूल्य या धारणा का ठीक उलटा रूप दिखाई पड़ता है
13. विस्थापन = किसी स्थान से बलपूर्वक हटाना

14. वैमनस्य = मनमुटाव

15. संत्रास = तीव्र वेदना

16. सांप्रदायिक विद्वेष = धर्म के नाम पर शत्रुता

17. साम्यवादी = साम्यवाद का पक्षधर या समर्थक, मार्क्सवादी

18. हाशिया = अंतिम किनारा

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. स्वतंत्रता के बाद भारत में उत्पन्न सामाजिक स्थितियों पर प्रकाश डालिए।
2. सामाजिक उपन्यास किसे कहते हैं? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
3. मिथकीय और ऐतिहासिक उपन्यासों से क्या अभिप्राय है?
4. देश के विकास में पंचवर्षीय योजनाएँ किस प्रकार सहायक हैं? इस पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. स्वतंत्रता के बाद ग्रामीण क्षेत्रों में आए हुए बदलावों के बारे में चर्चा कीजिए।
2. औद्योगीकरण से क्या अभिप्राय है? देश की अर्थ व्यवस्था को वह किस रूप से प्रभावित करता है? स्पष्ट कीजिए।
3. व्यक्तिवादी उपन्यासों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. मनोविश्लेषणवादी उपन्यासों की विशेषताओं की चर्चा कीजिए।
5. हाशियाकरण से क्या अभिप्राय है? हाशियाकृत समाज से संबंधित उपन्यासों पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. इमेर्जेंसी की घोषणा कब हुई? ( )

   (अ) 1985 (आ) 1975 (इ) 1995 (ई) 1980

2. अस्तित्ववादी धारा का प्रमुख उपन्यास कौन सा है? ( )

   (अ) यमदीप (आ) मैला अंचल (इ) कठगुलाब (ई) अपने अपने अजनबी

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

3. 'झांसी की रानी लक्ष्मीबाई' के लेखक कौन हैं? ( )

(अ) चतुरसेन शास्त्री (आ) वृंदावनलाल वर्मा

(इ) ओमप्रकाश वाल्मीकि (ई) राहुल सांकृत्यायन

4. इनमें कौन सा उपन्यास आंचलिक उपन्यास नहीं है? ( )

(अ) अलग अलग वैतरणी (आ) देहाती दुनिया (इ) कब तक पुकारूँ (ई) वयं रक्षाम

5. सांप्रदायिक वैमनस्य को चित्रित करने वाला उपन्यास कौन सा है? ( )

(अ) तमस (आ) टूटा टी सेट (इ) जूठन (ई) नदी के द्वीप

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. दुख की परिस्थितियों में व्यक्ति को उसके .... का बोध होता है।
2. हिंदी के ऐतिहासिक उपन्यासों का प्रधान स्वर .... है ।
3. .... किसी व्यक्ति को कुंठित और मासिक रोगी बना सकती है।
4. देवी-देवताओं, विश्व की उत्पत्ति तथा लोक विश्वासों से .... का संबंध होता है।
5. मिथकीय चरित्र .... संदर्भों को अभिव्यक्त करते हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. महेंद्र भीष्म	(अ) दीक्षा
2. मृदुला सिन्हा	(आ) अपने अपने राम
3. नरेंद्र कोहली	(इ) जल टूटता हुआ
4. भगवान सिंह	(ई) मैं पायल
5. रामदरश मिश्र	(ई) परितप्त लंकेश्वरी

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
2. हिंदी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ : शशिभूषण सिंघल
3. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास साहित्य में जीवन दर्शन : सुमित्रा त्यागी
4. स्वातंत्र्योत्तर भारतीय साहित्य के सामाजिक सरोकार : हेमलता राठौर
5. उपन्यास, भाषा और स्वातंत्र्य चेतना : पूर्णिमा शर्मा

इकाई 5 : जैनेंद्र : एक परिचय

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : जैनेंद्र : एक परिचय
5.3.1 जीवन परिचय
5.3.2 रचना यात्रा
5.3.3 रचनाओं का परिचय
5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप उपन्यास सम्राट प्रेमचंद से परिचित न हों यह हो ही नहीं सकता। हिंदी उपन्यास साहित्य के विकास-क्रम में उपन्यासकार लाला श्रीनिवास दास (परीक्षा गुरु) के बाद प्रेमचंद का जो स्थान है, प्रेमचंद के पश्चात वही स्थान जैनेंद्र कुमार का है। इस इकाई में आप प्रेमचंद के समकालीन और उनके पश्चात हिंदी कथाकार के रूप में अपनी अलग पहचान बनाने वाले एक प्रमुख व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त करेंगे।

प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों में जैनेंद्र कुमार का विशिष्ट स्थान है। छायावादोत्तर काल के कथा साहित्य का परिदृश्य जैनेंद्र कुमार से निर्मित होना शुरू होता है। वे प्रेमचंद के मित्र, सहयोगी और शिष्य जैसे हैं। पर अपनी संवेदना और भाषा प्रयोग में प्रेमचंद से आगे निकलते प्रतीत होते हैं। वे हिंदी साहित्य के उन गिने चुने साहित्यकारों में से एक हैं जो मूलतः पश्चिमी उत्तर प्रदेश अर्थात ठेठ हिंदी प्रदेश से आते हैं।

जैनेंद्र को हिंदी उपन्यास और कथा-साहित्य के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। एक कहानीकार के रूप में 'अपने पथ के अनूठे अन्वेषक' और 'हिंदी कथा साहित्य के गोर्की' जैनेंद्र कुमार की उपलब्धियाँ अनेक हैं। आपको इनके जीवन और कृतित्व से परिचय प्राप्त करते समय इनकी सादगी, सहजता और विद्वत्ता पर गर्व करने को मन चाहेगा।

5.2 उद्देश्य

आपको इस इकाई के शीर्षक से ही संकेत मिल गया होगा कि यह जैनेंद्र कुमार के परिचय से संबंधित है। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- जैनेंद्र कुमार के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचय प्राप्त करेंगे।
- जैनेंद्र की प्रमुख रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- जैनेंद्र कुमार के संपूर्ण रचना संसार को देख सकेंगे।
- हिंदी कथा साहित्य को उनकी देन का स्वयं आकलन कर सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : जैनेंद्र : एक परिचय

5.3.1 जीवन परिचय

जैनेंद्र कुमार का जन्म 2 जनवरी, 1905 ईस्वी को अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) जिले के कौड़ियागंज कस्बे में हुआ था। इनकी माता का नाम रामदेवी बाई और पिता का नाम प्यारे लाल था। सकट-चतुर्थी के दिन जन्म लेने के कारण माँ ने 'सकटुआ' नाम धर दिया किंतु पिता ने पुत्र के तेजोदीप्त प्रसन्न मुख को देखकर नाम रखा - आनंदीलाल।

जैनेंद्र ने बचपन से ही संघर्ष का जीवन जिया। दो वर्ष के थे कि पिता की मृत्यु हो गई। उनके मामा (जो बाद में सुप्रसिद्ध देशभक्त महात्मा भगवानदीन के नाम से विख्यात हुए) उनकी माँ को अपने साथ ले गए, जहाँ वे रेलवे की नौकरी करते थे। लेकिन दो साल बाद ही उन्होंने स्वयं सब कुछ छोड़ संन्यास ले लिया। संघर्षशील माँ ने अपने बल-बूते पर जैनेंद्र को पाला-पोसा। माँ का संघर्ष और मामा का संन्यास जैनेंद्र की चेतना में सदा के लिए बस गए। यह चेतना उनके जीवन और लेखन दोनों में सर्वत्र दिखाई देती है। जैनेंद्र की दो बहनें थी। बड़ी बहन जीवन भर अविवाहित रहीं ।

15 वर्ष की आयु तक वे यही नहीं समझ पाए कि मामा भगवानदीन उनके पिता नहीं, माँ के भाई हैं। आप अब समझ ही गए होंगे कि जैनेंद्र कुमार नाम तो बहुत बाद में पड़ा, जन्म का नाम तो आनंदीलाल था। इनके मामा ने हस्तिनापुर में एक गुरुकुल की स्थापना की थी। वहीं जैनेंद्र की प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा भी हुई। यहीं यह नया नामकरण भी हुआ। सन 1912 में उन्होंने गुरुकुल छोड़ दिया। प्राइवेट रूप से दसवीं की परीक्षा देने के लिए बिजनौर आ गए किंतु परीक्षा वे 1919 में पंजाब से ही दे सके।

उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्व विद्यालय में प्रारंभ हुई। 1921 में उन्होंने विश्वविद्यालय की पढ़ाई छोड़कर गांधी जी के द्वारा चलाए जा रहे अंग्रेजी शासन के विरोध में असहयोग आंदोलन में भाग लेने के उद्देश्य से दिल्ली आ गए। कुछ समय के लिए वे लाला लाजपत राय के 'तिलक स्कूल ऑफ पॉलिटिक्स' में भर्ती हुए। फिर उसे भी छोड़कर साहित्य सेवा में रम गए। 1921 से 1923 के बीच कुछ व्यापार, फिर नागपुर में राजनीतिक पत्रों के संवाददाता के रूप में कार्य और गिरफ्तारी के बाद दिल्ली लौट कर लेखन कार्य में ही मन लगाने का प्रयत्न किया। कुछ दिन कलकत्ता में भी बिताए पर बात नहीं बनी।

युवा जैनेंद्र के सामने अपने भविष्य के कर्म क्षेत्र चुनने की समस्या रही क्योंकि देश भर में गांधी जी के नेतृत्व में स्वतंत्रता के लिए आंदोलन चलाए जा रहे थे। वे कुल मिलाकर तीन बार जेल भी गए। जैनेंद्र कुमार ने अपने जीवन संघर्ष का वर्णन करते हुए लिखा है, "मैं दुनिया में आ पड़ा। पर दुनिया में मेरी किसी तरह की जान पहचान न थी। समंदर की लहरों पर तिनका

तैरता है क्योंकि हल्का होता है। मुझमें भी कहीं किसी तरह का वजन नहीं था और बरसों लहरों पर मैं इधर-उधर उतराया किया।”

कर्मनिष्ठा और ईमानदारी का गुण उन्हें दाय में मिला था। कोई काम छोटा बड़ा नहीं होता। इसलिए जैनेंद्र ने जीवन में स्टाम्प-फ़रोशी और कपड़ों की फेरी लगाई और गाँवों की पैंठ में जाकर कपड़ा बेचा। थक-हार कर इन्होंने लेखन कार्य को ही अपना काम मान लिया। जैनेंद्र कुमार का जीवन जितना सरल, सहज और सादा था, वे भीतर से उतने ही गहरे थे। प्रेमचंद ने लिखा है, ‘उनमें साधारण सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है जो तुरंत आकर्षित करती है। उनकी भाषा में एक खास प्रकार की लोच है, एक खास अंदाज है।’ आप कह सकते हैं कि जैनेंद्र कुमार में एक आम आदमी, साधारण गृहस्थ, मार्मिक लेखक और सघन विचारक का अद्‌भुत समन्वय है। वे आस्तिक भी थे और जैन भी। उनका महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, राजेंद्र प्रसाद, विनोबा भावे, राधाकृष्णन, जयप्रकाश नारायण, इंदिरा गांधी, राजीव गांधी आदि नेताओं से सीधा संवाद रहा। किंतु यह संवाद राष्ट्रीय हितों की खातिर था, निजी स्वार्थों के लिए कदापि नहीं। गांधी पर उनकी आस्था सदा रही। लेकिन उन्होंने गांधी टोपी कभी न पहनी। स्वतंत्रता आंदोलन में सत्याग्रही अवश्य बने, जेल भी गए किंतु आजादी के बाद राजनीति न की। इमेर्जेंसी के समय इंदिरा गांधी से दो टूक कह दिया कि यह गलत है और इसे तुरंत वापिस लेना चाहिए। जैनेंद्र कुमार ने एक लेखक और साहित्यकार के दायित्व को बख़ूबी निभाया।

जैनेंद्र कुमार की कुल रचनाओं की संख्या 57 बताई जाती है जिसमें से मौलिक उपन्यास 12 हैं। 1927 में उन्होंने एक कहानी लिखी। ‘खेल’ नामक यह कहानी ‘विशाल भारत’ में प्रकाशित होकर बहुत लोकप्रिय हुई। 1929 में ‘परख’ उपन्यास के लिए हिंदुस्तानी अकादमी पुरस्कार, 1966 में लघु उपन्यास ‘मुक्तिबोध’ के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। भारत सरकार ने 1971 में उन्हें पद्म भूषण से भी सम्मानित किया। 1985 में उन्हें उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का सर्वोच्च सम्मान ‘भारत भारती’ मिला जिसे प्रदान करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने अपने वक्तव्य में जैनेंद्र कुमार को ‘आत्मा का शिल्पी’ कहा। सही रोजगार की ऊहापोह के साथ-साथ लेखन करते-करते सहज और सरल जीवन बिताकर जैनेंद्र कुमार ने 24 दिसंबर, 1988 को अंतिम साँस ली। लेखक की तरह जिए और लेखक की तरह मरे। किसी का कोई अनुग्रह कभी स्वीकार न किया। विष्णु खरे ने उनके निधन पर अपने संपादकीय में लिखा था, “भारतीय महालेखन में वे व्यास के ज्यादा समीप हैं, वाल्मिकि के कम; कबीर ज्यादा हैं, सूर-तुलसी कम; गालिब-मीर ज्यादा हैं, इकबाल-फ़ैज़ कम। उन्हीं की शैली में जिसकी संक्रामकता घातक है, वे जैनेंद्र ज्यादा हैं, प्रेमचंद कम।” अपनी अलग पहचान बनाकर जैनेंद्र कुमार हिंदी कथा-साहित्य के अमर हस्ताक्षर बने ।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार का बचपन का नाम क्या था और उनका यह दूसरा नाम कैसे पड़ा?
- जैनेंद्र कुमार के लालन-पालन में उनके मामा का योगदान क्या रहा?
- जैनेंद्र कुमार को आजीविका के लिए क्या-क्या करना पड़ा?

5.3.2 रचना यात्रा

जैनेंद्र कुमार ने अपनी उर्वर लेखनी से प्रचुर लेखन कर अपने पाठकों को लीक से हटकर कृतियाँ दीं। उन्होंने घिसी पिटी नैतिकता और संकीर्णता से अपने पाठकों को उबारकर उन्हें आत्मचिंतन और आत्मावलोकन का अवसर दिया। डॉ. नगेंद्र के शब्दों में, "हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में जैनेंद्र ने एक पहेली के रूप में पदार्पण किया। पाठक को घिसी पिटी एवं संकीर्ण नैतिकता से निकालकर मूल नैतिकता तक पहुँचाने वाले गहन आत्म-चिंतन की ओर सर्वप्रथम उन्होंने ही प्रवृत्त किया।"

हिंदी साहित्य में उनका आविर्भाव कथाकार के रूप में हुआ। 'परख' और 'सुनीता' उपन्यासों ने उन्हें प्रेमचंदोत्तर उपन्यासकारों का सिरमौर बनाया और पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों ने आम लोगों का ध्यान आकृष्ट किया। उनका कथा साहित्य समाज से विद्रोह का परिचायक बनकर उभरा।

जैनेंद्र कुमार ने उपन्यास-क्षेत्र में एक नई शैली का सूत्रपात किया। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा अपने युग की मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं को अपने सुचिंतित दृष्टिकोण से देखा तथा उनका समाधान भी अपने ही चिंतन एवं अनुभव के अनुसार किया है। उन्होंने इसके लिए जो साँचा तैयार किया उसे 'जैनेंद्रीय साँचा' कहा जा सकता है जिसका ताना बाना जैन संप्रदाय के योजक सिद्धांत, गांधीवादी आत्मपीड़न दर्शन, नवीन समयानुकूल सामाजिक नैतिकता और परिवर्तनशील सामाजिक सांस्कृतिक चेतना के मेल से बनाया गया है। जैनेंद्र कुमार की कहानियों और उपन्यासों में वर्णित सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक समस्याओं का आधार पारंपरिक है किंतु उनका समाधान एकदम नवीन है। इस नवीनता को 'जैनेंद्रीय समाधान' कहा जा सकता है।

जैनेंद्र कुमार के साहित्यिक व्यक्तित्व के निर्माण में तत्कालीन परिस्थितियों का प्रभाव तो है ही, उनकी अपनी मौलिकता और चिंतन भी पृष्ठभूमि में है। स्त्री-सशक्तीकरण को रेखांकित करते हुए जैनेंद्र नारी और पुरुष की अपूर्णता और पारस्परिकता की भावना को इनके संघर्ष का कारण समझते हैं। नई तेवर, नई भाषा, नई सोच और नए रूप विधान के साथ विचारशीलता को लेकर जैनेंद्र कुमार ने अपने पहले तीन उपन्यासों 'परख', 'सुनीता' और 'त्यागपत्र' से धूम मचा कर रख दी थी।

जैनेंद्र की रचनाओं में उनका जीवन दर्शन व्याप्त है। वे ईश्वर की अखंड सत्ता में विश्वास रखते हैं। मनुष्य को समाज के साथ अनुकूलन करने की कोशिश करनी चाहिए। वे जैन दर्शन के अस्ति-आस्तिकवाद में भी विश्वास करते हैं। उनकी कर्म फल में भी गहरी आस्था थी। उनके जीवन दर्शन में जीवन के प्रति गहरी आस्था और उसकी रहस्यमयता पर बल है। उनके अनुसार आत्मव्यथा और अहिंसा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। वे सबके प्रति प्रेम और सहानुभूति को अनिवार्य मानते हैं। उनके मतानुसार व्यक्ति त्याग और कष्ट सहन के द्वारा दूसरों को सही मार्ग पर ला सकता है। गांधीवादी जीवन-दर्शन की छाप भी उनकी रचनाओं में है। वे प्रत्येक वक्तव्य को सूक्ष्म विवेचन करके ही प्रस्तुत करते हैं। वे अपने-लेखन के केंद्र में मनुष्य-मात्र का हित रखते हैं।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार को 'पहेली' क्यों कहा गया है?
- जैनेंद्र के उपन्यासों की पहले पहल प्रसिद्धि का सबसे बड़ा कारण क्या रहा होगा?

5.3.3 रचनाओं का परिचय

1921 में जैनेंद्र का कहानी संग्रह 'फाँसी' प्रकाशित हुआ और इसकी सफलता के उपरांत उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'परख' भी आया। इन पुस्तकों ने हिंदी को प्रेमचंद सरीखा एक संपूर्ण कथाकार प्रदान किया। इस उपन्यास में बाल-विधवा के पाखंड पर प्रहार किया गया है। सत्यधन, कट्टो, बिहारी और गरिमा नामक पात्रों के चरित्र पर आधारित यह मनौवैज्ञानिक उपन्यास विधवा विवाह की कथा बड़ी नाटकीय और अविश्वसनीय ढंग से कहता है। आदर्शवाद कथा पर हावी है। सत्यधन आदर्शवादिता में विधवा कट्टो से प्रेम तो कर बैठता है, पर उसे अपनी पत्नी नहीं बना पाता। सत्यधन के प्रेम की परख होती है और वह खोटा सिद्ध होता है।

1935 में जैनेंद्र का दूसरा उपन्यास 'सुनीता' आया। उपन्यास का नायक हरिप्रसन्न एक राष्ट्रीय कार्यकर्ता है। वह अपने मित्र श्रीकांत के यहाँ रहता है और धीरे-धीरे वह सुनीता से प्रेम करने लग जाता है। पर 'सुनीता' के चरित्रों की मानसिक अस्थिरता और कालांतर में हरिप्रसन्न का सुनीता को घर लौटकर हमेशा के लिए चला जाना निरुद्देश्य सा लगता है।

जैनेंद्र की तीसरी कृति 'त्यागपत्र' का प्रकाशन 1937 में हुआ। मृणाल नामक भाग्यहीना युवती के जीवन पर आधारित इस कथा में भतीजा प्रमोद अपनी बुआ मृणाल के मन की पीड़ा को समझता है। कथानायक मृणाल की अनवरत पीड़ा और तदुपरांत मृत्यु से दुखी होकर वह नौकरी से त्यागपत्र देकर दुनिया से विरक्त हो जाता है।

1939 में प्रकाशित उपन्यास 'कल्याणी' में विवाह और डाक्टरी, पत्नीत्व और निजत्व का परस्पर संघर्ष की कहानी है। आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया यह उपन्यास अपने परिचितों की जीवनकथा को समेटते हुए डॉ. श्रीमती कल्याणी असरानी के आज की गृहणी बनने की समस्या को कथारूप देता है।

'सुखदा' (1953) उपन्यास की नायिका सुखदा वैचारिक असमानताओं के कारण अपने पति से खुश नहीं रहती और लाल की ओर आकर्षित हो जाती है। 'व्यतीत' (1953) भी सुखदा के समान आत्मचरितात्मक उपन्यास है। उलझी हुई कथा के पात्र जयंत, अनिता, चंद्री, पुरी आदि कठपुतलियों की तरह व्यवहार करते हैं। 'जयवर्धन' (1956) एक डायरीनुमा उपन्यास है।

जैनेंद्र के उपन्यासों की विशेषताएँ हैं - दार्शनिक और आध्यात्मिक तत्वों का समावेश, पात्र बाह्य वातावरण और परिस्थितियों से अप्रभावित, चरित्रों की भरमार नहीं, नारी पात्रों के व्यवहार का मनोवैज्ञानिक चित्रण और घटनाओं की संघटनाओं पर बहुत कम बल आदि। जैनेंद्र ने अपने प्रायः सभी उपन्यास उत्तमपुरुषात्मक या आत्मपुरुषात्मक रूप से डायरी शैली में लिखे हैं। 'हिंदी उपन्यास साहित्य' में गोपाल राय का कथन है कि जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों की कहानी अधिकतर एक परिवार की कहानी होती है और वे शहर की गली और कोठरी की सभ्यता में ही सिमट कर व्यक्ति पात्रों की मानसिक गहराइयों में प्रवेश करने की कोशिश करते हैं। उनके पात्र बने बनाए सामाजिक नियमों को स्वीकार कर उनमें अपना जीवन बिताने की

चेष्टा नहीं करते, अपितु उन नियमों को चुनौती देते हैं। यह चुनौती उनकी नायिकाओं से आती है जो उनकी लगभग सभी रचनाओं में मुख्य पात्र भी हैं।

एक कहानीकार के रूप में भी जैनेंद्र कुमार अप्रतिम हैं। छायावाद के पश्चात कथा साहित्य के परिदृश्य के निर्माण में उनकी भूमिका उल्लेखनीय है। उनकी 'फाँसी' (1929), 'वातायन' (1930), 'नीलम देश की राजकन्या' (1933), 'एक रात' (1934), 'दो चिड़ियाँ' (1935), 'पाजेब' (1942), 'जयसन्धि' (1949) आदि विविध कहानियाँ 'जैनेंद्र की कहानियाँ' शीर्षक से सात भागों में प्रकाशित हैं। इनमें से पहले भाग में राष्ट्रीय और क्रांतिकारी, दूसरे में बाल मनोविज्ञान, तीसरे में दार्शनिक और प्रतीकात्मक, चौथे में प्रेम और विवाह संबंधी, पाँचवें में प्रेम के विविध रूपों की कहानियाँ, छठे में सामाजिक और सातवें में अन्य कहानियाँ हैं। आलोचकों का मत है कि उन्होंने कहानी को 'घटना' के स्तर से उठाकर 'चरित्र' और 'मनोवैज्ञानिक सत्य' पर लाने का प्रयास किया। उन्होंने कथावस्तु को सामाजिक धरातल से समेटकर व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित किया।

जैनेंद्र ने कहानी को एक सीधी रेखा में बढ़ाने के स्थान पर इसे एक नया मोड़ दिया। इस मोड़ से आरंभ होने वाली कहानी अपनी चेतना और संरचना दोनों में नई थी। वे कहीं भी यह आभास नहीं होने देते कि वे किसी मनोवैज्ञानिक सिद्धांत के सहारे आंतरिक सत्य की पहचान उभार रहे हैं। वे तो आसपास के जाने पहचाने पात्रों में मूर्त सत्य को बहुत सहज भाव से पकड़ लेते हैं और उतनी ही सहजता से उसे शब्दों के सहारे अभिव्यक्त भी कर देते हैं।

निबंधकार, अनुवादक और संपादक के रूप में भी इनकी उपलब्धियाँ उल्लेखनीय हैं। यात्रा संस्मरण (मेरे भटकाव आदि), विचार पुस्तकें (साहित्य और संस्कृति आदि) एक दर्जन से अधिक नाटक, बाल साहित्य, सह लेखन (ऋषभ चरण जैन के साथ) आदि भी आपने खूब लिखे हैं। निबंधकार के रूप में जैनेंद्र का विचाराधीन विषयों के व्यापक क्षेत्र में साहित्य, समाज, धर्म, दर्शन आदि से जुड़े प्रश्नों का चिंतन और विश्लेषण किया गया है। जैनेंद्र की दृष्टि में मानव और मानवता केंद्र में हैं जिसे वे गांधीवादी चिंतन के आलोक में देखते परखते हैं। जहाँ एक ओर उनके ग्यारह-बारह उपन्यास और दस कहानी संग्रह प्रकाशित हुए, वहीं उनके निबंध और आलोचना संग्रह भी विचारणीय हैं। इन अनेक पुस्तकों के लेखक के रूप में जैनेंद्र एक गंभीर चिंतक के रूप में हमारे सामने आते हैं। इनके निबंधों के विषय साहित्य, समाज, राजनीति, धर्म, संस्कृति तथा दर्शन आदि हैं।

सुरेश सिन्हा ने 'हिंदी उपन्यास : उद्भव और विकास' में सही कहा है कि "जैनेंद्र ने व्यक्ति की अतल गहराई में पैठ कर उसकी आंतरिक प्रवृत्तियों को स्पष्ट कर उसके संघर्ष को समाप्त कर दुविधा में पड़े मन को एक निश्चित दिशा देने का प्रयास किया है।" वे अपने समस्त लेखन में किन्हीं प्रश्नों के उत्तर खोजते प्रतीत होते हैं। वे प्रश्नों को टालते नहीं बल्कि उनके सहारे अपनी दृष्टि और अनुभूति को परिष्कृत भी करते हैं। उनके व्यक्तित्व और लेखकीय स्वभाव की यह विशेषता रही है कि वे सदा जीवन और जगत के रहस्यपूर्ण प्रश्नों से उलझते रहे, उनके उत्तर खोजते रहे। इसी कारण वे चिंतक कथाकार कहे जाते हैं। कहना न होगा कि जैनेंद्र का विचारक और चिंतक रूप उनके कथाकार रूप से किसी भी तरह कम नहीं है।

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र कुमार के प्रथम उपन्यास 'परख' में किस समस्या को उठाया गया है?
- कथाकार के रूप में जैनेंद्र कुमार की सबसे बड़ी पहचान क्या है?

5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

आपने लक्ष्य किया होगा कि जैनेंद्र के उपन्यासों के कथानक प्रायः 'स्त्री' केंद्रित है। उन्होंने अपने नारी पात्रों के चरित्र चित्रण में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टि का परिचय दिया है। स्त्री के विविध रूपों, उनकी समस्याओं और प्रतिक्रियाओं का विश्वसनीय अंकन किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में पति-धर्म और पत्नी-धर्म दोनों को ही चुनौती दी है। प्रेमचंद के अनुपूरक और उनके द्वारा 'भारत का गोर्की' कहे गए जैनेंद्र कुमार ने हिंदी कथा साहित्य को नई पारदर्शी भाषा ही प्रदान नहीं की बल्कि शिल्प और कथ्य की ऐसी अनूठी भंगिमा भी दी जिसका पूर्ण परिपाक 'अज्ञेय' (जैनेंद्र कुमार का ही दिया हुआ नाम) के कथा लेखन में हुआ।

जैनेंद्र कुमार ने प्रेमचंद की कथा-परंपरा को आगे बढ़ाते हुए एक नई राह चुनी। उन्होंने प्रेमचंद के द्वारा समर्थित सामाजिक यथार्थ के मार्ग को नहीं अपनाया क्योंकि वे इसकी सीमाओं से बखूबी परिचित हो गए थे। इसलिए वे प्रेमचंद के विलोम नहीं अपितु पूरक बनकर आगे आए। अपनी कथा नैतिकता को उन्होंने और भी अधिक सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक बनाया। काम और परिवार के संबंध को अनूठे ढंग से प्रस्तुत करते हुए मृणालिनी जैसी हाड़-मांस की जीती जागती स्त्रियाँ प्रस्तुत कीं जो अपनी देह का निर्णय स्वयं करने को अपना अधिकार मानती हैं।

स्त्री सशक्तीकरण, नारी-विमर्श और फेमिनिज़्म से प्रभावित वर्तमान में जैनेंद्र के विचार आपको परंपरावादी प्रतीत होंगे। जैसे जैनेंद्र का यह कथन, "अभागिनी है वह जो स्त्री राजनीति में आती है या उसका विचार भी करती है। राजनीति करे वह स्त्री जिसके पास पुरुष न हो।" आपको अजूबा लगेगा। जैनेंद्र कुमार स्त्री मन के चितेरे होने पर भी उसके मन की संपूर्ण थाह न ले सके। वे स्त्री की स्वतंत्रता को सीमा में रखते हुए आदर्श स्त्री की कल्पना को कोई ठोस आकार न दे सके।

प्रिय छात्रो, आपको अपने अध्ययन में धैर्य पूर्वक देखना होगा कि जैनेंद्र अपने स्त्री-विमर्श में कहाँ तक स्त्री के पक्षकार और कहाँ पुरुषवादी मानसिकता रखते प्रतीत होते हैं। आपको लेखक के पाठ से अलग भी यदि अपना कोई समसामयिक पाठ इन उपन्यासों और कहानियों में दिखाई दे तो उसका संज्ञान लें। लेखकीय मंतव्य से अलग आपका यदि कोई मत है तो उसे अवश्य चिह्नित करें। आपको याद रखना होगा कि अपने पहले उपन्यास 'परख' में ही जैनेंद्र कुमार ने पाठकों को संबोधित करते हुए लिख दिया था, "मैंने जगह-जगह कहानी में तार की कड़ियाँ तोड़ दी हैं। वहाँ पाठकों को थोड़ा कूदना पड़ता है। और मैं समझता हूँ, पाठक के लिए थोड़ा अभ्यास वांछनीय होता है, अच्छा ही लगता है।" इसलिए आप भी जैनेंद्र कुमार की रचनाओं को पढ़ते समय यह ध्यान रखें कि जैनेंद्र में कथा के प्रति उदासीनता अवश्य है किंतु उन्होंने इसकी कमी दृश्यात्मकता से पूरी की है। घटनाएँ स्वयं बोलने लगती हैं और कथाएँ नाटक के समान बोलने लग जाते हैं। यही कारण है कि आपको पाठक के रूप में सदा जागरूक रहना होगा।

प्रिय छात्रो! आपको यह स्मरण रखना होगा कि जैनेंद्र का योगदान हिंदी गद्य के निर्माण में भी बहुत महत्वपूर्ण है। भाषा के स्तर पर उनके द्वारा की गई नक्काशी ने हिंदी को नई रवानी दी। उन्होंने हिंदी को एक पारदर्शी भाषा और भंगिमा दी, एक नया तेवर दिया, एक नया 'सिंटेक्स' दिया। जैनेंद्र का गद्य न होता तो अज्ञेय का परिष्कृत गद्य संभव न होता। अज्ञेय ने एक बार कहा था कि आज के हिंदी आख्यानकारों और विशेषतः कहानीकारों में सबसे अधिक टेक्निकल जैनेंद्र हैं।

जैनेंद्र ने कथा-भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठाया। रामस्वरूप चतुर्वेदी ने जैनेंद्र की कथा-भाषा में 'वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' को रेखांकित किया है। उदाहरण के लिए, जैनेंद्र कुमार ने ठेठ खड़ी बोली क्षेत्र की भाषा में निरीह-से दिखने वाले अव्ययों (तो, भी, और, कि) का ऐसा प्रयोग किया जिसका इससे पहले किसी ने ऐसे प्रयोग नहीं किया था। वे नए शब्द गढ़ने में अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय देते हैं। कुछ शब्द जैसे - असुधार्य, आशाशील आदि पहले कभी प्रयोग में न आए थे और उनके प्रयोग से इन शब्दों ने नई अर्थवत्ता को प्रस्तुत किया। वे वाक्य गठन में भी उदारता बरतते नज़र आते हैं, जैसे- "पर सबको संतुष्ट कर पाऊँ ऐसा मुझसे नहीं बनता। बरसों लहरों पर मैं इधर-उधर उतराया किया।"

जैनेंद्र कुमार तत्सम शब्दों के साथ तद्भव और उर्दू शब्दों का सहज प्रयोग करते हैं, जैसे - तत्सम - परिमित, आमंत्रण, आग्रह आदि; तद्भव - धीरज; उर्दू शब्द - फिजूल, हरज़, दरकार। अँग्रेजी शब्द - पावर, पर्चेजिंग पावर, मनी बैग। संवादों का प्रयोग करके अपनी भाषा-शैली को रोचक बना देते हैं। उदाहरण के लिए -

> सुनीता : तुम क्या चाहते हो हरी बाबू !
>
> हरिप्रसन्न : क्या चाहता हूँ? तुम पूछोगी क्या चाहता हूँ, तुमको चाहता हूँ, समूची तुमको चाहता हूँ !

वक्रोक्ति का प्रयोग करना कोई उनसे सीखे, जैसे- 'दिल बस्तगी की कहानी चाहिए तो हटिए मुझे न सताइए' (सोच विचार, पृ. 46)। भाषा को बाहरी सजावट से दूर करते हुए उसका निपट प्रयोग करते देखकर अशोक वाजपेयी ने उन्हें 'शब्द के संकोच का कथाकार' कहा था। शब्दों को समझ बूझकर करीने से सजाकर मितव्यता और किफायतसारी से प्रयोग करते हुए जैनेंद्र ने एक ऐसे कथा संसार की रचना की जिसका कोई जोड़ नहीं।

बोध प्रश्न

- 'स्त्री केंद्रित' रचना से आप क्या समझते हैं? एक उदाहरण दीजिए।
- 'वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' - इस वाक्यांश को स्पष्ट कीजिए।
- 'प्रेमचंद का विलोम नहीं पूरक' कहने से क्या तात्पर्य है?

5.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के इतिहास में प्रेमचंद के पश्चात जैनेंद्र कुमार उपन्यासकार और कहानीकार के रूप में विख्यात होने वाले साहित्यकारों में प्रमुख स्थान रखते हैं। खड़ी बोली

हिंदी के क्षेत्र में कोड़ियागंज (अलीगढ़) नामक गाँव में इनका जन्म 2 जनवरी सन 1908 को हुआ था। बचपन का नाम आनंदीलाल था और हस्तिनापुर के गुरुकुल में जैनेंद्र कुमार नाम मिला। उच्च शिक्षा काशी हिंदू विश्वविद्यालय से लेकर आजीविका की खोज की और कोई खास सफलता न मिलने पर केवल मसिजीवी लेखक होकर रह गए।

उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, अनुवाद आदि विभिन्न विधाओं और क्षेत्रों में अनवरत लेखन करके 57 मौलिक ग्रंथों की रचना की और हिंदी उपन्यास के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा के प्रवर्तक के रूप में मान्य हुए। 24 दिसंबर, 1988 को इस महान कथाकार का निधन हुआ।

विश्व साहित्य में प्रेमचंद के साहित्य से साथ सदा जैनेंद्र कुमार के लेखन का जिक्र किया जाता रहेगा। अपने उपन्यासों और कहानियों के द्वारा व्यक्ति की प्रतिष्ठा, व्यक्ति और समाज के पारस्परिक संबंध की नई व्याख्या और स्त्री के मनोविज्ञान की परख करते हुए 'आत्मपीड़ा' का दर्शन प्रस्तुत किया है। रचकर जैनेंद्र कुमार ने हिंदी साहित्य के अमिट हस्ताक्षरों में अपना नाम अंकित कराया है।

जैनेंद्र और प्रेमचंद को एक दूसरे का पूरक, विलोम नहीं, मानकर और उन्हें साथ-साथ रखकर ही एक दूसरे के व्यक्तित्व और कृतित्व को ठीक प्रकार से समझा जा सकता है। प्रेमचंद में नारी शक्ति और स्त्री पुरुष के प्रेम संबंधों की उपस्थिति नगण्य है। जैनेंद्र ने इस अभाव की पूर्ति की। उन्होंने अपने कथा साहित्य में हाड-मांस की जीती जागती ऐसी स्त्री पात्रों को प्रस्तुत किया जो अपनी देह और मन पर ही नहीं अपनी स्वतंत्र निर्णय क्षमता पर भी पूरा अधिकार और भरोसा रखती हैं।

जैनेंद्र का एक महत्वपूर्ण योगदान हिंदी गद्य को तराशने का भी है। भाषा के स्तर पर उन्होंने अनेक प्रयोग किए। रवींद्र कालिया (वागर्थ, फरवरी-2005) के शब्दों में - "जैनेंद्र ने हिंदी को एक पारदर्शी भाषा और भंगिमा दी, एक नया तेवर दिया। एक नया 'सिंटेक्स' दिया। जैनेंद्र का गद्य न होता तो अज्ञेय का गद्य संभव न होता। आज के हिंदी गद्य पर जैनेंद्र की अमिट छाप है।"

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जैनेंद्र को हिंदी उपन्यास और कथा-साहित्य के इतिहास में मनोविश्लेषणात्मक परंपरा का प्रवर्तक माना जाता है।
2. एक कहानीकार के रूप में जैनेंद्र 'अपने पथ के अनूठे अन्वेषक' हैं।
3. जैनेंद्र के व्यक्तित्व और लेखकीय स्वभाव की यह विशेषता है कि वे सदा जीवन और जगत के रहस्यपूर्ण प्रश्नों से उलझते रहे, उनके उत्तर खोजते रहे। इसी कारण वे 'चिंतक कथाकार' कहे जाते हैं।
4. जैनेंद्र की दृष्टि में मानव और मानवता केंद्र में हैं, जिसे वे गांधीवादी चिंतन के आलोक में देखते परखते हैं।

5. जैनेंद्र को प्रेमचंद का पूरक कहा जा सकता है। क्योंकि प्रेमचंद में नारी शक्ति और स्त्री पुरुष के प्रेम संबंधों की उपस्थिति नगण्य है। जैनेंद्र ने इस अभाव की पूर्ति की। उन्होंने अपने कथा साहित्य में हाड-मांस के जीते-जागते ऐसे स्त्री-पात्रों को प्रस्तुत किया जो अपनी देह और मन पर ही नहीं, अपनी स्वतंत्र निर्णय क्षमता पर भी पूरा अधिकार और भरोसा रखते हैं।
6. जैनेंद्र ने कथा-भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठा कर 'वर्णन को व्यंजित करने की क्षमता' का विकास किया।
7. जैनेंद्र के महत्व का अनुमान इस तथ्य के आधार पर सहज ही किया जा सकता है कि स्वयं प्रेमचंद ने उन्हें 'भारत का गोर्की' कहा है।

5.6 शब्द संपदा

1. आविर्भाव	= प्रकट होना, उत्पत्ति
2. ऊहा-पोह	= अनिश्चय की स्थिति में मन में उत्पन्न होने वाला तर्क-वितर्क या विचार
3. ठेठ	= जो बिलकुल मूल रूप में हो
4. तेजोदीप्त	= चमकदार
5. परिदृश्य	= चारों ओर दिखने वाला दृश्य
6. पाखंड	= आडंबर, ढकोसला
7. प्रवर्तक	= प्रवर्त करने वाला, प्रतिष्ठा करने वाला, किसी मिशन को आरंभ करने या कराने वाला।
8. मसिजीवी	= लेखक, पत्रकार
9. मितव्ययता	= किफ़ायती
10. सूत्रपात	= कार्य का आरंभ
11. स्टाम्प-फ़रोशी	= टिकट (रसीदी) बेचने वाला

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जैनेंद्र कुमार के संघर्षपूर्ण जीवन का परिचय देते हुए उस जीवन का उनके लेखन पर प्रभाव को रेखांकित कीजिए।
2. "अपनी रचनाओं में जैनेंद्र कुमार अपने जीवन प्रसंगों को आधार बनाते हैं।" इस कथन की समीक्षा कीजिए।

3. कथाकार के रूप में जैनेंद्र कुमार के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
4. हिंदी कथा साहित्य के विकास में जैनेंद्र कुमार के योगदान पर संतुलित दृष्टि से विचार कीजिए।
5. जैनेंद्र के रचे हुए पात्रों की प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'जैनेंद्रीय साँचा' के सिद्धांत को अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए।
2. 'जैनेंद्रीय समाधान' क्या है?
3. जैनेंद्र के उपन्यासों की विशेषताओं का आकलन करते हुए उनके उपन्यासकार रूप को उद्घाटित कीजिए।
4. कहानीकार के रूप में जैनेंद्र कुमार की सहजतापूर्ण लेखन शैली की विवेचना कीजिए।
5. जैनेंद्र कुमार के जीवन-दर्शन पर विचार व्यक्त कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. जैनेंद्र कुमार के मामा का नाम था – ( )
   क) श्रीनिवास दास ख) प्यारे लाल ग) भगवानदीन घ) आनंदीलाल
2. जैनेंद्र कुमार ने आजीविका के लिए यह कभी न किया- ( )
   क) स्कूल-मास्टरी ख) पत्रकारिता ग) फेरी लगाना घ) लेखन कार्य
3. किस उपन्यास में 'बाल विधवा' की समस्या को उठाया गया है? ( )
   क) कल्याणी ख) परख ग) सुनीता घ) त्यागपत्र
4. जैनेंद्र कुमार इनमें से क्या नहीं कहे जाते? ( )
   क) अपने पथ के अनूठे अन्वेषक ख) हिंदी कथा साहित्य के प्रेमचंद
   ग) आत्मा का शिल्पी घ) शब्द के संकोच का कथाकार

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. …………. एक डायरीनुमा उपन्यास है।
2. जैनेंद्र कुमार …………. के प्रवर्तक माने जाते हैं।
3. जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों के कथानक प्रायः …………. केंद्रित हैं।
4. जैनेंद्र कुमार ने कहानी को …… के स्तर से उठाकर ……… और …………. पर लाने का प्रयास किया।

III. सुमेल कीजिए

1. प्रथम उपन्यास	(अ) सत्यधन
2. मुक्तिबोध	(आ) परख
3. उपन्यास का पात्र	(इ) आत्मा का शिल्पी
4. जैनेंद्र कुमार	(ई) उपन्यास

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. जैनेंद्र : साहित्य और समीक्षा : रामरतन भटनागर
2. अनासक्त आस्तिक : ज्योतिष जोशी
3. उपन्यासकार जैनेंद्र - मूल्यांकन और मूल्यांकन : मनमोहन सहगल

इकाई 6 : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : कथासार

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : कथासार
6.4 पाठ सार
6.5 पाठ की उपलब्धियाँ
6.6 शब्द संपदा
6.7 परीक्षार्थ प्रश्न
6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! जैसा कि अब आप जान चुके हैं 'त्यागपत्र' जैनेंद्र कुमार की तीसरी औपन्यासिक कृति है और इसका प्रकाशन 1937 में हुआ था। प्रकाशक थे - प्रसिद्ध साहित्यकार नाथू राम प्रेमी (हिंदी-ग्रंथ रत्नाकर कार्यालय, बंबई) और इसे उन्होंने 'मौलिक सामाजिक उपन्यास' कहा था। सवा रुपये कीमत में सवा सौ से भी कम पृष्ठों का यह उपन्यास आज हिंदी के कालजयी उपन्यासों में से एक है।

'त्यागपत्र' मृणाल नामक भाग्यहीना की मार्मिक कहानी है। प्रथम पुरुष के रूप में कही गई यह कथा पाठक को भाव-विभोर करके रख देती है। जैनेंद्र कुमार ने अपने अन्य उपन्यासों की भाँति इस उपन्यास में भी दो-चार घटनाओं के बल पर नारी जीवन के एक खंड का नहीं संपूर्ण जीवन का हृदयविदारक चित्रण प्रस्तुत किया है।

इस उपन्यास की कथा समस्त नारी जाति की दुखद नियति को प्रस्तुत करती है। समाज के अन्यायपूर्ण और निर्मम नैतिक विधान पर भी यहाँ तीखी टिप्पणी है। इस उपन्यास की यहाँ प्रस्तुत कथावस्तु आपको बहुत कुछ विचार करने को विवश कर देगी। यह कहानी मृणाल-केंद्रित है किंतु बहुत से पाठक इसे केवल प्रमोद के दृष्टिकोण से पढ़ते और समझते हैं। मेरा आपसे आग्रह होगा कि आप इस कृति को मृणाल के नजरिए से भी पढ़ें। मृणाल ही क्यों? हर उस पात्र के नजरिए से पढ़ें जो इसमें आता है। और हाँ, पाप और पुण्य की अपनी परिभाषा की इस उपन्यास में बताई गई परिभाषा से तुलना करके देखें।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- 'त्यागपत्र' उपन्यास के कथानक के प्रमुख बिंदुओं से परिचित हो सकेंगे।
- उपन्यास के प्रमुख पात्रों और उनके पारस्परिक संबंध को जान सकेंगे।
- घटनाओं और प्रसंगों के आधार पर उनका विवेचन कर सकेंगे।
- 'त्यागपत्र' शीर्षक के विविध निहितार्थों से अवगत हो सकेंगे ।

6.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : कथासार

प्रिय छात्रो! सर्वप्रथम हम इस उपन्यास की कथा अति संक्षेप में पढ़ लेंगे। फिर इसका सिलसिलेवार पाठ होगा। इस कथा का प्रारंभ अंत से होता है। पूरा उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया है। जस्टिस एम दयाल अपने पद से त्यागपत्र दे देते हैं। क्यों? यही कहानी है जो एम दयाल के बचपन से प्रारंभ होती है। बचपन में वह प्रमोद है। प्रमोद की बुआ (प्रमोद के पिता की बहन) के जीवन के यह दर्द भरी कहानी है। वास्तव में यह कथा उसी के दुख दर्द से शुरू होकर उसी के अंत के साथ समाप्त होती है।

मृणाल के माता-पिता का देहांत हो गया है, इसलिए उसके लालन-पालन और संरक्षण का स्वाभाविक दायित्व उसके बड़े भाई का है। भाई-भाभी के कठोर नियंत्रण को बहुत ध्यान और चिंता से उसका पाँच वर्ष का भतीजा प्रमोद देखता रहता है। पढ़ाई करते समय प्रमोद की बुआ मृणाल का प्रेम उसकी सहेली शीला के भाई से हो जाता है। यह रहस्य खुलने पर पहले तो वह निर्दयतापूर्वक पीटी जाती है और फिर प्रमोद के माता पिता द्वारा एक वयस्क विधुर के साथ जबरन उसका विवाह कर दिया जाता है। एक दिन मृणाल निश्छलतापूर्वक अपने विवाह पूर्व के प्रेमी के तभी आए पत्र की चर्चा अपने पति से कर देती है। वह क्रोधित हो जाता है और मृणाल को मारपीट कर अपने घर से निकाल दूसरे अलग कमरे में ला पटकता है। फिर कभी उसकी सुध भी नहीं लेता है।

मृणाल को विवश होकर एक अनजान कोयला बेचनेवाले का आश्रय स्वीकार कर लेना पड़ता है। कोयलेवाला मृणाल के रूप का लोभी अवश्य है किंतु अपने परिवार, समाज और उनके बारे में लापरवाह होकर तब आता है जब मृणाल को वास्तव में अन्न-जल के भी लाले हैं। उसके साथ रहते वह गर्भवती हो जाती है। एक दिन वह कोयले वाला भी उससे उकताकर और उसे बदजात व्यभिचारिणी मानकर त्याग देता है। प्रमोद उसे घर ले जाना चाहता है किंतु वह मना कर देती है। मृणाल अस्पताल में एक बच्ची को जन्म देती है। बच्ची दस महीने बाद ही कुछ रोग से और कुछ भूख से मर जाती है। कुछ वर्षों के बाद राजनंदिनी नामक सर्वगुणसंपन्न कन्या से प्रमोद का विवाह संबंध बनते-बनते इसलिए टूट जाता है क्योंकि प्रमोद राजनंदिनी के घर में बच्चों को पढ़ाने वाली स्त्री को पहचानकर सबको बता देता है कि यह स्त्री उसकी बुआ मृणाल है। बुआ का वह काम छूट जाता है, स्कूल की नौकरी चली जाती है। फिर वह समाज की 'जूठन' कहे जाने लोगों के बीच जा बसती है।

मृणाल समाज के निम्नवर्गीय लोगों के बीच जीवन व्यतीत करती है और कई बीमारियों से ग्रसित हो जाती है। मायके के बिलकुल स्नेह रहित, रूढ़िवादी और उदासीन परिवार द्वारा उसके प्रेम का अस्वीकार, एक दुहाजू और प्रौढ़ व्यक्ति से उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह, पति का शंकालु कठोर स्वभाव और उसके द्वारा मृणाल का शारीरिक पीड़न और शोषण और अंततः घर से निष्कासन, यह सब उसके साथ होता है और इसके जवाब में वह आत्महत्या न कर ऐसी जीवन-पद्धति अपनाती है, जो समाज के मुख पर तमाचा है। कुछ वर्षों के बाद सांसारिक कष्टों को किसी प्रकार से झेलते हुए एक दिन उसकी मृत्यु हो जाती है। इस दुख से दुखी होकर प्रमोद

अपनी जजी से त्यागपत्र देकर संसार से विरक्त हो जाता है। एम. दयाल जजी छोड़ देते हैं। यह 'त्यागपत्र' है। क्यों? वे दूसरों के लिए रहना न सीख पाए पर इतना निश्चय कर सके हैं कि उतनी ही स्वल्पता से रहेंगे जितना अनिवार्य होगा।

बोध प्रश्न

- मृणाल के भतीजे के बचपन और बड़े होने पर क्या क्या नाम थे?
- सहेली के भाई से प्रेम करने का क्या परिणाम होता है?
- मृणाल का पति उससे दुर्व्यवहार क्यों करता है? मृणाल इसका क्या उत्तर देती है?
- कोयले वाला मृणाल के लिए आश्रयदाता और कष्ट का कारण दोनों है, कैसे?
- राजनंदनी से प्रमोद का संबंध क्यों टूटा?
- बच्चों को पढ़ाने का काम छूट जाने के बाद मृणाल ने कहाँ शरण ली? वहाँ उसका जीवन कैसा था?

छात्रो! अब हम उपन्यास के दो महत्वपूर्ण उद्धरणों (आदि और अंत) के साथ इस कथा की गहराई में उतरेंगे। यह आप ध्यान रखें कि कोष्ठक में दी गई पृष्ठ संख्या इस पुस्तक के प्रथम संस्करण की है। आज तक न जाने इस उपन्यास के कितने संस्करण निकाले जा चुके हैं। उपन्यास का आरंभ कुछ इस प्रकार से होता है-

नहीं भाई। पाप-पुण्य की समीक्षा मुझसे न होगी। जज हूँ, कानून की तराजू की मर्यादा जानता हूँ। पर उस तराजू की जरूरत को भी जानता हूँ। इसलिए कहता हूँ कि जिनके ऊपर राई-रत्ती नाप जोखकर पापी कहकर व्यवस्था देने का दायित्व है, वे अपनी जानें। मेरे बस का वह काम नहीं है। मेरी बुआ पापिष्ठा नहीं थीं, यह भी कहनेवाला मैं कौन हूँ? पर आज मेरा जी अकेले में उन्हीं के लिए चार आँसू बहाता है। मैंने अपने चारों ओर तरह-तरह की प्रतिष्ठा की बाड़ खड़ी करके खूब मजबूत जमा ली है। कोई अपवाद उसको पारकर मुझ तक नहीं आ सकता। पर उन बुआ की याद मुझे अब चैन लेने देगी? उनके मरने की खबर अभी पाकर बैठा हूँ। मुझको नहीं मालूम वह कैसे मरीं? घुल-घुल कर मरीं, इतना तो जानता हूँ (पृ. 1)।

और अंत होता है -

बुआ, तुम गईं। तुम्हारे जीते जी मैं राह पर न आया। अब सुनो, मैं यह जजी छोड़ता हूँ। जगत का आरंभ-समारंभ ही छोड़ दूँगा। औरों के लिए रहना तो शायद नए सिरे से मुझसे सीखा न जाय। आदतें पक गई हैं। पर अपने लिए तो उतनी ही स्वल्पता से रहूँगा जितना अनिवार्य होगा। यह वचन देता हूँ। भगवान, तुम मेरी बात सुनते हो। वैसे चाहे न भी दो, पर वचन तोड़ूँ तो मुझे नरक अवश्य ही देना। पुनश्च - इसी के साथ सही करता हूँ कि जजी से अपना त्याग-पत्र मैंने दाखिल कर दिया है। (पृ. 112)

बोध प्रश्न

- उपरोक्त पंक्तियों के वक्ता का परिचय क्या है?
- वह किसके जीवन के बारे में कह रहा है? उसे क्या हुआ है?
- 'मेरी बुआ पापिष्ठा नहीं थीं' इस कथन का अर्थ क्या है?
- दूसरे अनुच्छेद में कौन किसको कब संबोधित कर रहा है और क्यों?

- आदतें पक जाने का क्या तात्पर्य है? इसमें किस ओर संकेत है?
- 'त्यागपत्र' के कई अर्थ यहाँ हैं, कम से कम दो अर्थ स्पष्ट कीजिए।

'त्यागपत्र' हिंदी के अनोखे उपन्यासों में से एक है। जब यहाँ कोई कथा नहीं है तो सीधा कथानक कहाँ से होगा? घटनाएँ हैं जो कुछ पात्रों के जीवन में घटती हैं। 'घटनाएँ होती हैं, होकर चली जाती हैं। मृणाल पापिष्ठा थी या नहीं, इसका फ़ैसला न्यायाधीश एम दयाल भी नहीं कर पाते। मृणाल के पहाड़ से जीवन की यही तो छोटी सी कथा है। अब कथा कुछ सिलसिलेवार समझते हैं।

युवा मृणाल अपने माता पिता के देहांत के बाद अपने भाई-भाभी और भतीजे प्रमोद के साथ रहती है, "स्वभाव से हँसमुख और निर्द्वंद्व। जब वह ठहाका मारकर हँसती तो प्रमोद को कहानी की परियों का ध्यान हो आता। रूप का आलम यह कि ऐसा रूप कब किसको विधाता देता है।" इसी दौर में उसके जीवन में एक प्रेमी आ जाता है। वह अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करने लगती है। फिर तो वह मानो आकाश में पंछी की तरह उड़ना चाहती है। "मैं नहीं बुआ होना चाहती। बुआ! छी! देख, चिड़ियाँ कितनी ऊँची उड़ जाती हैं। मैं चिड़िया होना चाहती हूँ।"

प्रेम मृणाल को बदल कर रख देता है। वह अपनी सहेली के घर देर तक रुकने लगती है। एक दिन तो इतनी देर हो जाती है कि नौकर भेजकर उसे बुलवाना पड़ता है। भेद खुल जाता है। मृणाल की भाभी उसकी पिटाई बहुत निर्ममता से करती है। प्रमोद कहता है, "वह दिन था कि फिर बुआ की हँसी मैंने नहीं देखी ...बुआ का उसी दिन से पढ़ना छूट गया था।" इतना ही नहीं, इसके कुछ समय बाद उसका विवाह भी उससे उम्र में बहुत बड़े एक विधुर व्यक्ति से कर दिया गया। मृणाल का प्रेम करना क्या कोई इतना बड़ा अपराध था? "विवाह से पहले बुआ कई घंटे अपनी छाती से मुझे चिपकाए बहुत-बहुत रोती रहीं।" चिड़िया होने का सपना समाप्त हो गया। वह प्रमोद से कहती है, "तेरी बुआ तो मर गई। तू उसे अब कभी याद मत करियो।" विवाह को निभाने की भरसक कोशिश करती है, "ब्याह के बाद मैंने बहुत सोचा, बहुत सोचा। सोचकर अंत में यही पाया कि मैं छल नहीं कर सकती। छल पाप है। हुआ, जो हुआ, ब्याहता को पतिव्रता होना चाहिए।" वह पूरी ईमानदारी के साथ अपने पति के सामने अपने प्रेमी के खत और उसके उत्तर में लिखे गए अपने खत को रख देती है। किंतु पति उसके इस कार्य में उसकी सच्चाई नहीं देखता। उसका पाप देखता है। यही वह घटना है जो मृणाल के जीवन को फिर बदल कर देती है।

बोध प्रश्न

- 'मृणाल बुआ नहीं चिड़िया होना चाहती है' इसका अर्थ क्या है?
- मृणाल के पत्रों को देखकर उसके पति की क्या प्रतिक्रिया थी?

मृणाल का पति उसे त्याग देता है। शहर के किसी गंदे इलाके में वह एक कोठरी में जा रहती है। उन दो पत्रों में ऐसा कुछ भी न था जिसके लिए कोई पति अपनी पत्नी को इतना बड़ा दंड दे। पर इस समाज में घर पुरुष का होता है। वह घर का मालिक बनकर अपनी गृहिणी को ही निकाल बाहर करता है। मृणाल प्रमोद से कहती है, "तू जानता है, पति का घर क्या होता है? स्वर्ग होता है। जानता है स्वर्ग क्या होता है? स्वर्ग बड़े आराम की जगह है ... वहाँ देवता रहते

हैं।" पति ने अपनी पत्नी पर चरित्रहीन होने का आरोप लगाया। पत्नी के उत्तर नहीं दिया। अपना धर्म निभाया। "वे मुझे देखना नहीं चाहते, यह जानकर मैंने उनकी आँखों के आगे से हट जाना स्वीकार कर लिया।" पति द्वारा निकाल दिये जाने पर उसका संबंध एक कोयले वाले के साथ होता है। कोयले वाले की सहायता और आसरा वह उस पर दया करके स्वीकार करती है। इस 'करुणा' के कारण ही उसने उस कोयलेवाले हो अपनी देह सौंप दी।

मृणाल जैसी समझदार से यह क्या हो गया? परिणाम वही होता है जो हो सकता है। वह कोयले वाले का गर्भ लिए है। किसी तरह पता मालूम करके प्रमोद बुआ से मिलने जाता है। वह उसको कोयले वाले से छुड़ाकर अपने साथ ले जाना चाहता है। "मैं बस एक बदजात व्यभिचारिणी स्त्री हूँ।" "जरूर ले चलेगा तो सुन। मैं नहीं जाऊँगी, मैं नहीं जा सकती। तुम मुझको नहीं जानते हो। मैं पति के घर को छोड़ कर आ गई हूँ। पति है, पर दूसरे पुरुष के आसरे रह रही हूँ। ...जिनके सहारे मैं बची, उन्हीं को छोड़ देने की मुझसे कहते हो? मैं नहीं छोड़ सकती। पापिनी हो सकती हूँ, पर उसके ऊपर क्या अकृतज्ञ भी बनूँ, नहीं।"

बोध प्रश्न

- "स्वर्ग बड़े आराम की जगह है। वहाँ देवता रहते हैं।" निहितार्थ स्पष्ट कीजिए।
- मृणाल कोयले वाले को छोड़कर अपने भतीजे के साथ क्यों नहीं गई?

प्रमोद लौट आता है। उसे पता चल चुका है कि उसकी बुआ उसकी नहीं सुनने वाली। वह आत्मव्यथा के द्वारा स्वयं को शुद्ध करने में लगी है शायद। जिंदगी बहती चली जाती है। प्रमोद खोज खबर लेता है तो पता चलता कि कोयले वाला कब का भाग खड़ा हुआ है। प्रमोद के रिश्ते की बात फिर चलती है तो वह राजनंदिनी नामक लड़की के घर जाता है। राजनंदिनी के घर में एक स्त्री बच्चों को ट्यूशन पढ़ा रही है। वह मृणाल है। प्रमोद अपनी बुआ को पहचान लेता है। वह अपनी बुआ से मिलने उसके घर जाता है जहाँ उसे मृणाल द्वारा बताया जाता है कि मृणाल और कोयले वाले की संतान कुछ बीमारी से और कुछ भूख से मर गई है। प्रमोद को पता चलता है कि मृणाल भटकते भटकते यहाँ आकर अब इस स्थान पर स्कूल में पढ़ाती है और घर-घर जाकर ट्यूशन भी पढ़ा देती है। प्रमोद अपनी होने वाली ससुराल वालों को बता देता है कि यह मास्टरनी उसकी बुआ है। उसके ससुर को तो नहीं पर होने वाली सास को इस पर एतराज होता है और रिश्ता बनने से पहले ही टूट जाता है। मृणाल को भी इस कारण अपनी ट्यूशन ही नहीं नौकरी भी गंवानी पड़ती है।

बोध प्रश्न

- प्रमोद का राजनंदिनी से रिश्ता बनने से पहले की क्यों टूट गया। इसका जिम्मेदार कौन था?
- इस प्रसंग से समाज की किस मानसिकता की ओर संकेत है?

बहुत हो गया। कहानी को और कितना बढ़ाया जा सकता है। जैनेंद्र कुमार ने मृणाल की कहानी को और आगे नहीं बढ़ाया। "घटनाएँ होती हैं, होकर चली जाती हैं। हम जीते हैं, और जीते जीते एक रोज मर जाते हैं।" वहाँ से छूट कर मृणाल उन लोगों के बीच जा बसती है जो समाज की जूठन कहे जाते हैं। प्रमोद मृणाल से पत्र व्यवहार करता है तो मृणाल उसे यही कहती है, 'तुम न आना।' फिर भी वह जाता है। वह बीमार होती है फिर भी साथ नहीं आती। समय

अपनी गति से बीतता चला जाता है। और कई वर्षों बाद उसकी मृत्यु का समाचार आता है। कैसे मर गई? जानने की कोई जरूरत नहीं है। "बुआ तुम गईं। तुम्हारे जीते जी मैं राह पर न आया। अब सुनो, मैं यह जजी छोड़ता हूँ।" बालक प्रमोद अब जज एम, दयाल हैं। वे जजी से अपना त्यागपत्र दाखिल कर देते हैं। यही उनका त्यागपत्र है। त्यागपत्र और भी हैं। और कई हैं? हैं, ना।

बोध प्रश्न

- 'समाज की जूठन' से किन लोगों की ओर संकेत है?
- जैनेंद्र कुमार ने कहानी को ओर आगे नहीं बढ़ाया? क्यों?
- 'त्यागपत्र' देकर जज साहब किस बात का पश्चाताप और प्रायश्चित करते हैं?

विवेचनात्मक टिप्पणी

प्रेमचंद के बाद अथवा छायावादोत्तर काल के हिंदी कथा साहित्य की दशा और दिशा के निर्धारण का श्रेय बड़ी हद तक जैनेंद्र कुमार को जाता है। वे कथा सम्राट प्रेमचंद के साथी भी थे और शिष्य भी। लेकिन उन्होंने प्रेमचंद का अंधानुकरण न करके अपनी अलग लीक बनाई। कथानक और भाषा दोनों के ही चयन के लिहाज से उनके उपन्यास 'त्यागपत्र' को मील का पत्थर माना जाता है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी मानते हैं कि जैनेंद्र वह पहले रचनाकार हैं जिन्होंने उपन्यास की भाषा को वर्णन के प्राथमिक स्तर से ऊपर उठाया। इसके प्रमाण के रूप में उन्होंने 'त्यागपत्र' के आरंभिक अंश को उद्धृत किया है, जो इस प्रकार है -

> "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पिता प्रतिष्ठा वाले थे और माता अत्यंत कुशल गृहिणी थीं। जैसी कुशल थीं वैसी कोमल भी होतीं तो -? पर नहीं, उस 'तो -?' के, मुँह में नहीं बढ़ना होगा। बढ़े, कि गए। फिर तो सारी कहानी उस मुँह में निगल कर समा जाएगी और उसमें से निकलना भी नसीब न होगा।"

डॉ. चतुर्वेदी ने 'त्यागपत्र' में अपनाई गई कथा प्रस्तुत करने की शैली को अत्यंत सहज माना है। उन्हीं के शब्दों में -

> "कथा-में-कथा के चक्र वाले 'पंचतंत्र' और 'हितोपदेश' के देश में वर्णन करने और कहानी कहने पर ऐसा सहज और अनाटकीय संयम पहली बार देखने में आता है। इन दो-तीन वाक्यों में एक ओर उपन्यासकार का रचना-सूत्र छिपा हुआ है, पर वह गौण है। मुख्य है, वर्णन न करके वर्णन को व्यंजित कर देने की क्षमता। और तब इस रचना-विधान के लिए स्वाभाविक है कि यहाँ छोटे और निरीह-से दिखते अव्यय-प्रयोगों (तो, भी, और, कि) का महत्व बढ़ जाए। 'वैसी कोमल भी होतीं तो?' में 'भी' और 'तो' महज बलार्थक से अधिक रचनात्मक गुणवत्ता रखते हैं।" (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 210)

प्रिय छात्रो! हिंदी के उपन्यासकार आरंभ से ही भारतीय समाज में स्त्रियों की दशा को लेकर चिंतित और जागरूक रहे हैं। हिंदी का पहला उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' हो अथवा प्रेमचंद के 'सेवा सदन' और 'निर्मला' जैसे उपन्यास हों, बिना किसी प्रकार की नारेबाजी के इनमें पुरुषवादी भारतीय समाज की रूढ़ियों का खुलासा किया गया है। जैनेंद्र इनसे एक

कदम आगे बढ़े हुए हैं। क्योंकि वे यथार्थ के ऊपर किसी आदर्श का आवरण नहीं चढ़ाते। बल्कि यहाँ तक इशारा करते हैं कि खोखले आदर्शवाद को ओढ़े रहने के कारण भी 'त्यागपत्र' की नायिका मृणाल जैसी स्त्रियाँ आजीवन उत्पीड़न, शोषण और दमन की शिकार बनती रहती हैं।

दरअसल जैनेंद्र ने इस उपन्यास में मृणाल की व्यथा-कथा के बहाने पिछली शताब्दी की भारतीय स्त्री की समस्याओं को व्यापक धरातल पर उकेरा है। आलोचकों ने इस ओर भी ध्यान दिलाया है कि 'त्यागपत्र' में तीन प्रकार की पारिवारिक संरचना और उसमें स्त्री की दशा दर्शाई गई है - संयुक्त परिवार, एकल परिवार तथा साहचर्य परिवार। मृणाल के माध्यम से लेखक ने संयुक्त परिवार में स्त्री को आदर्श गृहिणी बनाए जाने की समस्या, प्रेम तथा उसके दमन की समस्या, जीवन साथी न चुनने की समस्या उठाई है। एकल परिवार मृणाल का ससुराल है, जहाँ वह पतिव्रता पत्नी का धर्म निभाती है। वह सच बोलती है और सच बोलने पर समस्या उत्पन्न होती है - उसके शोषण की और उसके परित्याग की। साहचर्य परिवार वह परिवार है जहाँ परित्यक्ता होकर मृणाल कोयले वाले के साथ साहचर्य स्वीकार करती है, जहाँ उसे आर्थिक समस्या और सामाजिक दबाव का सामना करना पड़ता है। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में

> "त्यागपत्र का प्रमुख संदर्भ मनोवैज्ञानिक है, किंतु उसका एक सामाजिक संदर्भ भी है। लेखक कहीं सीधे ढंग से, कहीं व्यंग्यात्मक ढंग से सामाजिक जीवन की विसंगतियाँ भी उद्घाटित चलता है। यह बात और है कि वह उन विसंगतियों के प्रति विद्रोहात्मक रुख न अख्तियार करके, उनके प्रति समर्पण का भाव रखता है ताकि उसके यातनावादी दर्शन का निर्वाह हो सके। ... इसके अतिरिक्त लेखक प्रमोद के आत्मालोचन के माध्यम से सभ्य समाज की विसंगतियों को उकेरता है।" (हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ. 96)

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' में अपनाई गई शैली किस प्रकार की है?
- जैनेंद्र मृणाल के माध्यम से क्या निरूपित किया है?
- जैनेंद्र के संबंध में रामस्वरूप चतुर्वेदी ने क्या कहा?

6.4 पाठ सार

हिंदी के प्रसिद्ध उपन्यासकार जैनेंद्र कुमार का उपन्यास त्यागपत्र मृणाल नामक स्त्री की जीवन की दुखभरी कहानी है। कहानी सामाजिक है किंतु आधार मनोवैज्ञानिक है। कहानी में पात्रों की संख्या सीमित है। मृणाल और उसका भतीजा प्रमोद (जज एम दयाल) ये दो प्रमुख पात्र हैं। अन्य गौण पात्र है - मृणाल की सहेली - शीला और उसका भाई, मृणाल का अधेड़ पति, मृणाल को अपने घर में रखने वाला कोयले वाला, मृणाल के भाई-भाभी आदि। कथा इस प्रकार है -

मृणाल खिलती कली सी सुंदर और स्वतंत्र विचारों वाली लड़की है। उसके माता पिता का देहांत हो चुका है और वह अपने भाई और भाभी और उनके पुत्र प्रमोद के साथ रहती है। प्रमोद की माँ मृणाल को कठोर अनुशासन में रखती है। मृणाल अपनी सहेली के घर आती जाती

है और वहाँ उसके डाक्टरी पढ़ रहे भाई से प्रेम करने लगती है। भाभी को जब इसका पता चलता है तो यह मृणाल को बहुत मारती है। भाभी और भाई मिलकर कुछ महीनों में ही मृणाल का विवाह एक अधेड़ उम्र के विधुर के साथ जबरन कर देते हैं।

मृणाल बिना किसी विरोध के सामाजिक मान्यताओं का पालन करते हुए पति के साथ रहने लगती है। यह सोचकर कि उसे अपने पति से अपने विवाह-पूर्व के प्रेम को अपने पति से नहीं छुपाना चाहिए, वह अपने पति को अपना और अपने प्रेमी के पत्र दिखाकर सब कुछ सच सच बता देती है। यह जानकर वह मृणाल को क्षमा करने के स्थान पर उसे घर से निकालकर एक यातनाभरी कोठरी में डाल देता है। अपने भाई भाभी से उसे आश्रय की कोई उम्मीद नहीं है। वह हारकर एक कोयले वाले का प्रस्ताव स्वीकार कर लेती है। उसके साथ रहने लगती है। वह भी इस प्रकार सामाजिक बंधनों का परित्याग कर देती है। वह कोयले वाला भी कुछ दिन उसके साथ रहकर और उसके गर्भ में अपना बच्चा छोड़कर भाग खड़ा होता है। वह घर का सामान भी ले जाता है।

गर्भवती मृणाल मिशन अस्पताल में एक कन्या को जन्म देती है। यह कन्या भी कुछ महीनों बाद कुछ भूख और कुछ बीमारी से मर जाती है। मृणाल दुखी होकर आत्महत्या नहीं करती। वह एक स्कूल में जाकर बच्चों को पढ़ाने लगती है। घर-घर जाकर बच्चों को ट्यूशन भी पढ़ाने लगती है। प्रमोद एक बार तो अपनी बुआ से तब मिलता है जब वह कोयले वाले के साथ रहती है। पर मृणाल प्रमोद का प्रस्ताव मानकर उसके साथ घर वापिस नहीं जाती। प्रमोद के रिश्ते की बात चलती है। वह लड़की देखने जाता है उस लड़की के घर में मृणाल बच्चों को पढ़ाती है। प्रमोद उस परिवार को साफ-साफ बता देता है कि उनके यहाँ ट्यूशन पढ़ाने वाली महिला उसकी बुआ है। इस बात को सुनकर लड़की की माँ रिश्ता नहीं होने देती।

मृणाल का ट्यूशन और नौकरी दोनों छूट जाते हैं। उसे अब समाज के तथाकथित सभ्य लोगों की बस्तियों में रहने नहीं दिया जाता। वह एक गंदी बस्ती में रहने लगती है। वह बस्ती अपराधियों और चोर-उच्चकों की है। प्रमोद वहाँ भी जाता है। पर मृणाल को वापिस नहीं ला पाता। समय अपनी गति से बीतता जाता है। मृणाल जीवन में संघर्ष करती रहती है। कुछ वर्ष बाद प्रमोद को पता चलता है कि उसकी बुआ समाज के द्वारा दिये गए दुख सहते-सहते बीमारी और गरीबी के कारण चल बसी। प्रमोद जो उस समय एक प्रतिष्ठित जज है और उसका नाम एम दयाल है, वह इस समाचार को सुनकर बहुत निराश और दुखी होता है। उसे अपने सम्पूर्ण जीवन की कथा याद आ जाती है। उसे अपनी बुआ की जीवन भर की पीड़ा का स्मरण हो आता है। पश्चाताप और प्रायश्चित करने के लिए वह अपने पद से त्यागपत्र दे देता है। वह यह प्रण भी करता है कि वह अब सादा जीवन व्यतीत करेगा। समाज की रूढ़ियों में जकड़े रहने के कारण वह भी अपनी बुआ की कोई मदद न कर सका उसका दुख उसे सदा रहा।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जैनेंद्र कुमार भारतीय समाज की विकृतियों के यथार्थ को समझने वाले उपन्यासकार हैं।

2. ‘त्यागपत्र’ में उपन्यासकार ने रूढ़िग्रस्त भारतीय समाज में स्त्री की हीन दशा को उजागर किया है।
3. ‘त्यागपत्र’ में उपन्यासकार ने नारी जीवन की समस्याओं को पारिवारिक संरचना के आधार पर चित्रित किया है।
4. स्त्री जाति की हीन दशा का एक बड़ा कारण पुरुष प्रधान समाज द्वारा थोपी गई आचार संहिता है। उपन्यासकार ने इस विडंबना को भी दर्शाया है कि भारतीय स्त्री इस आचार संहिता को इस कदर ओढ़ लेती है कि उसका उल्लंघन करना उसे चरित्र हीनता प्रतीत होता है।
5. नियतिवाद अथवा भाग्यवाद भी भारतीय स्त्री की वह बड़ी कमजोरी है जिसके कारण वह निरंतर शोषण चक्र में फँसी रहती है। मृणाल के माध्यम से लेखक ने इस नियतिवाद को भी अच्छी तरह उभारा है।

6.6 शब्द संपदा

1. जूठन = खाने-पीने से बची हुई जूठी वस्तु, अवशिष्ट, समाज का वह वर्ग जिसे तथाकथित उच्च वर्ग ‘नीच’ या ‘नीचा’ समझकर अपमानित करता है।
2. दुहाजू = कोई विधुर (विधवा भी) यदि दूसरा विवाह करता है तो उसे दुहाजू कहते हैं।
3. नियति = भाग्य, जिसका होना निश्चित हो, प्रारब्ध
4. निर्मम = ममता रहित, निष्ठुर, कठोरता पूर्वक किया जाने वाला
5. पश्चाताप = पछतावा, दुख
6. पापिष्ठा = पाप करने वाली स्त्री, पर पुरुष के साथ संबंध बनाने वाली स्त्री
7. प्रायश्चित = पाप कर्म के फल, भोग से बचने हेतु किया जानेवाला शास्त्र विहित कर्म (जैसे-दान-व्रत करके प्रायश्चित करना)। ग्लानिवश किया गया कठोर आचरण।
8. बदजात = खोटा, नीच, कमीना, बहुत बुरा
9. बाड़ = चहार दिवारी, **बाड़** ऐसा निर्मित ढांचा होता है जो किसी क्षेत्र को घेरकर बंद कर, विशेषकर किसी घर या अन्य भवन से बाहर किसी इलाके में। इसे आमतौर पर खंबों से बनाया जाता है, जिनके बीच में तार, फट्टे, जाल, सलाखें या अन्य रुकावटें लगाई जाती हैं।
9. विधुर = जिस पुरुष की पत्नी मर गई हो

10. व्यभिचारिणी = (व्यभिचार: स्त्री पुरुष का अनुचित संबंध; बहुत ही निकृष्ट आचरण।) वह स्त्री जिसका आचरण अनुचित हो ।

11. स्वल्पता = मितव्ययता, थोड़ा खर्च, किफायत

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'त्यागपत्र' उपन्यास का कथासार अपने शब्दों में लिखिए।
2. 'त्यागपत्र' उपन्यास की कथा को अपने मित्र को एक पत्र के रूप में लिखिए।
3. "त्यागपत्र एक स्त्री के जीवन की दुखभरी कहानी है।" उपन्यास की कथा के आधार पर इस कथन की सार्थकता पर विचार कीजिए।
4. उपन्यास के कथानक के आधार पर इसके शीर्षक 'त्यागपत्र' की सार्थकता सिद्ध कीजिए।
5. "इतने वर्ष बीत जाने पर भी स्त्री विमर्श के धरातल पर यह उपन्यास सार्थक है।" इस कथन के पक्ष-विपक्ष की समीक्षा कीजिए।
6. कथानक के आधार पर मृणाल और प्रमोद के पारस्परिक संबंध की विवेचना कीजिए ।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. विवाह से पूर्व मृणाल अंतहीन आकाश की चिड़िया थी और विवाह के बाद? क्यों?
2. प्रमोद के साथ किस कारण मृणाल दोनों बार अपने मायके वापिस नहीं गई?
3. इस कथा के आधार पर भारतीय समाज की रूढ़िवादी सामाजिक और पारिवारिक मान्यताओं की समीक्षा कीजिए।
4. उपन्यास के कथा सार के आधार पर निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए –

    i) त्यागपत्र – नारी जीवन की दुखपूर्ण कथा

    ii) पुरुष -वर्चस्व वाले समाज में स्त्री

    iii) पाप-पुण्य का प्रश्न और त्यागपत्र

    iv) जीवन की सार्थकता का प्रश्न और त्यागपत्र

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मृणाल की सहेली का नाम है – ( )
   (अ) प्रियदर्शिनी (आ) शीला (इ) राजनंदिनी (ई) मीना
2. जस्टिस एम दयाल का बचपन का नाम है – ( )
   (अ) विनोद (आ) प्रमोद (इ) मनोहर दयाल (ई) इनमें से कोई नहीं
3. मृणाल को घर से निकाला – ( )
   (अ) उसकी भाभी ने (आ) कोयले वाले ने (इ) पति ने (ई) स्कूल के प्रधानाचार्य ने
4. "नहीं भाई। पाप –पुण्य की समीक्षा मुझसे न होगी।" किसने कहा ( )
   (अ) लेखक ने (आ) जज साहब ने (इ) शीला ने अपने भाई से (ई) कोयले वाले ने
5. "तू जानता है, पति का घर क्या होता है?" मृणाल ने पूछा। ( )
   (अ) स्वर्ग (आ) ससुराल (इ) नरक (ई) आनंद भवन

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. प्रमोद ने कहा, "मेरी बुआ ....नहीं थी।"
2. मृणाल ने कहा, "मैं नहीं .... नहीं होना चाहती, मैं .... होना चाहती हूँ।"
3. "प्रमोद, मैं .... नहीं कर सकती, ... करना पाप है।"
4. मैं बस एक ...., ... स्त्री हूँ ।
5. "जजी से मैंने अपना ....दाखिल कर दिया है।"

III. सुमेल कीजिए -

1. पति का शंकालु कठोर स्वभाव	(अ) मृणाल का शारीरिक पीड़न और शोषण
2. एक दुहाजू और प्रौढ़ व्यक्ति से	(आ) इच्छा के विरुद्ध विवाह
3. मायके के रूढ़िवादी परिवार द्वारा	(इ) विवाह पूर्व प्रेम का अस्वीकार
4. पश्चाताप और प्रायश्चित करने के लिए	(ई) प्रमोद का त्यागपत्र

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्यागपत्र : जैनेंद्र कुमार
2. हिंदी उपन्यास - एक अंतर्यात्रा : रामदरश मिश्र

इकाई 7 : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : पात्र एवं चरित्र चित्रण

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : पात्र एवं चरित्र चित्रण
7.3.1 पात्र परिचय
7.3.2 मुख्य पात्र मृणाल
7.3.3 मृणाल का चरित्र चित्रण
7.3.4 प्रमोद का चरित्र चित्रण
7.4 पाठ सार
7.5 पाठ की उपलब्धियाँ
7.6 शब्द संपदा
7.7 परीक्षार्थ प्रश्न
7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! प्रेमचंद के अभिन्न मित्र और उनके समय से ही उपन्यास और कहानी लेखन करके प्रसिद्ध हुए जैनेंद्र कुमार का प्रतिनिधि उपन्यास 'त्यागपत्र', निश्चय ही 'पुरुष-सत्ता के दुर्ग-द्वार पर स्त्री की दस्तक' (रामेश्वर राय) है। इसे असंदिग्ध रूप से उनका सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना जा सकता है। पात्रों और चरित्र चित्रण की विलक्षणता के कारण इस उपन्यास की लोकप्रियता आज भी कायम है। इस उपन्यास में दो विपरीत विचारधाराओं का चित्रण करते समय पात्रों को एक दूसरे से अलग-अलग धाराओं में बहता दिखाया गया है। प्रमोद और मृणाल जैसे दो मुख्य पात्रों के चरित्र चित्रण के द्वारा समाज के तथाकथित शुक्ल और कृष्ण पक्षों का प्रकाशन करके उपन्यासकार ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था में स्त्री के स्थान को सुनिश्चित करने की चेष्टा की है। इन दोनों पात्रों का इस उपन्यास के गौण पात्रों से संवाद कराकर ही कथानक को आगे बढ़ाया गया है। इन दोनों का परस्पर संबंध और विरोधी विचार प्रवाह इस उपन्यास की जान है। इस इकाई में आप प्रमोद और मृणाल की मनोदशा के चित्रण के साथ-साथ ही अन्य पात्रों के उपन्यास के घटना क्रम में भी सम्यक विचार विमर्श करेंगे।

7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! आप जैनेंद्र कुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र' के कथानक से भली-भाँति परिचित हो चुके हैं। इस इकाई में आप इस उपन्यास के प्रमुख और गौण पात्रों के विषय में पढ़ेंगे। 'त्यागपत्र' उपन्यास के पात्र और चरित्र-चित्रण पर आधारित इस इकाई के अध्ययन से आप -

- उपन्यास के प्रमुख और गौण पात्रों का परिचय प्राप्त करेंगे।
- इन पात्रों के चरित्र चित्रण की बारीकियों को समझ सकेंगे।

- कथानक की प्रमुख घटनाओं के आधार पर पात्रों के पारस्परिक संबंधों को समझ सकेंगे।
- चरित्र प्रधान उपन्यास के रूप में 'त्यागपत्र' की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : पात्र एवं चरित्र चित्रण

7.3.1 पात्र परिचय

हिंदी साहित्य के इतिहास में प्रेमचंद के समय से उपन्यास और कहानी लेखन में अपना अलग स्थान बनाने वाले जैनेंद्र कुमार का प्रतिनिधि उपन्यास 'त्यागपत्र' एक चरित्र प्रधान उपन्यास है। वास्तव में यहाँ कोई सुसंबद्ध कथानक नहीं है। कुछ परिस्थितियाँ हैं जिनमें इस उपन्यास के प्रमुख पात्र 'मृणाल' को इस प्रकार डाल दिया गया है कि उसका चरित्र स्वयं विकसित होता चला जाता है। मृणाल का प्रेमी, भैया-भाभी, पति आदि ऐसे पात्र नहीं है जिन्हें जैनेंद्र ने चरित्र के रूप में विकसित किया हो। वे केवल घटना क्रम को विकसित करते हैं और चले जाते हैं। उनका कोई स्वतंत्र और स्मरणीय व्यक्तित्व नहीं बन पाता। 'हिंदी उपन्यास कोश' के लेखक डॉ. गोपाल राय के अनुसार जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों की कहानी अधिकतर एक परिवार की कहानी होती है और वे 'शहर की गली और कोठरी की सभ्यता' में ही सिमट कर व्यक्ति पात्रों की मानसिक गहराइयों में प्रवेश करने की कोशिश करते हैं। 1930-40 में समाज की चिंता और उसके मानकों की चिंता किए बिना विवाह और परिवार संस्था के प्रति प्रश्न उठाना स्वयं में एक आंदोलन से कम न था। यह काम इन पात्रों ने किया।

उपन्यास का केंद्रीय पात्र तो मृणाल ही है। मृणाल का भतीजा (जस्टिस दयाल या प्रमोद) हो या मृणाल से जुड़े अन्य पात्र - ये सभी आधुनिक नारी के मन की व्यथा को रेखांकित करते प्रतीत होते हैं। इन दो पात्रों के अतिरिक्त शेष जो पात्र आए हैं, वे केवल रेखाचित्र मात्र हैं। यदि पहले हम इस उपन्यास के प्रमुख पात्रों के स्थान पर गौण पात्रों को देखते हैं तो मृणाल के भाई-भाभी, मृणाल की बाल-सखा शीला और उसका डॉक्टरी में पढ़ने वाला तथा मृणाल से प्रेम करने वाला भाई, मृणाल का हृदयहीन अधेड़ पति, स्वार्थी और स्त्री को वासना के लिए उपयोग करने वाला कोयलेवाला, प्रमोद की मंगेतर और उसके रूढ़िवादी माता-पिता आदि दिखाई देते हैं। एक-एक करके ये सभी अपनी-अपनी खोखली मान्यताओं और परंपराओं को ढोने वाले हताश से लोग हैं।

साथ ही कुछ अनाम से वे लोग भी हैं जो गंदी बस्ती में रहते हैं और अभद्र कहे जाते हैं। वे समाज की 'जूठन' कहे जाने वाले लोग 'भद्र' लोगों से कई गुना बेहतर हैं। जैनेंद्र कुमार के द्वारा रचित तथाकथित 'उच्च' समाज के पात्र और तथाकथित 'निम्न' समाज के पात्र एक दूसरे से भिन्न हैं। भद्र लोग उसी प्राचीन परिपाटी पर चलकर 'लकीर के फकीर' से कुछ अधिक नहीं। वे जाति-व्यवस्था का अनुगमन, कुँवारेपन की रक्षा, माता-पिता की इच्छा के अनुसार विवाह, पातिव्रत्य धर्म का पालन, सतीत्व जीवन का निर्वाह आदि रूढ़ियों का पालन किए जाते हैं। यदि मृणाल जैसा कोई इन सड़े-गले मूल्यों की उपेक्षा करता है तो समाज उसके विरोध में खड़ा हो जाता है। आपने यह ध्यान दिया होगा कि समाज के 'अभद्र' कहे जाने वाले इस वर्ग में इन रूढ़ियों के

पालन की कोई बाध्यता नहीं। किंतु उनके परिवेश में इंसानियत पाई जाती है। यह इंसानियत 'भद्र' समाज में ढूँढ़ने से भी नहीं मिल पाती।

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' उपन्यास के प्रमुख और गौण पात्र कौन हैं? अलग-अलग करके लिखिए।
- भद्र (कुलीन) और अभद्र (निम्न) वर्गों के क्या अर्थ हैं?
- 'भद्र' क्या करके भद्र बने रहने का ढोंग करते हैं?

7.3.2 मुख्य पात्र मृणाल

'त्यागपत्र' (1937) नामक जैनेंद्र कुमार के इस उपन्यास में, जैसा कि आपने ध्यान दिया होगा, कोई सुसंबद्ध कथानक पकड़ में नहीं आता। लगता है उपन्यासकार ने कुछ परिस्थितियों का निर्माण किया और उनमें इस कथा के प्रमुख पात्र 'मृणाल' को अपने आप विकसित होने के लिए खुला छोड़ दिया। परिस्थितियाँ भी ऐसी कुछ अनूठी नहीं और न ही कदाचित स्पष्ट ही हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए हमें सर्वप्रथम 'मृणाल' के चरित्र पर ध्यान देना होगा।

उपन्यास के प्रारंभ में ही यह स्पष्ट हो जाता है कि मृणाल माँ-बाप विहीन एक कन्या है जिसके लालन पालन का दायित्व उसके भाई बहिन का है। प्रमोद मृणाल के भाई का पुत्र है और उसके प्रति मृणाल का सहज और अगाध ममत्व है। प्रमोद उसके सुख-दुख का साथी है। मृणाल हद-दर्जे की सुंदर है, प्रमोद के पिता अपनी बहिन की मोहिनी सूरत पर रीझ-रीझ जाते हैं और स्वयं प्रमोद - "बुआ का तब का रूप सोचता हूँ तो दंग रह जाता हूँ। ऐसा रूप कब किसी को विधाता देता है" (त्यागपत्र, पृ. 3)

मृणाल अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करती है पर यह प्रेम विवाह के रूप में नहीं बदल जाता। माता-पिता की स्नेह छाया से वंचित मृणाल भाई के घर घृणित-उपेक्षित जीवन बिताती है। प्रेम की सुगबुगाहट का पता चलते ही मृणाल के भाई की पत्नी उसे निर्ममता से पीटती है। इसके पश्चात 'लोग क्या कहेंगे' की सोचकर उसका विवाह एक बड़ी आयु वाले दुहाजू से होता है। यह व्यक्ति न तो उसे प्रेम दे पाता है और न सम्मान। उसे मन में अपनी पत्नी को लेकर एक भ्रम रहता है। वह उसे दुश्चरित्र समझता है। विवाहित जीवन नरक तुल्य हो जाता है। पति के घर में उसे कठोर व्यवहार और बेंतों की मार मिलती है। वह अपने भाई - भावज के घर वापस आकर पति-परित्यक्ता का जीवन बिताना चाहती है किंतु वे उसे मैके में टिकने नहीं देते। वह विवश होकर फिर से अपने ससुराल में कष्ट भोगने लगती है। और एक दिन वह भाग खड़ी होती है। वहाँ से निकलकर वह एक कोयले वाले को आत्मसमर्पण कर देती है।कोयले वाले का उसके प्रति प्रेम केवल वासना होता है। वह अपना उल्लू सीधा करता है और एक दिन उसकी सारी कमाई लेकर भाग जाता है जबकि मृणाल उसके प्रति एक प्रकार का पत्नीत्व धर्म निभाती है। कहीं पढ़ाने लगती है। वह जीने के सभी प्रयत्न करती है किंतु कोई न कोई बाधा आती चली जाती है। फिर वह इस तथाकथित मर्यादाप्रिय समाज को त्यागकर एक बदनाम बस्ती में रहने लग जाती है। वह जीने का प्रयत्न करती है पर उसके जीवन में सुख नहीं रहता।

मृणाल की पीड़ा ही उसके जीवन की एक तपस्या है। उसकी समस्याएँ संपूर्ण नारी जगत की समस्याएँ हैं और उनका समाधान संसार के लिए चुनौती है। मनुष्य की संकीर्ण मनोभावना

और नारी का शोषण करते हुए उसे अपनी वासना का साधन बनाए रखने की इच्छा तथा अहंकार जब तक रहेगा तब तक मृणाल सरीखे चरित्र अपनी वास्तविक गरिमा को प्राप्त न हो सकेंगे।

जैनेंद्र कुमार ने अपने उपन्यास 'त्यागपत्र' में मृणाल का जो चरित्र प्रस्तुत किया है वैसा चरित्र या उसके समान स्त्रियाँ हमारे समाज में असाधारण नहीं हैं। मृणाल के नैतिक पतन में किसका दोष है यह जानना बहुत कठिन है। उसका विवाह उसकी मर्जी के बगैर हुआ। प्रेमचंद के उपन्यास 'सेवासदन' की नायिका सुमन का विवाह भी ऐसे व्यक्ति से कराया गया था जो उसके योग्य न था, पर उसका कारण आर्थिक विवशता थी। यहाँ ऐसी कोई विवशता या गरीबी नहीं। पुरुष के संदेह करने से सुमन और मृणाल दोनों का पतन हुआ। मृणाल ने अपने पतन को स्वेच्छा से स्वीकार किया। उसने कभी अच्छी स्थिति में अपने को ले जाने का प्रयत्न भी नहीं किया।

यह भी देखा जा सकता है कि अधिकांश स्त्रियों के पतन के कारण पुरुष होते हैं। टामस हार्डी के उपन्यास 'टेस' की नायिका 'टेस' के जीवन में भी यही हुआ। मृणाल के प्रति उसके विवाह पूर्व के प्रेमी का प्रेम सच्चा होता तो उसकी कभी भी इतनी दुर्दशा न होती। शायद ही पति से तिरस्कृत होने पर भी वह सच्चे प्रेम के कारण समाज में प्रतिष्ठा और गौरव का उपभोग कर पाती। 'त्यागपत्र' में मृणाल की आत्मकुंठा और उसका आत्मपीड़न एक ऐसी मनोवृत्ति का सूचक है जो विद्रोह की आग को नहीं सह सकती। मृणाल आत्मपीड़क व्यक्तित्व का बेमिसाल साहित्यिक नमूना है। आत्मपीड़ा उसके लिए जीवन जीने का एक मार्ग ही बन गया है।

मृणाल के माध्यम से जैनेंद्र ने पाप-पुण्य की जो व्याख्या की है वह भगवती चरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' (1934) का स्मरण दिलाता है। जैनेंद्र कुमार का मानना है कि 'पीड़ा में ही परमात्मा बसता है। मेरे उपन्यास आत्मपीड़न के साधन हैं।' प्रमोद के माध्यम से भी यही चिंता व्यक्त की गई है, "मानव चलता जाता है और बूंद-बूंद इकट्ठा होकर उसके भीतर भरता जाता है। वही सार है। वही जमा हुआ दर्द मानव की मानसमणि है। उसके प्रकाश में मानव का गतिपथ उज्ज्वल हो।"

ऐसा प्रतीत होता है कि जैनेंद्र कुमार के अनुसार विवाह स्त्री के लिए सामाजिक बंधन ही नहीं, आध्यात्मिक और आत्मिक बंधन भी है। वह पुरुष को तन ही नहीं मन भी देकर पूर्ण होती है, इसलिए मृणाल मन दिये बिना प्रेम करते हुए स्वयं को अपूर्ण समझती चली जाती है। उसके चरित्र में गज़ब का आकर्षण और दृढ़ता है। पहली नज़र में वह परंपरागत लगती है पर गौर से देखने से उसकी मजबूती का पता चलता है। वह परिस्थितियों का विरोध तो नहीं करती किंतु उनके अनुकूल व्यवहार करने लगती है। उसकी ईमानदारी ही उसका दुर्गुण हो जाती है। वह पुरुषवादी समाज का खोखलापन उघाड देती है। वह पुरुषसत्तात्मक और पितृसत्तात्मक मूल्यों के वजूद को नकार देती है। वह चिड़िया बन उड़ नहीं पाती क्योंकि समाज उसके पर काट डालता है। पर वह पिंजरे में कैद भी होकर नहीं रह पाती। उपन्यास की टेक्स्ट में मृणाल मर जाती है, ठीक वैसे ही जैसे प्रेमचंद के 'गोदान' में होरी, किंतु पाठक के मन में उसके द्वारा भोगी गई गहरी यातना कभी नहीं मरती। उसकी पीड़ा का जिम्मेदार कौन है?

बोध प्रश्न

- मृणाल के चरित्र की चार विशेषताएँ बताइए।
- मृणाल की पीड़ा का जिम्मेदार कौन है?

7.3.3 मृणाल का चरित्र चित्रण

मृणाल के चरित्र का मूल्यांकन और इस औपन्यासिक पात्र का चरित्र चित्रण इसी संदर्भ में किया जा सकता है। हिंदी उपन्यासों की नायिकाओं में उसका निश्चित रूप से उल्लेखनीय स्थान है। मृणाल का विद्रोह समाज को तोड़ना फोड़ना, विवाह संस्था का तिरस्कार और अनैतिकता की यातना भोग रहे व्यक्ति का विद्रोह है और उसका चरित्र पारंपरिक स्त्री-नायिकाओं के समक्ष चुनौती बनकर खड़ा होता है। पारंपरिक रूप से यदि मृणाल के चरित्र का विस्तृत विश्लेषण किया जाए तो उसे निम्न बिंदुओं के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

अपूर्व सुंदरी

मृणाल के सौंदर्य पर उपन्यास के प्रारंभ में ही जैनेंद्र कुमार ने अपने एक मुख्य पात्र प्रमोद से कहलवाया है, 'बुआ का तब का रूप सोचता हूँ तो दंग रह जाता हूँ। एस रूप कब किसको विधाता देता है? पिताजी तो बुआ की मोहनी सूरत पर रीझ रीझ जाते थे। मुझे उसे देखकर कहानी की परियों का ध्यान हो आता और मैं मुख भाव से बुआ की ओर आकृष्ट हो जाता।' (पृ.3)

चंचल स्वभाव

मृणाल के स्वभाव की चंचलता पर प्रमोद बचपन से ही कुर्बान है। स्कूल में मृणाल अपनी मास्टरनी को 'छकाती' है। 'ठहाका' मारकर हँसती है। वह शैतान जरूर है पर शैतानी नहीं करती, वह तो दूसरों की शैतानी को अपनी कहकर उनके बदले 'दंड' प्राप्त करके खुश होती है। वह एक बार सचमुच का कसूर करके देखना चाहती है। उसकी नटखट शीला से दोस्ती का आधार यही तो है। पढ़ने में विशेष मन न होने पर भी स्कूल जाने और अपनी कॉपी किताब को सजाने का उसे विशेष चाव रहा। प्रमोद अपनी बुआ के लिए इसी लिए लिखता है, 'स्वभाव बड़ा हँसमुख था और निर्द्वंद।' निर्द्वंद तो इतनी कि पूछिये मत, "मैं बुआ नहीं होना चाहती। बुआ! छी! देख चिड़िया कितनी ऊंची उड़ जाती है। मैं चिड़िया होना चाहती हूँ। उसके छोटे छोटे पंख होते हैं। पंख खोल कर वह आसमान में जिधर चाहे उड़ जाती है।" (पृ. 9)। बस माँ के सामने सकुचाई रहती थी। पतंग उड़ाने के प्रसंग में मृणाल का यह कहना कि 'चल रे, पतंग से बालक गिर जाते हैं' उस मनोव्यथा की ओर संकेत करता है जैसे भीतर बस हवा हो, और मन हल्का फुल्का बस उड़ उड़ आना चाहता हो।" (पृ. 8)

अनूठी प्रेमिका

मृणाल अपनी सहेली के भाई से प्रेम करती है। उसका प्रेम सोलहवें सावन का अल्हड़ प्रेम था। इसलिए तो वह कभी चिड़िया बनना चाहती थी, कभी पतंगों के पेंच देखती और कभी कति पतंग को। प्रेम का भेद खुलने पर उसकी बेदर्दी से पिटाई होती है, पर वह उफ तक नहीं करती। उसका विवाह कर दिया जाता है और वह एक विधुर दुहेजू के साथ चली जाती है। ईमानदार इतनी है कि अपने विवाह-पूर्व प्रेम के विषय में अपने पति को बता देती है। प्रेमी से प्राप्त पत्र

और अपने द्वारा लिखे गए उसके उत्तर को भी दिखा देती है। पति के द्वारा मृणाल का परित्याग इसी कारण तो होता है। “मृणाल का कौल झूठा नहीं होता” वह बोल देती है तो उसे निभाती है। पति ने छोड़ दिया तो भी उसने उसे अपना ‘सत्य’ बताया अवश्य।

संघर्षशील जीवन

मृणाल का समस्त जीवन संघर्षों का रोजनामचा है। पिता और माता के प्रेम से बाल्यकाल में ही वंचित हो गई मृणाल ने अपने भाई और भाभी का आसरा अवश्य प्राप्त किया किंतु ममता उसे केवल अपने भतीजे प्रमोद से मिली। उसने अपनी भाभी द्वारा दी गई यातनाएँ और प्रताड़नाएँ भोगी। पति ने पतिता कहकर घर से निकल जाने को मजबूर किया। कोयले वाला भी अंत में धोखा ही देता है और जब वह बदनाम बस्ती में जाती है तो कुछ दिन में ही अपने सेवा भाव से उनका आसरा पा जाती है। पर रहती वह सदा ऊहापोह में ही । उसकी इस मानसिकता के लिए जैनेंद्र कुमार के शब्द हैं, “ज्यों-ज्यों जाने का दिन आता उनकी निगाह कुछ बंद सी होती जाती है। जैसे सामने उन्हें और कुछ नहीं दिखता। एसी अपेक्षित पूछती हुई सी निगाह से देखती मानो प्रश्न रोककर भी उत्तर मांगती हो कि मैं कुछ चाहती हूँ, पर अरे कोई बताएगा कि क्या?”

छलना के विरुद्ध

चाहे मृणाल के जीवन में कितने ही कष्ट क्यों न आए फिर भी वह सदा अपने आप से और दूसरों से सत्यनिष्ठ रहना छाती है। वह समाज की बनी बनाई परिपाटी को तोड़ना नहीं चाहती। वह जो निर्णय लेती है उस पर टिके रहती है, “ब्याह के बाद मैंने बहुत सोचा। सोचकर अंत में यही पाया कि मैं चल नहीं कर सकती, छल पाप है। हुआ जो हुआ, ब्याहता को पतिव्रता होना चाहिए।” कहानी के केंद्र में मृणाल के चरित्र की मूल चेतना है - मैं समाज को तोड़ना-फोड़ना नहीं चाहती हूँ। समाज टूटा तो फिर हम किसके भीतर बिगड़ेंगे? इसलिए मैं इतना ही कर सकती हूँ कि समाज से अलग होकर उसकी आकांक्षाओं में स्वयं ही टूटती रहूँ।” अपने निर्णय पर जमे रहने और स्वतंत्र निर्णय लेने के कारण मृणाल को जीवन पर्यंत दुख भोगने पड़े। समाज ने उससे पग-पग पर बदले लिए किंतु वह अपने दृढ़ निश्चय से टस से मस नहीं होती।

स्त्री आदर्श पर आस्था

मृणाल के जीवन में जो भी बदलाव आए और वह समाज की रूढ़ियों के कारण कितना भी कष्ट पायी किंतु उसका स्त्री धर्म के प्रति विश्वास अटल है। वह त्याग, दया, ममता, बलिदान, श्रद्धा और विश्वास को स्त्री का धर्म मानती है। वह स्त्री-धर्म का यथासंभव पालन करना चाहती है। जब उसका ब्याहता पति उसे त्याग देता है तो वह उसे अपने पति की आज्ञा मानकर शीरोधार्य करती है। वह अपने पति से किसी प्रकार की कोई आर्थिक सहायता भी नहीं लेना चाहती क्योंकि वह मानती है, ‘जिसको तन दिया उससे पैसा कैसे लिया जा सकता है यह मेरी समझ में नहीं आता। धन देने की जरूरत मैं समझ सकती हूँ। दान स्त्री का धर्म है नहीं तो उसका और क्या धर्म?’

आधुनिक और फेमिनिस्ट विचारधारा

मृणाल आधुनिक और प्रगतिशील नारी है जिसने नारी के परंपरागत गृहस्थ स्वरूप के मिथक को ध्वस्त किया है। वह तथाकथित सभ्य समाज और अभिजात्य वर्ग की पोल खोलकर रख देती है। बदनाम बस्ती के सामान्य जन जीवन और जन-सामान्य को अपने लाभ के लिए छोड़ना नहीं चाहती। प्रमोद के समझाने पर कहती है, 'प्रमोद, तुमने महाभारत तो पढ़ा होगा। युधिष्ठिर जब स्वर्ग गए तो कुत्ते को नहीं छोड़ा।... यह कुत्ते नहीं हैं और इनका मुझ पर बड़ा उपकार है।"

आलोचक निर्मला जैन ने आधी शताब्दी पूर्व कहा था, "त्यागपत्र की मृणाल, भाग्यहीना नहीं, अपने भविष्य की स्वयं नियंता है। उसका परित्यक्त होना भर पुरुष का अत्याचार है, शेष सब उसका सोचा-समझा, करा-धरा है।" मृणाल के चरित्र का दुर्बल पक्ष यह है कि वह अपने पति से कह देती है कि आप चाहें तो मुझे अपने से दूर कर सकते हैं। पर बात इतनी सी नहीं है। वह आत्मपीड़ा इसलिए सहती है कि समाज का भला होता रहे। मृणाल के चरित्र का मूल्यांकन करना आज भी कठिन है। वह शिक्षित है, अपना भला बुरा जानती है। उसकी दुर्गति का एक कारण तो उस समय की सामाजिक परिस्थितियाँ हैं।

जैनेंद्र कुमार ने इस चरित्र के माध्यम से कहा कि मृणाल की दुर्गति का कारण पुरुष सत्तात्मक समाज है। स्त्री का शोषण करने वाले, उसे अपनी वासना और हवस का शिकार बनाने वाले यदि अंदर से नहीं बदलेंगे तो कुछ नहीं बदलेगा। 'पर' के लिए 'स्व' का उत्सर्ग करने वाली मृणाल का हिंदी साहित्य की अनूठी नायिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान है। यह जैनेंद्र कुमार का अनूठा कारनामा है कि बहुत प्रामाणिक न होते हुए वे मृणाल के चरित्र को इतनी गहराई से रेखांकित कर सके। यही नहीं उसके माध्यम से वे कुछ सार्वभौम प्रश्नों को भी उठा सके।

बोध प्रश्न

- मृणाल का विद्रोह किस रूप में प्रकट होता है?
- मृणाल के चरित्र की चार प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?

7.3.4 प्रमोद का चरित्र चित्रण

परंपरा और आधुनिकता के बीच जूझता चरित्र प्रधान उपन्यास 'त्यागपत्र' मनुवादी हिन्दू व्यवस्था पर बौखलाहट और क्रोध पैदा करने वाला उपन्यास है। यह तथाकथित 'भद्र समाज' की खोखली, तर्कशून्य और अमानवीय मान्यताओं का कलात्मक भाषा शैली में प्रस्तुतीकरण है। जस्टिस दयाल इन मान्यताओं का प्रतिनिधित्व करते प्रतीत होते हैं। प्रमोद (जस्टिस दयाल) इस उपन्यास का प्रमुख पुरुष पात्र है। वह इस उपन्यास की प्रमुख स्त्री पात्र मृणाल का भतीजा है। प्रमोद एक प्रकार से उपन्यासकार का प्रतिनिधि है। लगता है वह प्रमोद नहीं स्वयं लेखक है। पर वह है बेचारा। जैनेंद्र के उपन्यासों के प्रमुख पात्र बड़े बेचारे दिखाई देते हैं। कई बार इसी कारण उपन्यास के अंत में पात्र हार मानकर रह जाते हैं। जैनेंद्र कुमार का यह उपन्यास भी दार्शनिकता और चिंतन की प्रचुरता से आप्लावित हैं। जैनेंद्र के मत में आत्म-पीड़ा द्वारा समाज को सुधारा जा सकता है। गांधीवादी अहिंसक और आत्मपीड़क विचारधारा की

छाप है। विश्वंभर मानव ने जैनेंद्र के मूल दर्शन को एक वाक्य में इस प्रकार व्यक्त किया है, 'जो है सो है।' इस दर्शन का मुखर प्रवक्ता प्रमोद है।

जैनेंद्र कुमार ने आत्मकथा की शैली में प्रमोद को प्रस्तुत किया है। सर एम दयाल (जो पहले बालक प्रमोद था) एक प्रांत के चीफ जज हैं और त्यागपत्र दे देते हैं। 'त्यागपत्र' देने का कारण है उनकी अपनी बुआ मृणाल जिनके लिए वे खुद कुछ न कर पाए। इसी का पश्चाताप करने के लिए उनका यह त्यागपत्र है। पाप और पुण्य की समीक्षा न कर पाने पर भी वे इतना अवश्य कहना चाहते हैं कि उनकी बुआ 'पापिष्ठा' नहीं थीं।

उपन्यास का नायक और मुख्य पुरुष-पात्र या नायक प्रमोद अपनी बुआ के मरने की खबर सुनकर दुखी है। उसकी बुआ (मृणाल) इस उपन्यास की नायिका है। मृणाल की मृत्यु जिस परिस्थिति में हुई है वह समाज की दृष्टि से पाप माना जाता है परंतु प्रमोद जज होते हुए भी उसे पाप की संज्ञा नहीं दे पाता। इस प्रकार यह उपन्यासकार एक दुखी जीवन की दर्दनाक कहानी है। समग्रतः कहा जा सकता है कि जस्टिस दयाल या कहें कि प्रमोद का चरित्र मृणाल के चरित्र में व्याप्त घनीभूत पीड़ा को और भी अधिक गहराई से रेखांकित करता है।

प्रमोद इस उपन्यास का सूत्रधार है, उपन्यासकार का प्रतिनिधि पात्र है। लेखक का ध्येय उसके चरित्र को प्रस्तुत करना न था। इसलिए उसके चरित्र का संपूर्ण विकास न करके उसकी परिकल्पना मात्र प्रस्तुत की गई है। प्रमोद के चरित्र में नाटकीयता अधिक है और स्वाभाविकता कम। उसके चरित्र में संयोग तत्वों की प्रधानता भी अधिक है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने प्रमोद और मृणाल के चरित्र का तुलनात्मक अध्ययन करके लिखा है, "प्रमोद की उच्चाभिलाषा, उसकी सहानुभूतिपूर्ण आदर्शवादिता और जजी भी मृणाल की विद्रोही ज्वाला और ज्योति के समक्ष निष्प्राण और अर्थहीन है। मृणाल में समर्पण और बलिदान की पुकार है, प्रमोद में एक थोथे गौरव का वृथा संसार।"

प्रमोद के चरित्र का विकास तो इस उपन्यास में पूरी तरह नहीं हो पाया है लेकिन उपन्यासकार के द्वारा उसकी परिकल्पना सार्थक ढंग से हुई है। प्रमोद के चरित्र में नाटकीयता अधिक है। वह बहुत से प्रसंगों में उसी प्रकार अविश्वसनीय प्रतीत होता है जैसे मृणाल। वह मृणाल की सहायता करने के लिए उन्हीं परिस्थितियों में सामने आता है, जिनमें लेखक को कोई पते की बात कहनी होती है। उसके चरित्र में संयोग तत्वों की प्रधानता अधिक है।

पारंपरिक रूप से प्रमोद के चरित्र की विशेषताओं को निम्नवत प्रस्तुत किया जा सकता है-

संपूर्ण कथा का प्रत्यक्षदर्शी कथा-वाचक

बालक प्रमोद और सर एम दयाल चीफ जस्टिस जो बाद में अपने पद से त्यागपत्र देकर संन्यासी बनकर रह जाते हैं इस कथा के मुखर दर्शक हैं। कहना न होगा कि जैनेंद्र कुमार ने इस उपन्यास का ताना बाना अर्थात मृणाल की कथा को प्रमोद के माध्यम से बुनकर प्रस्तुत किया है। प्रमोद का अपनी बुआ मृणाल से प्रेम और बुआ का अपनी सहेली के भाई के प्रति प्रेम, फिर अनमेल विवाह, उनका गृह त्याग और कोयलेवाले से संबंध और अंत में बदनाम बस्ती में आवास का प्रत्यक्षदर्शी रहा यह पात्र अनेक दृष्टियों से स्मरणीय है।

तटस्थ दर्शक

'त्यागपत्र' उपन्यास का प्रमुख पुरुष पात्र, उपन्यासकार का चहेता और उपन्यास का सूत्रधार कथावाचक एम.दयाल चीफ जस्टिस है। उनका ही बाल्यकाल का नाम प्रमोद है प्रमोद इस कथा का सूत्रधार भर है। वह कुछ करता नहीं है, बस तटस्थ रहकर देखता भर है। उसके चरित्र में बचपन में बचपना, किशोरावस्था में भावुकता और वयस्क होने पर दार्शनिकता दिखाई देती है। डॉ. नगेंद्र के शब्दों में प्रमोद "अपनी बुआ मृणाल के बढ़ते हुए दर्द का तापमापक है।"

अति-भावुक किशोर

'त्यागपत्र' उपन्यास में मृणाल और प्रमोद (बुआ और भतीजा) के व्यक्तिगत सम्बन्धों में कई बार पाठक को कैशोर्य भावुकता दिखाई देती है। मृणाल के 'बिछुओं' को पकड़कर जिद करके वह क्या संकेत देता है, समझ नहीं आता? उनका व्यक्तिगत संबंध राम रतन भटनागर के शब्दों में "अवैध प्रेम का संबंध है यद्यपि लेखक ने इसे छिपाने की पूरी चेष्टा की है। इस प्रेम के आरंभ में कैशोर्य की रहस्यमयता अस्पष्टता और भावुक द्राविकता है। (जैनेंद्र - साहित्य और समीक्षा)। पढ़ लिखकर वह जब बुआ के घर जाता है और कोयले वाले के साथ मृणाल को रहते देखता है तो वह अब बड़ा हो जाने के कारण उसे सहारा देना चाहता है। उस अवसर पर उस पुराने टूटे फूटे घर में झाड़ू लगाकर प्रमोद बता देना चाहता है कि वह साथ निभाना चाहता है और उसके लिए प्रस्तुत है। "मैं सहायता का मन लेकर आया था" कहकर वह कुछ कहना चाहता है, पर 'प्रतिष्ठा' की बात कहकर उसे मृणाल टाल देती है। प्रेम की अवैधता के साथ ही मृणाल का उच्चादर्श प्रमोद की भावुकता को नियंत्रित करके रखता है। मृणाल-प्रमोद की मौन-स्थिति राधा-कृष्ण की स्थिति जैसी है। कहा जाना चाहिए कि बुआ के पत्नीत्व और समाज-सेवा के सूक्ष्म भाव को भतीजे प्रमोद के कभी मौन और कभी मुखर किंतु रहस्य-पूर्ण संबंध ने व्यर्थ कर दिया है। यदि आप बहुत ध्यान से उपन्यास को पढ़ते हैं तभी आप इस रहस्य को भेद पा सकेंगे। तभी आपको इस वायवी-संबंध की व्यर्थता का आभास होगा। पाठक के मन में प्रश्न उठता है कि प्रमोद इस प्रकार स्वयं को केवल छलता रहता है।

अति भीरु

प्रमोद चिंतनशील अवश्य है, पर है बहुत डरपोक और भीरु प्रकृति का युवक। बचपन में अपनी माँ से मृणाल को पिटते देखता है, कुछ नहीं करता। वह सच का पल्ला पकड़कर अपने और अपनी बुआ के भाई-भतीजे वाले संबंध को अपनी होने वाली पत्नी के परिवार को बताता तो है, पर कहीं न कहीं उसका यह साहस दिखावटी लगता है। वह शायद मृणाल को कुछ संकेत देना चाहता है कि वह अब भी किसी की प्रतीक्षा में है। लगता यह भी है कि प्रमोद बड़ा होकर भी 'लोग क्या कहेंगे' की 'आंतरिक भीरुता' को छोड़ नहीं पाया।

अध्ययन-शील

मृणाल का मन पढ़ाई में कम लगता है किंतु प्रमोद आरंभ से ही पढ़ाकू है। उसका मन चाहे 'मृणाल' में अटका रहा किंतु वह पढ़ लिखकर बी.ए. करता है। (बी.ए. का इम्तिहान नजदीक था और मैं पोजीशन लाना चाहता था। बुआ की याद को को मन में गहरी बिठाने से

बचना चाहता था। ... यह ख्याल तो चेतना में बंधा था, बिखरा नहीं था।" कानून पढ़ता है। वकील और जज बनता है। यह भी उल्लेखनीय है कि लेखक के अनुसार उन्हें इस उपन्यास की पांडुलिपि अंग्रेजी में आत्मकथा के रूप में प्राप्त हुई थी। इससे लेखक प्रमोद से रचनात्मक और सर्जनात्मक व्यक्तित्व को भी रेखांकित करता है।

उपन्यास के अंत तक आते-आते हमारी सहानुभूति और प्रेम मृणाल के प्रति जितना प्रगाढ़ हो जाता है, प्रमोद के प्रति उतनी ही झुंझलाहट होती है। प्रमोद बुआ के प्रति तब भी 'प्रेम' भाव रखता है और पाठक प्रमोद के मन की इस हीनता को देखकर यही विचार करता रह जाता है कि "क्या उसमें बुआ के प्रति कहीं 'रतिभाव' तो नहीं है? विद्वान समीक्षकों का विचार है कि 'त्यागपत्र' में प्रमोद के मन में जो व्यर्थता उभारी गई है (जो त्यागपत्र के मूल में है) उसे भी जैनेंद्र में ही ढूंढा जा सकता है।" (राम रतन भटनागर)।

बोध प्रश्न

- प्रमोद के चरित्र की चार प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
- प्रमोद के माध्यम से लेखक क्या कहना चाहता है?
- प्रमोद के भीरुता और निडरता का एक-एक उदाहरण खोजकर लिखिए।
- 'त्यागपत्र' के प्रमोद और जैनेंद्र कुमार के जीवन और व्यक्तित्व में क्या कुछ समानता है?

7.4 पाठ सार

जैनेंद्र कुमार द्वारा लिखित उपन्यास 'त्यागपत्र' के प्रमुख पात्र मृणाल और प्रमोद हैं और गौण पात्रों में प्रमोद के माता पिता, मृणाल की सहेली शीला और उसका भाई, मृणाल का पति और मृणाल को आसरा देने वाला कोयले वाला आदि है। मृणाल अपूर्व सुंदरी, चंचल और प्रेमी स्वभाव की लड़की है। वह अपनी सहेली शीला के भाई से प्रेम करती थी और अपनी यह सच्चाई अपने पति से कह देती है। उसकी यह बात उसको कहीं का नहीं रखती। उसका संघर्षशील व्यक्तित्व और दूसरी ओर उसके भतीजे प्रमोद का अनिश्चल स्वभाव कहानी को आगे बढ़ाते हैं। वास्तव में प्रमोद के चरित्र के माध्यम से जैनेंद्र कुमार जीवन, समाज और व्यक्ति के आपसी संबंधों की व्याख्या करते हैं। प्रमोद के व्यक्तित्व और चरित्र को पढ़कर आपको कई बार झुंझलाहट होगी और कई बार आप मृणाल के चरित्र के अनेक पहलुओं को जानकर खिन्नता होगी। उनके प्रति पाठक का लगाव पैदा करने में उपन्यासकार ने सफलता प्राप्त की है। इस इकाई में अन्य गौण (मुख्य दो पात्रों के अतिरिक्त पात्र) पात्र बस इतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने वे मृणाल और प्रमोद के चरित्र को उभारते हैं। देखा जाए तो चरित्र एक ही है और वह मृणाल का चरित्र है जिसे उद्घाटित करने के लिए 'त्यागपत्र' लिखा गया है।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. 'त्यागपत्र' के प्रमुख पात्र जैनेंद्र कुमार की इस मान्यता के अनुरूप हैं कि 'पीड़ा में ही परमात्मा बसता है।' उनके अनुसार जीवन के अनुभवों से जमा हुआ दर्द मानव की मानसमणि है।
2. 'त्यागपत्र' की नायिका मृणाल विवाह को स्त्री के लिए सामाजिक बंधन भर नहीं, आध्यात्मिक और आत्मिक बंधन भी मानती है। इसीलिए वह मन दिए बिना प्रेम करते हुए स्वयं को अपूर्ण समझती है।
3. प्रमोद के चरित्र के माध्यम से जैनेंद्र ने जीवन, समाज और व्यक्ति के आपसी संबंधों की व्याख्या की है, जो पाठक को जड़ रूढ़ियों पर सोचने को बाध्य करती है।
4. 'त्यागपत्र' एक चरित्र प्रधान उपन्यास है और नायिका मृणाल का चरित्र इसके केंद्र में है।

7.6 शब्द संपदा

1. असंदिग्ध = संदेह रहित, निश्चित, पक्का
2. आत्मकुंठा = कुंठ+आ = *कुंठा* मतलब खीज, चीढ़ या निराशा, स्वयं कुंठाग्रस्त होना।
3. आत्मपीड़न = स्वयं को दुख पहुंचाना
4. ऊहापोह = अनिश्चय की स्थिति में मन में उत्पन्न होनेवाला तर्क-वितर्क
5. निर्द्वंद = बिना किसी भय या डर के
6. प्रताड़ना = डाँट-फटकार, कष्ट पहुँचाने या सताने की क्रिया।

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'त्यागपत्र' उपन्यास के नारी पात्र मृणाल का चरित्र चित्रण कीजिए।
2. 'त्यागपत्र' उपन्यास के प्रमुख पुरुष पात्र प्रमोद का चरित्र चित्रण प्रस्तुत कीजिए।
3. 'त्यागपत्र' के गौण पात्र रूढ़िवादी और परंपरागत हैं - इस कथन पर विचार कीजिए।
4. मृणाल-प्रमोद की स्थिति राधा कृष्ण की स्थिति जैसी है। इस कथन के आधार पर उनके चरित्रों का मूल्यांकन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मृणाल के जीवन से क्या संदेश मिलता है?
2. 'त्यागपत्र' में कोयले वाले का व्यवहार मृणाल के प्रति कैसा रहा?

3. प्रमोद ने जज के पद से त्यागपत्र क्यों दिया? इससे उसके चरित्र के बारे में क्या पता चलता है?

4. मृणाल अपने आप को क्यों कष्ट देती है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मृणाल की सहपाठी कौन थी? ( )

(अ) मीना (आ) शीला (इ) प्रमोद (ई) आनंदी

2. एम दयाल और प्रमोद का आपस में क्या संबंध है? ( )

(अ) पिता-पुत्र (आ) भाई-भाई (इ) भानजा-भतीजा (ई) इनमें से कोई नहीं

3. त्यागपत्र देने का क्या कारण था? ( )

(अ) कुछ न कर पाने की विवशता (आ) समाज का मृणाल के प्रति दृष्टिकोण

(इ) मृणाल की मृत्यु (ई) ये सभी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. .... और .... त्यागपत्र उपन्यास के दो प्रमुख पात्र हैं।

2. मृणाल के प्रेम की खबर पाकर उसका विवाह .... से कर दिया जाता है।

3. प्रमोद .... के कारण अपने पद से त्यागपत्र देता है।

4. त्यागपत्र उपन्यास का पात्र कुछ करता नहीं है, बस .... की तरह देखता रहता है।

5. "मेरी बुआ .... नहीं थी" एम दयाल ने त्यागपत्र देते हुए कहा।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रमोद	(अ) खोखली मान्यताओं को ढोने वाली
2. मृणाल	(आ) स्त्री को वासना के लिए उपयोग करने वाला स्वार्थी
3. भाभी	(इ) लकीर के फकीर
4. कोयले वाला	(ई) पढ़ने में विशेष मन नहीं
5. भद्र लोग	(उ) अध्ययनशील

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्यागपत्र : जैनेंद्र कुमार
2. भारतीय साहित्य के निर्माता जैनेंद्र कुमार : गोविंद मिश्र
3. जैनेंद्र साहित्य और समीक्षा : राम रतन भटनागर
4. हिंदी साहित्य कोश भाग-2 : धीरेंद्र वर्मा
5. जैनेंद्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन : देवराज उपाध्याय

इकाई 8 : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : परिवेश एवं भाषा-शैली

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : परिवेश एवं भाषा-शैली
8.3.1 'त्यागपत्र' : औपन्यासिक परिवेश
8.3.2 'त्यागपत्र' की विभिन्न अर्थ छवियाँ
8.3.3 जैनेंद्र की भाषा-शैली
8.3.4 शिल्प विधान
8.3.5 संवाद योजना
8.4 पाठ सार
8.5 पाठ की उपलब्धियाँ
8.6 शब्द संपदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

पिछली दो इकाइयों में आपने मुख्य रूप से मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार जैनेंद्र कुमार के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में पढ़ चुके हैं। उनके 1937 में प्रकाशित उपन्यास 'त्यागपत्र' के कथानक, पात्र और चरित्र चित्रण को भी आपने देखा और विचार किया। यह भी स्पष्ट हो गया कि यह उपन्यास वस्तुतः चरित्र प्रधान उपन्यास है जिसमें मृणाल का चरित्र केंद्र में है। इसी चरित्र की कथा के समुचित विकास के लिए प्रमोद को कथावाचक के रूप में उपस्थित किया गया है। कोई सुसंबद्ध कथानक नहीं है, फिर भी कथा प्रवाह, वर्णन शैली और परिवेश के कारण उपन्यास अत्यंत मर्मस्पर्शी बन गया है और पाठक के मन पर उसका अमिट प्रभाव पड़ता है।

जैनेंद्र ने छोटे उपन्यास ही लिखे हैं और 'त्यागपत्र' भी कलेवर में छोटा सा ही है। किंतु इसमें परिवेश का विस्तार न होते हुए भी काल क्रम का समुचित विस्तार है। मृणाल के माध्यम से स्त्री जीवन के विविध पक्षों को प्रकाशित करने के लिए जैनेंद्र कुमार ने इमेजों, सूत्रों या संकेतों से काम लिया है। इससे परिवेश का कुछ तो विस्तार ही हुआ है। मानव जीवन की संपूर्ण नियति को इस उपन्यास का संक्षिप्त परिवेश प्रस्तुत करने में समर्थ है। इस इकाई में इन सब बिंदुओं पर विस्तारपूर्वक विचार किया जाएगा।

8.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप जैनेंद्र कुमार द्वारा रचित 'त्यागपत्र' उपन्यास के परिवेश और भाषा-शैली की विशेषताओं का विस्तार से करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

- उपन्यास के क्षेत्र में परिवेश और भाषा-शैली के महत्व को समझ सकेंगे।

- इस उपन्यास के परिवेश पर विचार करते हुए उसके महत्व और सीमाओं को जान सकेंगे।
- भाषा-शैली की दृष्टि से लेखक के भाषा-कौशल को रेखांकित कर सकेंगे।
- परिवेश निर्माण में भाषा-शैली के योगदान को जान लेंगे।
- 'त्यागपत्र' की विभिन्न अर्थ छवियों और उनके महत्व को समझ लेंगे।

8.3 मूल पाठ : 'त्यागपत्र' (जैनेंद्र) : परिवेश एवं भाषा-शैली

8.3.1 'त्यागपत्र' : औपन्यासिक परिवेश

जैनेंद्र कुमार की उपन्यास-कला की सबसे बड़ी विशेषता उनके उपन्यासों का लघुत्व है। वे प्रेमचंद के समान अनेक कथा-सूत्रों को लेकर नहीं चलते। उनके पात्रों की संख्या प्रत्येक उपन्यास में सीमित रहती है। इस विशेषता के कारण कई बार इनके उपन्यासों में दुर्बोधता आ जाती है। पाठक को कहानी के सूत्र खोजने में कभी-कभी बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। यह याद रखने की बात है कि प्रारंभ में उपन्यास 'लघुकाय' ही हुआ करते थे। पंडित गौरी दत्त शर्मा का उपन्यास 'देवरानी जेठानी की कहानी' (1870) आकार में अत्यंत लघु है। बंगला के शरच्चंद्र के उपन्यास भी कलेवर में लघु ही थे।

जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों की दूसरी सीमा उनमें प्राकृतिक चित्रपटी का अभाव है। उनके अधिकांश उपन्यासों में हमें किसी भी प्राकृतिक दृश्य की पृष्ठभूमि नहीं मिलती। उनके उपन्यासों के पात्र नगरों और ग्रामों की तंग गलियों और गली कूँचों से बाहर नहीं जाते। रवींद्रनाथ टैगोर और शरतचंद्र के बंगला भाषा में लिखे उपन्यासों के पाठ से प्रेरित होकर जैनेंद्र कुमार ने अपने उपन्यासों में समाज के प्रति विद्रोह का स्वर तो अवश्य करते हैं किंतु अंत में कहीं-कहीं वे समझौता करते दिखाई देते हैं।

'त्यागपत्र' एक छोटे आकार का उपन्यास है। इसे कोई लघु उपन्यास भी कह सकता है। जैनेंद्र कुमार ने प्रेमचंद के समय से लिखना शुरू किया था। 1929 में जब जैनेंद्र का पहला उपन्यास 'परख' प्रकाशित हुआ था, तब प्रेमचंद ने उसकी सकारात्मक समीक्षा की थी। पर जैनेंद्र ने अपनी राह खुद बनाई, प्रेमचंद के बनाए रास्ते पर वे नहीं चले। कथा-संगठन, पात्र-योजना और विषयवस्तु को जैनेंद्र ने प्रेमचंद से अलग करके प्रस्तुत किया। जैनेंद्र ने कथा की क्रमबद्धता को अधिक महत्व नहीं दिया। उनका कहना था, "मैंने जगह-जगह कहानी के तार की कड़ियाँ तोड़ दी हैं। वहाँ पाठक को थोड़ा कूदना पड़ता है। कहीं एक साधारण भाव को वर्णन से फुला दिया है, कहीं लंबा रिक्त छोड़ दिया है।" उदाहरण के लिए 'त्यागपत्र' में बस इतना भर बताया गया है, "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पर स्थान का नाम 'युक्त प्रांत के इन-उन जिलों' कह कर टाल दिया गया है।

जैनेंद्र कुमार ने अपनी कृतियों में मनोवैज्ञानिकता, चिंतन और दर्शन पर अधिक बल दिया है। जैनेंद्र कुमार के उपन्यासों में विवरणात्मकता और कल्पना-प्रधानता के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक तत्व की प्रचुरता है। उनकी चिंतनशीलता से उन्हें अपने उपन्यासों में सूक्ष्म-कथानक सूत्रों और चरित्र विशेष के आंतरिक विश्लेषण को समन्वित करने में सफलता प्राप्त हुई है। इन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का भी गहन विश्लेषण

प्रस्तुत किया है। पारिवारिक समस्याओं का भी चित्रण यहाँ हुआ है। व्यक्तिगत चरित्रों की कुछ मनोवैज्ञानिक समस्याओं जैसे वासना, अहं भावना, अवचेतन तथा अतृप्ति को प्रमुखता से इनके उपन्यासों में विश्लेषित किया गया है।

डॉ. गोपाल राय का कहना है कि जैनेंद्र कुमार 'शहर की गली और कोठरी की सभ्यता' में ही सिमटकर व्यक्ति पात्रों की मानसिक गहराइयों में प्रवेश करने की कोशिश करते हैं। यह कथाकार के सीमित परिवेश पर सारगर्भित टिप्पणी है। वे अपने समय (1930-40) में स्त्री की स्वतंत्रता का प्रश्न उठा रहे थे जब सामाजिक परिवेश उसके लिए तैयार न था। यह देखा जा सकता है कि आज भी, अर्थात 'त्यागपत्र' के लिखे जाने के 80-90 वर्ष बाद भी, स्त्री की दशा में आमूलचूल परिवर्तन नहीं हो सका है। उस समय लेखक ने प्रश्नों को अनुत्तरित छोड़ दिया था, आज भी इनका उत्तर हमारे पास नहीं है। भविष्य द्रष्टा की तरह लेखक अपने समाज और परिवेश को प्रस्तुत करते हुए भी यह मानकर चलते हैं कि स्त्री स्वतंत्रता हाल-फिलहाल दुर्लभ है और कभी इस पर गंभीरता से विचार भी होगा और समाधान भी निकलेंगे।

'त्यागपत्र' की एक बड़ी सीमा उसका परिवेश भी है। इस उपन्यास का परिवेश उतना व्यापक नहीं है कि उसे किसी काल विशेष का प्रतिबिंब कहा जा सके। लगभग एक शताब्दी बीत जाने पर भी यह कथा आज की भी हो सकती है। उपन्यास के प्रारंभ में ही उस पारिवारिक परिवेश की ओर संकेत है जिसमें विवाह से पूर्व मृणाल का जीवन बीता, "इतना ही हम समझे कि मृणाल जितनी कुशल थीं, उतनी कोमल नहीं थीं। मुझसे कोई चार-पाँच बड़ी होंगी। मेरी माता के संरक्षण में मेरी ही भाँति बुआ भी रहती थीं। वह संरक्षण ढीला न था। आज भी मेरे मन में उस अनुशासन की कड़ाई के लाभालाभ पर विचार चला करता हैं।" आज भी कई परिवारों में अनुशासन वैसा ही है।

कहा जा सकता है कि परिवेश की दृष्टि से 'त्यागपत्र' उपन्यास जैनेंद्र के अन्य उपन्यासों की तरह ही बाहरी परिवेश से अधिक भीतरी परिवेश की उथल-पुथल की चिंता करता है। उन्होंने समाज व्यवस्था में स्त्री-पुरुष के स्थान और संबंधों में स्त्री की दयनीय दशा का चित्रण किया है। मृणाल के माध्यम से स्त्री पर परिवार और समाज के बंधनों का चित्रण है और किसी प्रकार के सुधार की ओर संकेत किए बिना ही उपन्यास का अंत हो जाता है। इसलिए यह 'कालातीत' कृति है। इसके सरोकार सदा के लिए हैं। 'त्यागपत्र' के लगभग समस्त कार्य-व्यापार किसी भी छोटे बड़े उत्तर भारतीय नगर में घटे माने जा सकते हैं। वे बस्तियाँ और गली मुहल्ले किसी भी नगर के हो सकते हैं। हाँ, कभी-कभी किसी बात या चर्चा से कुछ अनुमान सा हो जाता है। उदाहरण के लिए, मिठाई में 'घेवर' का जिक्र, नगरों में 'हरिद्वार' का उल्लेख। स्वयं जैनेंद्र कुमार ने उपन्यास के पहले अनुच्छेद में ही कह दिया है कि कहानी में से स्थानों और व्यक्तियों के नाम और कुछ ऐसे ही ऐहिक विवरण अनिवार्य न होने के कारण बदल या कम कर दिया गए हैं। जब भी कुछ कहने को होते हैं, यह कहकर आगे बढ़ जाते हैं, "खैर उस बात को छोड़ें।"

विचार और चिंतन उपन्यास के परिवेश का निर्माण करते हैं। मृणाल देशकाल में जीने वाली वास्तविक स्त्री के स्थान पर जैनेंद्र की वैचारिक निर्मिति अधिक है। वह उनके अमूर्त सिद्धांत की जीती जागती मूर्ति है। प्रेमचंद जहाँ परिस्थितियों और परिवेश से कथा बुनते हैं,

जैनेंद्र कुमार विचारों और धारणाओं से। मृणाल जीवन से नहीं विचार से संचालित है, प्रमोद किंकर्तव्यविमूढ़ है। जिस समय यह उपन्यास लिखा जा रहा था, बाहर स्वतंत्रता संग्राम चल रहा था, लेकिन उस परिवेश के स्थान पर यहाँ कुछ और ही चल रहा है। समाज यहाँ राजनीति से प्रबल है। समाज के नैतिक पाखंड और जर्जर होती मान्यताएँ इस उपन्यास के परिवेश का निर्माण करते हैं।

बोध प्रश्न

- परिवेश की दृष्टि से 'त्यागपत्र' की दो सीमाएँ क्या हैं?
- कथा की क्रमबद्धता का क्या अर्थ है?
- जैनेंद्र बार-बार यह क्यों कहते हैं, खैर इस बात को यहीं छोड़ें।

8.3.2 'त्यागपत्र' की विभिन्न अर्थ छवियाँ

'त्यागपत्र' उपन्यास में 'त्याग' शब्द की कई अर्थ छवियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। उपन्यास का शीर्षक बहुत सावधानी से चुना गया है। यह वह कहानी है जो एक जज के अपने पद से 'इस्तीफ़ा' देने का 'पत्र' तो है ही, यह उस उपन्यास की ओर भी संकेत है जिसमें यह कथा है। त्याग- (1) एक जज का अपने पद से त्याग, (2) एक पति द्वारा अपनी पत्नी का त्याग, (3) समाज द्वारा एक स्त्री का त्याग। मृणाल नामक स्त्री सूत्रधार सरीखे प्रमोद नामक पात्र की 'बुआ' है। वह उपन्यास की नायिका है। वह वस्तुतः एक 'त्यागिन' बन जाती है।

जैनेंद्र कुमार बहुत चतुराई से अपने उपन्यास के 'प्रारंभिक' में अपने इस बहुआयामी मंतव्य को संकेत में और बहुत संक्षेप में बता देते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के जर्मन 'नोवेला' की तर्ज पर 'प्रारंभिक' में एक साथ ही उपन्यास को प्रामाणिकता और आधिकारिकता प्रदान करते हुए जैनेंद्र कुमार उपन्यास की पांडुलिपि को जज एम दयाल द्वारा हस्ताक्षरित बताते हैं। प्रामाणिकता को पुख्ता करने के लिए उसे अंग्रेजी में लिखा कहते हैं और साथ ही आत्म-कटाक्ष करते हुए इस उपन्यास को उस पांडुलिपि का उल्था घोषित करते हैं। वह इसे 'एक कहानी ही कहिए' कहकर प्रस्तुत करके पाठक को चेता भी देते हैं। वह उपन्यास के पाठकों से दो अपेक्षाएँ भी करते हैं - पाठक त्यागपत्र देने वाले जज की अंतर्दृष्टि और बुद्धिमत्ता का संज्ञान ले और बालक (प्रमोद) और उसके पश्चात उसके युवा चरित्र (एम दयाल) के दृष्टिकोण को समझता रहे। इस प्रकार अपने भाषा कौशल, वर्णन कौशल और सांकेतिक चतुराई से उपन्यासकार अपने पाठक को अपने बस में कर लेते हैं। वे समझने लगते हैं कि प्रमोद की हार्दिक अभिलाषा है कि मृणाल जिस नारकीय वातावरण में रह रही है उससे 'त्यागपत्र' दे दे, उसे 'त्याग' दे। वह एक सभ्य, सुसंस्कृत और तथाकथित संस्कारी स्त्री के समान उसके प्रतिष्ठित समाज में सुखपूर्वक रहे। पर वह टस से मस नहीं होती। वह तो जिस स्थान पर भी रहती है उस स्थान को और वहाँ के लोगों को 'स्वर्ग' तुल्य मानती है। मृणाल कहती है – मुझे ऐसा लगता है कि इन लोगों में जिन्हें दुर्जन कहा जाता है उनमें कई तह पार करके वह भी तह रहती है कि उसको छू सको तो दूध सी श्वेत सद्भावना का सोता ही फूट निकलता है। स्पष्ट है कि वह हर स्थान पर सब कुछ देख लेती है। उसने अपनी मनःस्थिति ऐसी बना ली है।

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' के एक से अधिक कितने 'अर्थ' यहाँ आपको समझ आते हैं?
- 'एक कहानी ही कहिए' का क्या अर्थ है। लेखक यह क्यों कहता है?
- क्या 'त्यागपत्र' केवल एक कहानी मात्र है? क्यों? क्यों नहीं?

8.3.3 जैनेंद्र की भाषा-शैली

भाषा-शैली उपन्यास का एक प्रमुख तत्व है। भाषा के माध्यम से ही रचनाकार विचार संप्रेषण करता है। प्रत्येक साहित्यकार की भाषा-शैली में भिन्नता होती है। एक ही लेखक भी अपनी अलग-अलग रचनाओं में अपनी शैली परिवर्तित करता है। 'त्यागपत्र' में आत्मकथात्मक और मनोविश्लेषणात्मक शैली का प्रयोग है। डायरी शैली का भी संकेत है। भाषा के संबंध में जैनेंद्र कहते हैं, "शब्द जब मुझसे जाकर उतना अपने को नहीं जितना मेरे भाव को कहते हैं तब साफ हो जाता है कि शब्द और भाषा की चिंता अपनी खातिर अनावश्यक है। गलत या सही आदमी होता है, भाषा स्वयं गलत या सही नहीं हो सकती। उसका भाव तो सुधी और सहृदय पाठक के पास है।" (साहित्य और कला, पृ. 228)

हिंदी उपन्यासों की भाषा-शैली में नवीन प्रयोगकर्ताओं में जैनेंद्र कुमार का नाम अग्रगण्य है। उपन्यास की विषय वस्तु, कथा शिल्प, भाषा-शैली सभी दृष्टियों से उन्होंने नवीन प्रयोग किए। वे मनोविश्लेषणात्मक शिल्प विधि के रचनाकार माने जाते हैं, क्योंकि उन्होंने नए सिरे से सामाजिक प्रश्नों, स्त्री पुरुषों के परस्पर संबंधों, नैतिक मूल्यों तथा व्यक्ति चरित्रों के अध्ययन का बीड़ा उठाया। उन्होंने व्यक्ति के अंतर्मन में उठने वाली विविध मनोवैज्ञानिक समस्याओं को छुआ ही नहीं बल्कि उन्हें आधिकारिक ढंग से अपने रचे पात्रों और चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत भी किया। इसलिए उनको विद्वानों ने व्यक्तिमुखी रचनाकार कहा है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी के शब्दों में, "जैनेंद्र की साहित्य सृष्टि व्यक्तिमुखी है। उनका संबंध सामाजिक जीवन के व्यापक स्वरूपों से कम ही है। वे वैयक्तिक मनोभावों और स्थितियों के चित्रकार हैं। जैनेंद्र सामाजिक जीवन से दूर जाकर जिस साहित्य की सृष्टि करते हैं, उसमें व्यक्ति के मानसिक संघर्ष और उसकी परिस्थितिजन्य समस्याएँ प्रमुख रूप से आती हैं।" दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वे व्यक्ति के जीवन खंडों के सूक्ष्म विश्लेषण एवं चित्रण की ओर उन्मुख रहें है।

'त्यागपत्र' उपन्यास के आधार पर जैनेंद्र कुमार की भाषा-शैली और शिल्प के विषय में कहा जा सकता है कि कथानक की विश्वसनीयता में कहीं-कहीं शंका के बावजूद अपने शिल्प और कथन की आत्मीयता से लेखक प्रभाव पैदा करते हैं। उपन्यास का आरंभ भावमय, आत्मीय और नाटकीय है। अंत भी 'पुनश्च' के साथ आता है और कथा को स्वाभाविकता के साथ ही विश्वसनीयता प्रदान करता है। कथा में संकेत शैली का बार-बार उपयोग करने से विलक्षण रहस्यमयता आ गई है। उपन्यास में कोई घटना और कथोपकथन निरर्थक नहीं। चिंतन युक्त वार्तालाप और वर्णन का समुचित सामंजस्य है।

बोध प्रश्न

- 'त्यागपत्र' आत्मकथा है तो किसकी और कैसे?
- जैनेंद्र कुमार शिल्प की आत्मीयता को कैसे प्रगट करते हैं?

8.3.4 शिल्प विधान

प्रख्यात विद्वान डॉ. नगेंद्र ने जैनेंद्र के रचना और शिल्प विधान पर विचार करते हुए लिखा है कि 'त्यागपत्र' का कौशल अपनी विदग्धता के बल पर अपने मेधावी शिल्प की दुहाई देता है और 'नारी' का कौशल अपने को छिपाकर अपने स्नेहार्द शिल्पी की सिफ़ारिश करता है। डॉ. नगेंद्र के इस कथन के आलोक में उपन्यास को देखने से ज्ञात होता है कि 'त्यागपत्र' आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया विश्लेषणात्मक शिल्प विधि का एक ऐसा उपन्यास है जो एक बार तो आपको घटनाशून्य प्रतीत होगा किंतु जैसे ही आप उसकी आत्मा - मृणाल - के मानसिक स्तर को छू लेते हैं तो आपको जैनेंद्र के घटना संयोजन का पता चलता है। पता चल जाता है कि प्रत्येक घटना एक मार्मिक दृश्य है जो पाठकों पर एक ओर तो प्रहार करता है, दूसरी ओर उनकी संवेदनशीलता को उभारकर उन्हें द्रवीभूत कर देता है।

उपन्यास के शिल्प विधान में पूर्वदीप्ति विधि (फ्लैश बैक टेकनीक) के प्रयोग से अनूठापन आ गया है। इस विधि के द्वारा उपन्यासकार ने प्रधान पात्र मृणाल के जीवन की घटनाओं को अतीत में जाकर दिखाया है। इससे उपन्यास का परंभ करके अंत तक ले जाकर मूल कथा से अंत का संबंध जोड़कर दिखाया गया है। कथा का आरंभ भाव-मय और आत्मीय के साथ ही नाटकीय भी है।

प्रारंभिक

> सर एम. दयाल जो इस प्रांत के चीफ़ जज थे और जजी त्यागकर इधर कई वर्षों से हरिद्वार में विरक्त जीवन बिता रहे थे, उनके स्वर्गवास का समाचार दो महीने हुए पत्रों में छापा था। पीछे उनके कागजों में उनके हस्ताक्षर के साथ एक पांडुलिपि पाई गई जिसका संक्षिप्त सार इतस्ततः पत्रों में छप चुका है। उसे एक कहानी ही कहिए। मूल लेख अँग्रेजी में है। उसी का हिंदी उल्था यहाँ दिया जाता है। कहानी में से स्थानों और व्यक्तियों के नाम और कुछ ऐसे ही ऐहिक विवरण अनिवार्य न होने के कारण बदल या कम कर दिए गए हैं।

कथा-समाप्ति के समय 'पुनश्च' के अंतर्गत एम. दयाल के अपने 'त्यागपत्र' पर हस्ताक्षर करने की सूचना है। कथा में संकेत शैली का बार-बार उपयोग होने के कारण विलक्षण रहस्यमयता आ गई है। संकेत शैली के कारण संवाद योजना में छोटे-छोटे वाक्यों और सरल शब्दों द्वारा प्रभावशाली अभिव्यक्ति हुई है। कथानक कभी विश्वसनीय लगता है तो कभी शंका भी होती है पर मुख्य पात्रों की चारित्रिक उदात्ता और व्याप्त वेदना ने उपन्यास के परिवेश को अप्रभावित नहीं रहने दिया है।

बोध प्रश्न

- कथा के प्रारम्भ द्वारा जैनेंद्र कुमार कैसे और क्या स्थापित करते हैं?
- संकेत शैली के प्रयोग से क्या लाभ हुआ है?

8.3.5 संवाद योजना

जैनेंद्र कुमार संवादों के माध्यम से मन के भावों को व्यक्त करने में सिद्धहस्त हैं। भाषा का ऐसा जादूगर आपको न मिलेगा। भाषा की अमित संभावनाओं का सर्वाधिक रचनात्मक उपयोग करते हुए वे कुछ ऐसा कहलवा देते हैं कि पाठक अवाक रह जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है -

> "मैंने पूछा, तुम सच-सच बताओ, वहाँ जाना चाहती हो या नहीं?"
>
> बुआ ने कहा, "सच बताऊँ?"
>
> "हाँ, बिलकुल, सच-सच बताओ।"
>
> बुआ ने हँसकर कहा, क्यों सच-सच बता दूँ?"
>
> मैंने नाराज होकर कहा, नहीं बताओगी?
>
> बोलीं, अच्छा, सच-सच बताती हूँ। मैं तेरे साथ रहना चाहती हूँ। रखेगा? फिर एकाएक मुझे अपने से चिपटाकर बोलीं, एक बात बता। तुझे बेंत खाना अच्छा लगता है?"
>
> मैंने कहा - बेंत?"
>
> बोली, "सच-सच कहती हूँ, प्रमोद। किसी और से नहीं कहा, तुझे कहती हूँ। बेंत खाना मुझे अच्छा नहीं लगता है। न यहाँ अच्छा लगता है न वहाँ अच्छा लगता है।"

इन संवादों में मृणाल ने अपने ऊपर किए जा रहे अत्याचार की परोक्ष प्रस्तुति की है। बुआ-भतीजे का प्रेम है, बेतकल्लुफ़ी है, बेबाकी है। ऊपर से आनंद पर अंदर से पीड़ा है। सब कुछ संकेत में है। कह सकते हैं कि जैनेंद्र ने हिंदी उपन्यास को एक समर्थ और व्यंजनाधर्मी भाषा दी जो अपनी गद्यात्मकता के बावजूद कवित्वशक्ति संपन्न है।

व्याकरणिक भाषा प्रयोग

'भी' और 'तो' का बलार्थ प्रयोग जैनेंद्र की रचनात्मक भाषा का उदाहरण है। इस तराश को बाद में अज्ञेय, शमशेर बहादुर सिंह और रघुवीर सहाय ने परवान चढ़ाया। 'त्यागपत्र' उपन्यास से एक उदाहरण प्रस्तुत है - "हम लोगों का असली घर पछाँह की ओर था। पिता प्रतिष्ठावाले थे और माता कुशल गृहणी थीं। जैसी कुशल थीं वैसी कोमल भी होतीं तो -? पर नहीं, उस 'तो-?' के मुँह में नहीं बढ़ना होगा।"

दार्शनिक शब्दावली का अनूठा प्रयोग

इस उपन्यास में दार्शनिक शब्दावली का अनूठा प्रयोग है। ईश्वर, लीला, शरण, पतिव्रता, स्त्री-धर्म, समर्पण, पुरुष की सेवा, करुणा आदि शब्दों का प्रयोग प्रेमचंद का समकालीन और प्रगतिशील आंदोलन के संस्थापकों के सम्मेलन (1936) में भाग लेने वाला कर रहा है, यह हैरान होने की ही नहीं मार्के की बात भी है। उदाहरण के लिए, मृणाल के भाई उसे समझते हुए कह रहें हैं, "थोड़ी बहुत रगड़ झगड़ होती ही है, पर पति के घर के अलावा स्त्री को ओर क्या आसरा है। यह झूठ नहीं है मृणाल कि पत्नी का धर्म पति है, घर पति-गृह है। उसका धर्म, कर्म और मोक्ष भी वही है। समझती तो हो, बेटा।" कोयले वाले की सहायता को कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करने के बाद मृणाल कहती है, "मुझे उस समय उस पर बड़ी करुणा आई।" वह समाज की 'मंगलाकांक्षा' में टूटने के लिए तैयार है।

घटनाओं की जगह लंबे-लंबे दार्शनिक आलाप

जैनेंद्र के उपन्यासों में लंबे-लंबे दार्शनिक वक्तव्य होते हैं। कुछ लोग इसे उनकी कमजोरी समझेंगे किंतु यही इनकी विशेषता है। इनके द्वारा लेखक जीवन में काम आने वाले विचार देता है। इनके बिना जैनेंद्र का कथा संसार फीका लगेगा।

जैनेंद्र और प्रेमचंद की वर्णन शैली में अंतर

जैनेंद्र की कथा भाषा-शैली प्रेमचंदीय शैली से भिन्न है। कथा के निर्वाह के लिए प्रेमचंद घटना के वर्णन पर बहुत ध्यान देते थे। जैनेंद्र ऐसा नहीं करते। इसलिए प्रेमचंद के उपन्यासों का आकार बड़ा है, जैनेंद्र के उपन्यास छोटे रह गए हैं। उदाहरण के लिए, 'त्यागपत्र' उपन्यास में मृणाल की बेंत से निर्मम पिटाई के बाद जैनेंद्र पूरी घटना को विस्तार नहीं देते। दो एक वाक्यों में कहकर आगे बढ़ जाते हैं। "वह दिन था कि फिर बुआ की हँसी मैंने नहीं देखी। इसके पाँच छह महीने बाद बुआ का विवाह हो गया।" जैनेंद्र चाहते तो इन महीनों की कथा-व्यथा कहते, पर वे घटना-प्रधानता को उपन्यास का दोष मानते रहे, "वह उपन्यास किसी काम का नहीं, जो इतिहास की तरह घटनाओं का बखान करता चला जाता है।"

बोध प्रश्न

- जैनेंद्र की भाषा-शैली से प्रेमचंद की भाषा-शैली किस प्रकार से भिन्न है?
- "जैंसी कुशल गृहणी थीं वैसी ही कोमल भी होतीं तो? यहाँ 'तो' का अर्थ क्या है? विस्तारपूर्वक स्पष्ट कीजिए।

8.4 पाठ सार

जैनेंद्र कुमार के उपन्यास 'त्यागपत्र' के आधार पर उनके परिवेश और भाषा-शैली पर विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि रचनाकार पात्रों की अधिक चिंता करता है और परिवेश की कम। न उसे प्रकृति चित्रण करने और न ही विस्तृत विवरण देने में कोई रुचि है। वह व्यर्थ का नखशिख वर्णन भी नहीं करता। 'त्यागपत्र' शीर्षक की अर्थ-गर्भिता इसका उदाहरण है। जैनेंद्र घटनाओं को विस्तार नहीं देते और न ही पाठक को अपने वाग्जाल में फँसाने की कोई चेष्टा करते हैं। 'जो है सो है' उनका दर्शन तो है ही, उनकी शैली और शिल्प का सरल सूत्र भी है। अपने परिवेश से भाषा प्रयोग को उठाने के कारण लेखक भाषा प्रयोग के प्रेग्मेटिक धरातल को स्पर्श करते चलते हैं। घटनाओं की जगह लंबे-लंबे दार्शनिक आलाप देकर वास्तव में लेखक अपने पाठकों से यह कहते चलते हैं कि यह कथा तो माध्यम भर है। वे जीवन और जगत की वास्तविकता से हमें परिचित कराते चलते हैं। उनके लिए यही साहित्य का उद्देश्य भी है। प्रेमचंद के मित्र होते हुए भी जैनेंद्र कुमार ने अपनी कथन-शैली पर उनका प्रभाव नहीं पड़ने दिया। पर उनके भाषा प्रयोग ने बाद के लेखकों को नई राह दिखाई। अज्ञेय का गद्य और शमशेर बहादुर सिंह का पद्य इसका प्रमाण है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं –

1. जैनेंद्र कुमार ने उपन्यास 'त्यागपत्र' में पात्रों और उनके चरित्र को उभारने पर ज़्यादा ध्यान दिया है, परिवेश पर कम।
2. जैनेंद्र की शैली प्रेमचंद की शैली से भिन्न है। कथा के निर्वाह के लिए प्रेमचंद घटना के वर्णन पर बहुत ध्यान देते थे। जैनेंद्र ऐसा नहीं करते।
3. 'त्यागपत्र' में प्रकृति चित्रण, विस्तृत विवरण और नखशिख वर्णन नहीं मिलता। लेखक ने घटनाओं को विस्तार न देकर, 'जो है सो है' की दो-टूक बात कहने की शैली अपनाई है।
4. अपने परिवेश से भाषा प्रयोग को उठाने के कारण लेखक भाषा प्रयोग के प्रेग्मेटिक (व्यावहारिक) धरातल को स्पर्श करते चलते हैं।
5. जीवन और जगत की वास्तविकता से पाठक को परिचित कराने के लिए लेखक ने परिवेश के विवरण के बजाय दार्शनिक चिंतन का सहारा लिया है, जो उनके मनोविश्लेषण की ओर रुझान की देन है।
6. 'त्यागपत्र' में संकेत शैली का बार-बार उपयोग होने के कारण रहस्यमयता आ गई है। इससे छोटे-छोटे वाक्यों और सरल शब्दों द्वारा प्रभावशाली अभिव्यक्ति में सहायता मिली है।

8.6 शब्द संपदा

1. अवचेतन (सब-कांशस)	= जो चेतना में न होने पर भी थोड़ा प्रयास करने से चेतना में लाया जा सके।
2. अव्यय	= वह व्याकरणिक शब्द जिसका कुछ 'व्यय' न हो अर्थात खर्च न हो। अव्यय शब्द अपना रूप कभी बदलता नहीं। हाँ, ना, अरे, जब, तब और तो आदि अव्यय हैं। इनके प्रयोग से वाक्य में अनोखापन आ जाता है। गौर करें - मैं जाता हूँ और मैं जाता तो हूँ।
3. आमूल-चूल	= पूरी तरह से
4. इतस्ततः	= इधर उधर, यहाँ वहाँ
5. उल्था	= अनुवाद, बदलाव
6. ऐहिक	= सांसारिक, दुनियावी
7. किंकर्तव्यविमूढ़	= जो यह न समझ सके कि अब क्या करना चाहिए, भौंचक्का, दुविधा भरी स्थिति।
8. जर्जर	= जीर्ण-शीर्ण, पुराना
9. नियति	= भाग्य, जो भगवान को मंजूर हो
10. पछाँह	= पश्चिम की ओर का
11. पाखंड	= आडंबर, ढकोसला
12. मर्मस्पर्शी	= दिल को छू लेने वाली

13. सारगर्भित = महत्वपूर्ण, प्रभावकारी

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'त्यागपत्र का परिवेश उपन्यास की सीमा नहीं उसकी समकालीनता का प्रमाण है।' इस कथन की उपयुक्तता पर विचार कीजिए।
2. पठित उपन्यास से उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए कि जैनेंद्र कुमार ने कथा-भाषा प्रयोग में महत्वपूर्ण योगदान दिया।
3. 'त्यागपत्र' उपन्यास के शीर्षक के आधार पर उसकी भाषा और परिवेश पर टिप्पणी कीजिए।
4. 'शहर की गली और कोठरी की सभ्यता' पद से 'त्यागपत्र' उपन्यास की किस विशेषता या सीमा का उल्लेख किया गया है, स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. पारिवारिक परिवेश की दृष्टि से 'त्यागपत्र' की विवेचना कीजिए।
2. स्त्री, परिवार और समाज के सम्बन्धों की दृष्टि से 'त्यागपत्र' पर विचार व्यक्त कीजिए।
3. 'त्यागपत्र' उपन्यास की भाषा-शैली पर एक सारगर्भित टिप्पणी लिखिए।
4. पठित उपन्यास के आधार पर जैनेंद्र कुमार के भाषा प्रयोग का विवेचन कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'त्यागपत्र' उपन्यास के परिवेश की सीमा है – ( )

   (अ) आकार में लघु (आ) प्राकृतिक चित्रण का अभाव
   (इ) गली मुहल्लों में संकुचित (ई) ये सभी

2. त्यागपत्र एक 'कालातीत' कृति है, इसमें कालातीत का अर्थ है – ( )

   (अ) बीता हुआ समय (आ) सदा के लिए
   (इ) एक विशेष काल के लिए (ई) काल के अतीत के लिए

3. जैनेंद्र कुमार की भाषा-शैली का अनुकरण निम्नलिखित लेखक ने किया। ( )

   (अ) अज्ञेय (आ) शमशेर बहादुर सिंह (इ) ये सभी (ई) रघुवीर सहाय

4. 'त्यागपत्र' की शैली है - ( )

   (अ) आत्मकथात्मक (आ) भावनात्मक (इ) प्रेरणात्मक (ई) ये सभी

5. इनमें से कौन हिंदी का साहित्यकार नहीं है। ( )

   (अ) शरतचंद्र (आ) गौरी दत्त (इ) गोपाल राय (ई) इनमें से कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. कलेवर की दृष्टि से त्यागपत्र को कोई .... उपन्यास भी कह सकता है।
2. .... और .... परिवेश का निर्माण करते हैं।
3. कथा के निर्वाह के लिए जैनेंद्र घटना के .... का बहुत ध्यान नहीं रखते।
4. त्यागपत्र उपन्यास .... शैली में लिखा गया है ।
5. जैनेंद्र ने हिंदी उपन्यास को एक .... और .... भाषा दी ।

III. सुमेल कीजिए -

1. जैनेंद्र की कथा भाषा शैली	(अ) आकार की लघुता
2. दार्शनिक शब्दावली	(आ) घटना का विस्तारपूर्वक वर्णन
3. जैनेंद्र का जीवन दर्शन	(इ) मरण, माया, ईश्वर, लीला, शरण
4. प्रेमचंदीय शैली	(ई) चरित्र चित्रण की प्रधानता
5. त्यागपत्र	(उ) जो है सो है

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्यागपत्र : जैनेंद्र कुमार
2. जैनेंद्र - साहित्य और समीक्षा : राम रतन भटनागर
3. भारतीय साहित्य के निर्माता : जैनेंद्र कुमार, गोविंद मिश्र
4. हिंदी साहित्य कोश भाग-2 : धीरेंद्र वर्मा
5. जैनेंद्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन : देवराज उपाध्याय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 9 : कहानी : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूल पाठ : कहानी : परिभाषा, स्वरूप और तत्व
9.3.1 कहानी का अर्थ
9.3.2 कहानी की परिभाषा
9.3.3 कहानी का स्वरूप
9.3.4 कहानी के तत्व
9.3.5 कहानी का महत्व
9.4 पाठ सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! साहित्य की दो प्रमुख विधाएँ होती हैं - पद्य एवं गद्य। मानव जीवन जब तक सरलता से आवेष्टित था, तब तक उनके मन के सहज भाव पद्य की निर्झरिणी बनी बहती रहती थी। जैसे-जैसे मानव विकास की ऊँचाइयों की ओर बढ़ता गया, उसके मन के भावों के गहन गुम्फन ने अपने भावों को प्रकट करने के अलग-अलग राहों का अन्वेषण करना शुरू किया। इन्हीं रूपों में गद्य की विविध विधाओं का विकास हुआ। वैसे तो मानव के जन्म के साथ ही कहानी का अस्तित्व माना जाता है। प्रायः समस्त सभ्य अथवा असभ्य समाज में कहानी की पुरातन परंपरा रही है। प्राचीन काल में वेदों, उपनिषदों में उल्लेखित विविध ऐतिहासिक, पौराणिक कहानियों को आख्यानक स्वरूप में प्रस्तुत किया गया है। जैसे - पुरुरवा-उर्वशी, सनत्कुमार-नारद, दुष्यंत-शकुंतला, नल-दमयंती, ययाति, नहुष, गंगावतरण आदि कहानी के काव्यगत रूप ही हैं। लोककथाओं, दंतकथाओं, चंपू काव्य आदि में कोई न कोई कहानी अवश्य ही समाहित रहती है।

हिंदी कहानी का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। यह अंग्रेज़ी के 'शॉर्ट स्टोरी' तथा बांग्ला के 'गल्प' विधा के अर्थ में हिंदी में विकसित हुई। आरंभ में हिंदी कहानी विधा के लिए सरस्वती पत्रिका में 'आख्यायिका' पद का प्रयोग किया गया, जिसका इंदु, वैश्योपकारक, सुदर्शन आदि पत्रिकाओं ने भी अनुसरण किया। 'मर्यादा' पत्रिका में बांग्ला के 'गल्प' पद को अपनाया गया। जबकि हिंदी के प्रखर आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'छोटी कहानी' पद का प्रयोग किया है। कहानी के स्वरूप को विभिन्न विद्वानों ने विविध प्रकार से परिभाषित किया है। किसी ने इसे एक बैठक में पढ़ी जाने वाली रोचक विधा कहा, तो किसी ने आकस्मिक घटनाओं

की संघटना को आवश्यक माना। कहानी के प्रमुख तत्वों की विवेचना करते हुए कथावस्तु, पात्र, चरित्र चित्रण, कथोपकथन, देशकाल को अपरिहार्य माना गया है। कहानी के चार प्रमुख अंग माने जाते हैं आरंभ, आरोह, चरम स्थिति एवं अवरोह। यह भिन्न-भिन्न उदेश्यों से आवेष्टित होकर कभी पाठक का मनोरंजन करती हैं, तो कभी सीख और सूचना देती हैं। छात्रो! आप प्रस्तुत इकाई में कहानी की परिभाषा, स्वरूप और तत्वों का अध्ययन करेंगे।

9.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- कहानी के अर्थ की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- कहानी की विभिन्न परिभाषाओं के बारे में जान सकेंगे।
- कहानी के विधागत स्वरूप को जान सकेंगे।
- कहानी के तत्वों पर प्रकाश डाल सकेंगे।
- कहानी के महत्व को समझ सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : कहानी : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

9.3.1 कहानी का अर्थ

उन्नीसवीं सदी के आरंभ में हिंदी में गद्य विधा के नवीनतम रूप कहानी का जन्म हुआ। वैसे तो कहानी का लोककथा रूप सदियों से आम जनता में सदैव व्याप्त रहा। हिंदी कहानी का अर्थ जानने के लिए कहानी और कथा के अंतर को जानना आवश्यक है। कहानी में क्षण में घटित होने वाली संवेदना को प्रस्तुत करने के लिए किसी न किसी कथा का स्वयं ही प्रवेश हो जाता है। अर्थात कहानी में 'कार्य-व्यापार-शृंखला' का संतुलन अपरिहार्य होता है। हिंदी कहानी अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिंदी संस्करण के रूप में सामने आया। कहानी कहने-सुनने की आदिम परंपरा में मानव सदैव इसका प्रयोग करता आ रहा है, किंतु यह काव्यात्मक स्वरूप में ही अब तक प्रचलन में थी।

भारत में कहानियाँ विविध विषयों को लेकर काव्यात्मकता के साथ जन-जन में प्राचीन काल से ही प्रचलित थीं। इसे धार्मिक, सामाजिक, काल्पनिक, नैतिक तथा राजा-रानी आदि की मनोरंजक कथाओं को साहित्य तथा लोकगीतों में देखा जा सकता है। 'सरस्वती' पत्रिका में कहानी के लिए 'आख्यायिका' शब्द का प्रयोग हुआ, जिसे 'सुदर्शन', 'इंदु', 'वैश्योपकारक' आदि ने भी अपनाया। 'मर्यादा' पत्रिका में बंगला के 'गल्प' के अनुकरण पर कहानी के लिए 'गल्प' का प्रयोग किया जा रहा था।

बोध प्रश्न

- कहानी का अर्थ बताइए।
- 'सरस्वती' पत्रिका में कहानी के लिए किस शब्द का प्रयोग किया गया है?

9.3.2 कहानी की परिभाषा

कहानी विधा को विविध विद्वानों ने अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है, जो इस प्रकार हैं -

प्रेमचंद के अनुसार 'कहानी वह ध्रुपद की तान है, जिसमें गायक महफ़िल शुरू होते ही अपनी संपूर्ण प्रतिभा दिखा देता है, एक क्षण में चित्त को इतने माधुर्य से परिपूर्ण कर देता है, जितना रात भर गाना सुनने से भी नहीं हो सकता।'

एडगर एलन पो के अनुसार 'कहानी वह छोटी आख्यानात्मक रचना है, जिसे एक बैठक में पढ़ा जा सके, जो पाठक पर समन्वित प्रभाव उत्पन्न करने के लिए लिखी गई हो, जिसमें उस प्रभाव को उत्पन्न करने में सहायक तत्वों के अतिरिक्त और कुछ न हो और जो अपने आप में पूर्ण हो।'

प्लेटो के अनुसार 'शरीर के लिए भोजन तथा व्यायाम और मस्तिष्क के लिए कहानी तथा संगीत अति आवश्यक है।'

एडीसन के अनुसार 'जब हमें शिक्षा दीक्षा या उपदेश देना हो, तब हमें कहानी की रचना करनी चाहिए। कहानी शिक्षण का साधन एवं प्रभावशाली माध्यम है।'

एच जी वेल्स के अनुसार 'कहानी गागर में सागर होती है। अतः लेखक उसमें एक उद्देश्य को लेकर चलता है तथा जैसे ही उद्देश्य चरमावस्था तक पहुँचता है, कहानी समाप्त हो जाती है।'

इस प्रकार कहानी विधा को परिभाषित करते हुए विद्वानों ने कभी उसे ध्रुपद की तान कहा, तो कभी एक बैठक में पढ़ी जाने वाली छोटी रचना कहा, किंतु उसके स्वरूप और महत्व की उपादेयता को सभी ने एकमत से माना। कहानी शिक्षा, उपदेश, मनोरंजन आदि सभी विषयों के लिए एक महत्वपूर्ण विधा के रूप में विकसित हुई। उल्लेखनीय है कि -

> "प्रेमचंद ने 1908 में प्रकाशित अपने पहले कहानी संग्रह 'सोजे वतन' की भूमिका में पहली बार 'शॉर्ट स्टोरी' पद के अर्थ में 'कहानी' पद का प्रयोग किया था, पर हिंदी में आने के बाद वे अपनी कहानियों को कभी 'कहानी', कभी 'आख्यायिका'और कभी 'गल्प' कहते रहें। उनकी यह दुविधा उनके जीवन भर बनी रही, जिसका प्रमाण 1936 में प्रकाशित 'मानसरोवर' की भूमिका है। पर (आचार्य रामचंद्र) शुक्ल जी की मोहर लगने के बाद चौथे दशक में 'शॉर्ट स्टोरी' के लिए 'छोटी कहानी' (संक्षेप में 'कहानी') पद आलोचकों और कहानीकारों, दोनों के बीच, लगभग मान्य हो गया। (गोपाल राय, हिंदी कहानी का इतिहास, पृ.18)

बोध प्रश्न

- प्लेटो ने मस्तिष्क के लिए क्या आवश्यक माना है?
- कहानी को 'ध्रुपद की तान' किसने कहा है?
- प्रेमचंद की दुविधा क्या थी?

9.3.3 कहानी का स्वरूप

मानव ने कहने-सुनने की परंपरा को जब मौखिक से लिखित रूप में ढालना शुरू किया तो वह कविता की सरल भावधारा में प्रवाहित होने लगी। मानव ने जैसे-जैसे जीवन के विकास की गति तीव्र की, उनके जीवन में विषमताओं ने भी उसी तीव्रता से डेरा जमाना शुरू किया। ऐसी ही विषमताओं के परत को खोलने के कार्य में साहित्यकार अलग-अलग गद्य विधाओं के

माध्यम से निमग्न रहने लगे। हिंदी गद्य की कहानी विधा में आदर्श, यथार्थ से आवेष्टित मानवतावाद को सदैव पुष्ट किया जाता रहा है।

कहानी के स्वरूप की चर्चा करते हुए जयशंकर प्रसाद कहते हैं - 'सौंदर्य की एक झलक का चित्रण करना और उसके द्वारा रस की सृष्टि करना ही कहानी का उद्देश्य है। हिंदी कथासम्राट प्रेमचंद कहते हैं - 'कहानी एक रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक अंग या किसी एक मनोभाव को प्रदर्शित करना ही लेखक का उद्देश्य रहता है। उसके चरित्र, उसकी शैली, उसका कथा विन्यास सब उसी भाव को पुष्ट करते हैं।'

पाश्चात्य विद्वान एच.जी.वेल्स कहानी के स्वरूप को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं - 'कहानी को आकार में अधिक से अधिक इतना बड़ा होना चाहिए कि वह सरलता से बीस मिनट में पढ़ी जा सके।' इसी भाव को हडसन भी मानते हुए कहते हैं कि - 'कहानी उसी को कहेंगे जो एक बैठक में सरलता से पढ़ी जा सके।'

आर. फ्रांसिस फोस्टर कहते हैं - 'कहानी जीवन की महत्वपूर्ण घटना एवं विषम परिस्थितियों का संक्षिप्त विवरण और मनुष्य के भीतर स्थित आधारभूत गुणों को प्रदर्शित करती है।' कहानी का विषय यथार्थ, आदर्श, कल्पना, अतिकल्पना तथा सत्य का उद्घाटन आदि कोई भी हो सकता है। उसमें राजा-रंक, सामान्य जन अथवा पशु-पक्षी आदि कोई भी मुख्य पात्र के रूप में चित्रित किया जा सकता है। यही कारण है कि कहानी का यह स्वरूप वैदिक काल से आज तक गतिमान बना हुआ है।

मानव की अनुभूतियों तथा संघर्षों को कहानीकारों ने समसामयिकता के धरातल पर जीवंत रूप में प्रस्तुत किया है। कहानी का स्वरूप मानव की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से अनुस्यूत होकर आकार ग्रहण करता है। कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव जीवन की त्रासदी के विरेचन का उत्तम माध्यम बन चुकी है। कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति पथ अन्वेषित करने का प्रयत्न कहानीकार करते हैं। हिंदी में कहानी की मूल प्रतिस्थापना का विकसित स्वरूप कम ही देखने में आता है। यही कारण है कि आलोचक हिंदी कहानी के स्वरूप को अलग-अलग दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैं।

कहानी का स्वरूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है। प्रेमचंद से पूर्व हिंदी कहानी मनोरंजन, शिक्षा, उपदेश तथा कल्पना के आकाश में विचरण कर रही थी। प्रेमचंद ने हिंदी कहानी को धरा पर उतारकर उसे जन-जन तक पहुँचाया। प्रेमचंदोत्तर युग में हिंदी कहानीकार प्रगतिशीलता की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए प्रयोगवाद के छत पर पहुँच कर नए-नए प्रयोगों के साथ नई कहानी का रूप गढ़ने लगे। जीवन विकास की जटिलताओं ने कहानी को मनोवैज्ञानिक गुम्फन की दुनिया में पहुँचाया तो मानवतावादी दृष्टिकोण ने हिंदी कहानी को दलित, स्त्री तथा आदिवासी विमर्शों की ओर मोड़ा। इस प्रकार हिंदी कहानी का स्वरूप सतत परिवर्तनशील रहा।

बोध प्रश्न

- कहानी को बीस मिनट में पढ़ी जाने वाली रचना किसने माना?
- किसके अनुसार कहानी में सौंदर्य की एक झलक का चित्रण किया जाता है?

प्रिय छात्रो! जैसा कि आप जानते ही हैं, आधुनिक कथा साहित्य के दो प्रमुख रूप हैं - उपन्यास और कहानी। आम तौर से इन दोनों की पहचान का आधार आकार के भेद को माना जाता है। उपन्यास आकार में बड़ा होता है और कहानी छोटी होती है। लेकिन यह कसौटी काफी उलझी हुई है, क्योंकि 'बड़ा' और 'छोटी' सापेक्ष शब्द हैं जिनकी सीमा तय नहीं की जा सकती। इसकी अपेक्षा यह कहना अधिक उचित होगा कि जिस प्रकार महाकाव्य को संपूर्ण जीवन का तथा खंड काव्य को उसके किसी एक हिस्से का प्रतिनिधि माना जाता है, उसी प्रकार उपन्यास में व्यापक और कहानी में सीमित जीवन का प्रतिनिधित्व होता है। डॉ. गोपाल राय के शब्दों में-

> "जहाँ उपन्यास में मानव जीवन की सच्चाइयों और संवेदनाओं का एक 'विज़न' में समाहार होता है, वहाँ कहानी मात्र एक सच्चाई या संवेदना के बिंदु पर केंद्रित होता है। कहानी का यथार्थ उपन्यास के यथार्थ की तरह जीवन के व्यापक संदर्भों से युक्त नहीं होता। कहानी में उपन्यास की तरह पात्रों का बाहुल्य भी अपेक्षित नहीं होता।" (हिंदी कहानी का इतिहास, पृ. 21)

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपन्यास की तुलना में कहानी कम जटिल होती है। वह आम तौर पर किसी एक प्रसंग पर केंद्रित होती है। कहानी में प्रायः 'कोई एकल कथानक, कोई एकल दृश्य और सीमित संख्या में पात्र होते हैं। तथा वह छोटी कालावधि में नियोजित होती है।'

बोध प्रश्न

- उपन्यास और कहानी में क्या अंतर हो सकता है?

9.3.4 कहानी के तत्व

कहानी विधा की रचना निम्नलिखित प्रमुख तत्वों के आधार पर किया जाता है -

कथावस्तु

कहानी की कथावस्तु प्रायः संक्षिप्त होनी चाहिए। कहानी के कथानक में आरंभ, विकास, कौतूहल, चरमसीमा एवं अंत का अलग-अलग पड़ाव होते हैं। लेकिन ये कथानक के अनिवार्य तत्वों के परिचायक नहीं हैं; क्योंकि प्रत्येक कहानी में इन समग्र तत्वों की अन्विति हो, यह आवश्यक नहीं है। अधिकतर कहानियों में कथानक संघर्ष की स्थिति तक पहुँचकर कौतूहल जगाते हुए चरम स्थिति से होते हुए अपने अंत तक पहुँचकर समाप्त हो जाता है।

पात्र एवं चरित्र-चित्रण

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में घटना और समाज से अधिक व्यक्ति को प्रधानता दिया जाता है। वर्तमान हिंदी कहानी में बुद्धिवादी तत्वों की प्रधानता के कारण यथार्थ एवं मनोवैज्ञानिक आधार पर चरित्र-चित्रण पर अधिक बल दिया जा रहा है। कहानी में पात्रों के संघर्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। कहानी अपने आकार की संक्षिप्तता के कारण पात्र के सबसे अधिक प्रभावशाली क्षण को ही प्रस्तुत कर पाती है। पात्र केंद्रित कहानी में यथार्थ जगत का सहज चित्रण कहानी को पाठक के पर्याप्त नजदीक पहुँचा देता है। कहानीकार वर्णनात्मक अथवा प्रत्यक्ष शैली द्वारा पात्र के चरित्र को उद्घाटित करता है। पात्र अपने एकाकी अथवा परस्पर वार्तालाप एवं क्रियाओं द्वारा अपने गुण-दोषों के साथ कहानी में चित्रित होते हैं। पात्रों के चरित्र की सशक्तता कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है।

देशकाल वातावरण

यद्यपि कहानी में देशकाल, वातावरण के विकास के लिए विशेष स्थान नहीं होता तथापि पात्र की मनःस्थिति को समझने में इनका चित्रण सहायक होता है। उदाहरण के लिए जयशंकर प्रसाद की कहानी 'पुरस्कार' में 'मधुलिका' की मनःस्थिति का चित्रण वातावरण के माध्यम से ही जीवंत बन पड़ा है। मनोवैज्ञानिक, ऐतिहासिक कहानियों में भौतिक वातावरण का सजीव चित्रण पाठक और श्रोता को कहानियों के जीवंत चित्रण से संबद्ध करता है।

संवाद या कथोपकथन

कहानी एक ऐसी विधा होती है, जिसमें लंबे-चौड़े संवाद के लिए कोई स्थान नहीं होता है। प्रेमचंद के 'बड़े भाई साहब' में बड़े भाई के लंबे-लंबे भाषण में भी चुटीलापन दृष्टिगत होता है। प्रायः कहानी में नाटकीयता तथा रोचकता का सृजन छोटे-छोटे संवादों के माध्यम से किया जाता है। इसीलिए संवादों से शुरू होने वाली कहानियाँ पाठकों पर अधिक प्रभाव डालती हैं। कहानियों के संवाद देशकाल, परिस्थितियों एवं पात्रानुसार होनी चाहिए। जब कहानी में संवाद रोचक, प्रवाहमय एवं तर्कयुक्तता के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं तो कहानी की गति सहज रूप में प्रवाहित होती है।

भाषा-शैली

कहानीकार को कहानी कला में निपुण होने के लिए यह आवश्यक है कि उसका भाषा पर पूर्ण अधिकार हो। कम में अधिक कहने की कला कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है। कहानी की सहजता के लिए कहानीकार विषयानुसार शैली का चयन कर सकता है, जैसे आत्मकथात्मक, डायरी, पत्रात्मक, नाटकीय आदि।

उद्देश्य

कहानी अपने आरंभिक दौर में मनोरंजन, उपदेश प्रधान हुआ करती थीं। किंतु बदलते युग एवं परिवेश ने उसे विविध समस्याओं, दृष्टिकोणों से संबद्ध करते हुए जीवन मूल्यों की नई स्थापनाओं की ओर मोड़ दिया। यही कारण है कि कहानी में निर्मिती एवं एकता का होना **अति आवश्यक माना जाता है। कहानी जब पाठक से सीधे जुड़ जाती है, तो कहानीकार की सर्जना उद्देश्यपूर्ण हो जाती है।**

बोध प्रश्न

- कहानी के कितने तत्व होते हैं?
- कहानी की कथावस्तु आकार में कैसी होनी चाहिए?
- कहानी के पात्रों की मनःस्थिति को समझने के लिए किसका चित्रण प्रभावी माना जाता है?
- कहानीकार का उद्देश्य कब सार्थक माना जाता है?

9.3.5 कहानी का महत्व

कहानी कहने-सुनने की परंपरा मानव जीवन के विकास से संबद्ध है, क्योंकि सीखने-सिखाने की यह एक प्रभावशाली प्रक्रिया है। मानव समाज को शिक्षित करने में कहानियाँ अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। कहानियों के माध्यम से बाल मनोविज्ञान की जिज्ञासा का रोचक निराकरण किया जाता है। जहाँ बालपन में मौखिक कहानियों, चित्रों के माध्यम से बच्चों को

शिक्षित किया जाता है, वहीं समाज के शिक्षित एवं अशिक्षित समाज की संवेदनात्मकता को पुष्ट करने में भी कहानियों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जीवन की उलझनों को सुलझाने का सरल, संक्षिप्त एवं प्रभावी माध्यम के रूप में कहानी विधा बेजोड़ है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी की मान्यता है कि -

> “गीत और कहानी मानव सभ्यता से साक्षरता-काल के पहले से जुड़े हुए हैं, यद्यपि दोनों के लक्ष्य कुछ भिन्न रहे हैं। गीत में मनुष्य ने अपने को व्यक्त किया और कहानी से दूसरों का मनोरंजन। ... कहानी में कहने की विशेषता बराबर महत्वपूर्ण रही है। लोक और शिष्ट दोनों रूपों में उसका संबंध वाचिक परंपरा से अधिक रहा। यह रोचक बात है कि हमारी भाषा के मुहाविरे में कविता ‘लिखी’ जाती है और कहानी ‘कही’ जाती है। तब यह स्वाभाविक है कि अपने नए मुद्रित रूप में कहानी का हिंदी साहित्य में आविर्भाव बीसवीं शती के आरंभ में होता है - साहित्यिक पत्रकारिता के उदय के साथ। मनोरंजन से हटकर एक अनुभूति का सीधा साक्षात्कार अब उसका विधागत लक्ष्य हो जाता है।” (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ.144)

विश्व के सभी देशों में कहानी विधा को किसी न किसी रूप में अवश्य ही प्रयोग किया जाता रहा है। कई बार मनुष्य जीवन में सीधे-सीधे हर बात को कहने से बचने का प्रयत्न करता है, क्योंकि प्रत्येक अभिव्यक्ति अच्छी ही हो यह आवश्यक नहीं। कुछ अभिव्यक्तियाँ अप्रिय, कटु, वीभत्स, असभ्य भी होती हैं, ऐसी अभिव्यक्तियों को भी कहानी के माध्यम से बड़ी सरलता के साथ प्रस्तुत किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, कहानी किसी भी विषय को अभिव्यक्ति का सरलतम रूप प्रदान करती है।

प्रिय छात्रो! आपको यह जानकारी रोचक प्रतीत होगी कि -

> “संस्कृत साहित्य में ‘कहानी’ का एक अतिप्राचीन पर्याय ‘कथा’ है जिसके किंचित अर्थन्तरों के साथ, ‘आख्यान’, ‘उपाख्यान’, ‘आख्यायिका’, ‘वृत्त’ ‘इतिवृत्त’, ‘गाथा’, ‘इतिहास’, ‘पुराण’, ‘वार्ता’, ‘चरित’ आदि रूप प्रचलित हैं। ‘कथा’ शब्द ही अपभ्रंश में ‘कहा’ का रूप ग्रहण कर अवधी, भोजपुरी आदि भाषाओं में ‘कहनी’, ‘कहानी’ आदि पदों में बदल गया है। ‘हिंदी’ में यह शब्द वस्तुतः अवधी, भोजपुरी आदि से आया है।” (हिंदी कहानी का इतिहास, पृ.17)

कहानी पढ़ते या सुनते समय पाठक अथवा श्रोता की जिज्ञासा अपने चरम पर पहुँच जाती है। ये कहानियाँ जीवन के विविध क्षेत्रों से संबद्ध होती है। यथार्थ जगत, कल्पना जगत, समाज, धर्म, राजनीति, मनोविज्ञान, आर्थिक, नैतिक तथा विविध जीवन मूल्यों को लेकर कहानियों का सर्जन किया जाता है। कहानी मानव समाज के जितने निकट होती है वह पाठक या श्रोता को उतनी ही उत्कंठित करती हुई उनकी संवेदनाओं को पुष्ट करती है। विश्व की महान विभूतियों की कहानियाँ जब मानव जीवन के आरंभिक चरणों में अर्थात बाल्यकाल में सुनाई जाती है, तो उसका व्यक्तित्व के विकास पर अमिट प्रभाव पड़ता है।

वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी के विकास काल में भी कहानियों का महत्व यथावत बना हुआ है। मानवीय मस्तिष्क के दाहिने हिस्से के विकास के लिए आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में भी कला, सौंदर्य, प्रेम एवं संपूर्णता के भावों के विकास के लिए कहानी जैसी विधाओं के महत्व को दर्शाया जाता है। वर्तमान तनावयुक्त जीवन के उलझनों को सुलझाने का कार्य कहानियों के माध्यम से भलीभाँति हो सकता है।

बोध प्रश्न

- कहानी का क्या महत्व हो सकता है?

9.4 पाठ सार

हिंदी कहानी अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिंदी संस्करण के रूप में सामने आया। कहानी कहने-सुनने की आदिम परंपरा से आज तक मानव सदैव इसका प्रयोग करता आ रहा है, किंतु यह काव्यात्मक स्वरूप में ही अब तक प्रचलन में था। हिंदी कहानी का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। यह अंग्रेज़ी के 'शॉर्ट स्टोरी' तथा बांग्ला के 'गल्प' विधा के अर्थ में हिंदी में विकसित हुई। आरंभ में हिंदी कहानी विधा के लिए सरस्वती पत्रिका में 'आख्यायिका' पद का प्रयोग किया गया। मानव ने जैसे-जैसे जीवन के विकास की गति तीव्र की, उनके जीवन में विषमताओं ने भी उसी तीव्रता से डेरा जमाना शुरू किया। ऐसी ही विषमताओं के परत को खोलने के कार्य में साहित्यकार अलग-अलग गद्य विधाओं के माध्यम से निमग्न रहने लगे। हिंदी गद्य की कहानी विधा में आदर्श, यथार्थ से आवेष्टित मानवतावाद को सदैव पुष्ट किया जाता रहा है।

कहानी का स्वरूप मानव की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से अनुस्यूत होकर आकार ग्रहण करता है। कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव त्रासदी के विरेचन का उत्तम माध्यम बन चुकी है। कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति पथ अन्वेषित करने का प्रयत्न कहानीकार करते हैं। हिंदी में कहानी की मूल प्रतिस्थापना का विकसित स्वरूप कम ही देखने में आता है। यही कारण है कि आलोचक हिंदी कहानी के स्वरूप को अलग-अलग दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैं। कहानी का स्वरूप युगानुरूप परिवर्तित होता रहा है।

कहानी के कथानक में आरंभ, विकास, कौतूहल, चरमसीमा एवं अंत का अलग-अलग पड़ाव होते हैं। कहानी में पात्रों के संघर्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। यद्यपि कहानी में देशकाल वातावरण के विकास के लिए विशेष स्थान नहीं होता तथापि पात्र की मनःस्थिति को समझने में इनका चित्रण सहायक होता है। बहुत कम में अधिक कहने की कला कहानी को प्रभावी स्वरूप प्रदान करता है। **कहानी जब पाठक से सीधे जुड़ जाती है तो कहानीकार की सर्जना उद्देश्यपूर्ण हो जाती है।** कहानी मानव समाज के जितने निकट होती है वह पाठक या श्रोता को उतनी ही उत्कंठित करती हुई उनकी संवेदनाओं को पुष्ट करती है।

विश्व की महान विभूतियों की कहानियाँ जब मानव जीवन के आरंभिक चरणों में सुनाई जाती है तो उसका व्यक्तित्व के विकास पर अमिट प्रभाव पड़ता है। वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी

के विकास काल में भी कहानियों का महत्व यथावत बना हुआ है। कहानी की कहानी मानव सभ्यता के विकास से अपरिहार्य रूप से जुड़ी हुई है। यही कारण है कि विविध विद्वानों, आलोचकों ने कहानी को सार्वकालिक विधा के रूप में प्रतिस्थापित किया है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. कहानी मूलतः एक लघु आख्यान होती है जिसका विकास कार्य-व्यापार की शृंखला के माध्यम से किया जाता है।
2. अपने आधुनिक स्वरूप में हिंदी 'कहानी' अंग्रेजी की 'शार्ट स्टोरी' तथा बंगला के 'गल्प' के हिंदी संस्करण के रूप में विकसित विधा है।
3. आरंभ में हिंदी कहानी विधा के लिए सरस्वती पत्रिका में 'आख्यायिका' नाम का प्रयोग किया जाता था। लेकिन बाद में 'कहानी' नाम रूढ़ हो गया।
4. हिंदी कहानी आरंभ से ही आदर्श **और** यथार्थ में पगे मानवतावाद को पुष्ट करती आई है।
5. कहानी का स्वरूप मनुष्य की अनुभूतियों, विद्रोहों, संघर्षों तथा कठिन समस्याओं से गुंथ कर आकार ग्रहण करता है।
6. प्रयोजन की दृष्टि से कहानी शिक्षा, सूचना, मनोरंजन तथा ज्ञान से आगे बढ़ते हुए मानव त्रासदी के विरेचन तक का उत्तम माध्यम बन चुकी है।
7. कहानियों में युगानुरूप बोध, तर्क, चिंतन तथा समस्याओं से मुक्ति का रास्ता खोजने का प्रयत्न भी शामिल रहता है।
8. कहानी के कथानक में आरंभ, विकास, कौतूहल, चरमसीमा एवं अंत के अलग-अलग पड़ाव होते हैं।
9. कहानी में पात्रों के संघर्ष को विशेष महत्व दिया जाता है। यद्यपि कहानी में देशकाल वातावरण के विकास के लिए विशेष स्थान नहीं होता तथापि पात्र की मनःस्थिति को समझने में इनका चित्रण सहायक होता है।
10. कहानी मानव समाज के जितने निकट होती है वह पाठक या श्रोता को उतनी ही उत्कंठित करती हुई उनकी संवेदनाओं को पुष्ट करती है।

9.6 शब्द संपदा

1. अनुकरण = अनुकूल आचरण या तदनुसार
2. अनुस्यूत = ग्रंथित या पिरोया हुआ
3. अन्विति = एकता या संगति
4. अन्वेषण = खोजना या शोध करना
5. अपरिहार्य = जिसका परिहार न हो या अनिवार्य
6. अल्प = थोड़ा या तुच्छ
7. आख्यानक = कथा या कहानी

8. आवेष्टित = ढाका या घिरा हुआ
9. उत्कंठित = तीव्र अभिलाषा या बेचैनी
10. कौतूहल = किसी विषय को जानने की इच्छा या जिज्ञासा
11. गुम्फन = गूँथना या गाँठना
12. तर्कयुक्तता = तर्कसंगत या युक्तिपूर्ण
13. तान = विस्तार या गायन में स्वर का खिंचाव
14. दृष्टिपात = अवलोकन या अवलोचन
15. ध्रुपद = गीतों की विशिष्ट शैली जिसमें स्वर और लय का विचलन न हो
16. निमग्न = लीन या मग्न
17. निराकरण = दूर करना या हटाना
18. निर्झरिणी = झरने के जल से बहने वाली नदी या पहाड़ी नदी
19. पुरातन = प्राचीन या पुराना
20. पुष्ट = दृढ़ता या मजबूती
21. यथावत = ज्यों का त्यों या अच्छी तरह से
22. विरेचन = विकारों को दूर करना
23. वीभत्स = घृणित या गंदा
24. संक्षिप्त = कम या थोड़े में
25. संघटना = साहित्य में नाटिका का संयोग या मिला हुआ
26. संबद्ध = जुड़ा हुआ या संलग्न

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. कहानी के अर्थ, परिभाषा और स्वरूप पर प्रकाश डालिए।
2. कहानी के स्वरूप का विवेचन कीजिए।
3. कहानी के तत्वों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
4. कहानी का क्या महत्व हो सकता? स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'कहानी' के विविध पर्यायों की चर्चा करते हुए इस नाम की सटीकता सिद्ध कीजिए।
2. 'कहानी' किसे कहते हैं? विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट कीजिए।
3. पात्रों की मनःस्थिति को समझने में देशकाल का चित्रण कैसे सहायक सिद्ध होता है? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. इनमें से किस पत्रिका में कहानी के लिए 'आख्यायिका' शब्द का प्रयोग किया गया? (   )

(अ) प्रतीक   (आ) हंस   (इ) सरस्वती

2. कहानी के लिए अंग्रेजी में प्रयुक्त शब्द इनमें से क्या है?   (   )

(अ) लिटिल स्टोरी   (आ) शार्ट स्टोरी   (इ) मिनी स्टोरी

3. कहानी का स्वर्णिम काल किसे माना जाता है?   (   )

(अ) भारतेंदु युग   (आ) द्विवेदी युग   (इ) प्रेमचंद

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. हिंदी साहित्य में कहानी का आविर्भाव .... के उदय के साथ हुआ है।
2. कहानी सुनते समय श्रोता की .... चरम पर पहुँच जाती है।
3. कहानी .... के बिंदु पर केंद्रित होता है।
4. कहानी में नाटकीयता तथा रोचकता का सृजन .... के माध्यम से किया जाता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. सरस्वती	(अ) रामचंद्र शुक्ल
2. पुरस्कार	(आ) महावीर प्रसाद द्विवेदी
3. छोटी कहानी	(इ) कथासम्राट
4. प्रेमचंद	(ई) मधुलिका

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी कहानी - रचना और परिस्थिति : सुरेंद्र चौधरी
2. आज की कहानी : विजयमोहन सिंह
3. नई कहानी - पुनर्विचार : मधुरेश
4. कथा-साहित्य के सौ बरस : विभूति नारायण राय
5. हिंदी कहानी का इतिहास : गोपाल राय

इकाई 10 : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मूल पाठ : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास
10.3.1 हिंदी कहानी का उद्भव
10.3.2 हिंदी कहानी का विकास
10.3.2.1 प्रेमचंद पूर्व युग
10.3.2.2 प्रेमचंद युग
10.3.2.3 प्रेमचंदोत्तर युग
10.3.2.3.1 प्रगतिवादी कहानियाँ
10.3.2.3.2 मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
10.3.2.3.3 स्वातंत्र्योत्तर कहानियाँ
10.3.2.3.4 नई कहानी
10.4 पाठ सार
10.5 पाठ की उपलब्धियाँ
10.6 शब्द संपदा
10.7 परीक्षार्थ प्रश्न
10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! हिंदी कहानी का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में और विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। हिंदी कहानी का वर्तमान स्वरूप अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' के आधार पर विकसित हुआ है। कहानी गद्य विधा की महत्वपूर्ण विधा है। इसमें समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। हिंदी कहानी के क्षेत्र में होने वाले ये परिवर्तन विभिन्न कहानी आंदोलनों के नाम से भी जाने जाते है। प्रस्तुत कहानी में आप हिंदी कहानी के उद्भव एवं विकास का अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- हिंदी कहानी के उद्भव के बारे में जान सकेंगे।
- हिंदी कहानी के क्रमिक विकास से परिचित हो सकेंगे।
- प्रेमचंद पूर्व युग की हिंदी कहानियों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रेमचंद युग की हिंदी कहानियों से अवगत हो सकेंगे।
- प्रेमचंद युग के बाद हिंदी कहानी के विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

- हिंदी भाषा की प्रमुख कहानियों एवं कहानीकारों के नाम से परिचित हो सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : हिंदी कहानी : उद्भव और विकास

10.3.1 हिंदी कहानी का उद्भव

विश्व कथा साहित्य में संस्कृत कथा साहित्य की परिनिष्ठित परंपरा रही है। यद्यपि हिंदी भाषा का विकास संस्कृत से हुआ है तथापि हिंदी कथा साहित्य का विकास संस्कृत से न होकर पाश्चात्य कथा साहित्य के आधार पर हुआ है। हिंदी साहित्य का आधुनिक काल 'गद्यकाल' के नाम से भी जाना जाता है। क्योंकि हिंदी गद्य साहित्य की विविध विधाओं का सृजन आधुनिक काल से ही विधिवत आरंभ हुआ। ब्रज भाषा में भक्तिकालीन कवियों की 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' को कुछ आलोचकों द्वारा हिंदी कहानी परंपरा का आरंभ माना जाता है।

हिंदी के आरंभिक गद्यकारों की गद्य विधाओं को कहानी के तत्वों, विषयों तथा स्वरूप आदि के स्तर पर विश्लेषण करने पर पता चलता है कि सदा सुखलाल के 'सुख सागर', लल्लूलाल के 'प्रेम सागर', सदल मिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान' तथा इंशा अल्ला खां के 'रानी केतकी की कहानी' को इस श्रेणी में नहीं रखा जा सकता है। अतः हिंदी कहानी का उद्भव भारतेंदु युग से माना जा सकता है। हिंदी कथा साहित्य में प्रेमचंद के अभूतपूर्व योगदान को देखते हुए उन्हें कथा सम्राट की उपाधि से विभूषित किया गया। प्रेमचंद के नाम पर ही कहानी के विकास के काल को विभाजित किया गया है, जैसे पूर्व प्रेमचंद युग, प्रेमचंद युग, प्रेमचंदोत्तर युग आदि।

आरंभ में हमारा परिचय दादी-नानी की परिकथा, काल्पनिक तथा शिक्षाप्रद कहानियों से हुआ। मौखिक कथाओं ने जब सहित्य जगत में प्रवेश किया तो वह कहानी के नाम से जानी जाने लगी। आरंभिक काल के राजा-रानी, भगवान-भूत, राक्षस-देवता, पशु-पक्षी, जादू-टोने, मूर्ख-विद्वान आदि की कथाओं ने जन मन के सभी आयु वर्ग का मनोरंजन तो किया ही, साथ ही यह शिक्षा का प्रमुख स्रोत भी बन कर उभरा। आरंभिक कहानियों की परंपरा अधिकांशतः कल्पना पर आधारित थी। किंतु कुछ कहानियों में ऐतिहासिक तथ्यों का भी समावेश होता था, जो वर्तमान कहानियों का प्राचीन स्वरूप मानी जा सकती हैं।

प्राचीन कहानियाँ प्रायः घटना प्रधान होती थीं। जिसमें कथाकार कोई निश्चित उद्देश्य के साथ कहानी को आगे लेकर चलता था तथा अपने उद्देश्य की पूर्ति होते ही कहानी को चरम तक पहुँचा देता था। वर्तमान हिंदी कहानियों में चमत्कार, कल्पना के स्थान पर यथार्थ का बाहुल्य होता है, क्योंकि कहानीकार कहानी को पाठक तथा श्रोता के जीवन जगत से उठा कर उसे यथार्थ स्वरूप प्रदान करते हैं। साहित्य समाज का प्रतिबिंब होते हुए भी एक नए समाज की परिकल्पना को भी स्वयं में समेटे रहता है। उन्नीसवीं सदी के बदलते समाज को प्रस्तुत करने में कहानी विधा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्तमान सामाजिक परिवर्तनों की भाँति ही कहानी विधा के स्वरूप में भी आशातीत परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

प्राचीन काल में वेदों, उपनिषदों में उल्लिखित विविध ऐतिहासिक, पौराणिक कहानियों को आख्यानक स्वरूप में प्रस्तुत किया गया। जैसे - पुरुरवा-उर्वशी, सनत्कुमार-नारद, दुष्यंत-

शकुंतला, नल-दमयंती, ययाति, नहुष, गंगावतरण आदि कहानी के काव्यगत रूप ही हैं। लोककथाओं, दंतकथाओं, चम्पू काव्य आदि में कोई न कोई कहानी अवश्य ही समाहित रहती है। किंतु वर्तमान हिंदी कहानी का उद्भव उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में हुआ।

बोध प्रश्न

- प्राचीन कहानियों में किस तत्व की प्रधानता होती थी?
- हिंदी कथा सम्राट किसे कहा जाता है?

10.3.2 हिंदी कहानी का विकास

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल गद्य विधाओं की विविधमुखी सर्जनाओं के कारण गद्य काल के नाम से अभिहित किया जाता है। अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा ने भारतीयों के मन-मस्तिष्क को एक खुला आकाश दिया। हिंदी के साहित्यकारों ने अंग्रेजी की विविध विधाओं का अनुकरण करते हुए हिंदी में हिंदुस्तानी संस्कृति को लेकर गद्य विधाओं का प्रणयन किया। हिंदी कहानी का विकास बंगला के गल्प तथा अंग्रेजी के शार्ट स्टोरी के आधार पर हुआ है। हिंदी की आरंभिक कहानियाँ अनूदित रूप में अधिक मिलती हैं। उस समय तक रूसी, फ़्रांसीसी, अंग्रेजी भाषा में कहानियों का पर्याप्त विकास हो चुका था। 'रानी केतकी की कहानी' तथा 'नासिकेतोपाख्यान' में कहानी के वर्तमान तत्वों के आधार पर सर्वथा अभाव देखा जा सकता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र की कहानी 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न' तथा राधाचरण गोस्वामी की 'यमलोक की यात्रा' में भी कहानी के संपूर्ण तत्वों का अभाव पाया गया है। प्रायः हिंदी की पहली कहानी 'सरस्वती' पत्रिका में सन् 1900 में प्रकाशित पंडित किशोरी लाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' को माना जाता है। लेकिन नई खोजों के अनुसार 1871 में रेवरेंड जे. न्यूटन रचित कहानी 'जमींदार का दृष्टांत' हिंदी की पहली कहानी सिद्ध होती है। (गोपाल राय: हिंदी कहानी का इतिहास, पृष्ठ 41)।

हिंदी कहानी के विकास को भलीभाँति जानने के लिए कथासम्राट प्रेमचंद की कहानी कला को आधार बनाना होगा क्योंकि प्रेमचंद ने हिंदी कहानी को अपनी अलग-अलग शैलियों से पुष्ट किया। प्रेमचंद के द्वारा रचित तीन सौ से भी अधिक कहानियों ने हिंदी कहानी को समृद्धि प्रदान की। प्रेमचंद के द्वारा हिंदी कहानी कला को कल्पना के आकाश से उतार कर यथार्थ की धरती पर प्रतिष्ठापित किया गया, इसीलिए हिंदी कहानी के विकास को प्रेमचंद को केंद्र में रखकर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है -

1. प्रेमचंद पूर्व युग : सन् 1901 से सन् 1914 ई.
2. प्रेमचंद युग : सन् 1915 से सन् 1936 ई.
3. प्रेमचंदोत्तर युग : सन् 1936 से वर्तमान काल तक

छात्रो! कहानी की विविध विशेषताओं के आधार पर हिंदी कहानी की विविध धाराओं का विवेचन यहाँ किया जा रहा है।

10.3.2.1 प्रेमचंद पूर्व युग

आलोचकों के बीच हिंदी की प्रथम कहानी को लेकर पर्याप्त मतभेद दिखाई देता है। क्योंकि कहानी कला के मानदंडों के आधार पर मुंशी इंशा अल्ला खां की 'उदयभान चरित' तथा 'रानी

केतकी की कहानी' को पहली कहानी नहीं माना जाता है। भले ही रचनाकाल की दृष्टि से उक्त दोनों कहानियों को पहली कहानी कहा जाय, किंतु कहानी कला की दृष्टि से ये आधुनिक कहानी कला से मेल नहीं खाती हैं। इनकी तुलना में रेवरेंड जे. न्यूटन की 1871 में रचित कहानी 'जमींदार का दृष्टांत' हिंदी की पहली आधुनिक कहानी ठहरती है।

राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद की कहानी 'राजा भोज का सपना', किशोरी लाल गोस्वामी की 'इंदुमती', आचार्य रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' तथा बंग महिला की 'दुलाईवाली' आदि को आरंभिक हिंदी की प्रयोगशील कहानियों में परिगणित किया जाता है। आधुनिक कहानी कला के आधार पर माधव सप्रे की सन् 1903 में प्रकाशित 'टोकरी भर मिटटी' को आलोचक हिंदी की प्रथम कहानी मानते हैं। प्रेमचंद से पूर्व हिंदी कहानियों में निम्नलिखित विशेषताओं को देखा जा सकता है -

1. प्रेमचंद पूर्व युग की हिंदी कहानियों का स्वरूप प्रायः अलौकिक होता था, वे यथार्थ जगत से बहुत दूर होती थीं।
2. भाषा की दृष्टि से इस युग की कहानियों की भाषा खड़ी बोली के प्रौढ़ स्वरूप से दूर होती थी।
3. इस युग की कहानियों में आदर्श का प्राचुर्य होता था।
4. प्रेमचंद पूर्व युग के कहानीकारों की प्रयोगधर्मिता के कारण कहानियों में नए-नए प्रयोगों को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- 'राजा भोज का सपना' कहानी के लेखक का नाम क्या है?
- बंगमहिला की कहानी का नाम लिखिए।
- प्रेमचंद से पूर्व हिंदी कहानियों की कुछ विशेषताएँ बताइए।

10.3.2.2 प्रेमचंद युग

हिंदी कहानी लोक में प्रेमचंद का अवतरण अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रेमचंद के कहानी संग्रह आरंभ में नवनिधि, सप्तसरोज, प्रेमपचीसी, प्रेमद्वादशी, प्रेमतीर्थ, प्रेमपूर्णिमा तथा सप्तसुमन आदि नामों से प्रकाशित हुए। कुछ समय के उपरांत प्रेमचंद की समस्त कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में प्रकाशित हुई। प्रेमचंद के साथ ही कई हिंदी के कहानीकार भी कहानी रचना में निमग्न थे। जयशंकर प्रसाद, सुदर्शन, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह, वृंदावन लाल वर्मा, गोपालराम गहमरी, रायकृष्ण दास, पदुमलाल पुन्नालाल वख्शी, पंडित ज्वालाप्रसाद शर्मा, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव आदि कहानीकारों की कहानियाँ हिंदी की अलग-अलग पत्रिकाओं में प्रकाशित होती थीं। इस युग के कुछ प्रमुख कहानीकारों के योगदान को आलोचकों ने हिंदी कहानी का आधार स्तंभ माना है।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' को आधुनिक हिंदी कहानी कला की दृष्टि से सर्वोत्तम एवं पूर्ण कहानी की श्रेणी में रखा जाता है। इसके अतिरिक्त गुलेरी जी ने सुखमय जीवन, बुद्धू का काँटा' कहानी की रचना की। जयशंकर प्रसाद की कहानियों में राष्ट्रीय,

सांस्कृतिक भावधारा की प्रधानता उनकी पुरस्कार, ममता, इंद्रजाल, छाया, आकाशदीप, आंधी आदि कहानियों में द्रष्टव्य है।

प्रेमचंद हिंदी कहानी के पर्याय बन गए। प्रेमचंद की कहानी कला ने हिंदी कहानी जगत में कीर्तिमान स्थापित किए। उनकी कहानियों में उत्तर भारतीय समाज बोलता हुआ दिखाई देता है। सदियों से पद-दलित, दमित, उपेक्षित समाज के पिछड़े वर्ग की पीड़ा को प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में स्थान दिया है। उन्होंने मात्र तद्युगीन समस्याओं को ही अपने कथा साहित्य का विषय नहीं बनाया, बल्कि मानव में अंतर्निहित देवत्व को भी सामने लाते हुए आदर्शवादी कहानियों के द्वारा समस्या के समाधान का मार्ग भी प्रशस्त किया। इनकी प्रमुख कहानियों में पंच परमेश्वर, आत्माराम, बड़े घर की बेटी, शतरंज के खिलाड़ी, ईदगाह, बूढी काकी, पूस की रात, कफन, मुक्तिपथ आदि ने हिंदी कहानी को विविधमुखी दृष्टि से कहानी के क्षेत्र में प्रतिष्ठा दिलाई। समाज की रूढ़ियों पर प्रेमचंद ने अपनी विविध कहानियों के माध्यम से न केवल कुठाराघात किया, बल्कि उनसे मुक्ति का मार्ग भी उन्होंने अपनी रचनाओं में चित्रित किया। यद्यपि प्रेमचंद ने अपनी कहानियों की भाषा खड़ी बोली हिंदी को बनाया तथापि उनकी भाषा में उर्दू के शब्दों की बहुलता देखी जा सकती है। उस समय आम जनता की भाषा भी उर्दू मिश्रित हिंदी थी। यही कारण है कि विषय एवं भाषा की दृष्टि से कहानी के पाठकों एवं श्रोताओं को प्रेमचंद अपने आस-पास के लेखक प्रतीत हुए।

विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की कहानियों में आदर्श एवं यथार्थ का मिश्रण देखा जा सकता है। ताई, रक्षाबंधन, माता का हृदय, चित्रशाला, कल्लौल, कलामंदिर आदि लगभग तीन सौ से अधिक कहानियों का प्रणयन करते हुए उन्होंने हिंदी कहानी साहित्य को पुष्ट किया। सुदर्शन की घटनाप्रधान कहानियों में मानवीय संवेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति पाठकों को सहज ही आकर्षित करती है। इनकी हार की जीत, आशीर्वाद, कवि का प्रायश्चित, न्यायमंत्री आदि कहानियाँ पनघट, सुदर्शन सुधा, तीर्थयात्रा आदि कहानी संग्रहों में संकलित हैं। बाबू गुलाबराय ने प्रेमचंद, सुदर्शन तथा कौशिक को हिंदी कहानी साहित्य के प्रेमचंद स्कूल के बृहद्त्रयी की संज्ञा से अभिहित किया है।

प्रेमचंद की ही परंपरा में आचार्य चतुरसेन की सफेद कौवा, सिंहगढ़ विजय, दुखवा मै कासे कहूं मोर सजनी, वृंदावनलाल वर्मा की 'शेरशाह का न्याय, कटा-फटा झंडा, शरणागत, भगवती प्रसाद वाजपेयी की निंदिया लागी, मिठाईवाला, खाल, बोतल, मैना, सियारामशरण गुप्त, उषादेवी मित्रा, रामवृक्ष बेनीपुरी आदि कहानीकारों ने हिंदी कहानी की विकास यात्रा को पंख लगा दिए। प्रेमचंदयुगीन कहानियों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. इस युग की कहानियाँ आदर्श तथा यथार्थ की मिश्रित स्वरूप हैं।
2. मानव अंतर्मन को उद्घाटित करने वाली कहानियाँ देखी जा सकती हैं।
3. तद्युगीन स्वतंत्रता संग्राम का प्रभाव कहानियों में देखा जा सकता है।
4. सामाजिक पिछड़ेपन तथा अशिक्षा को इस युग की कहानियों में प्रमुख स्वर दिया गया है।

5. राजनीतिक, आर्थिक बदहाली के विरुद्ध स्वर प्रमचंद युगीन कहानियों में देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- बाबू गुलाबराय ने प्रेमचंद स्कूल के बृहद्त्रयी किसे माना है?
- 'सप्तसुमन' किसके कहानी संग्रह का नाम है?
- 'कटा-फटा झंडा' किसकी कहानी का नाम है?

10.3.2.3 प्रेमचंदोत्तर युग

प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानियों का परिप्रेक्ष्य भारत की स्वतंत्रता के बाद का परिदृश्य है। इस काल में भारत ही नहीं अपितु समस्त विश्व में परिवर्तन की प्रक्रिया अति तीव्र हो गई थी। एक ओर प्रेमचंद की यथार्थवादी, प्रगतिवादी विचारों के साथ कहानियाँ लिखी जा रही थीं, तो दूसरी ओर प्रसाद की भाववादी मनोवैज्ञानिक कहानियों में स्वतंत्रता के बाद के जीवन संघर्ष को दर्शाया गया है। आलोचकों ने प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानियों को प्रगतिवादी तथा मनोवैज्ञानिक कहानियाँ कहा।

10.3.2.3.1 प्रगतिवादी कहानियाँ

जिन कहानियों में यथार्थ एवं सामाजिक जीवन का प्रत्यक्ष दर्शन हो, वे प्रगतिवादी कहानियाँ कही जाती हैं। सन् 1936 में जब प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई, तो इस संघ के कहानीकार अधिकांशतः यथार्थ जगत की कहानियाँ ही प्रस्तुत करते थे। प्रगतिशील कहानीकारों में विष्णु प्रभाकर, पांडेय बेचन शर्मा उग्र, अमृतलाल नागर, उपेंद्रनाथ अश्क, रमाप्रसाद थिल्डीयाल पहाड़ी, यशपाल आदि कहानीकारों ने आर्थिक शोषण, धार्मिक अंधविश्वासों तथा सामाजिक कुरीतियों को कहानियों के केंद्र में रखा। कहानी कला के तत्वों के सर्जन के समय कहानीकार की पूरी दृष्टि पात्रों के सामाजिक संबंधों पर केंद्रित हो जाती है।

प्रगतिशील कहानीकारों पर मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों को लेकर यशपाल ने महाराजा का इलाज, परदा, उत्तराधिकारी, काला आदमी, फूलो का कुरता, धर्मयुद्ध, सच बोलने की भूल, चार आना, धर्मरक्षा आदि के माध्यम से प्रस्तुत किया। मानववादी विचारधाराओं, सामाजिक विषमताओं तथा निम्नवर्गीय मानव जीवन की बदहाली को उपेंद्रनाथ अश्क ने डाची, आकाशचारी, अंकुर, खाली डिब्बा, एक उदासीन शाम, नासूर आदि कहानियों में चित्रित किया है। रमाप्रसाद थिल्डीयाल पहाड़ी की कहानियों में उन्मुक्त प्रेम का दर्शन किया जा सकता है। हिरन की आँखें, तमाशा, मोर्चा तथा राजरानी इनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

पांडेय बेचन शर्मा उग्र की कहानियाँ उनके नाम के ही अनुसार उग्र भाव से सिक्त हैं। देशभक्त, उसकी माँ, दोज़ख की आग आदि कहानियों में उस युग की राजनीतिक तथा सामाजिक विकृतियों का सजीव चित्रण देखा जा सकता है। सुधारवादी दृष्टिकोण के साथ कहानीकार विष्णु प्रभाकर ने कई सशक्त कहानियाँ लिखी हैं। गृहस्थी मेरा बेटा, रहमान का बेटा, अभाव, जज का फैसला, धरती अब भी घूम रही है, ठेका आदि कहानियों में व्यक्ति, परिवार तथा सामाजिक व्यवस्था का चित्रण देखा जा सकता है। स्वतंत्रता के बाद के आर्थिक संकट तथा पारिवारिक

विघटन और सामाजिक विकृतियों को अमृतलाल नगर ने गरीब के हाय, गोरखधंधा, दो आस्थाएँ आदि कहानियों के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

बोध प्रश्न

- 'उसकी माँ' कहानी के लेखक का क्या नाम है?
- अमृतलाल नागर की दो कहानियों के नाम लिखिए।

10.3.2.3.2 मनोवैज्ञानिक कहानियाँ

हिंदी के मनोवैज्ञानिक कहानीकारों ने मानव मन को केंद्र में रखकर समाज की मूल इकाई मानव की पीड़ा, त्रासदी तथा मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण करने लगे। व्यक्ति को महत्व देना आरंभ किया। मानव के मनोवैज्ञानिक सत्य तथा चरित्र की विशिष्टता को प्रमुख मानते हुए अज्ञेय, जैनेंद्र, इलाचंद्र जोशी, चंद्रगुप्त विद्यालंकार, भगवतीचरण वर्मा आदि कहानीकारों ने कहानियाँ लिखीं।

जैनेंद्र कुमार ने मानव मन की उलझनों, समस्याओं, मानसिक दबावों तथा स्त्री-पुरुष संबंधों का विश्लेषण खेल, पाजेब, जान्हवी, समाप्ति, नीलम देश की राजकन्या, जय संधि, मास्टर, एक रात आदि कहानियों के माध्यम से व्यक्त किया है। मानव के अंतर्द्वंद्वों तथा उनके जीवन के रहस्यों से पर्दा हटाते हुए अज्ञेय ने अपने चिंतनशील शैली में गैंग्रीन, पगोडा वृक्ष, पुरुष का भाग्य, रोज़, कोठरी की बात आदि के अतिरिक्त अज्ञेय ने अमरवल्लरी, शरणागत, विपथगा, परंपरा आदि ऐतिहासिक विषयों से संबंधित कहानियों का सृजन किया।

मनोवैज्ञानिक कहानीकारों में इलाचंद्र जोशी का नाम भी अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है। इलाचंद्र जोशी की पतिव्रता या पिचाशी, रोगी, चरणों की दासी, मेरी डायरी के दो नीरस पृष्ठ, परित्यक्ता, जारज, अनाश्रित, होली तथा धन का अभिशाप आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

बोध प्रश्न

- मनोवैज्ञानिक कहानियों की क्या विशेषताएँ हो सकती हैं?
- 'पगोड़ा वृक्ष' कहानी के लेखक कौन हैं?
- 'होली' कहानी के लेखक कौन हैं?

10.3.2.3.3 स्वातंत्र्योत्तर कहानियाँ

स्वतंत्रता के बाद भारत में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि स्तरों पर तीव्रगामी परिवर्तन हुए। स्वतंत्रता के बाद लिखी गई कहानियों में विविध समस्याओं को चित्रित किया गया है। निम्नवर्गीय संचेतना का उदय, उच्च वर्गीय जीवन में विसंगतियाँ, कुंठा, नगरीय जीवन में अकेलापन, बेरोजगारी, नौकरीपेशी नारी के जीवन की समस्याएँ, राजनीतिक गिरावट, पारिवारिक टूटन आदि विषयों पर खूब कहानियाँ लिखी गईं।

स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों में राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, महीपसिंह, श्रीकांत वर्मा, ज्ञानरंजन, सुरेश सिन्हा, हरिशंकर परसाई, लक्ष्मीनारायण लाल, गिरिराज किशोर, फणीश्वरनाथ रेणु, उषा प्रियंवदा, कमल जोशी, रघुवीर सहाय, हिमांशु जोशी, अमरकांत, मन्नू

भंडारी, निर्मल वर्मा, मार्कंडेय, विजयमोहन सिंह, रवींद्र कालिया, इब्राहीम शरीफ आदि उल्लेखनीय हैं।

10.3.2.3.4 नई कहानी

हिंदी कहानी विधा के क्षेत्र में 'नई कहानी' एक आंदोलन के रूप में सामने आई। इसका जन्म 1956 से माना जाता है। 1956 में भैरव प्रसाद गुप्त के संपादन में 'नई कहानी' नाम से एक पत्रिका का विशेषांक प्रकाशित हुआ। नई कहानी आंदोलन ने आलोचकों में तर्क-वितर्क को जन्म दिया। नई कहानी अपने स्वरूप, कथ्य एवं उद्देश्य के स्तर पर पर्याप्त वैविध्यपूर्ण है। पुराने मूल्यों, विश्वासों के स्थान पर नए मूल्यों की प्रतिस्थापना करते हुए नई जीवन दृष्टि की व्याख्या इन कहानियों में देखी जा सकती है। भाषा, बिंब, उपमान, प्रतिमान तथा शैली आदि प्रत्येक स्तर पर नई कहानियों में नवीनता के दर्शन होते हैं। इस काल में में ग्रामीण तथा नगरीय परिवेश के स्तर पर विषयों को लेकर कहानियाँ लिखी गई।

फणीश्वरनाथ रेणु की 'ठुमरी', 'लाल पान की बेगम', 'तीसरी कसम', 'रसप्रिया', शिवप्रसाद सिंह की 'नीच जात', 'अँधेरा हँसता है', 'मुरदा सराय', 'धरा', शैलेश मटियानी की 'प्रेतमुक्ति', 'माता', 'भस्मासुर', 'दो मूर्खों का एक सूर्य', शेखर जोशी की 'तर्पण', रामदरश मिश्र की 'एक आँख एक जिंदगी, लक्ष्मी नारायण लाल की 'माघ मेले का ठाकुर' तथा मार्कंडेय की 'हँसा जाई अकेला' आदि कहानियों ने नया स्वरूप गढ़ा ।

नई कहानी आंदोलन से जुड़े कहानीकार नगरीय जीवन के बनावटीपन, दिखावे की जिंदगी, परिवारिक संबंधों का बिखराव, वैयक्तिक टूटन, कामकाजी नारी जीवन की समस्याएँ, श्रमशील मानव के अधिकारों की सजगता, स्त्री-पुरुष संबंधों में कडुवाहट तथा जीवन मूल्यों का विघटन आदि विषयों को लेकर कहानी लिखने लगे। मोहन राकेश की 'वासना की छाया', 'काला रोजगार', 'मिस्टर भाटिया', 'मलवे का मालिक', निर्मल वर्मा की 'परिंदे', 'पराये शहर में', 'अंतर', 'लवर्स', मन्नू भंडारी की गीत का 'चुम्बन', 'मछलियाँ', भीष्म साहनी की 'चीफ की दावत', 'खून का रिश्ता', रमेश बख्शी की 'आया गीत गा रही थी', 'अलग-अलग कोण', रघुवीर सहाय की 'प्रेमिका', 'सेब', श्रीकांत वर्मा की 'शव यात्रा', 'दूसरे के पैर' आदि उल्लेखनीय नई कहानियाँ हैं।

नई कहानियों में छोटे कस्बों को भी पर्याप्त स्थान मिला। कमलेश्वर की 'मुर्दों की दुनिया', 'चार घर', धर्मवीर भारती की 'सावित्री न. दो', 'धुआँ', 'कुलटा', 'गुलकी बन्नो', 'अगला अवतार', कृष्णा सोवती की 'यारों के यार', अमरकांत की 'डिप्टी कलेक्टरी', 'दोपहर का भोजन', 'जिंदगी और जोक', विष्णु प्रभाकर की 'धरती अब भी धूम रही है', मनहर चौहान की 'घर घुसरा', हृदयेश की 'डेकोरेशन पीस', हिमांशु जोशी की 'एक बूँद पानी' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

ढोंग, भ्रष्टाचार, झूठी प्रतिष्ठा आदि पर भी कहानियाँ लिखी गईं। हरिशंकर परसाई की 'निठल्ले की डायरी', 'पोस्टर एकता', 'सड़क बन रही है', शरद जोशी की 'रोटी और घंटी का संबंध' आदि महत्वपूर्ण हैं। नई कहानी आंदोलन के बाद हिंदी कहानी में 'समांतर कहानी', 'सचेतन कहानी', 'अकहानी' आदि आंदोलन जर्मन-फ्रांस कहानी आंदोलनों के प्रभावस्वरूप

आए। इन आंदोलनों के अग्रणी कहानीकार हैं महीपसिंह, कमलेश्वर, रवींद्र कालिया, ज्ञानरंजन, गंगाप्रसाद विमल। इस प्रकार हिंदी कहानी समय-समय पर युगानुरूप परिवर्तित होती हुई विकास पथ पर सदैव अग्रसर रही।

बोध प्रश्न

- 'मुर्दों की दुनियाँ' के लेखक कौन हैं?
- कुछ कहानी आंदोलनों के नाम बताइए।
- 'नई कहानी' में 'नई' से क्या आप क्या समझते हैं?

10.4 पाठ सार

हिंदी कहानी का विकास बीसवीं शताब्दी के आरंभ में हुआ। हिंदी में कहानी का वर्तमान स्वरूप अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' के आधार पर विकसित हुई है। इसका प्रयोग बांग्ला के 'गल्प' विधा के अर्थ में हिंदी में हुआ। आरंभ में हिंदी कहानी विधा के लिए 'सरस्वती' पत्रिका में 'आख्यायिका' पद का प्रयोग किया गया, जिसका 'इंदु', 'वैश्योपकारक', 'सुदर्शन' आदि पत्रिकाओं ने भी अनुसरण किया। 'मर्यादा' पत्रिका में बांग्ला के 'गल्प' पद को अपनाया गया।

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल गद्यकाल के नाम से भी जाना जाता है, क्योंकि हिंदी गद्य साहित्य की विविध विधाओं का सर्जन आधुनिक काल से ही विधिवत आरंभ हुआ। ब्रज भाषा में भक्तिकालीन कवियों की 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' को कुछ आलोचकों द्वारा हिंदी कहानी परंपरा का आरंभ माना जाता है। हिंदी के आरंभिक गद्यकारों की गद्य विधाओं को कहानी के तत्वों, विषयों तथा स्वरूप आदि के स्तर पर विश्लेषण करने पर पता चलता है।

साहित्य समाज का प्रतिबिंब होते हुए भी एक नए समाज की परिकल्पना को भी स्वयं में समेटे रहता है। उन्नीसवीं सदी के बदलते समाज को प्रस्तुत करने में कहानी विधा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वर्तमान सामाजिक परिवर्तनों की भाँति ही कहानी विधा के स्वरूप में भी आशातीत परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

हिंदी कहानी का विकास बंगला के 'गल्प' तथा अंग्रेजी के 'शार्ट स्टोरी' के आधार पर हुआ। हिंदी की आरंभिक कहानियाँ अनूदित अधिक मिलती हैं, उस समय तक रूसी, फ़्रांसीसी, अंग्रेजी भाषा में कहानियों का पर्याप्त विकास हो चुका था। प्रेमचंद के द्वारा हिंदी कहानी कला को कल्पना के आकाश से उतार कर यथार्थ की धरती पर प्रतिष्ठापित किया गया, इसीलिए हिंदी कहानी के विकास को प्रेमचंद को केंद्र में रखकर तीन भागों में विभाजित किया जाता है। प्रेमचंद पूर्व युग, प्रेमचंद युग, प्रेमचंदोत्तर युग, प्रगतिशील, स्वातंत्र्योत्तर युग, मनोवैज्ञानिक, नई कहानी, समांतर कहानी, सचेतन कहानी, अकहानी आदि के रूप में हिंदी कहानी अपनी विकास यात्रा के विविध पड़ावों को पार करती रही।

सत्यवती मलिक, महादेवी वर्मा, चंद्रकिरण सौनरेक्सा, तारा पांडेय, रामेश्वरी शर्मा, शकुंतला माथुर, शिवानी, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, गीतांजलिश्री, नीलाक्षी सिंह, अलका सारावगी, मेहरून्निसा परवेज, मनीषा कुलश्रेष्ठ आदि स्त्री कहानीकारों ने भी कहानी साहित्य के

विकास में उल्लेखनीय योगदान किया है। समयानुसार विविध विमर्शों को समेटते हुए हिंदी कहानी हिंदी साहित्य भंडार को परिपुष्ट कर रही है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. हिंदी कहानी का विकास बंगला 'गल्प' तथा अंग्रेजी 'शार्ट स्टोरी' के आधार पर हुआ। आरंभ में अनेक भाषाओं की कहानियाँ अनुवाद के सहारे हिंदी पाठकों तक पहुँची।
2. नवीनतम खोजों के अनुसार, रेवरेंड जे. न्यूटन की 1871 में रचित कहानी 'जमींदार का दृष्टांत' हिंदी की पहली आधुनिक कहानी है।
3. कथा सम्राट प्रेमचंद और उनके समकालीन लेखकों की कहानियों में उत्तर भारतीय समाज का जीवंत चित्रण मिलता है। उन्होने पद-दलित, दमित, उपेक्षित समुदायों की पीड़ा और युगीन समस्याओं को तो विषय बनाया ही, मानव में अंतर्निहित देवत्व को भी सामने लाते हुए समस्या-समाधान का मार्ग भी प्रशस्त किया।
4. प्रेमचंदोत्तर काल में प्रगतिवादी और मनोविश्लेषणात्मक कहानियों की प्रमुखता दिखाई देती है।
5. आज़ादी के बाद साठोत्तर काल में नई कहानी का विकास हुआ। आगे चलकर अनेक आंदोलनों के माध्यम से हिंदी कहानीकारों ने कहानी विधा को अत्यधिक लोकप्रिय बनाया। यही कारण है कि वर्तमान समय में कहानी को केंद्रीय विधा माना जाता है।

10.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व	= आतंरिक संघर्ष
2. अभूतपूर्व	= जो पहले न हुआ हो, अनोखा
3. अवगत	= जाना हुआ
4. आख्यानक	= कहानी, सूचित करना
5. कीर्तिमान	= यशस्वी, विख्यात
6. निमग्न	= लीन, मग्न
7. परिगणित	= जिसका उल्लेख हो चुका हो
8. परिदृश्य	= चारों ओर दिखने वाला दृश्य
9. परिनिष्ठित	= पूर्णतया, कुशल
10.प्रतिबिंब	= परछाई, प्रतिमूर्ति
11.बदहाली	= दुर्दशा
12.मानदंड	= पैमाना

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी कहानी विधा के उद्भव पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी कहानी की विकास यात्रा को विवेचित कीजिए।
3. नई कहानी आंदोलन को विश्लेषित कीजिए।
4. प्रेमचंदोत्तर कहानियों पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कहानी शब्द के उद्भव पर प्रकाश डालिए।
2. प्रेमचंद युगीन कहानियों के प्रमुख विषय बताइए।
3. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कहानियों की क्या विशेषताएँ हैं? स्पष्ट कीजिए।
4. हिंदी के मनोवैज्ञानिक कहानियों की विशेषताएँ बताइए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'टोकरी भर मिट्टी' कहानी के रचनाकार कौन हैं? ( )

    (अ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (आ) माधव सप्रे (इ) कमलेश्वर

2. 'इंदुमती' कहानी के लेखक कौन हैं? ( )

    (अ) किशोरीलाल गोस्वामी (आ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल (इ) भारतेंदु हरिश्चंद्र

3. कहानी का स्वर्णिम काल किसे माना जाता है? ( )

    (अ) स्वातंत्र्योत्तर युग (आ) प्रेमचंद पूर्व युग (इ) प्रेमचंद युग

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. आरंभिक कहानियों की परंपरा अधिकांशतः........................ पर आधारित थी।
2. 'रक्षाबंधन' शीर्षक कहानी के लेखक ....हैं।
3. प्रेमचंद की समस्त कहानियाँ .... के आठ भागों में संकलित हैं।
4. भैरव प्रसाद गुप्त के संपादन में .... नाम से एक पत्रिका का विशेषांक प्रकाशित हुआ।

III. सुमेल कीजिए -

1. इंद्रजाल	(क) हरिशंकर परसाई
2. पोस्टर एकता	(ख) जयशंकर प्रसाद
3. एक बूँद पानी	(ग) प्रेमचंद
4. पूस की रात	(घ) हिमांशु जोशी

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी कहानी और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी

2. संकल्य (प्रेमचंद विशेषांक), जनवरी-मार्च 2006

3. साहित्य सहचर : हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

4. हिंदी साहित्य का उद्भव तथा विकास : हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

5. हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास : बाबू गुलाबराय

इकाई 11 : निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व
11.3.1 निबंध : परिभाषा
11.3.2 निबंध : स्वरूप
11.3.3 निबंध के तत्व
11.3.4 निबंध की विशेषता
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जान चुके हैं कि हिंदी साहित्य को दो विधाओं में वर्गीकृत किया गया है- गद्य एवं पद्य। हिंदी साहित्य का भंडार बहुत समृद्ध है। गद्य तथा पद्य की लगभग सभी विधाओं का प्रचुर मात्रा में साहित्य सृजन हुआ है।

आधुनिक काल में काव्य के साथ- साथ गद्य विधा का भी खूब विकास हुआ। यह आधुनिक युग की उपज है। गद्य साहित्य में अनेक रचनात्मक विधाओं का समावेश है - जैसे कहानी, नाटक, एकांकी, उपन्यास, डायरी, जीवनी, रिपोर्ताज, यात्रावृत्त, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण तथा निबंध। साहित्य की नई विधा है निबंध। हिंदी में निबंध का आरंभ 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध से माना जाता है।

निबंध गद्य लेखन की विशेष विधा है जो किसी विषय पर विचारपूर्वक क्रमबद्ध रूप से लिखी गई हो। निबंध में किसी विषय विशेष का वर्णन किया जाता है। निबंध विधा के विकास के लिए विकसित तथा सुनिश्चित गद्य परंपरा का होना आवश्यक है। भारतेंदु काल से ही एक नई साहित्यिक विधा के रूप में हिंदी में 'निबंध' विधा का सूत्रपात हुआ।

11.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई अध्ययन के बाद आप -

- 'निबंध' शब्द की व्युत्पत्ति तथा उसके स्वरूप के बारे में जान सकेंगे।
- निबंध की परिभाषाओं से अवगत हो सकेंगे।
- निबंध के तत्वों को समझ सकेंगे।
- निबंध विधा की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।

- निबंध विधा की शैली के बारे में सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : निबंध : परिभाषा, स्वरूप और तत्व

11.3.1 निबंध : परिभाषा

छात्रो! साहित्य का उद्देश्य हमारी अनुभूतियों की तीव्रता को बढ़ाना है। साहित्य का मुख्य लक्ष्य होता है समाज का मार्गदर्शन करना। साहित्य में अनेक विधाओं का समावेश होता है। उनमें से 'निबंध' का भी प्रमुख स्थान है। संस्कृत में निबंध का समानार्थी शब्द 'प्रबंध' है। प्रबंध के अतिरिक्त लेख, संदर्भ, रचना और प्रस्ताव आदि शब्द भी निबंध के पर्याय के रूप में प्रचलित हैं। निबंध में लेखक को अपने विचार तथा विषय को अभिव्यक्त करने में स्वतंत्रता रहती है।

हिंदी शब्द सागर के अनुसार निबंध वह व्याख्या है, जिसमें अनेक मतों का संग्रह हो। निबंध शब्द की मूल व्युत्पत्ति लेटिन भाषा के इग्जागियम से हुई है और इसका भाव अंग्रेजी के वेइंग के निकट माना जाता है।

निबंध शब्द अंग्रेजी भाषा के 'कम्पोजीशन या ऐस्से' का समानार्थी है, जिसका अर्थ है 'प्रयत्न'। फ्रेंच भाषा में इसका पर्यायवाची 'ऐसाई' है। पाश्चात्य साहित्य के अनुरूप हिंदी में भी निबंध लेखन का आरंभ गद्य भाषा तथा सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हुआ। प्रथम निबंधकार मोंतेन के अनुसार निबंध में निबंधकार के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होनी चाहिए - 'अपने निबंधों में मैं स्वयं को चित्रित करता हूँ और अपनी पुस्तकों में खुद ही विषय हूँ।'

अंग्रेजी निबंध के जनक बेकन निबंध को विकीर्ण चिंतन कहते हैं। उनके अनुसार निबंध विचारों का वह संक्षिप्त विवरण है, जिसमें बुद्धि तत्व की प्रधानती होती है। डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी का मत है कि -

> "निबंध की रचना प्रायः समाज और साहित्य के उदारता वादी कालों में माध्यम विशेष के रूप में अधिक होती है। आंतरिक स्तर पर निबंध का आरंभ यदि उदारतावादी मनःस्थिति से जोड़ा है, तो बाहरी तौर पर पत्र-पत्रिकाओं के विकास के साथ। (हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ. 154)

'निबंध' शब्द का व्युत्पत्ति परक अर्थ है 'नि + बंध'। अर्थात अच्छी तरह गठा या बंधा हुआ। मानक हिंदी कोश के अनुसार निबंध ऐसा विचारपूर्ण विवरणात्मक और विस्तृत लेख होता है जिसमें किसी विषय के सब अंगों का मौलिक और स्वतंत्र रूप से विवेचन किया गया हो। हिंदी में निबंध रचना आधुनिक काल में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अर्थात भारतेंदु युग में शुरू हुई। लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ने बालकृष्ण भट्ट को हिंदी का पहला निबंधकार माना है। अंग्रेजी में मोंतेन और बेकन ने जिस प्रकार वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ निबंध लिखे उसी प्रकार हिंदी में रामचंद्र शुक्ल और हजारी प्रसाद द्विवेदी ने निबंध के इन दोनों प्रकारों को स्थापित किया।

रामचंद्र शुक्ल के अनुसार -

"निबंध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तित्व अर्थात व्यक्तिगत विशेषता हो। भावों की विचित्रता दिखाने के लिए ऐसी अर्थ योजना न की जाए जो उनकी अनुभूति की प्रकृति या लोक सामान्य स्वरूप से कोई संबंध ही न रखे, अथवा भाषा से सर्कस वालों की सी कसरतें या हठयोगियों के से आसन न कराए जाएँ, जिनका लक्ष्य तमाशा दिखाने के सिवाय और कुछ न हो।"

रामचंद्र शुक्ल ने निबंध के बारे में कहा है कि - "यदि पद्य कवियों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है। "भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है। इस प्रकार हिंदी के प्रसिद्ध विद्वान तथा आलोचक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने गद्य साहित्य में निबंध को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। निबंध गद्य की सीमित रचना है। इसमें विषय के विवेचन की स्पष्टता होती है तथा सजीवता भी आवश्यक होती है।

बाबू गुलाबराय ने निबंध की परिभाषा में निबंध के सभी लक्षणों तथा तत्वों का समावेश किया है। "निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन कर एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव और सजीवता के साथ ही आवश्यक संगति और सुसंबद्धता के साथ किया गया हो।"

शिवदास सिंह चौहन के अनुसार, निबंध गद्य का अत्यंत शक्तिशाली रूप-विधान है।

जयनाथ नलिन के अनुसार, निबंध स्वाधीन चिंतन और निश्छल अनुभूतियों का सरस, सजीव और मर्यादित गद्यात्मक प्रकाशन है।

पंडित श्यामसुंदर दास ने निबंध के बारे में कहा है, निबंध वह लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तारपूर्वक और पांडित्यपूर्ण ढंग से विवेचन किया गया हो।

पदुमलाल पुन्नालाला बख्शी ने भी यह माना है कि कहानी की तरह निबंध कला भी आधुनिक युग की रचना है। वे निबंध को मन की स्वच्छंद रचना मानते हैं। अन्य विधाओं से निबंध को अलग करते हुए उन्होंने 'क्या लिखूँ' शीर्षक अपने निबंध में यह लिखा है कि -

"कवि उच्च मार्ग से प्रेरित होकर काव्य की रचना करते हैं। विशेषज्ञ ज्ञान की कसौटी पर सत्य की परीक्षा कर प्रबंध लिखते हैं। कहानीकार कल्पना के द्वारा मनुष्य जीवन का रहस्य खोलने के लिए चरित्रों की सृष्टि करते हैं, पर निबंध तो उस मानसिक स्थिति में लिखे जाते हैं, जिसमें न ज्ञान की गरिमा होती है और न कल्पना की महिमा। जिसमें जीवन का गौरव भूलकर हम अपने में ही लीन हो जाते हैं, जिसमें हम संसार को अपनी दृष्टि से देखते हैं और अपने ही भाव से ग्रहण करते हैं।"

डॉ. रामचंद्र तिवारी के शब्दों में -

"निबंध गद्य की एक आधुनिक विधा है। इसमें लेखक की रुचि एवं मनःप्रवृत्ति के अनुसार विचारों की शृंखला अव्यवस्थित और शिथिल अथवा सुगठित एवं व्यवस्थित, दोनों प्रकारों की हो सकती है। आत्मव्यंजना निबंध की मूलभूत विशेषता है। इसकी नितांत उपेक्षा किसी भी स्थिति में नहीं की जा सकती।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि निबंध गद्य की वह लघु रचना है, जिससे लेखक अपने व्यक्तिगत भावों, विचारों एवं अनुभूतियों को निष्पक्ष रूप से सरल शैली में तथा स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करता है। निबंध एक सुव्यवस्थित और सयंत गद्य रचना है। निबंधकार एक साथ दार्शनिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक और साहित्यकार की सम्मिलित प्रतिभा से युक्त दृष्टि जीवन और जगत पर डालता है।

बोध प्रश्न

- निबंध शब्द का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
- निबंध को अंग्रेजी में क्या कहते हैं तथा इसकी उत्पति किस भाषा से हुई है?
- साहित्य का मुख्य लक्ष्य क्या है?
- आचार्य शुक्ल ने निबंध के बारे में क्या कहा है?
- निबंध की मूलभूत विशेषता क्या है?

11.3.2 निबंध : स्वरूप

छात्रो! आप जान ही के हैं कि निबंध विधा का हिंदी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। यह गद्य की विशेष विधा है जो किसी विषय पर विचारपूर्वक एवं क्रमबद्ध रूप से लिखी गई हो। संस्कृत में 'बंधनि' शब्द का अर्थ होता है 'बाँधना' अर्थात भावाभिव्यक्ति हेतु किसी भी विचारों का संगठित रूप निबंध कहलाता है। निबंध को गद्य की कसौटी कहा गया है। भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों से ही सबसे अधिक संभव होता है।

निबंध कई प्रकार के हो सकते हैं - विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक, व्यंग्य एवं ललित। निबंधकार कलात्मक प्रयास के स्थान पर अपनी स्वयं की मौलिक सोच को विस्तार देता है अतः निबंध एक ऐसी कलाकृति है जिसके नियम लेखक द्वारा ही अस्वीकृत होते हैं। इसी प्रकार सहज, सरल एवं आडंबरहीन आत्माभिव्यक्ति के लिए एक परिपक्व और विचारशील गंभीर व्यक्तित्व की अपेक्षा होती है। यदि उसके कृतित्व में परिपक्वता का अभाव सा दिखता है, परंतु पाठक के साथ लेखक की निकटता और आत्मीयता साहित्य रूप की दृष्टि से हिंदी में निबंध विधा आधुनिक युग की देन है। निबंध का क्षेत्र वैविध्यपूर्ण है, विषय और शैली की दृष्टि दोनों से।

बोध प्रश्न

- निबंध कैसी विधा है?
- निबंधकार को निबंध लेखन के समय किन बातों का ध्यान रखना पड़ता है?
- निबंध के कितने प्रकार हो सकते हैं?

11.3.3 निबंध के तत्व

प्रिय छात्रो! अब तक आप निबंध के अर्थ और स्वरूप से परिचित हो ही चुके हैं। किसी भी विधा को समझने के लिए उसके तत्वों को समझना आवश्यक होता है जिससे हम उस विधा को अन्य विधाओं से अलग कर सकते हैं। लेखक का व्यक्तित्व, उनके विचार और भावात्मक आधार तथा भाषा शैली मुख्य रूप से निबंध के प्रमुख तत्व हैं। निबंधकार का व्यक्तित्व उसके लेखन में स्पष्ट झलकता है, जैसे आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में इनके व्यक्तित्व को साफ देखा जा सकता है।

वैचारिक और भावात्मक तत्वों के आधार पर देखा जाए तो निबंधों में लेखक अपने विचारों को व्यक्त करता है जो उनकी भावनाओं को भी स्पष्ट करने में सक्षम होती हैं।

साहित्य में भाषा-शैली का महत्वपूर्ण स्थान है। निबंध की भाषा विषय के अनुरूप होनी चाहिए। वाक्य रचना की दृष्टि से निबंध की दो प्रमुख शैलियाँ हैं - व्यास शैली तथा समास शैली।

व्यास शैली में रचनाकार विस्तारपूर्वक अपनी बात समझाता है। इसमें लंबे वाक्य होते हैं। निबंधकार इसमें उदाहरणों द्वारा विषय को स्पष्ट करता है। विषय को विस्तारपूर्वक समझना इस शैली की प्रमुख विशेषता है।

समास शैली के अंतर्गत लेखक छोटे-छोटे वाक्यों में अपने विचारों को स्पष्ट करता है। इसे समझने के लिए पाठक को बुद्धि पर जोर डालना पड़ता है। इस शैली में लिखे गए निबंधों को समझने के लिए व्याख्या की आवश्यकता होती है।

इसके अतिरिक्त निबंध के तत्व उस विधा के मूल उपकरण होते हैं, जिसमें उस विधा की रचना होती है। सरलता, रोचकता, सुबोधता तथा प्रसाधन क्षमता को निबंध के अन्य तत्वों के रूप में स्वीकार किया जाता है। विषय का चयन तथा मौलिक ढंग से उसका प्रस्तुतीकरण, आकार-प्रकार की मर्यादा का निर्धारण आदि में निबंधकार की कार्यकुशलता मानी जाती है। तत्वों से ही विधा विशेष की रचना होती है।

अनुभूति और अभिव्यक्ति वे तत्व हैं जिससे लेखक विषय या घटना को अनुभूत करके किसी न किसी माध्यम से अभिव्यक्त करता है। अनुभूति का संबंध हृदय से होता है। जीवन में अनेक दृश्य होते हैं जो कोई न कोई अनुभव दे जाते हैं। रचनाकार इस अनुभव को अपनी कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है तो यह व्यापक अनुभूति बन जाता है। यही भाव निबंध का रूप ले लेते हैं। अनुभूति ही रचनाकार को संवेदनशील बनाती है। जो जितना संवेदनशील होता है, वह उतना ही उच्च कोटि का निबंधकार होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि साहित्य के निर्धारित तत्व हैं अनुभूति, विचार, कल्पना एवं शैली। इन तत्वों के समावेश से ही निबंध को निर्मित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

- व्यास शैली की क्या विशेषता है?
- समास शैली किसे कहते हैं?

विचार

विचार प्रधान अथवा वैचारिक निबंध विश्लेषणात्मक होते हैं। विचारात्मकता निबंध का अनिवार्य अंग है। इसमें विषय की प्रधानता होती है अतः विचार तत्व निबंध में प्रमुख स्थान रखता है। जीवन की किसी भी घटना को देखकर किसी न किसी तरह की प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है। इस प्रतिक्रिया के दौरान अनेक विचार उठते हैं तथा इन्हीं के धरातल पर निबंध का सृजन होता है। विचारों और भावों के समावेश में विचार ही प्रधान होते हैं। विचारशून्य निबंध तो शब्दों का जाल मात्र ही होता है। अतः निबंध का प्रथम तत्व 'विचार' ही है।

शैली

निबंधकार अपने मौलिक विचारों को शैली विशेष में ढालता है। स्वतंत्र विचारों को एक रूप देने के लिए उसे शैलीबद्ध करता है, परिणामस्वरूप विचार निबंध का रूप ले लेता है। अतः स्पष्ट है कि निबंध का दूसरा तत्व शैली है।

निबंध की रचना मात्र अनुभूति एवं विचारों से नहीं होती। भाव एवं विचार कितने भी पुष्ट हों पर उत्कृष्ट शैली के अभाव में निबंध रचना असंभव है। निबंध का आरंभ कैसे हो, बीच में क्या हो रहा, वर्णन किस प्रकार किया जाए, ऐसे किसी निर्देश और नियम को मानने के लिए निबंधकार बाध्य नहीं होता है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि निबंध एक रचना है और निबंधकार एक साधारण व्यक्ति।

निबंधकार अपनी प्रेरणा और विषय वस्तु की संभावनाओं के अनुसार अपने व्यक्तित्व और रचना का समर्थन करता है। इसी कारण निबंध में शैली का विशेष महत्व है। निबंधकार का व्यक्तित्व, उसकी प्रवृत्तियाँ, रुचियाँ, आस्थाएँ शैली द्वारा प्रकट होती हैं। वर्तमान में अनेक शैलियाँ देखने को मिलती हैं। जैसे समास शैली, व्यास शैली, प्रवाह शैली तथा व्यंग्य-विनोद शैली आदि।

शैली लेखक के व्यक्तित्व का प्रबल पक्ष है, जो उसकी अभिव्यक्ति को जीवंत एवं सशक्त बनाने में सहायक सिद्ध होती है। निबंध की शैली से ही पता चलता है कि निबंधकार कौन है क्योंकि प्रत्येक निबंधकार की निजी शैली होती है। निबंध को पढ़ते ही पता चल जाता है कि यह निबंध विद्यानिवास मिश्र का है या फिर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का या फिर हरिशंकर परसाई का।

शैली की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए गंगाप्रसाद गुप्त ने लिखा है, शैली निबंधों के लिए प्राण है। यदि शैली पर लेखक का पूर्ण अधिकार है, तो निःसंदेह वह उच्च कोटि का निबंधकार होगा। अतः स्पष्ट है कि शैली का सच्चा एवं उत्कृष्ट प्रयोग निबंध रचना में ही दृष्टिगोचर होता है।

कल्पना

कल्पना का स्थान निबंध लेखन में तीसरा है। जब विचारों को शैलीबद्ध किया जाता है, तो कल्पना का भी योगदान रहता है। कल्पना तत्व शैली के सहायक तत्व के रूप में काम करता है। कल्पना से अप्रस्तुत की योजना होती है। भाषा की रचनात्मकता का श्रेय कल्पना तत्व को ही जाता है, जो कि प्रस्तुत को बिंब, ध्वनि, प्रतीक, शब्द सौंदर्य तथा अप्रस्तुतों की योजना द्वारा रचती है।

अनुभूति

निबंधकार विश्लेषण करता है। तर्क की कसौटी पर विषय को कसता है। अतः भावना का स्थान प्रमुख न रहकर गौण रह जाता है। किंतु यह भी द्रष्टव्य है कि साहित्य भावना से अछूता नहीं रह सकता। अतः विचार, शैली और कल्पना के उपरांत निबंध में अनुभूति का महत्वपूर्ण

स्थान आता है। इसका स्थान अंतिम होता है। अतः अनुभूति निबंध में विशेष महत्व रखती है। इसके अभाव में निबंध लेख बनकर रह जाएगा।

अनुभूति का संबंध हृदय से है। इस अनुभव को लेखक कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है। तो व्यापक होकर अनुभूति बन जाती है। अनुभूति हमें संवेदनशील बनाती है और यह भी श्रेष्ठ निबंधकार का उदाहरण है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि उपर्युक्त तत्वों की सहायता से निबंध की रचना संभव है। सर्वप्रथम विचार ही निबंधकार को निबंध के सृजन हेतु प्रेरित करते हैं। इन विचारों को शैली का रूप दिया जाता है जिसके माध्यम से ही निबंधकार विचारों को प्रस्तुत कर पाता है। इस प्रस्तुतीकरण में भाषा का विशेष महत्व होता है। भाषा की रचनाधर्मिता के लिए ही कल्पना का आश्रय लिया जाता है। तर्क-वितर्क के कारण अनुभूति का स्थान अंतिम होते हुए भी मुख्य है।

बोध प्रश्न

- निबंध के मूल तत्व कौन-कौन से होते हैं?
- निबंध रचना का कौन सा अंग अनिवार्य है?
- निबंध रचना में शैली का क्या स्थान है?

11.3.4 निबंध की विशेषता

निबंध साहित्य की सृजनात्मक विधा है। ललित अत्रि के अनुसार नए युग में जिन नवीन ढंग के निबंधों का प्रचलन हुआ है वे व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज हैं। अर्थात निबंध में निबंधकार की स्वच्छंदता का विशेष महत्व रहता है।

आचार्य शुक्ल लिखते हैं, निबंध लेखक अपने मन की प्रवृत्ति के अनुसार स्वच्छंद गति से इधर-उधर फूटी हुई सूत्र शाखाओं पर विचरता चलता है। एक ही बात को लेकर किसी का मन किसी संबंध सूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। कहने का अर्थ है कि एक ही बात को भिन्न दृष्टि से देखना। व्यक्तिगत विशेषता का मूल आधार यही है। ऐसा कहा जाता है कि निबंध एक कलाकृति है। निबंध में सहज, सरल और आडंबरहीन ढंग से व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होती है।

डॉ. रामचंद्र तिवारी के अनुसार -

> "अच्छी निबंध लेखक में सूक्ष्म निरीक्षण के क्षमता के साथ ही हास्य-व्यंग्य एवं विनोद की प्रवृत्ति भी होनी चाहिए। निबंध में पांडित्य, गंभीर अध्ययन एवं तार्किकता आवश्यक नहीं है। ये विशेषताएँ निबंध लेखक के व्यक्तित्व का सहज अंग बनकर आ सकती हैं। निबंध में सजीवता, सरसता तथा स्वच्छंदता आदि विशेषताएँ सामान्यतः व्यक्तित्व व्यंजना के साथ स्वतः आ जाती हैं। निबंध किसी भी विषय पर लिखा जा सकता है। इसमें विषय के ज्ञान के स्थान पर लेखक का व्यक्तित्व ही पाठक के मन पर छा जाता है।"

हिंदी साहित्यकोश के अनुसार लेखक बिना किसी संकोच के अपने पाठकों को अपने जीवन अनुभव सुनाता है और आत्मीयता के साथ उनमें भाग लेने के लिए आमंत्रित करता है। इसी आत्मीयता के फलस्वरूप निबंध लेखक पाठकों को अपने पांडित्य से अभिभूत नहीं करना चाहता। निबंध से पाठक को परिवेश की सटीक एवं स्पष्ट जानकारी मिलती है।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार निबंध का मुख्य लक्षण है - विषय प्रतिपादन। इसमें संदेह नहीं कि व्यक्तित्व की अभिव्यंजना को पश्चिमी साहित्यकारों ने निबंध का आधार माना है, लेकिन इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं है की निबंधकार व्यक्तित्व का समावेश करने के चक्कर में मूल विषय से कहीं दूर भटक जाए। यह बेहद जरूरी है की निबंध में विषय प्रतिपादन इस प्रकार किया गया हो कि विचारों की शृंखला तार्किक रूप में विकसित हो। इससे नए विचारों की सृष्टि भी होनी चाहिए ताकि पाठक एक वैचारिक उत्तेजना का अनुभव कर सके और उसे बौद्धिक परितोष प्राप्त हो। इसके साथ ही यह भी जरूरी समझा जाता है की विषय का प्रतिपादन करते हुए लेखक स्वच्छंदता और रोचकता को बनाए रखने के लिए निजी रुचियों, धारणाओं, प्रतिक्रियाओं, हास-परिहास और व्यंग्य-विनोद का भी पुट देता हुआ चले। ऐसा करने से पाठक भावनात्मक स्तर पर आत्मीयता का अनुभव करता है। इसे ही निबंध में लेखक के हृदयपक्ष का समावेश करना कहा जाता है। जबकि विषय प्रतिपादन का आधार बुद्धिपक्ष होता है। यही कारण है कि इन पक्षों की प्रबलता के आधार पर मोटे तौर पर निबंधों की दो कोटियाँ मानी जाती हैं - विषय परक और आत्म परक। एक में विषय पर ज़ोर दिया जाता है तो दूसरे में व्यक्तित्व पर। लेकिन यह विभाजन केवल काम चलाऊ है क्योंकि असल में तो निबंध में ये दोनों ही चीज़ें कम या अधिक रूप में पाई ही जाती हैं।

वैचारिकता और व्यक्तित्व की अभिव्यंजना के अलावा निबंध में रोचकता, स्वाभाविकता और साहित्यिक्ता के गुण भी ज़रूरी होते हैं। यह भी बेहद ज़रूरी है कि निबंध किसी स्पष्ट प्रयोजन को ध्यान में रखकर लिखा गया हो। आमतौर से निबंधकार किसी आदर्श को अपने ध्यान में रखता है। उसी के अनुरूप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में अपना संदेश व्यक्त करता है। इस प्रकार वह मनोरंजन से लेकर शिक्षण और लोकहित तक कई तरह के प्रयोजन सिद्ध करता है।

प्रिय छात्रो! जैसा कि आप जान चुके हैं, निबंध को संक्षिप्त और सुगठित होना चाहिए। आलोचकों ने कलात्मक एकान्विति को भी निबंध की विशेषता माना है। इसकी व्याख्या करते हुए यह कहा गया है कि -

"विचारों के प्रतिपादन में किसी विचार या भाव पर लेखक बल देता है, पारस्परिक तुलना और विरोध व्यक्त करता है, नाटकीय परिवर्तन द्वारा विचारधारा को मनोनुकूल दिशा में मोड़ने की चेष्टा करता है, और निष्कर्ष की स्थापना करता है। यह प्रक्रिया ही कलात्मक एकान्विति है।"

यहाँ यह भी बताना आवश्यक है कि निबंध का सुगठित होना इस बात पर निर्भर है कि उसके विभिन्न अंग परस्पर सहज रूप में जुड़े हुए हों। इन अंगों को आरंभ, मध्य और अंत कहा जाता है। आरंभ को भूमिका या प्रस्तावना भी कह सकते हैं। इसमें मूल विषय का परिचय देकर पाठक की उत्सुकता बढ़ाई जाती है। इस अंग को संक्षिप्त और रोचक होना चाहिए। लंबी प्रस्तावना उबाऊ जो सकती है।

निबंध के मध्य भाग में विषय सामग्री को प्रस्तुत किया जाता है। इसके लिए लेखक अलग अलग बिचारसूत्रों का तार्किक और रोचक ढंग से प्रसार करता है। यहीं वह कुशलतापूर्वक अपने

व्यक्तित्व का भी समावेश करता है जिससे उसकी निजी शैली का विकास होता है। विषय को विकसित करने के लिए लेखक आमतौर पर उदाहरणों, दृष्टांतों, अनुभवों, संस्मरणों और खंडन मंडन का उपयोग करते हैं। यह आवश्यक है की ये सब तार्किक अनविति के अनुसार आपस में जुड़े हुए हों। अन्यथा निबंध में बिखराव आने का खतरा रहता है।

निबंध का अंत प्रायः निष्कर्ष के रूप में होता है। इसे स्वाभाविक, तर्कपूर्ण, संक्षिप्त और प्रभावशाली होना चाहिए। बहुत बार लेखक इस भाग के तहत पूरे निबंध का सार भी प्रस्तुत करते हैं। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए की निबंध जिस उद्देश्य को लेकर लिखा गया है वह अंत तक आते आते सिद्ध हो जाए।

निबंध की रचना के क्षण में निबंधकार की बुद्धि हृदय को लेकर विषय खोज की यात्रा पर निकलती है जो निबंध के शिल्प की प्रमुख विशेषता अर्थात वैयक्तिकता का परिचायक है। इसके लिए निबंध लेखक को बहुज्ञ होना चाहिए, उसका सौंदर्यबोध समृद्ध हो और उसे विषय के इर्द-गिर्द घूमने में महारत हासिल होनी चाहिए। उसकी भाषा सहज, सरल एवं सरस होनी चाहिए। यह भाषा ही निबंधकार की अपनी पहचान होती है। निबंध की भाषा उसकी विषय वस्तु और उसमें व्यक्त विचारों के अनुरूप होनी चाहिए। उल्लेखनीय है कि -

> "यदि गद्य साहित्यकार की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी। तात्पर्य यह है कि श्रेष्ठतम गद्य का परिचय निबंध में ही मिलता है। इसमें भाषा की स्पष्टता, पठनीयता, सरसता, सहजता, यथास्थान हास्य और व्यंग्य, लोकोक्ति और मुहावरों का समावेश आवश्यक है। चित्रात्मकता एक अन्य विशेषता है जो पाठक को निबंध से जोड़ती है।" (साहित्य के सामान्य पक्ष : संप्रत्ययात्मक व्याख्या, पृ. 201)

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि -

- निबंध विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त साधन है। निबंध वह लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विचार किया जाता है।
- निबंध आधुनिक युग की महत्वपूर्ण एवं सफल विधा है।
- निबंधकार निबंधों के माध्यम से किसी भी विषय को अपनी अनुभूति से संपन्न कर अभिव्यक्त करता है।
- निबंध में निबंधकार विषय को क्रमबद्ध, सुंदर, सुगठित एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत करता है।

हिंदी के प्रमुख निबंधकारों में भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, हजारी प्रसाद द्विवेदी, नंददुलारे वाजपेयी, रामचंद्र शुक्ल, सरदार पूर्ण सिंह, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, महादेवी वर्मा आदि आते हैं। तुम चंदन हम पानी, नया दौर, आँगन का पंछी, बंजारा मन आदि विद्यानिवास मिश्र के प्रमुख निबंध हैं। चिंतामणी शुक्ल जी के निबंधों का संकलन है।

बोध प्रश्न

- निबंध के गुणों पर प्रकाश डालिए।
- निबंध के आरंभ,मध्य और अंत को कैसा होना चाहिए?

- निबंध में बुद्धि पक्ष का क्या महत्व है?
- निबंध में आत्मपरकता कैसे लाई जाती है?

11.4 पाठ सार

निबंध आधुनिक गद्य साहित्य की प्रचलित एवं लोकप्रिय विधा है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तर काल में गद्य के विकास के साथ ही निबंधों का भी विकास हुआ। इसे अंग्रेजी में 'एस्से' कहा जाता है। गद्य साहित्य में निबंध की श्रेष्ठता को रेखांकित करते हुए शुक्ल जी ने निबंध को 'गद्य की कसौटी' कहा है। हिंदी में निबंध विधा का सूत्रपात भारतेंदु काल में हुई। निबंध में गहन विषय पर विचारपूर्वक विवेचन किया जाता है। निबंध गद्य की लघु रचना है, जिसमें विचारों और भावों को प्रभावशली ढंग से अभिव्यक्त किया जाता है। निबंध में निबंधकार किसी विषय को क्रमबद्ध, सुंदर, सुगठित एवं सुबोध भाषा में प्रस्तुत कर सकता है।

निबंध के कई प्रकार होते हैं। विचारात्मक, भावात्मक, व्यंग्य एवं ललित। निबंध रचना में अनुभूति, विचार, कल्पना एवं शैली के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। निबंध में विचारों और भावों का समावेश प्रमुख रूप से होता है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. निबंध गद्य साहित्य की एक प्रमुख विधा है।
2. निबंध एक सुव्यवस्थित और संयत गद्य रचना है, जिसमें विचारों और भावों को प्रभावशली ढंग से अभिव्यक्त किया जाता है।
3. 'निबंध 'शब्द अंग्रेजी भाषा के 'कंपोज़ीशन' या 'एस्से' का समानर्थी है।
4. निबंध में भाषा की रचनात्मकता का श्रेय कल्पना तत्व को जाता है क्योंकि लेखक अपने अनुभव को लेखक कल्पना द्वारा रचनात्मक रूप देता है।
5. निबंध में निबंधकार की स्वच्छंदता का विशेष महत्व रहता है।
6. शैली निबंध विधा के लिए प्राण है।
7. प्रत्येक निबंधकार की निजी शैली होती है।

11.6 शब्द संपदा

1. अनुभूति	= अनुभव/ एहसास
2. उल्लेखनीय	= उल्लेख करने योग्य
3. कसौटी	= परख/जाँच
4. निश्छल	= निष्कपट
5. परिपक्व	= पका हुआ /पूर्ण
6. पारदर्शी	= साफ़
7. बहुज्ञ	= बहुत विषयों का ज्ञानी
8. यथार्थ	= सत्य/कल्पना से परे

9. लक्ष्य = उद्देश्य
10.समष्टि = सामूहिक
11.सूत्रपात = कार्य का आरंभ

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. निबंध के बारे में आप क्या समझते हैं? अपने शब्दों में लिखिए।
2. निबंध के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।
3. निबंध के तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निबंधों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
2. 'निबंध में निबंधकार की वैचारिक पृष्ठभूमि को देखा जा सकता है।' इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. निबंध किस काल की रचना है? ( )
   (अ) मध्य काल (आ) आधुनिक काल (इ) रीति काल
2. निबंध को गद्य की कसौटी किसने कहा? ( )
   (अ) रामचंद्र शुक्ल (आ) हजारी प्रसाद द्विवेदी (इ) श्यामसुंदर दास
3. निबंध गद्य का शक्तिशाली रूप विधान है। यह किसने कहा? ( )
   (अ) शिवदास सिंह चौहान (आ) गुलाबराय (इ) श्यामसुंदर दास

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. लेखक का .... पाठक के मन पर छा जाता है।
2. भाषा की रचनाधर्मिता के लिए .... का आश्रय लिया जाता है।
3. .... शैली में लंबे-लंबे वाक्य होते हैं।
4. हिंदी का पहला निबंधकार .... हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. विचार	(अ) विद्यानिवास मिश्र
2. चिंतामणि	(आ) पदुमलाल पुन्नालाला बख्शी
3. आँगन का पंछी	(इ) निबंध का तत्व
4. क्या लिखूँ	(ई) आचार्य शुक्ल

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
2. गद्य के नए आयाम : कृष्ण गोपाल रस्तोगी
3. हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियाँ : जयकिशन प्रसाद
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
5. हिंदी निबंधकार : जयनाथ नलिन
6. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास : गणपति चंद्र गुप्त

इकाई 12 : निबंध : उद्भव और विकास

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : निबंध : उद्भव और विकास
12.3.1 भारतेंदु युग
12.3.2 द्विवेदी युग
12.3.3 शुक्ल युग
12.3.4 वर्तमान युग
12.3.5 हिंदी निबंध का समकालीन परिदृश्य
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 शब्द संपदा
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जान चुके हैं कि हिंदी साहित्य को दो विधाओं में वर्गीकृत किया गया है- गद्य एवं पद्य। आधुनिक काल में काव्य के साथ-साथ गद्य विधा भी खूब विकसित हुई। गद्य साहित्य में अनेक रचनात्मक विधाओं का समावेश हुआ जैसे कहानी, नाटक, एकांकी, उपन्यास, डायरी, जीवनी, रिपोर्ताज, यात्रा-वृतांत, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण तथा निबंध। निबंध विधा के विकास के लिए विकसित, प्रौढ़ एवं सुनिश्चित गद्य परंपरा का होना आवश्यक है। प्रत्येक भाषा में निबंधों की रचना अन्य विधाओं के विकास के पश्चात ही संभव हो सकी। भारतेंदु युग से ही नई साहित्यिक विधा के रूप में हिंदी निबंध परंपरा का सूत्रपात हुआ। भारतेंदु तथा उनके समकालीन लेखकों पर पाश्चत्य निबंध शिल्प का प्रभाव था। इस प्रकार हिंदी में निबंध रचना आरंभ हुई।

12.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- हिंदी साहित्य में ‘निबंध’ विधा के आरंभ के बारे में जान सकेंगे।
- हिंदी निबंध साहित्य के क्रमिक विकास की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- हिंदी के प्रमुख निबंधकारों के बारे में जानेंगे।
- प्रमुख निबंधों की विशेषताओं को भी समझ सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : निबंध : उद्भव और विकास

निबंध साहित्य की नई विधा है। हिंदी उपन्यास और कहानी की तरह ही निबंध विधा भी पश्चिम की देन है। इसका आरंभ 19 वीं शताब्दी के उतरार्ध से माना जाता है। राष्ट्रीय जागरण की स्फूर्ति, उत्साह, उमंग, देशप्रेम, जनवाद, वैयक्तिक-स्वतंत्रता, अंतरराष्ट्रीयता, वैज्ञानिक-यंत्रों का प्रयोग, आवश्यकताओं की वृद्धि, गद्य का प्रचलन, मुद्रणकला का प्रचार, समाचार-पत्रों का प्रकाशन और उनके माध्यम से लेखक और पाठक में आत्मीयसंबंध की स्थापना, अंग्रेजी साहित्य का संपर्क आदि अनेक कारणों से साहित्य के अनेक रूपों के साथ 'निबंध' का भी आविर्भाव हुआ।

भारतेंदु काल में खड़ी बोली गद्य का निर्माण शुरू हुआ। पत्र-पत्रिकाओं की जरूरतों के कारण निबंध विधा ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। हिंदी के समस्त निबंध साहित्य को चार भागों में बाँटा जा सकता है - भारतेंदु युग, शुक्ल युग, द्विवेदीयुग, वर्तमान युग

12.3.1 भारतेंदु युग

भारतेंदु युग हिंदी निबंध के आविर्भाव एवं विकास का युग है। भारतेंदु जी हिंदी के सर्वप्रथम निबंधकार माने जाते हैं। इस युग से लेकर हिंदी निबंध साहित्य निरंतर विकास की ओर अग्रसर होता रहा है।

इस युग से पूर्व हिंदी में निबंध साहित्य का विकास न होने के कई कारण हैं। इसमें प्रमुख कारण यह रहा कि इससे पूर्व गद्य का समुचित विकास ही नहीं हुआ था। दूसरा कारण यह कि पूर्ववर्ती साहित्यकारों का मुख्य लक्ष्य विचारों की अभिव्यंजना की अपेक्षा भावानुभूतियों को अभिव्यक्ति देना था। अत: काव्य का माध्यम ही उनके लिए अधिक उपयुक्त था। निबंध साहित्य के विकास में तीसरी बाधा मुद्रा एवं प्रचार साधनों का अभाव रहा। इसके अतिरिक्त भारतेंदु युग से पूर्व रीतिकालीन वातावरण में उस सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना का अभाव था जो विचारों में उत्तेजना भरकर निबंधों का सर्जक बन सकती है। भारतेंदु युग में एक नवीन सामाजिक एवं राजनैतिक चेतना का उदय हो रहा था, यह नवीन चेतना तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में मुखरित होने लगी। 'हरिश्चंद्र चंद्रिका', 'ब्राह्मण', 'सार-सुधानिधि' एवं 'प्रदीप' जैसी पत्रिकाओं का निबंध के विकास में महत्वपूर्ण योगदान था। इन पत्रिकाओं में छपने वाले प्रारंभिक निबंध छोटे-छोटे होते थे। परिणामस्वरूप इन निबंधों में पत्रकारिता का स्पष्ट प्रभाव था। इस समय साधारणत: सामाजिक आंदोलन या धार्मिक समस्याओं को लेकर ही निबंध लिखे गए।

अंग्रेजी साहित्य में भी निबंध विधा का विकास पत्र-पत्रिका के माध्यम से हुआ। वहाँ निबंध लेखन की परंपरा में व्यक्तित्व-प्रधान तथा निर्वैयक्तिक परंपरा रही है। व्यक्तित्व प्रधान लेखकों में अब्राहम लिंकन, काजली, हैजलिट, ली हंट, स्टीवेंसन आदि निबंधकारों का नाम आता है। निर्वैयक्तिक या विषय प्रधान परंपरा में बंकन, जॉनसन, जेफरी, मैकाले, बाल्टस्पीटर आदि निबंधकार हुए हैं। भारतेंदु युग में हिंदी निबंध साहित्य पाश्चत्य परंपराओं से प्रेरित हुआ। हिंदी निबंध लेखन की पृष्ठभूमि में सामाजिक आवश्यकताओं की ही प्रमुख भूमिका रही है।

सामाजिक एवं राजनैतिक गतिविधियों पर टीका टिप्पणी करना तथा शिक्षा का प्रसार करना आदि कार्यों के लिए निबंध ही अच्छा और सशक्त माध्यम था। अत: इस युग में सामान्य से लेकर गंभीर विषयों पर निबंध लिखे गए। गद्य विकास की अवस्था में था अत: गद्य का सर्व स्वीकृत रूप नहीं मिलता है। फलत: इस काल के निबंधों में गद्य शैली निर्माण के वैयक्तिक प्रयास ही अधिक मिलते हैं। इनकी भाषा सर्व-साधारण थी।

भारतेंदु की पत्रिका 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' में हमें हिंदी निबंध का प्रारंभिक रूप मिलता है। तथा उसी समय की प्रकाशित पत्रिकाएँ 'कवि वचनसुधा', 'हिंदी प्रदीप', 'ब्राह्मण', 'आनंद कादंबिनी', 'हिंदुस्तान' आदि से निबंध विकास की दिशा में अग्रसर हुआ।

राजा शिव प्रसाद सितारे 'हिंद' द्वारा रचित 'राजा भोज का सपना' को हिंदी का प्रथम निबंध माना जाता है। कुछ विद्वानों ने बालकृष्ण भट्ट को हिंदी का प्रथम निबंधकार स्वीकार किया है। किंतु यह निर्विवाद रूप से स्वीकार्य है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र ही हिंदी गद्य साहित्य के प्रवर्तक एवं हिंदी निबंध के संस्थापक हैं। भारतेंदु के निबंधों में विषय और शैली की दृष्टि से विविधता है। किंतु निबंध की दिशा में सामान्य प्रयास ही था। वे निबंध परंपरा को विकसित नहीं कर पाए। इस युग के प्रतिनिधि निबंधकारों में इस भारतेंदु हरिश्चंद्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', बालमुकुंद गुप्त, ठाकुर जगमोहनसिंह, अंबिकादत्त व्यास, लाला श्रीनिवासदास, केशवराम भट्ट तथा राधाचरण गोस्वामी, राधाकृष्णदास, किशोरीलाल गोस्वामी आदि का नाम उल्लेखनीय हैं।

भारतेंदु युगीन निबंधों की विशेषताएँ

भारतेंदु युग हिंदी निबंधों का उत्थान काल रहा है। भाषा एवं शैली की विकास की दशा में थी। समाज और साहित्य के कुछ पक्षों पर ही निबंध रचना संभव हो पाई। यह समय नवीन राजनैतिक तथा सांस्कृतिक चेतना का उदय था। इस युग के निबंध पत्र-पत्रिकाओं में छपते थे जिनका विषय सामाजिक आंदोलन अथवा धार्मिक समस्याएँ थीं।

भारतेंदु युग के निबंधों की विशेषता वैयक्तिक थी। विषयों को रुचिकर बनाने के लिए यत्र-तत्र वैयक्तिकता का समावेश किया गया। हास्य-व्यंग्य की शैली की अधिकता थी। लेखकों की वैयक्तिक शैली का प्रभाव इस युग के निबंधों पर देखा जा सकता है। भारतेंदु कवि थे अत: उनके निबंधों में काव्य के गुण झलकते हैं। भट्ट जी की शैली में विदेशी भाषा के शब्दों की बहुलता थी। भाषा जनसाधारण की थी। उसे देखते हुए आचार्य शुक्ल ने कहा था - यह युग बच्चे के समान हँसता खेलता आया था, जिसमें बच्चों की-सी निश्चलता, अक्खड़पन, सरलता और तन्मयता थीं।

अंतत: कहा जा सकता है कि हिंदी निबंध का आरंभिक काल होने पर भी यह युग महत्वपूर्ण है। डॉ. रामविलास शर्मा ने कहा है - "जितनी सफलता भारतेंदु-युग के लेखकों को निबंध रचना में मिली, उतनी कविता और नाटक में नहीं मिली।" साथ ही इस युग के लिखकों ने पाठकों के साथ आत्मीयता का संबंध स्थापित किया। बाबू गुलाब राय ने आत्मीयता की प्रशंसा करते हुए कहा है - भारतेंदु युग चिरस्मरणीय रहेगा।

डॉ. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी के अनुसार "इस काल के निबंद्ध उस शिशु के सामान थे जो लड़खड़ाते हुए बार-बार उठकर अपने पैरों पर खड़ा होना चाहता था। उनको सहारा देने वाले

अभिभावक की आवश्यकता थी। परवर्ती युग में आचार्य द्विवेदी द्वारा यह कार्य पूरा किया गया। उन्होंने जिम्मेदार पिता की तरह इस शिशु को अपने पैरों पर निडर होकर चलना सिखाया।

विभिन्न परिस्थितियों से प्रेरित भारतेंदु के निबंधों से सहज विनोद, सजग चेतना अंधविश्वासों, रूढ़ियों और आडंबरों पर तीखी चोट, सामाजिक कुरीतियों का खुला विरोध, विदेशी शासन और उसकी नीतियों पर व्यंग्य आदि प्रवृतियाँ परिलक्षित होती हैं। ताजगी, जिंदादिली, आत्मीयता, व्यक्तित्व की अभिव्यंजना, मौलिकता, व्यंग्यात्मकता इनके निबंधों के विशेष गुण हैं। भारतेंदु ने अपने निबंधों में भावात्मक, तुलनात्मक, वर्णनात्मक, व्यंग्य, विनोद, विवेचन तथा भाषावैज्ञानिक विवेचन आदि का प्रयोग किया है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग के निबंध किसके समान थे?
- भारतेंदु युगीन निबंध किस परंपरा से प्रभावित थे?
- हिंदी के प्रथम निबंध का नाम बताइए।
- भारतेंदु निबंध की विशेषता लिखिए?

12.3.2 द्विवेदी युग

हिंदी साहित्य का द्वितीय उत्थान 'नागरी प्रचारणी पत्रिका' तथा सरस्वती प्रकाशन के आरंभ से होता है। महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर इस युग का नामकरण हुआ। हिंदी नवजागरण में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

यह युग भाषा के परिष्कार और संस्कार का युग है। भाषा का परिमार्जन होने के कारण इस काल को 'परिमार्जन काल' भी कहा जाता है। अत: भाषा परिष्कृत हुई तथा निबंधों में प्रौढ़ता आई। समाज में शिक्षा का विकास, राजनीतिक तथा नैतिक चेतना जागृत हुई। देशभक्ति की भावना परवान चढ़ने लगी। अनेक आंदोलनों से सामाजिक विचारधारा प्रभावित होने लगी। शैली की दृष्टि से इस युग में अनेक सूक्ष्म रूपों का विकास हुआ। द्विवेदी युग के निबंधों को विशुद्ध भावात्मक और विचारयुक्त भावात्मक - दो वर्गों में विभाजित किया गया।

द्विवेदी युग में शिक्षा का भी पर्याप्त विकास हुआ। समाज में राजनैतिक एवं नैतिक चेतना जागृत हुई। देशभक्ति की भावना बलवती हुई। इस समय होने वाले युद्ध, जलियाँवाला कांड तथा रौलेट एक्ट आदि घटनाओं के कारण सामाजिक विचारधारा भी प्रभावित हुई। हास्य-व्यंग्य के स्थान पर साहित्य में गंभीर चिंतन और नैतिकता का समावेश होने लगा।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी 'द्विवेदी युग' के प्रमुख निबंधकार थे। उनके द्वारा लिखे गए साहित्य की महत्ता, कवि और कविता, प्रतिभा, नाटक, उपन्यास आदि निबंध ज्ञान-वर्धक निबंध हैं। इस युग के निबंधकारों में पं. गोविंद नारायण मिश्र, पं. माधव प्रसाद मिश्र, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, बाबू गोपालराम गहमरी, पं. पद्मसिंह शर्मा, अध्यापक पूर्णसिंह, गणेश शंकर विद्यार्थी एवं गंगा प्रसाद अग्निहोत्री का स्थान महत्वपूर्ण है। श्याम सुंदर दास, बाबू गुलाबराय और मिश्र बंधु का नाम भी इस युग के महान निबंधकारों में लिया जा सकता है। पांडित्यपूर्ण ढंग से लिखे जाने के कारण इनके निबंध ज्ञान के अक्षर भंडार जरूर हैं किंतु साहित्यिक दृष्टि से उच्चकोटि के निबंध नहीं कहला सके। मिश्र बंधुओं के निबंध भी शिक्षामूलक हैं। पं. पद्मसिंह शर्मा ने सुंदर भावुक निबंध लिखे।

द्विवेदी युग में विशेष स्थान प्राप्त करने वाले निबंधकार हैं - पं. माधव प्रसाद मिश्र, चंद्रधर शर्मा गुलेरी तथा अध्यापक पूर्णसिंह। इनके द्वारा लिखे गए निबंधों को उच्चकोटि के कहे जा सकते हैं। मिश्र जी के निबंधों की विशेषता त्योहार, धर्म, देश एवं संस्कृति प्रेम था। गुलेरी जी विचार एवं शैली की दृष्टि से अत्यंत प्रगतिशील निबंधकार हैं। इनके निबंधों में ऐतिहासिक और सांस्कृतिक चेतना मिलती है। पूर्णसिंह ने निबंधों को एक नवीन लय और गति प्रदान की तथा उसे मानवतावादी विचारधारा की ओर मोड़ा। उनके अनुसार सभ्य आचरण एवं प्रेम द्वारा ही समाज का कल्याण संभव है। लक्षणा एवं चित्रण, मार्मिकता भावव्यंजना, गंभीर विचार एवं भाषा की ओजस्विता से इनके निबंध प्रभावकारी बने।

द्विवेदी युगीन निबंधों की विशेषताएँ

भारतेंदु युग वृद्धि एवं विस्तार का युग था। एक तरह से निबंध साहित्य का उदय काल। किंतु द्विवेदी युग परिमार्जन का युग था। विषय, भाषा, शैली आदि सभी दृष्टियों से परिमार्जन हुआ। द्विवेदी युग में निबंधों ने गंभीर विचारों का रूप धारण कर लिया था। हास्य-व्यंग्य के स्थान पर अब नैतिकता प्रधान हुई। वैयक्तिक प्रयासों ने सामाजिक भावना का रूप ले लिया। शिक्षितों की संख्या बढ़ने तथा राजनीतिक जनजागरण के कारण साहित्य का भी विकास हुआ। इस काल में नैतिक निबंध अधिक लिखे गए।

द्विवेदी युग निबंध का द्वितीय उत्थान है। इसका आरंभ सरस्वती और नागरी प्रचारणी पत्रिका के प्रकाशन से आरंभ होता है। भाषा का परिमार्जन और विकास हुआ। आचार्य द्विवेदी जी ने गद्य की भाषा को समृद्ध एवं समर्थ बनाया। साहित्य के विभिन्न पक्षों की भाँति द्विवेदी जी ने हिंदी भाषा के परिमार्जन-परिष्कार में जो उल्लेखनीय योगदान दिया है, उनके निबंध इसके माध्यम बने हैं। इसलिए दिवेदी जी के निबंधों की भाषा का रूप अत्यंत शुद्ध है। उन्होंने हिंदी, उर्दू, संस्कृत, फारसी तथा इतर भाषाओं के शब्दों का सुंदर सम्मिश्रण अपने निबंधों में किया है। छोटी-छोटी वाक्य रचना पूरी तरह से नपी तुली है। वाक्यों में कहीं किसी प्रकार की शिथिलता नहीं देखी जा सकती। इन्होंने व्यंग्यात्मक, आलोचनात्मक तथा गंभीर विचारात्मक शैलियों का प्रयोग अपने निबंधों में किया है। व्यंग्यात्मक शैली में विनोद और सरसता की प्रधानता है तो आलोचनात्मक शैली की भाषा करारी तथा प्रवाह पूर्ण तथा गंभीर विचारात्मक शैली में लिखे गए निबंधों की भाषा अपेक्षाकृत अधिक संयत और विचारानुकूल।

बोध प्रश्न

- दिवेदी युग को परिमार्जन काल क्यों कहा जाता है?
- द्विवेदी युग के निबंधों की क्या विशेषता है?

12.3.3 शुक्ल युग

निबंध साहित्य के उद्भव तथा विकास की यात्रा में द्विवेदी युग परिमार्जन का युग था। इसके बाद आचार्य रामचंद्र शुक्ल युग का प्रभाव पड़ा। सन उन्नीस सौ बीस से उन्नीस सौ चालीस का समय शुक्ल युग के नाम से जाना जाता है। इस युग के बारे में बाबू गुलाबराय कहते हैं - "आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध-क्षेत्र में पदार्पण करने से निबंध साहित्य में एक नया जीवन आया। द्विवेदी युग में विचार और परिमार्जन तो पर्याप्त हुआ लेकिन उस काल में विश्लेषण और गहराई में जाने की प्रवृत्ति न उत्पन्न हो सकी।" इस अभाव की पूर्ति आचार्य शुक्ल जी ने की। रामचंद्र शुक्ल ने साहित्यिक और मनोवैज्ञानिक निबंध लिखे हैं। इनकी भाषा विषयानुकूल, परिष्कृत, कसी हुई तथा प्रभावोत्पादक है।

शुक्ल जी के प्रभाव से इस युग में गंभीर और विचार प्रधान निबंधों की रचना हुई। इनमें प्रौढ़ भाषा-शैली का प्रयोग हुआ। 'चिंतामणि' में सनकलित शुक्ल जी के निबंधों के कारण निबंध साहित्य में नए विचार, नई अनुभूति और नई शैली का विकास हुआ। इस युग में आचार्य श्यामसुंदर दास, पं.पद्म सिंह शर्मा, बाबू गुलाबराय, वियोगीहरि, गणेश शंकर विद्यार्थी, जयशंकर प्रसाद, राहुल सांकृत्यायन आदि उल्लेखनीय निबंधकार हुए। इनमें से श्यामसुंदर दास का महत्वपूर्ण स्थान है। हिंदी गद्य के विकास में इनका योगदान स्मरणीय है।

डॉ. राधाकृष्णन के शब्दों में, "बाबू श्याम सुंदर अपनी विद्वत्ता का वह आदर्श छोड़ गए हैं जो हिंदी के विद्वानों की वर्तमान पीढ़ी को उन्नति करने की प्रेरणा देता रहेगा।" इन्होंने आलोचनात्मक तथा विचारात्मक शैली में निबंध लिखे हैं। विचारात्मक शैली के वाक्य छोटे-छोटे तथा भावपूर्ण होते हैं। श्यामसुंदर दास संस्कृतनिष्ठ भाषा-शैली के पक्षधर थे। उनके निबंधों से स्पष्ट होता है कि हिंदी में गंभीरतम विचारों एवं भावों को अभिव्यक्त करने की क्षमता है। इनके निबंधों में पांडित्यपूर्ण, ओज और गांभीर्य की छाप सर्वत्र दिखाई देती है।

बोध प्रश्न

- शुक्ल युग के प्रमुख हिंदी निबंधकारों के नाम लिखिए।
- आचार्य शुक्ल ने कैसे निबंध लिखे?
- श्यामसुंदर दास के निबंधों की विशेषताएँ लिखिए।

12.3.4 वर्तमान युग

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के बाद के समय हिंदी में निबंधों का वर्तमान काल माना जाता है। यह प्रवृत्ति एवं प्रयोग का युग था इस युग में साम्यवादी विचारधारा का विशेष प्रभाव रहा है और इसीके आधार पर निबंध साहित्य में विषय एवं शैली में विविधता एवं व्यापकता का समावेश हुआ। इस युग में भाषा भी पूर्णतया समर्थ एवं समृद्ध बनी है। उसमें साहित्यिकता भी है और गंभीर विचारों को अभिव्यक्त करने की क्षमता भी।

विषय की विविधता को देखते हुए आधुनिक युग के निबंध लेखकों को इस तरह विभाजित किया जा सकता है -

(अ) शुक्ल पंरपरा

इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, डॉ. नगेंद्र, डॉ. नंददुलारे वाजपेयी, डॉ. सत्येंद्र तथा शांतिप्रिय द्विवेदी। यद्यपि शैली विचारों में कुछ भिन्नता थी फिर भी ये साहित्यकार साहित्य व जीवन के संबंध की दृष्टि से शुक्ल जी की विचार परंपरा में ही आते हैं। रस मत के अनुयायी होने तथा लोकरंजन को साहित्य का अभेद्य अंग मानने के कारण वे लेखक एक ही वर्ग में आते हैं। शास्त्रीयता एवं सांस्कृतिकता इनके निबंधों की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

(आ) आलोचनात्मक वर्ग

यह सबसे अधिक पुष्ट वर्ग है। छायावाद के आधार स्तंभ माने जाने वाले चारों प्रमुख कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद एवं महादेवी वर्मा ने अपने काव्य की भूमिका रूप में आलोचनात्मक निबंध लिखे हैं।

(इ) भावात्मक वर्ग

इस वर्ग के लेखकों में राधा कृष्ण दास, वियोगीहरि, माखनलाल चतुर्वेदी और शांतिप्रिय द्विवेदी उल्लेखनीय हैं। शांतिप्रिय द्विवेदी को भावुक निबंधकार के रूप में जाना जाता है।

(ई) मार्क्सवादी वर्ग

इस वर्ग के लेखकों में डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. शिवदान सिंह चौहान, डॉ. रांगेय राघव के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

(उ) यात्रा संबंधी निबंध

यात्रा संबंधी निबंध भी बहुत लिखे गए हैं। राहुल सांकृत्यायन, देवेंद्र सत्यार्थी आदि के निबंधों को इस वर्ग में सम्मिलित किया जा सकता है।

(ऊ) नैतिक सांस्कृतिक निबंध लेखक

इस वर्ग के लेखकों में कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर का नाम उल्लेखनीय है। इनकी शैली बड़ी मनोरम है। बाबू गुलाब राय ने भी इस श्रेणी में सशक्त निबंधों की रचना की है।

(ऋ) हास्य-व्यंग्य संबंधी लेखक

भारतेंदु युग में कुछ निबंध हास्य व्यंग्य शैली में लिखे गए थे। आधुनिक युग में पुनः हास्य-व्यंग्य प्रधान निबंध लिखे गए। इस वर्ग के लेखकों में श्री बेढब बनारसी, बनारसी दास चतुर्वेदी, गोपाल प्रसाद, मोहन राकेश, हरिशंकर परसाई आदि महत्वपूर्ण हैं।

(ए) दार्शनिक वर्ग

इस वर्ग के अंतर्गत बाबू गुलाब राय, डॉ. रामशरण तिवारी, डॉ. रामचरण महेंद्र, डॉ.संपूर्णानंद का विशेष योगदान रहा है।

(ऐ) संस्मरण संबंधी निबंध लेखक

इस वर्ग के अंतर्गत पंडित बनारसीदास चतुर्वेदी, बाबू गुलाब राय, महादेवी वर्मा आदि निबंधकार आते हैं।

उल्लेखनीय है कि द्विवेदी युग के बाद हिंदी में निबंध विधा का बहुआयामी विकास हुआ। प्रवृत्तियों की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण निबंधकारों और निबंधों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. **विचार प्रधान निबंध** : प्रसाद का 'काव्य और कला तथा अन्य निबंध', श्यामसुंदर दास के साहित्यिक निबंध, रामचंद्र शुक्ल के 'चिंतामणि' के निबंध, धीरेंद्र वर्मा के 'विचारधारा' के निबंध, पीतांबरदत्त बड़थ्वाल का 'योगप्रवाह', हजारी प्रसाद द्विवेदी के 'विचार और वितर्क', 'अशोक के फूल' और 'गतिशील चिंतन', सद्गुरुशरण अवस्थी का 'श्रमिक पथिक', नगेंद्र के 'विचार और अनुभूति' तथा 'विचार और विवेचन', संपूर्णानंद का 'शिक्षा की समस्या', जगन्नाथ प्रसाद शर्मा 'मिलिंद' का 'चिंतनकण', इलाचंद्र जोशी का 'विवेचना', अज्ञेय का 'चिंता', रघुवीर सिंह का 'शेष स्मृतियाँ' की भूमिका, महादेवी वर्मा का 'विवेचनात्मक गद्य', जैनेंद्र का 'राही और

समाज’, उमेशचंद्र मिश्र का ‘सफलता’, जयविजयनारायण सिंह का ‘चरित्रविकास’ और भगवान दास का ‘समन्वय’।

2. **भावप्रधान निबंध** : विश्वंभर मानव का ‘सोने से पहले’, सत्यनारायण शर्मा का ‘जीवनयात्रा’, रायकृष्ण दास का ‘छायापथ’, दिनेश नंदिनी चोरड्या का ‘शबनम’, तारा पांडेय का ‘रेखाएँ’, माखनलाल चतुर्वेदी का ‘साहित्य देवता’, सियाराम शरण का ‘हाँ, नहीं’।

3. **प्रतीकात्मक निबंध** : रायकृष्ण दास के ‘संलाप’, ‘सागर और मेघ’, ‘सोना और लोहा’।

4. **मनोवैज्ञानिक निबंध** : अज्ञेय का ‘चिंता’, जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ‘मिलिंद’ का ‘चिंतनकण’।

5. **कथात्मक निबंध** : पदुमलाल पुननालाल बख्शी के ‘चर्चा’, ‘एक पुरानी कथा’, ‘बंदर की शिक्षा’, सियाराम शरण का ‘झूठ-सच’, ब्रजलाल बियाणी का ‘कल्पनाकानन’।

6. **संस्मरणात्मक निबंध** : पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी के ‘रामलाल पंडित’, ‘कुंजबिहारी’, सियारामशरण का ‘हिमालय की झलक’, महादेवी का ‘स्मृति की रेखाएँ’।

7. **हास्य-व्यंग्यात्मक निबंध** : सियाराम शरण का ‘घोड़ाशाही’, आनंद कुमार का ‘बातचीत’, वियोगीहरि के ‘पगली’, ‘मेरे हिमाकत’, प्रभाकर माचवे का ‘मुँह’।

8. **वर्णनप्रधान निबंध** : (यात्रा) महादेवी वर्मा का ‘बद्रीनाथ की यात्रा’, राहुल के यात्रासंबंधी निबंध, धीरेंद्र वर्मा का ‘यूरोप के पत्र’। (द्रष्टव्य : साहित्य के सामान्य पक्ष : संप्रत्ययात्मक व्याख्या, पृ. 200)

बोध प्रश्न

- विचार प्रधान निबंध के कुछ उदाहरण दीजिए।
- मनोवैज्ञानिक निबंधों के उदाहरण दीजिए।
- हास्य-व्यंग्यात्मक निबंधकारों के नाम बताइए।
- संस्मरणात्मक निबंधकारों के नाम बताइए।

12.3.5 हिंदी निबंध का समकालीन परिदृश्य

'हिंदी साहित्य का इतिहास' (सं. डॉ. नगेंद्र और डॉ. हरदयाल) में 1980 ई. के बाद के निबंध साहित्य को समकालीन हिंदी निबंध के रूप में विवेचित किया गया है। इस अवधि में निबंधकारों की कई पीढ़ियाँ एक साथ सक्रिय दिखाई देती हैं। पुरानी पीढ़ी के निबंधकारों में अज्ञेय, धर्मवीर भारती, विद्यानिवास मिश्र, शिवप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र और निर्मल वर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं।

इन निबंधकारों के बाद मध्यवर्ती पीढ़ी में तीन निबंधकार सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। इनके नाम हैं- विष्णुकांत शास्त्री, रमेशचंद्र शाह और कुबेरनाथ राय।

विष्णुकांत शास्त्री के निबंध संग्रह हैं कुछ चंदन की कुछ कपूर की, चिंतन मुद्रा, अनुचिंतन, आधुनिक हिंदी साहित्य के कुछ विशिष्ट पक्ष, विष्णुकांत शास्त्री : चुनी हुई रचनाएँ (दो खंड)। इनके निबंधों में बौद्धिक पक्ष काफी प्रबल है, परंतु हृदय भी साथ लगा हुआ है। बड़ी हद तक ये शुक्ल जी की परंपरा में ठहरते हैं।

रमेश चंद्र शाह के निबंध संग्रह हैं- आडू का पेड़, शब्द निरंतर, शैतान के बहाने, भूलने के विरुद्ध, स्वधर्म और कालगती। इनके निबंधों में आत्म साक्षात्कार का तत्व अत्यंत प्रबल रहता है। इसलिए इन्होंने अपने निबंधों को 'आत्मनिबंध' माना है। शाह के निबंधों में समकालीन जीवन में व्याप्त अराजकता, परजीविता और मूल्याहीनता के प्रति चिंता खासतौर से दिखाई देती है।

कुबेरनाथ राय का निबंधसंग्रह प्रिया नीलकंठी 1968 में आ गया था। समकालीन कालावधि में आए उनके निबंध संग्रह हैं मन पवन की नौका, किरात नदी में चंद्र मधु, दृष्टि अभिसार, त्रेता का बृहतसाम, मराल, उत्तरकुरु, वाणी का क्षीरसागर, अंधकार में अग्निशीखा, आगम की नाव, रामायण महातीर्थम। वे इस कालवधि के सबसे महत्वपूर्ण ललित निबंधकार हैं।

समकालीन ललित निबंध के क्षेत्र में महत्वपूर्ण लेखन करने वाले तीसरी पीढ़ी के कुछ लेखकों का उल्लेख भी यहाँ जरूरी है, जैसे-

कृष्ण बिहारी मिश्र- बेहया का जंगल: 1981, मकान उठ रहे हैं: 1990, आंगन की तलाश: 1999

राम अवध शास्त्री- डायरी के उड़ते पृष्ठ: 1982, बूझत श्याम कौन तू गोरी: 1991, कास फूल गए: 1999

श्रीराम परिहार- अंधेरे से उम्मीद: 1994, धूप का अवसाद: 1998, ठिठके पंख पंखुरी पर: 2002,

अष्टभुजा प्रसाद शुक्ल- मिठउआ: 1999

केदारनाथ सिंह- कब्रिस्तान में पंचायत : 2003

समकालीन ललित निबंधकारों ने एक ओर तो प्राचीन जीवनमूल्यों के प्रति मोह दर्शाया है तथा दूसरी ओर नवीन सकारात्मक तत्वों को स्वीकार करने की तत्परता भी दिखाई है। भारतीयता इस विधा की केंद्रीय विषयवस्तु है।

वैचारिक और ललित निबंध लेखन के अलावा स्वातंत्र्योत्तर काल में संपादकीय आलेखों और हास्य व्यंग्य के रूप में बड़ी मात्रा में निबंध साहित्य रचा गया। हरिशंकर परसाई और शरद जोशी हास्य व्यंग्यकारों के शिरोमणि हैं। परसाई में व्यंग्यप्रधान है तो शरद जोशी में हास्य। इन्हीं रचनाकारों की परंपरा में शामिल कुछ अन्य श्रेष्ठ व्यंग्य निबंधकार इस प्रकार हैं -

श्रीनारायण चतुर्वेदी - मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ: 1988

रवींद्रनाथ त्यागी - पराजित पीढ़ी के नाम: 1988

मनोहर श्याम जोशी- नेताजी कहिन: 1982

श्रीलाल शुक्ल- कुछ ज़मीन पर कुछ हवा में: 1990

मनोज सोनकर- डुग्गी: 1996

प्रेम जनमेजय- शर्म मुझको मगर क्यों नहीं आती: 1998

नरेंद्र कोहली- मेरे मुहल्ले के फूल: 2000, सबसे बड़ा सत्य: 2003

हरीश नवल- मेरी 51 व्यंग्य रचनाएँ: 2004

हरि जोशी- मेरी 51 व्यंग्य रचनाएँ: 2004

अपने निबंधों को 'आत्म निबंध' किसने कहा है?

बोध प्रश्न

- 'रामायण महातीर्थम' किसकी रचना है?
- हरिशंकर परसाई और शरद जोशी के निबंधों में क्या अंतर है?
- समकालीन ललित-निबंधकारों की रचनाओं की क्या विशेषता है?

12.4 पाठ सार

आधुनिक काल हिंदी गद्य की सर्वोत्तोमुखी उन्नति का काल है। निबंध गद्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक प्रगति के साथ ही साथ बौद्धिकता का विकास हुआ। साहित्य के क्षेत्र में भी बौद्धिकता का विकास के हुआ। फलस्वरूप विचारात्मक लेखों का निर्माण हुआ। इन विचारात्मक लेखों से हिंदी निबंध का प्रारंभ हुआ। किंतु निबंध विधा का जन्म अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से माना जाता है। अपने विकास क्रम में निबंधों का प्रथम चरण - प्रयास, द्वितीय - विकास, तृतीय - प्रसार तथा चतुर्थ - उत्कर्ष दशा है। इन्हें क्रमश: भारतेंदु युग, शुक्ल युग, द्विवेदी युग और शुकलोत्तर युग के रूप में बाँटा गया है। इस विकासक्रम में निबंधों में विषय, भाषा, शैली एवं अभिव्यक्ति की क्षमता के आधार पर अत्यंत विविधता दिखाई देता है। निबंध हमारे विचारों की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। अतः हमें उनके विचारों में गंभीरता की ओर अवश्य ध्यान देना होगा। हिंदी के प्रमुख निबंधकारों में सर्वश्रेष्ठ बालकृष्ण भट्ट, भारतेंदु हरिश्चंद्र, प्रताप नारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, बालमुकुंद गुप्त, महादेवी वर्मा, नंददुलारे वाजपेयी, रामचंद्र शुक्ल, हजारी प्रसाद द्विवेदी, नगेंद्र, विद्यानिवास मिश्र, नरेंद्र कोहली आदि उल्लेखनीय हैं।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. 'निबंध' विधा का हिंदी साहित्य में उद्भव आधुनिक काल की देन है।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' में हिंदी निबंध का प्रारंभिक रूप मिलता है। उसी समय की अन्य पत्रिकाओं जैसे 'कवि वचन सुधा', 'हिंदी प्रदीप', 'ब्राह्मण', 'आनंद कादंबिनी' और 'हिंदुस्तान' के माध्यम से इस यह विधा विकास की दिशा में अग्रसर हुई।
3. द्विवेदी युग हिंदी निबंध का द्वितीय उत्थान है। इस काल में 'सरस्वती' और 'नागरी प्रचारणी पत्रिका' के माध्यम से भाषा का भी परिमार्जन और विकास हुआ। निबधों की भाषा परिष्कृत हुई।
4. शुक्ल युग में विशेष रूप से आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध संग्रह 'चिंतामणि' में संकलित निबंधों में नए विचार, नई अनुभूति और नई शैली का विकास हुआ।
5. शुक्लोत्तर युग में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'ललित निबंध' के रूप में हिंदी निबंध को एक बिलकुल नया स्वरूप प्रदान किया।
6. आज़ादी के बाद जन संचार माध्यम के अभूतपूर्व विस्तार ने निबंध के नए-नए रूपों को प्रस्तुत और विकसित किया।

12.6 शब्द संपदा

1. आविर्भाव = प्रकट होना
2. उत्कर्ष = उत्थान, उन्नति
3. उल्लेखनीय = उल्लेख करने योग्य
4. चेतना = समझ, ज्ञानमूलक मनोवृत्ति
5. दार्शनिक = दर्शनशास्त्र से संबंधित
6. दृष्टिगोचर = दर्शनीय
7. परिपक्व = पका हुआ/ पूर्ण
8. परिष्कृत = सुधारा हुआ
9. पांडित्यपूर्ण = जो विद्वत्ता से भरा हो
10. पारदर्शी = साफ
11. संतुलित = समान, नपा-तुला
12. समष्टि = सामूहिक

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. निबंध विधा के उद्भव और विकास पर प्रकाश डालिए।
2. शुक्लोत्तर या वर्तमान युग के निबंध साहित्य पर प्रकाश डालिए।
3. हिंदी में द्विवेदी युग के निबंध साहित्य का परिचय दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु युग के निबंधों की विशेषताएँ लिखिए।
2. प्रवृत्तियों के आधार पर निबंधों का वर्गीकरण करके प्रमुख निबंधकारों का उल्लेख कीजिए।
3. बाबू श्यामसुंदरदास के निबंधों के बारे में लिखिए।

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंध क्षेत्र में पदार्पण करने से निबंध साहित्य में एक नया जीवन आया' - यह किसने कहा? ( )

   (अ) हजारी प्रसाद द्विवेदी (आ) बाबू गुलाब राय (इ) श्यामसुंदर दास

2. 'परिमार्जनकाल' किसे कहा जाता है? ( )

   (अ)शुक्ल युग (आ) द्विवेदी युग (इ) भारतेंदु युग

3. मार्क्सवादी वर्ग के निबंधकार कौन हैं? ( )

   (अ) डॉ. रामविलास शर्मा (आ) निराला (इ) देवेंद्रनाथ सत्यार्थी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. यदि पद्य कवियों की कसौटी है तो .... गद्य की कसौटी है।
2. रामचंद्र शुक्ल के निबंध संग्रह का नाम .... है।
3. भारतेंदु हरिश्चंद्र की पत्रिका .... में हिंदी निबंध का प्रारंभिक रूप मिलता है।
4. राहुल सांकृत्यायन ने .... यात्रा संबंधी निबंधों की चर्चा की ।
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ………… के रूप में हिंदी निबंध को एक बिलकुल नया स्वरूप प्रदान किया।

III. सुमेल कीजिए -

1. चिंतामणि (अ) निबंधकार
2. हरिश्चंद्र चंद्रिका (आ) भारतेंदु काल
3. चंद्रधर शर्मा गुलेरी (इ) पत्रिका
4. हिंदी निबंध का आविर्भाव (ई) आचार्य शुक्ल

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
2. गद्य के नए आयाम : कृष्ण गोपाल रस्तोगी

इकाई 13 : प्रेमचंद और उनकी कहानी कला

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मूल पाठ : प्रेमचंद और उनकी कहानी कला
13.3.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय
13.3.2 प्रेमचंद की रचना यात्रा
13.3.3 प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ
13.3.4 प्रेमचंद की कहानियों का विषयपरक वर्गीकरण और सामान्य परिचय
13.3.5 प्रेमचंद की कहानियों की विशेषताएँ
13.3.6 प्रेमचंद की कहानियों में आदर्श और यथार्थ
13.3.7 प्रेमचंद की कहानियों की भाषा
13.3.8 प्रेमचंद की कहानियों में शैली वैविध्य
13.3.9 प्रेमचंद की कहानी कला की विवेचना
13.4 पाठ सार
13.5 पाठ की उपलब्धियाँ
13.6 शब्द संपदा
13.7 परीक्षार्थ प्रश्न
13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

मानव जीवन में कहानी का विशेष महत्व रहा है। जब हम प्रेमचंद और उनकी कहानी कला पर एक दृष्टि डालते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इनकी कहानी कला अनेक विशेषताओं से भरपूर है। प्रेमचंद के अमूल्य योगदान से आज कहानी विधा विषय, कथ्य, आदर्श व शिल्प की दृष्टि से नए-नए आयामों को आत्मसात करते हुए संतोषजनक पडाओं को तय करके विकास की मंजिल तक पहुँचने में सक्षम हो चुकी है। इनकी कहानी कला सार्थक है। इनके भाव पक्ष की विविधता व गहनता इसकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की परिचायक है। इनकी कहानी कला के विविध आयामों से परिचित होकर कथा साहित्य के संप्रेषण और सौंदर्य को समझने में विद्यार्थियों को आसानी होती है।

13.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप प्रेमचंद और उनकी कहानी कला के बारे में पढ़ेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- प्रेमचंद के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- प्रेमचंद की रचनाओं के बारे में जान सकेंगे।
- प्रेमचंद की लेखन प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- प्रेमचंद की कहानी कला की विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : प्रेमचंद और उनकी कहानी कला

13.3.1 प्रेमचंद का जीवन परिचय

प्रेमचंद ने सरल-सहज हिंदी को ऐसा साहित्य प्रदान किया जिसे लोग कभी नहीं भूल सकते। बड़ी कठिन परिस्थियों का सामना करते हुए हिंदी जैसे, खूबसूरत विषय में अपनी अमिट छाप छोड़ी। प्रेमचंद हिंदी के लेखक ही नहीं बल्कि, एक महान साहित्यकार, नाटककार, उपन्यासकार होने के साथ-साथ बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। वे एक ऐसे लेखक थे जो समय के साथ बदलते गये और हिन्दी साहित्य को आधुनिक रूप प्रदान किया ।

31 जुलाई, 1880 को बनारस के एक छोटे से गाँव लमही में प्रेमचंद जी का जन्म हुआ था। प्रेमचंद जी एक छोटे और सामान्य परिवार से थे। उनके पिता का नाम अजायब राय था जो कि पोस्ट मास्टर थे। बहुत कम उम्र में उनकी माता का देहांत हो गया। ग़रीबी से लड़ते हुए प्रेमचंद ने अपनी पढ़ाई मैट्रिक तक पहुँचाई। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य, पर्शियन (फ़ारसी) और इतिहास विषयों से स्नातक की उपाधि द्वितीय श्रेणी में प्राप्त की थी। इंटरमीडिएट कक्षा में भी उन्होंने अंग्रेज़ी साहित्य एक विषय के रूप में पढा था।

प्रेमचंद जी अपने कार्यों को लेकर, बचपन से ही सक्रिय थे। प्रेमचंद ने अपना पहला उपन्यास 'देवस्थान रहस्य' लिखा। प्रेमचंद की लेखन कला ही ऐसी थी कि उनके द्वारा लिखी गई सभी कहानियाँ प्रसिद्ध हुई। उनकी कहानियों में सरलता व स्पष्टता दिखाई पड़ती है जिसकी वजह से यह आमजन को आसानी से समझ में आ जाती है। उनकी कहानियाँ मनोरंजन, भाव इत्यादि से भरी रहती है और अंत में एक शिक्षाप्रद संदेश देती है। 8 अक्टूबर, 1936 को मुंशी प्रेमचंद की बनारस में मृत्यु हो गई। उनकी मृत्यु के बाद उनकी पत्नी ने भी उनके ऊपर एक पुस्तक लिखी जिसका नाम था - प्रेमचंद घर में।

13.3.2 प्रेमचंद की रचना यात्रा

प्रेमचंद का बचपन का नाम धनपत राय था किंतु वे अपनी कहानियाँ उर्दू में नवाबराय के नाम से लिखते थे और हिंदी में मुंशी प्रेमचंद के नाम से जाने गए। प्रेमचंद ने लगभग एक दर्जन उपन्यासों एवं 300 कहानियों की रचना की। इनकी कहानियाँ मानसरोवर भाग-1 और भाग 2 में संग्रहित हैं। उन्होंने 'माधुरी' एवं 'मर्यादा' नामक पत्रिकाओं का संपादन किया तथा 'हंस' एवं 'जागरण' नामक पत्र भी निकाले। इनके प्रसिद्ध नाटकों में कर्बला, संग्राम, प्रेम की वेदी हैं। इनके प्रसिद्ध उपन्यासों में 'सेवासदन', 'रंगभूमि', 'कायाकल्प', 'निर्मला', 'गबन', 'कर्मभूमि', 'गोदान' और अधूरा उपन्यास 'मंगलसूत्र' है।

सेवासदन उपन्यास पहले उर्दू में 'बाजार ए हुस्न' के नाम से लिखा गया जो बाद में हिंदी में सेवासदन के नाम से प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में एक नारी के वेश्या बनने और उसकी पराधीनता की कहानी है। प्रेमाश्रम उपन्यास में किसान जीवन की कथा है। इस उपन्यास में कई नारी चरित्र हैं जैसे मनोहर की पत्नी अभिलाषी, विधवा गायत्री, गायत्री की बड़ी बहन विद्या आदि। 'रंगभूमि' उपन्यास में एक अंधे भिखारी सूरदास को कथा का नायक बनाकर प्रेमचंद ने अपनी बात रखी है। 'कायाकल्प' उपन्यास में अहिल्या जब यह देखती है कि ख्वाजा साहब का बेटा उसका बलात्कार करने की सोचता है तो वह उसकी हत्या कर देती है और साहब के बल पर अपनी रक्षा कर लेती है। 'निर्मला' उपन्यास में निर्मला को उपन्यास के केंद्र में रखकर अनमेल विवाह, दहेज प्रथा जैसी समस्याओं को रेखांकित किया गया है। 'प्रतिज्ञा' उपन्यास में विधवा जीवन और उसकी समस्याओं को दिखाया गया है। 'गबन' में कथा नायक रमानाथ और उनकी पत्नी जालपा के दांपत्य जीवन तथा कई समस्याओं को केंद्र में रखकर कथा का ताना-बाना बुना गया है। 'कर्मभूमि' वर्ग संघर्ष पर आधारित एक सामाजिक उपन्यास है। 'गोदान' लेखक का अंतिम पूर्ण प्रकाशित उपन्यास है जिसमें किसान जीवन की कथा को बड़े व्यापक स्तर पर अभिव्यक्ति मिली है। 'मंगलसूत्र' उपन्यास अधूरा है जो उनके पुत्र ने बाद में प्रकाशित करवाया। इस तरह यदि इनके कथा साहित्य को उठाकर देखा जाए तो एक बात स्पष्ट हो जाती है कि इनकी कहानियों, उपन्यासों, नाटकों आदि में नारी के अनेक रूप बिखरे पड़े हैं। उन्होंने प्रगतिशील विचारों वाली शिक्षित नारी की कल्पना की है क्योंकि उनके समय के समाज में नारी को उचित स्थान नहीं मिला था। बाल विवाह, विधवा विवाह, दहेज प्रथा उनके समय में खूब प्रचलित थे। तलाक की प्रथा नहीं थी परंतु पत्नी त्याग के अनेक उदाहरण मिलते थे। विधवा विवाह नहीं होते थे किंतु विधुर विवाह सामान्य थे। ग्रामीण और शहरी नारियों की जीवन शैली में अंतर था। सन 1923 में लिखा गया 'संग्राम' नाटक किसानों के मध्य व्याप्त कुरीतियों और किसानों की फिजूलखर्ची के कारण हुए कर्ज तथा कर्ज न चुका पाने के कारण अपनी फसल कम दामों में बेचने जैसी समस्याओं पर विचार करने वाला नाटक है। इन के सभी नाटक शिल्प और संवेदना के स्तर पर अच्छे हैं लेकिन कहानियाँ और उपन्यास अधिक प्रसिद्ध हैं। प्रेमचंद एक सफल अनुवादक भी रहे। उन्होंने टॉलस्टॉय की कहानियों का अनुवाद किया। बाल साहित्य के रूप में 'रामकथा', 'कुत्ते की कहानी' आदि देखे जा सकते हैं।

13.3.3 प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ

प्रेमचंद ने जो भोगा है, जो देखा है उसे निष्कपटता के साथ शब्दों में साकार कर दिया है। प्रेमचंद ने जीवन के अनुभवों से शिक्षा प्राप्त की और सच्चे अर्थों में यही वास्तविक शिक्षा होती है जो व्यक्ति को परिपक्व बनाती है। उनका संपूर्ण साहित्य उनके जीवनगत अनुभवों का निचोड़ ही है।

डॉ. कमलकिशोर गोयनका के अनुसार प्रेमचंद ने अपने जीवन में लगभग 300 से अधिक कहानियाँ तथा 18 से अधिक उपन्यास लिखे हैं। प्रेमचंद की पहली कहानी उर्दू में थी, यह संग्रह 'सोज़े वतन' (राष्ट्र का विलाप) नाम से जून 1908 में प्रकाशित हुआ। इसी संग्रह की पहली

कहानी 'दुनिया का सबसे अनमोल रतन' को आम तौर पर उनकी पहली प्रकाशित कहानी माना जाता रहा है। डॉ. गोयनका के अनुसार कानपुर से निकलने वाली उर्दू मासिक पत्रिका ज़माना के अप्रैल अंक में प्रकाशित सांसारिक प्रेम और देश-प्रेम (इश्के दुनिया और हुब्बे वतन) वास्तव में उनकी पहली प्रकाशित कहानी है। 1915 ई. में उस समय की प्रसिद्ध हिंदी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' के दिसंबर अंक में पहली बार उनकी कहानी 'सौत' नाम से प्रकाशित हुई। 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' ज़माना पत्रिका के दिसंबर के अंक में प्रकाशित हुई।

प्रेमचंद की आरंभिक कहानियाँ भावना प्रधान और आदर्शवादी हैं। वे प्रत्येक स्थिति में किसी ऊँचे आदर्श पर जाकर समाप्त होती है, उनका प्रभाव भावुकतापूर्ण और उपदेशात्मक सा प्रतीत होता है। जिन कहानियों में प्रेमचंद जी ने किसी आदर्श का चित्रण नहीं किया है, उदाहरण के लिए 'कफन', 'पूस की रात', 'नशा' आदि उन कहानियों में भी मुख्य प्रभाव परिस्थिति के विरुद्ध विद्रोह करने का ही रहा है। बीस वर्षों की इस अवधि में उनकी कहानियों के अनेक रंग देखने को मिलते हैं। उनसे पहले हिंदी में काल्पनिक, एय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएँ ही की जाती थी। प्रेमचंद ने हिंदी में यथार्थवाद की शुरूआत की। भारतीय साहित्य का बहुत सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य हो या नारी साहित्य उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई देती हैं।

13.3.4 प्रेमचंद की कहानियों का विषयपरक वर्गीकरण और सामान्य परिचय

प्रेमचंद ने हिंदी कहानियों में युगांतर उपस्थित किया है। उनका साहित्य समाज सुधार और राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत है। कहानियाँ अपने समय की सामाजिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों का पूरा प्रतिनिधित्व करती हैं। इनकी कहानियों में किसानों की दशा, सामाजिक बंधनों में तड़पती नारियों की वेदना और वर्ण व्यवस्था की कठोरता के भीतर संत्रस्त हरिजनों की पीड़ा का मार्मिक चित्रण मिलता है। मुंशी प्रेमचंद की सहानुभूति भारत की दलित जनता, शोषित किसानों, मजदूरों और उपेक्षित नारियों के प्रति रही है। समय के साथ ही उनकी कहानियों में ऐसे तत्व भी विद्यमान हैं जो उसे शाश्वत और स्थाई बनाते हैं।

प्रेमचंद जी अपने युग के उन सिद्ध कलाकारों में से थे जिन्होंने हिंदी को नवीन युग की आशा आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति का सफल माध्यम बनाया। 'मंत्र' नामक कहानी एक मर्मस्पर्शी कहानी है जिसमें विरोधी घटनाओं, परिस्थितियों और भावना का चित्रण करके लेखक ने कर्तव्य बोध का अभीष्ट प्रभाव उत्पन्न किया है। यह एक सामाजिक कहानी है। पाठक पूरी कहानी को पढ़ जाता है। भगत की अंतर्द्वंदपूर्ण मनोदशा, वेदना, कर्तव्यनिष्ठा पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करती है। 'साउथ' कहानी संवेदनशील कहानी है इसमें रजिया और दसिया दो नारी पात्र हैं। 'ठाकुर का कुआं' कहानी जातिप्रथा, भ्रष्टाचार जैसी विषमताओं को प्रतिध्वनित करती कहानी है। 'बड़े घर की बेटी' कहानी में प्रेमचंद ने भारतीय संयुक्त परिवार के मनोविज्ञान को बड़ी बारीकी से आनंदी के माध्यम से चित्रित किया है। उनका मानना है कि नारी में

आत्मसम्मान और स्वाभिमान की भावना होनी चाहिए और इसे वह आनंदी में दिखाते हैं। 'बूढ़ी काकी' कहानी में सामाजिक समस्या उठाई गई है और प्रेमचंद ने बड़ी ही करुणामय स्थितियाँ उत्पन्न की हैं जो पाठकों पर अपना सीधा प्रभाव डालती हैं। जीवन में कई बार ऐसा होता है कि इंसान को जिस वस्तु की अत्यंत आवश्यकता होती है, सुविधा होते हुए भी वह उसे नहीं ले पाता क्योंकि, उसे अपनों की आवश्यकताओं का अधिक ध्यान रहता है, प्रेमचंद ने अमीना के इस चरित्र को दर्शाया है। 'घासवाली' कहानी मुलिया के इर्द-गिर्द घूमती है। वह आत्मसम्मान से भरी हुई एक मेहनती और चरित्रवान स्त्री है। इस कहानी में दलित से जुड़ी समस्या की ओर संकेत किया गया है। 'सवासेर गेहूँ' एक सीधे-साधे किसान शंकर को केंद्र में रखकर लिखी गई है।

13.3.5 प्रेमचंद की कहानियों की विशेषताएँ

जीवन का यथार्थ अंकन प्रेमचंद की कहानियों का केंद्र बिंदु है। विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना जैसी कई विशेषताएँ प्रेमचंद की कहानियों में दृष्टिगोचर होती हैं। इनकी कहानियों में कृषि प्रधान समाज, जाति प्रथा, महाजनी व्यवस्था, रूढ़िवाद की जो गहरी समझ देखने को मिलती है अन्यत्र दिखाई नहीं देती। इनकी कहानियों में मानव जीवन की विविध समस्याओं का चित्रण व्यापक फलक पर दिखाई देता है और मालिक की समस्याएँ, मजदूरों की समस्याएँ, जमींदारों और किसानों का संघर्ष, प्राचीनता और नवीनता का संघर्ष इनकी रचनाओं के केंद्र में है। डॉ. नगेंद्र ने यह माना है कि "उन्होंने हिंदी कथा साहित्य को मनोरंजन के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया है।"

प्रेमचंद ने जिन चरित्रों का चुनाव किया है, वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से संबंधित दिखाई देते हैं लेकिन उनकी दृष्टि समाज में उपेक्षित वर्ग की ओर अधिक रही है। दोनों वर्गों के पात्रों का चित्रण करते समय उनका दृष्टिकोण अलग-अलग दिखाई देता है। उन्होंने आदर्श और यथार्थ को विशेष महत्व दिया और एक बात बहुत विशेष रूप से देखी जा सकती है कि उनके चरित्र वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में आते हैं। जैसे-जैसे घटनाओं का विकास होता है, उसके साथ ही उनके चरित्रों का विकास भी देखा जा सकता है। चरित्रों के संवाद बड़े ही मनोवैज्ञानिक ढंग के होते हैं। उन्होंने दहेज को लेकर, बेमेल विवाह को लेकर, शोषण को लेकर, स्थान-स्थान पर विरोध दर्शाया है। वह ना तो अतीत की ओर गए हैं और ना ही भविष्य के प्रति मोह दिखाया है, इसके विपरीत वर्तमान में जीते हुए बड़ी ही ईमानदारी से देखे-भोगे समय का लेखा-जोखा अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है। इनका भाषा प्रयोग बड़ा ही सरल एवं सहज है। उन्होंने सामान्य मानवीय व्यापारों को मनोवैज्ञानिकता से जोड़कर प्रस्तुत किया है। हिंदी और उर्दू दोनों प्रकार की शैलियाँ इनकी कहानियों में दिखाई देती हैं।

प्रेमचंद के चरित्र जो भाषा बोलते हैं वह उनके व्यक्तित्व के अनुकूल है। इनके महिला चरित्र मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करते हैं। नारियों के प्रति उनका दृष्टिकोण अलग रहा है। उनके मन में नारियों के प्रति एक विशेष प्रकार की श्रद्धा थी, यही कारण है कि उनकी कहानियों में नारियों के प्रति बड़ी ही सहानुभूति और सम्मानपरक अभिव्यक्ति हुई है। आदर्श, त्याग, सेवा और पवित्रता को नारी का स्वभाव मानते थे। उन्होंने विधवा विवाह का समर्थन

किया है और बेमेल विवाह, तलाक के प्रति लोगों को सचेत किया है। उनका यह मानना रहा है कि नारी अपने अधिकारों के लिए सदैव संघर्षरत रही।

प्रेमचंद की कहानियाँ मानसरोवर भाग 1 और भाग 2 में संग्रहित हैं। ठाकुर का कुआं, पूस की रात, बड़े घर की बेटी, बूढ़ी काकी, ईदगाह, घासवाली, सवा सेर गेहूँ, गुल्ली डंडा, सद्गति आदि कहानियों में प्रेमचंद के विभिन्न दृष्टिकोण दिखाई देते हैं। इन कहानियों के प्रभावी नारी चरित्रों में सौत की रजिया और दसिया, ठाकुर का कुआं की गंगी, पूस की रात की मुन्नी, बड़े घर की बेटी की आनंदी, बूढ़ी काकी की रूपा और लाडली, ईदगाह की अमीना आदि महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इनकी कहानियों में संवेदनशीलता दिखाई देती है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं और साहित्य का केंद्र बिंदु मानव जीवन है। इस तरह इनकी कहानियों के केंद्र में समाज और मानव जीवन है।

13.3.6 प्रेमचंद की कहानियों में आदर्श और यथार्थ

प्रेमचंद हिंदी साहित्य के युग प्रवर्तक हैं। उन्होंने हिंदी कहानी में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की एक नई परंपरा शुरू की। इनकी कहानियों में सामान्य जीवन की वास्तविकताओं का सम्यक चित्रण किया गया है। समाज सुधार एवं राष्ट्रीयता उनकी कहानियों के प्रमुख विषय रहे हैं।

प्रेमचंद जी ने कहा है कि 'साहित्य यथार्थ और आदर्शवाद का समन्वय है नग्न यथार्थ पुलिस की रिपोर्ट भर है तो यथार्थवाद आदर्श प्लेटफार्म का फतवा।' वे यथार्थ को साहित्य के लिए अनिवार्य मानते हैं, लेकिन यथार्थ के अतिवादी रूप को उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। प्रेमचंद समाज में यथार्थ को ही देखना चाहते हैं और आदर्श को भी नहीं भूल पाते, दोनों के अतिरेक रूप के समर्थक नहीं हैं। उनके अनुसार यथार्थ को सजीव बनाने के लिए आदर्श का उपयोग होना ही चाहिए। इस दृष्टि से उनकी प्रतिनिधि कहानियों में 'बड़े घर की बेटी', 'नमक का दरोगा', 'दुर्गा का मंदिर', 'सज्जनता का दंड', 'पंच परमेश्वर' और 'मृत्यु के पीछे' आदि को लिया जा सकता है। प्रेमचंद जी की कहानियों के पात्र और उनके परिवेश तो यथार्थ दिखाई देता है। लेकिन इन पात्रों का आचरण और उसे प्रभावित करने वाली सोच अपने मूल रूप में आदर्शवादी ही माने जा सकते हैं।

प्रेमचंद जी के उपन्यास 'गोदान' में - गाँव में पंचायत होना, गौ हत्या, गोबर का झुनिया से विवाह, मातादीन सिलिया चमारी से अवैध संबंध - यह सभी प्रसंग लेखक ने एक सामाजिक विकृति और यथार्थ चित्रण के लिए किया है।

13.3.7 प्रेमचंद की कहानियों की भाषा

मुंशी प्रेमचंद उर्दू से हिंदी में आए थे पहले वह नवाब राय के नाम से उर्दू में लिखा करते थे। उनकी भाषा में उर्दू की सुस्त लोकोक्तियाँ और मुहावरे के प्रयोग की प्रचुरता दिखाई देती है जैसे बूढ़ी काकी कहानी से एक उदाहरण देखा जा सकता है। बूढ़ी काकी का बड़ा ही

मनोवैज्ञानिक चित्रण प्रेमचंद जी ने किया है जब कड़ाही से गरम-गरम पूरियाँ छनकर निकलती हैं तो उनके विचार देखें-

"फूल हम घर में भी सूंघ सकते हैं परंतु वाटिका में कुछ और बात होती है।"

इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण देखा जा सकता है। बूढ़ी काकी पर रूपा गुस्से से इस प्रकार झपटती है जैसे-

"मेंढक केंचुए पर झपटता है।"

इनकी भाषा सरल, सहज, व्यावहारिक, प्रवाहपूर्ण, मुहावरेदार एवं प्रभावशाली है तथा उसमें अद्भुत व्यंजना शक्ति भी विद्यमान है। इनकी भाषा पात्रों के अनुसार परिवर्तित हो जाती है। भाषा में सादगी और आलंकारिकता का समन्वय विद्यमान है। 'बड़े भाई साहब', 'नमक का दरोगा', 'पूस की रात', 'सौत', 'बूढ़ी काकी', 'ईदगाह', 'ठाकुर का कुआं', 'सद्गति', 'कफ़न' जैसी अनेक कहानियों में भाषा के नए-नए प्रयोग दिखाई देते हैं। लाक्षणिक भाषा का खूब प्रयोग हुआ है जैसे-

'डायन ना मरे ना माचा छोड़े।'

'ईदगाह' में अमीना सोचती है- 'इस निगोड़ी ईद को किसने बुलाया इस घर में उसका काम नहीं।'

एक स्थान पर प्रेमचंद कहते हैं- 'बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पाठ खेला था। बुढ़िया अमीना बालिका अमीना बन गई। वह रोने लगी। दामन फैलाकर हामिद को दुआएँ देती जाती थी।'

भाषा में मुहावरों का प्रयोग लेखक के उद्देश्य को पूरा करता है तथा भाषा को संप्रेषण युक्त बनाता है।

घासवाली कहानी से एक उदाहरण लिया जा सकता है-'मैं चमारिन होकर भी इतनी कमीनी नहीं हूँ कि जो अपने ऊपर भरोसा करे उसके साथ दगा करूँ। हाँ, महावीर अपने मन की करने लगे, मेरी छाती पर मूंग दले तो मैं भी उसकी छाती पर मूंग दलूंगी।'

13.3.8 प्रेमचंद की कहानियों में शैली वैविध्य

शैलियों का प्रयोग साहित्य को सौंदर्य प्रदान करता है। प्रेमचंद की कहानियों की शैलियाँ आकर्षक हैं। इनमें मार्मिकता है। इनकी रचनाओं में अनेक प्रकार के शैलियाँ दिखाई देती हैं जैसे :

- वर्णनात्मक शैली
- व्यंग्यात्मक शैली
- भावात्मक शैली
- विवेचनात्मक शैली

- प्रतीकात्मक शैली
- बिंबात्मक शैली
- लाक्षणिक शैली
- हास्य एवं व्यंग्य शैली
- संवाद शैली आदि

'घासवाली' कहानी से एक उदाहरण संवाद शैली के लिए लिया जा सकता है। मुलिया चैन सिंह से कहती है-

'मैं नीच जात हूँ और नीच जात की औरत जरा भी आरजू विनती या जरा से लालच या जरा सी धमकी से काबू में आ जाती है। कितना सस्ता सौदा है ठाकुर होना?'

वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करते हुए लेखक स्थितियों का स्थान वर्णन करते चलते हैं।

लाक्षणिक शैली का उदाहरण बूढ़ी काकी कहानी में देखा जा सकता है- 'फूल हम घर में भी सूंघ सकते हैं परंतु वाटिका में कुछ और बात होती है।'

भावात्मक शैली का प्रयोग प्रेमचंद ने अपनी कई कहानियों में किया है जैसे पूस की रात में मुन्नी कहती है- 'कोई खैरात दे देगा कम्मल? न जाने कितने बाकी हैं जो किसी तरह चुकने ही नहीं आते, मैं कहती हूँ तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आए। रुपये ना दूँगी, ना दूँगी।'

13.3.9 प्रेमचंद की कहानी कला की विवेचना

भारतीय इतिहास के संधिकाल में कथा सम्राट प्रेमचंद का आविर्भाव हुआ। उस समय गुलाम भारत के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक विसंगतमयी अस्त-व्यस्त परिदृश्य का मानचित्र अंग्रेजी साम्राज्यवादी शोषण नीतियों से और ज्यादा दयनीय होकर बिखर चुका था। यही कारण है कि 1905 ई. में रूसी क्रांति के पश्चात समस्त एशिया के साथ-साथ भारतीय जन आंदोलन भी जागरूकता व विद्रोह की नई लहरों से उद्वेलित हो उठा। उसी समय उत्तर प्रदेश के दक्षिणी हिस्से में 'सोज़े वतन' नामक छोटी-छोटी कहानियों का संग्रह प्रकाशित हुआ जिसमें पाँच छोटी कहानियाँ संग्रहित थीं। देशप्रेम की भावना इन पृष्ठों में सांस ले रही थी। इसके लेखक प्रेमचंद थे। इनके साहित्यिक जीवन का सूत्रपात इसी तरह हुआ।

विषयगत विविधता और शोषितों के प्रति मानवतावाद तथा उनके लिए आजादी के अधिकार को सर्वमान्य करने हेतु प्रेमचंद के अथक प्रयत्नों ने उन्हें समस्त बंधनों से ऊपर उठा कर अखिल भारतीय लेखक की मर्यादा में प्रतिष्ठित किया। प्रेमचंद के अमूल्य योगदान से आज कहानी विधा विषय, कथ्य, शिल्प की दृष्टि से नए-नए आयामों को आत्मसात करती हुई संतोषजनक पड़ाव को तय कर चुकी है। इनकी सार्थक कहानी कला के विषय में कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के भावपक्ष की विविधता और गहनता इसकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की द्योतक है।

विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना की दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियाँ अद्वितीय हैं। चाहे पंच परमेश्वर हो, आत्माराम या बड़े घर की बेटी अथवा शतरंज के खिलाड़ी हो, नशा या पूस की रात अथवा ठाकुर का कुआं यह सभी कहानियाँ विश्व की श्रेष्ठ कहानियों की पंक्ति में आगे खड़ी होती हैं। प्रेमचंद की कहानी कला को कई आयामों में देखा जा सकता है।

प्रेमचंद की कहानियों में जीवन का यथार्थ अंकन दिखाई देता है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं और साहित्य का केंद्र बिंदु मानव जीवन है। साहित्य में प्रभाव उत्पन्न करने के लिए जीवन की सच्चाई यों का होना आवश्यक है। प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं।

'हिंदी कहानी का इतिहास' में डॉ. गोपाल राय ने प्रेमचंद की कहानियों में किसानों और तत्कालीन सरकार के रिश्ते के चित्रण के बारे में यह लिखा है कि -

> "प्रेमचंद अपनी कहानियों में प्रायः किसानों के प्रति औपनिवेशिक शासन के कर्तव्य की याद दिला कर जनता को सजग बनाने का भी प्रयास करते हैं। 'प्रतिज्ञा' में एक लोककथा के व्याज से प्रजा के प्रति राजा के कर्तव्य की याद दिखाई गई है, जो शायद तत्कालीन औपनिवेशिक शासन को संबोधित है। यह प्रजा पर अकाल जैसा संकट पड़ने पर शासक के कर्तव्य का चित्रण करने वाली कहानी है। औपनिवेशिक शासन अकाल पड़ने पर भी जनता के कष्ट की उपेक्षा करते हुए, उससे कठोरतापूर्वक लगान वसूलने की नीति में विश्वास करता था। 'सेवामार्ग' कहानी में भी एक मिथकीय कथा के माध्यम से प्रजा के प्रति राजा के कर्तव्य की याद दिलाई गई है।" (हिंदी कहानी का इतिहास, पृ. 87)

प्रेमचंद ने अपनी कहानी कला में सौंदर्यवाद व उपयोगितावाद को विशेष महत्व दिया है। उनकी दृष्टि में साहित्यकार पैदा होता है बनाया नहीं जाता। उसका लक्ष्य केवल महफ़िल सजाना और मनोरंजन के साधन जुटाना नहीं, वह देशभक्ति, राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं है अपितु उनके आगे मशाल दिखाती सच्चाई है। वह मानते हैं कि अन्याय, प्रभुत्व आदि के विरुद्ध मानव के मन में जो विद्रोह जल उठता है वही साहित्य है।

प्रेमचंद की कहानी कला में मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना दिखाई देती है। जीवन में जो कुछ सत्य शिव और सुंदर है उसी को दर्शाना लेखक का मुख्य उद्देश्य रहा परंतु यथार्थ चित्रण के लिए साहित्य की उपयोगिता को तिरस्कृत नहीं किया। सदैव सत्य व न्याय की विजय चाही यदि यथार्थवाद से यह विजय असंभव लगती वहाँ आदर्श से समझौता कर सुधारवाद व हृदय परिवर्तन द्वारा विजय घोषित करने से परहेज नहीं करते। आलोचकों ने इस समझौतावादी प्रवृत्ति को यथार्थवाद का नाम दिया।

प्रेमचंद की कहानी कला में विषय वस्तु या कथ्य का सौंदर्य अलग से दिखाई देता है। यह आधुनिक कहानी को पूर्ववर्ती कहानी से सर्वथा अलग मानते हैं। इनकी कहानियों में जनसाधारण की समस्याओं को देखा जा सकता है। संयुक्त परिवार का विघटन, अलगाव,

विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बाल विवाह, राष्ट्रद्रोह, घूसखोरी, बहु-विवाह, अंधविश्वास, ग्रामीण शोषण, आर्थिक वैषम्य, अनमेल विवाह, वेश्यावृत्ति, राष्ट्रीय जागरण, धर्म की राजनीति, महाजनी सभ्यता आदि अनेक विषयों को समय के प्रेमचंद की कहानियाँ पाठकों से भावनात्मक नाता जोड़ लेती हैं। प्रेमचंद की संपूर्ण कहानियों को आरंभ काल, विकास काल और उत्कर्ष काल में बाँट कर देखा जा सकता है। प्रारंभ काल की कहानियाँ आदर्शवादी, विकास काल की कहानियाँ आदर्शोंमुखी, उत्कर्ष काल की कहानियाँ कलात्मक दृष्टि से उत्कृष्ट दिखाई देती हैं।

पात्र चरित्र चित्रण की दृष्टि से प्रेमचंद को सफलता मिली है। उनका मानना है कि- 'मानवीय चरित्र इतना जटिल है कि बुरे से बुरा आदमी भी देवता हो जाता है और अच्छे से अच्छा आदमी पशु पर वास्तव में मानव स्थितियों के हाथ का खिलौना मात्र है।' प्रेमचंद की कहानियों को पढ़कर यह पता नहीं चलता कि उनकी कहानियाँ घटना प्रधान हैं या चरित्र प्रधान। यही कारण है कि इनके पात्रों को ना परिचय की जरूरत है ना व्याख्या की। चरित्र चित्रण की दृष्टि से कहानियाँ पात्रों के व्यक्तित्व की स्थूलता के स्थान पर आंतरिक सूक्ष्मता पर टिकी हैं। प्रेमचंद स्वयं यह मानते हैं कि जो लेखक मानव हृदय के रहस्यों को खोलने में सक्षम है उसी की रचना सफल है। वह उन्हीं पात्रों का सफल चित्रण कर सकता है जिनसे वह निजी अनुभव से परिचित है।

संवाद, मनोविज्ञान, देशकाल वातावरण, भाषा-शैली, उद्देश्य, मानवतावाद आदि ऐसे अनेक आयाम हैं जो प्रेमचंद की कहानियों में विशेष रूप से दिखाई देते हैं। भले ही प्रेमचंद उपन्यास सम्राट माने जाते हैं किंतु कहानी के क्षेत्र में भी उनकी कहानियाँ समाज और मानव से जुड़ी हुई हैं।

बोध प्रश्न

- प्रेमचंद जी ने साहित्य को किस का समन्वय कहा है?
- प्रेमचंद जी की रचनाओं में कौन सी शैलियाँ मिलती हैं?
- प्रेमचंद की कहानियों की कुछ विशेषताएँ बताइए।
- संग्राम नाटक किस विषय पर आधारित है?
- प्रेमचंद की कहानी कला में किसको महत्व दिया गया है?

13.4 पाठ सार

प्रेमचंद की कहानी कला में अनेक गुण समाहित हैं। प्रेमचंद ने समकालीन घटनाओं को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। लेखक के लिए जीवन नए-नए अनुभव की पाठशाला जान पड़ता है। इनकी कहानियों में जीवन का यथार्थ अंकन है। उन्होंने यथार्थवाद, मानवतावाद, मार्मिक संवेदना और मनोविज्ञान का दामन पकड़ कर जनता के मर्म को गहराई से स्पर्श किया है। कफन, पूस की रात, जुर्माना, नशा, सद्गति आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। इसी प्रकार इनकी कहानियों में सौंदर्य और उपयोगिता के आयाम दिखाई देते हैं। मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना इनकी कहानियों की विशेषता है। इन्होंने अपनी कहानियों में समस्याएँ बताईं और समाधान आदर्शवाद में खोजा। प्रेमचंद ने आधुनिक कहानी

को पूर्ववर्ती कहानी से अलग माना है। भारतीय जन चेतना में आया असाधारण परिवर्तन उनकी रचनाओं में परिलक्षित होता है। ठाकुर का कुआं, नमक का दरोगा, सवा सेर गेहूँ जैसी कहानियाँ सामाजिक व्यवस्था व अंधविश्वासों पर प्रहार करती हैं। इन्होंने घटना प्रधान कहानियों के स्थान पर चरित्र प्रधान कहानियों को अधिक महत्व दिया है।

प्रेमचंद की कहानियाँ विशुद्ध भारतीय संस्कृति की व्यापकता को सहेजे हुए हैं। इनकी कहानियों में मनोवैज्ञानिक अनुभूतियाँ जीवंत हुई हैं। इनकी रचना दृष्टि समकालीन जीवन सत्यों से निर्मित होने के कारण बहुरंगी वर्गों के पात्र, मजदूर, किसान, पूँजीपति, जमींदार, दलित, महाजन, शहरी-ग्रामीण, मालिक-नौकर आदि के आपसी सामाजिक व आर्थिक संबंधों-संघर्षों आदि को बेहद आत्मीयता पूर्ण अभिव्यक्ति देते हैं। उन्होंने विराट मानवतावादी दृष्टि से व्यक्ति को सामाजिक इकाई के रूप में मान्यता दी है।

कहानी के रचना विधान को निरंतरता व विकासशील पक्ष की ओर उन्मुख करने में इनके संवाद विशेष भूमिका निभाते हैं। देशकाल, वातावरण, मानवतावाद जैसे आयाम इनकी कहानियों के प्राण हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि भाव, भाषा, कला, शैली आदि सभी दृश्यों से प्रेमचंद कथा साहित्य के प्रणेता हैं।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से प्रेमचंद और उनकी कहानी कला के बारे में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. कथा-सम्राट प्रेमचंद ने 300 से अधिक कहानियों तथा 18 से अधिक उपन्यासों की रचना की।
2. प्रेमचंद की पहली कहानी 'इश्के दुनिया और हुब्बे वतन' (सांसारिक प्रेम और देश-प्रेम) कानपुर से निकलने वाले उर्दू मासिक 'ज़माना' में अप्रैल 1908 में प्रकाशित हुई थी।
3. प्रेमचंद का पहला कहानी-संग्रह 'सोज़े वतन' (राष्ट्र का विलाप) नाम से जून 1908 में उर्दू में प्रकाशित हुआ था।
4. 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' ज़माना पत्रिका में दिसंबर 1910 में प्रकाशित हुई।
5. दिसंबर 1915 ई. में हिंदी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानी 'सौत' प्रेमचंद की पहली हिंदी कहानी है।
6. विषयगत विविधता और शोषितों के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण तथा उनके लिए आजादी के अधिकार को सर्वमान्य करने हेतु प्रेमचंद के अथक प्रयत्नों ने उन्हें समस्त बंधनों से ऊपर उठा कर अखिल भारतीय लेखक की मर्यादा में प्रतिष्ठित किया।
7. प्रेमचंद के भावपक्ष की विविधता और गहनता उनकी कलात्मकता व साहित्यिक महत्ता की द्योतक है।

8. विषय की व्यापकता, चरित्र चित्रण की सूक्ष्मता, सशक्त संवाद, सजीव वातावरण, भाषा की गंभीरता, प्रवाहमयी शैली और लोक संग्रह की भावना की दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियाँ अद्वितीय हैं।

13.6 शब्द संपदा

1. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
2. अथाह = थाहहीन
3. अनुभूत करना = महसूस करना
4. अल्प वेतन = कम वेतन
5. अस्त-व्यस्त = बिखरा हुआ
6. आकर्षक = आकर्षण युक्त
7. आतुर = व्याकुल
8. आविर्भाव = आगमन
9. उद्भव = जन्म
10. उपसंहार = समापन
11. गहनता = गंभीरता
12. घूसखोर = घूस खाने वाले
13. चिंतन मनन = सोच विचार
14. जागरूकता = चेतना जगाना
15. ताड़ना = प्रताड़ित करना
16. तुच्छ से तुच्छ = छोटी से छोटी
17. दरिद्रता = गरीबी
18. दिलचस्पी = रुचि
19. निष्ठुर = कठोर
20. पड़ाव = मंजिल
21. पारिभाषिक = विशेष परिभाषा में बंधी हुई
22. प्रचलित = प्रचारित या लोकप्रिय
23. प्रस्तावना = भूमिका या विषय प्रवेश

24. भावात्मक = भावना प्रधान

25. मूक = मौन

26. यथार्थ = वास्तविक

27. रूढ़ियाँ = पुरानी परंपराएँ

28. रोचक = रुचिकर

29. लेखन शैली = लिखने का तरीका

30. वर्णनात्मक = वर्णन से युक्त

31. विचारणीय = विचार करने योग्य

32. विचार-विनिमय = विचारों का परस्पर आदान-प्रदान

33. विचारात्मक = चिंतन से युक्त

34. विधा = तरीका या ढंग

35. विशिष्ट = विशेष

36. विस्तार = विकास

37. संगति = दूसरे व्यक्ति का साथ

38. समकालीन = अपने समय की

39. समुचित प्रयोग = उचित प्रयोग

40. सर्वाधिक = सबसे अधिक

41. सीमित आकार में = छोटे रूप में

42. सूत्रपात = प्रारंभ

43. स्वच्छन्दता = मनमाना या स्वइच्छानुकुल

44. स्वाध्याय = स्वयं अध्ययन करना

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. कहानी का उद्भव और विकास बताते हुए उसके प्रकारों की चर्चा कीजिए।
2. कहानी की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. कहानी परंपरा में प्रेमचंद का स्थान निर्धारित कीजिए।

4. कहानी का महत्व बताते हुए गद्य साहित्य में उसका स्थान निर्धारित कीजिए।
5. प्रेमचंद की कहानी कला का विस्तार से विवेचन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मानव और समाज पर कहानी का क्या प्रभाव पड़ता है?
2. कहानी की विशेषताएँ लिखिए।
3. कहानी के कितने तत्व माने जाते हैं?
4. कहानी लेखन की विधियों की चर्चा कीजिए।
5. प्रेमचंद युग के कहानीकारों का परिचय दीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. पहले कहानीकार हैं- ( )
   (अ) प्रेमचंद (ब) मौन्तैन (स) इंशा अल्लाह खान
2. गोदान उपन्यास लिखा गया है- ( )
   (अ) जयशंकर प्रसाद (ब) प्रेमचंद (स) बालकृष्ण भट्ट
3. निराला इस युग के कहानीकार हैं - ( )
   (अ) द्विवेदी युग (ब) शुक्ल युग (स) प्रेमचंद युग
4. कहानी के तत्व हैं - ( )
   (अ) छः (ब) दो (स) पांच

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. जीवन के अनुभवों ने प्रेमचंद को सिखाया कि........ मनुष्य अधिक आदरणीय है।
2. प्रेमचंद साहित्य को.......... मानते हैं।
3. ईदगाह कहानी........... द्वारा लिखित है।
4. साहित्य का............ मानव जीवन है।
5. प्रेमचंद ने......... गहराई से स्पर्श किया।

III. सुमेल कीजिए -

1. कफन	(अ) आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानीकार
2. मंगलसूत्र	(आ) जन्म स्थान
3. प्रेमचंद	(इ) अधूरा उपन्यास
4. लमही	(ई) कहानी

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. गद्य यात्रा : श्रीराम शर्मा
2. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : रामकुमार वर्मा
3. साहित्यिक निबंध : गणपति चंद्र गुप्त
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
5. हिंदी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी
6. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी
7. कहानी कला और प्रेमचंद : श्रीपति शर्मा

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 14 : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 मूल पाठ : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण
14.3.1 कथावस्तु
14.3.2 पात्र परिकल्पना और चरित्र चित्रण
14.3.3 देशकाल (परिवेश) चित्रण
14.3.4 कथोपकथन या संवाद योजना
14.3.5 भाषा-शैली
14.3.6 उद्देश्य
14.3.7 शीर्षक का औचित्य
14.3.8 'नमक का दरोगा' की विशेषताएँ एवं महत्व
14.4 पाठ सार
14.5 पाठ की उपलब्धियाँ
14.6 शब्द संपदा
14.7 परीक्षार्थ प्रश्न
14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

कहानी गद्य लेखन की एक प्रमुख विधा है। हिंदी में प्रेमचंद को सर्वश्रेष्ठ कहानीकार माना जाता है। 'नमक का दरोगा' प्रेमचंद की एक प्रसिद्ध कहानी है जिसमें विभिन्न प्रकार के भ्रष्टाचारों का वास्तविक चित्रण दिखाई देता है। जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वर प्रदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया तो लोग चोरी-छिपे इसका व्यापार करने लगे और अनेक प्रकार के प्रपंचों का सूत्रपात हुआ। घूसखोरी बढ़ गई। अधिकारियों के पौबारह हो गए, ऐसी स्थिति आ गई कि पटवारी जैसा सम्मानित पद छोड़कर लोग इस विभाग की ओर आकर्षित होने लगे। इसके दरोगा पद के लिए तो वकीलों का भी मन जाने लगा। यह कहानी समाज की यथार्थ स्थिति को उद्घाटित करती है। ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठ समाज का निर्माण करना ही लेखक का उद्देश्य है जो इस कहानी के माध्यम से व्यक्त होता है।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- 'नमक का दरोगा' कहानी के कथानक से परिचित हो सकेंगे।
- इस कहानी के पात्रों और उनके चरित्र को समझ सकेंगे।
- इस कहानी में वर्णित देशकाल से अवगत हो सकेंगे।
- इस कहानी में प्रयुक्त संवादों की विशेषता जान सकेंगे।
- इस कहानी की भाषा-शैली की विवेचना कर सकेंगे।
- इस कहानी के उद्देश्य और नामकरण के आधार को समझ सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : 'नमक का दरोगा' (प्रेमचंद) : तात्विक विश्लेषण

14.3.1 कथावस्तु

नमक का दरोगा प्रेमचंद द्वारा रचित कहानी है। इसमें एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी को बताया गया है जिसने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। यह कहानी धन के ऊपर धर्म के जीत की है। कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है और उसे सम्मानित भी किया गया है।

नमक का विभाग बनने के बाद लोग नमक का व्यापार चोरी छिपे करने लगे। इस काले व्यापार से भ्रष्टाचार बढ़ा। अधिकारियों के पौ-बारह थे। लोग दरोगा के पद के लिए लालायित थे। मुंशी वंशीधर भी रोजगार को प्रमुख मानकर इसे खोजने चले। इनके पिता अनुभवी थे। उन्होंने घर की दुर्दशा तथा अपनी वृद्धावस्था का हवाला देकर नौकरी में पद की ओर ध्यान न देकर ऊपरी आय वाली नौकरी को बेहतर बताया। वे कहते हैं कि मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। आवश्यकता व अवसर देखकर विवेक से काम करो। वंशीधर ने पिता की बातें ध्यान से सुनी और चल दिए। धैर्य, बुद्ध, आत्मावलंबन व भाग्य के कारण नमक विभाग के दरोगा पद पर प्रतिष्ठित हो गए। घर में खुशी छा गई।

सर्दी के मौसम की रात में नमक के सिपाही नशे में मस्त थे। वंशीधर ने छह महीने में ही अपनी कार्यकुशलता व उत्तम आचार से अफसरों का विश्वास जीत लिया था। यमुना नदी पर बने नावों के पुल से गाड़ियों की आवाज सुनकर वे उठ गए। उन्हें गोलमाल की शंका थी। जाकर देखा तो गाड़ियों की कतार दिखाई दी। पूछताछ पर पता चला कि ये पंडित अलोपीदीन की है। वह इलाके का प्रसिद्ध जमींदार था जो ऋण देने का काम करता था। तलाशी ली तो पता चला कि उसमें नमक है। पंडित अलोपीदीन अपने सजीले रथ में ऊँघते हुए जा रहे थे तभी गाड़ी वालों ने गाड़ियाँ रोकने की खबर दी। पंडित सारे संसार में लक्ष्मी को प्रमुख मानते थे। न्याय, नीति सब लक्ष्मी के खिलौने हैं। उसी घमंड में निश्चित होकर दरोगा के पास पहुँचे। उन्होंने कहा कि मेरी सरकार तो आप ही हैं। आपने व्यर्थ ही कष्ट उठाया। मैं सेवा में स्वयं आ ही रहा था।

वंशीधर पर ईमानदारी का नशा था। उन्होंने कहा कि हम अपना ईमान नहीं बेचते। आपको गिरफ्तार किया जाता है।

यह आदेश सुनकर पडित अलोपीदीन हैरान रह गए। यह उनके जीवन की पहली घटना थी। बदलू सिंह उसका हाथ पकड़ने से घबरा गया, फिर अलोपीदीन ने सोचा कि नया लड़का है। दीनभाव में बोले - आप ऐसा न करें। हमारी इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। वंशीधर ने साफ मना कर दिया। अलोपीदीन ने चालीस हजार तक की रिश्वत देनी चाही, परंतु वंशीधर ने उनकी एक न सुनी। धर्म ने धन को पैरों तले कुचल डाला।

सुबह तक हर जबान पर यही किस्सा था। पंडित के व्यवहार की चारों तरफ निंदा हो रही थी। भ्रष्ट व्यक्ति भी उसकी निंदा कर रहे थे। अगले दिन अदालत में भीड़ थी। अदालत में सभी पडित अलोपीदीन के माल के गुलाम थे। वे उनके पकड़े जाने पर हैरान थे। इसलिए नहीं कि अलोपीदीन ने क्यों यह कर्म किया बल्कि इसलिए कि वह कानून के पंजे में कैसे आए? इस आक्रमण को रोकने के लिए वकीलों की फौज तैयार की गई। न्याय के मैदान में धर्म और धन में युद्ध ठन गया। वंशीधर के पास सत्य था, गवाह लोभ से डाँवाडोल थे।

मुंशी जी को न्याय में पक्षपात होता दिख रहा था। यहाँ के कर्मचारी पक्षपात करने पर तुले हुए थे। मुकदमा शीघ्र समाप्त हो गया। डिप्टी मजिस्ट्रेट ने लिखा कि पंडित अलोपीदीन के विरुद्ध प्रमाण आधारहीन है। वे ऐसा कार्य नहीं कर सकते। दरोगा का दोष अधिक नहीं है, परंतु एक भले आदमी को दिए कष्ट के कारण उन्हें भविष्य में ऐसा न करने की चेतावनी दी जाती है। इस फैसले से सबकी बाँछे खिल गई। खूब पैसा लुटाया गया जिसने अदालत की नींव तक हिला दी। वंशीधर बाहर निकले तो चारों तरफ से व्यंग्य की बातें सुनने को मिलीं। उन्हें न्याय, विद्वता, उपाधियाँ आदि सभी निरर्थक लगने लगे।

वंशीधर की बर्खास्तगी का पत्र एक सप्ताह में ही आ गया। उन्हें कर्तव्यपरायणता का दंड मिला। दुखी मन से वे घर चले। उनके पिता खूब बड़बड़ाए। यह अधिक ईमानदार बनता है। जी चाहता है कि तुम्हारा और अपना सिर फोड़ लें। उन्हें अनेक कठोर बातें कहीं। माँ की तीर्थयात्रा की आशा मिट्टी में मिल गई। पत्नी कई दिन तक मुँह फुलाए रही।

एक सप्ताह के बाद अलोपीदीन सजे रथ में बैठकर मुंशी के घर पहुँचे। वृद्ध मुंशी उनकी चापलूसी करने लगे तथा अपने पुत्र को कोसने लगे। अलोपीदीन ने उन्हें ऐसा कहने से रोका और कहा कि कुलतिलक और पुरुषों की कीर्ति उज्ज्वल करने वाले संसार में ऐसे कितने धर्मपरायण मनुष्य हैं जो धर्म पर अपना सब कुछ अर्पण कर सकें। उन्होंने वंशीधर से कहा कि इसे खुशामद न समझिए। आपने मुझे पराया कर दिया। वंशीधर ने सोचा कि वे उसे अपमानित करने आए हैं, परंतु पंडित की बातें सुनकर उनका संदेह दूर हो गया। उन्होंने कहा कि यह आपकी उदारता है। आज्ञा दीजिए।

अलोपीदीन ने कहा कि नदी तट पर आपने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी, अब स्वीकार करनी पड़ेगी। उसने एक स्टांप पत्र निकाला और पद स्वीकारने के लिए प्रार्थना की। वंशीधर ने पढ़ा। पंडित ने अपनी सारी जायदाद का स्थायी मैनेजर छह हजार वार्षिक वेतन, रोजाना खर्च,

सवारी, बंगले आदि के साथ नियत किया था। वंशीधर ने काँपते स्वर में कहा कि मैं इस उच्च पद के योग्य नहीं हूँ। ऐसे महान कार्य के लिए बड़े अनुभवी मनुष्य की जरूरत है।

अलोपीदीन ने वंशीधर को कलम देते हुए कहा कि मुझे अनुभव, विद्वता, मर्मज्ञता, कार्यकुशलता की चाह नहीं। परमात्मा से यही प्रार्थना है कि वह आपको सदैव वही नदी के किनारे वाला बेमुरौवत, उद्दंड, कठोर, परंतु धर्मनिष्ठ दरोगा बनाए रखे। वंशीधर की आँखें डबडबा आई। उन्होंने काँपते हुए हाथ से मैनेजरी के कागज पर हस्ताक्षर कर दिए। अलोपीदीन ने उन्हें गले लगा लिया।

बोध प्रश्न

- नमक का विभाग बनने के बाद नमक का व्यापार कैसे होने लगा?
- नमक का दरोगा में किसकी कहानी है?
- कहानी में मानव मूल्यों का कौन सा रूप दिखाया गया है?

14.3.2 पात्र परिकल्पना और चरित्र चित्रण

कहानी का संचालन उसके पात्रों के द्वारा ही होता है तथा पात्रों के गुण-दोष को उनका 'चरित्र चित्रण' कहा जाता है। 'नमक का दरोगा' कहानी के पात्रों का चयन बहुत ही सटीक एवं उपयुक्त हैं। बंसीधर, अलोपीदीन तथा वंशीधर के पिता इन सभी पात्रों का चयन विषय वस्तु से युक्त और कहानी के अनुरूप किया गया है ।

चरित्र चित्रण से विभिन्न चरित्रों में स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है। संवाद कहानी का प्रमुख अंग होते हैं। इनके द्वारा पात्रों के मानसिक अंतर्द्वंद्व एवं अन्य मनोभावों को प्रकट किया जाता है। लेखक ने पात्रों की मन:स्थिति का यथा-योग्य विवरण प्रस्तुत किया है। पात्रों की वृत्तियाँ, सोच तथा कार्य शैली का मनोहारी और रोचक वर्णन किया गया है। लेखक ने उनके अनुभव तथा विचार शक्ति एवं परिस्थिति का आकर्षक एवं पाठक को बाँधकर रखने वाला चरित्र-चित्रण किया है। पंडित अलोपीदीन व्यवहार कुशल हैं जिसका एक उदाहरण देखा जा सकता है -

पंडित अलोपीदीन ने हंसकर कहा, 'हम सरकारी हुक़्म को नहीं जानते और न सरकार को हमारे सरकार तो आप ही हैं हमारा और आपका तो घर का मामला है, हम कभी आपसे बाहर हो सकते हैं? आपने व्यर्थ का कष्ट उठाया। यह हो नहीं सकता कि इधर से जाएँ और इस घाट के देवता को भेंट न चढ़ावें। मैं तो आपकी सेवा में स्वयं ही आ रहा था।'

वंशीधर के पिता अनुभवी व्यक्ति हैं। वंशीधर के मुअत्तल हो जाने पर वो कहते हैं –

"चलते-चलते इस लड़के को समझाया था, लेकिन इसने एक न सुनी। सब मनमानी करता है। हम तो कलवार और कसाई के तगादे सहें, बुढ़ापे में भगत बनकर बैठें और वहाँ बस वही सूखी तनख़्वाह! हमने भी तो नौकरी की है और कोई ओहदेदार नहीं थे। लेकिन काम किया, दिल खोलकर किया और आप ईमानदार बनने चले हैं। घर में चाहे अंधेरा हो, मस्जिद में अवश्य दिया जलाएँगे। खेद ऐसी समझ पर! पढ़ना-लिखना सब अकारथ गया।"

बोध प्रश्न

- चरित्र चित्रण से क्या उत्पन्न होता है?
- पंडित अलोपीदीन कैसे व्यक्ति है?
- वंशीधर के पिता को कहानीकार ने किस प्राकर चित्रित किया है?

14.3.3 देशकाल (परिवेश) चित्रण

कहानी में वास्तविकता का पुट देने के लिये देशकाल अथवा वातावरण का प्रयोग किया जाता है। कहानी आजादी से पहले की है। नमक का नया विभाग बना। विभाग में ऊपरी कमाई बहुत ज्यादा थी इसलिए सभी व्यक्ति इस विभाग में काम करने को उत्सुक थे। उस दौर में फारसी का बोलबाला था और उच्च ज्ञान के बजाय केवल फारसी की प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर ही लोग उच्च पदों पर पहुँच जाते थे। मुंशी वंशीधर ने भी फारसी पढ़ी और रोजगार की खोज में निकल पड़े। इस कहानी में वातावरण तथा समय का समायोजन यथोचित रूप से हुआ है। कहानी में प्रेमचंद कहते हैं -

"यह वह समय था जब अंगरेज़ी शिक्षा और ईसाई मत को लोग एक ही वस्तु समझते थे। फ़ारसी का प्राबल्य था। प्रेम की कथाएँ और शृंगार रस के काव्य पढ़कर फ़ारसीदां लोग सर्वोच्च पदों पर नियुक्त हो जाया करते थे। मुंशी वंशीधर भी जुलेखा की विरह-कथा समाप्त करके सीरी और फ़रहाद के प्रेम-वृत्तांत को नल और नील की लड़ाई और अमेरिका के आविष्कार से अधिक महत्व की बातें समझते हुए रोज़गार की खोज में निकले।"

परिवेश का एक उदाहरण इस प्रकार देखा जा सकता है -

"जाड़े के दिन थे और रात का समय। नमक के सिपाही, चौकीदार नशे में मस्त थे। मुंशी वंशीधर को यहाँ आए अभी छह महीनों से अधिक न हुए थे, लेकिन इस थोड़े समय में ही उन्होंने अपनी कार्यकुशलता और उत्तम आचार से अफ़सरों को मोहित कर लिया था। अफ़सर लोग उन पर बहुत विश्वास करने लगे।

नमक के दफ़्तर से एक मील पूर्व की ओर जमुना बहती थी, उस पर नावों का एक पुल बना हुआ था। दारोगाजी किवाड़ बंद किए मीठी नींद सो रहे थे। अचानक आँख खुली तो नदी के प्रवाह की जगह गाड़ियों की गड़गड़ाहट तथा मल्लाहों का कोलाहल सुनाई दिया।"

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' में चित्रित परिवेश के बारे में लिखिए।

14.3.4 कथोपकथन या संवाद योजना

किसी भी कहानी में संवाद योजना जितनी चुस्त और सटीक होगी कहानी उतनी ही सुंदर बन पड़ेगी। संवाद कहानी का प्रमुख अंग होते हैं। इनके द्वारा पात्रों के मानसिक अंतर्द्वंद्व एवं अन्य मनोभावों को प्रकट किया जाता है। लेखक ने पात्रों की मन:स्थिति का यथा-योग्य विवरण प्रस्तुत किया है ।

वंशीधर और पंडित अलोपीदीन के संवाद इस प्रकार हैं -

अलोपीदीन : अपने मुख़्तार से बोले, 'लालाजी, एक हज़ार के नोट बाबू साहब की भेंट करो, आप इस समय भूखे सिंह हो रहे हैं।'

वंशीधर ने गरम होकर कहा, 'एक हज़ार नहीं, एक लाख भी मुझे सच्चे मार्ग से नहीं हटा सकते।'

वंशीधर को नौकरी मिलने पर उनके पिता उन्हें समझाते हैं –

"बेटा! घर की दुर्दशा देख रहे हो। ऋण के बोझ से दबे हुए हैं। लड़कियाँ हैं, वे घास-फूस की तरह बढ़ती चली जाती हैं। मैं कगारे पर का वृक्ष हो रहा हूँ, न मालूम कब गिर पड़ूँ! अब तुम्हीं घर के मालिक-मुख़्तार हो।

'नौकरी में ओहदे की ओर ध्यान मत देना, यह तो पीर का मजार है। निगाह चढ़ावे और चादर पर रखनी चाहिए। ऐसा काम ढूँढना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती। ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसकी बरकत होती हैं, तुम स्वयं विद्वान हो, तुम्हें क्या समझाऊँ।"

पात्रों की वृत्तियाँ, सोच तथा कार्य शैली का मनोहारी और रोचक वर्णन किया गया है। लेखक ने उनके अनुभव तथा विचार शक्ति एवं परिस्थिति का आकर्षक एवं पाठक को बाँधकर रखने वाले संवाद दिए हैं।

बोध प्रश्न

- कहानी का प्रमुख अंग क्या है?
- 'नमक का दारोगा' के संवाद कथा को आगे बढ़ाने में कैसे सहायक हैं?

14.3.5 भाषा-शैली

इस कहानी की भाषा शैली सरल सहज और चरित्र के अनुकूल है। प्रस्तुतीकरण के ढंग में कलात्मकता लाने के लिए उसको अलग-अलग भाषा व शैली से सजाया जाता है। भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों के उपयोग तथा हिंदी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज से यह कहानी अद्‌भुत है। कहानी में मुहावरों के प्रयोग से कहानी का प्रभाव बढ़ा है। भाषा की चित्रात्मकता, लोकोक्तियों और मुहावरों का जानदार उपयोग तथा हिन्दी-उर्दू के साझा रूप एवं बोलचाल की भाषा के लिहाज़ से यह कहानी अद्‌भुत है। यहाँ कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं -

1) दुनिया सोती थी, पर दुनिया की जीभ जागती थी।
2) वेतन तो पूर्णमासी का चाँद है
3) ऊपरी आय तो बहता स्रोत है।

प्रेमचंद उर्दू से हिंदी में आये थे अतः उनकी भाषा में उर्दू शब्दों का प्रयोग है। भाषा में सादगी एवं आलंकारिकता का समन्वय है। इस कहानी में विषय- सामग्री के द्वारा लोगों की

मनोवृत्ति और रोचक एवम् गूढ़ संवादों के परिप्रक्ष्यों में सम्यक विस्तार हुआ है। भाषा शैली सहज सरस एवं तारतम्यता से ओतप्रोत है।

बोध प्रश्न

- कहानी में भाषा-शैली की क्या उपयोगिता है?
- 'नमक का दरोगा' कहानी में प्रयुक्त भाषा कैसी है?

14.3.6 उद्देश्य

'नमक का दरोगा' शीर्षक कहानी में तात्कालिक समाज का व्यापक चित्रण किया गया है। आज भी यह कहानी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी कि उस समय थी जब यह लिखी गई थी। समाज की अनेक समस्याएँ ज्यों की त्यों चली आ रही है। आज के समाज में कितना भ्रष्टाचार और रिश्वतखोरी है। सब लोग धन के गुलाम बने हुए हैं। धन के लालच में व्यक्ति निम्न से निम्न कार्य करने में जरा भी नहीं हिचकते। नौकरियों के संबंध में वंशीधर के पिता वृद्ध मुंशी का कथन शत प्रतिशत सत्य सिद्ध हो रहा है। इस बेईमानी की यात्रा में माता-पिता, पत्नी, यहाँ तक की संतान भी सम्मिलित हैं। सभी की दृष्टि में धन सब कुछ हो गया है। सत्यता, धर्म, कर्तव्य, देशभक्ति, इमानदारी आदि गुणों का कोई महत्व नहीं रह गया है। आज भी अदालतों में पैसे लेकर झूठी गवाही दी जाती है। वकील भी झूठ का ही साथ देते हैं। यहाँ तक कि न्यायधीश भी धन की शक्ति और राजनीतिक शक्ति के आगे घुटने टेक चुके हैं। न्याय-अन्याय का मानदंड धन व प्रभाव ही रह गया है। इस कहानी में सामाजिक संबंधों को भी यथार्थ रूप में उजागर किया गया है। दुनिया में कोई संबंध सच्चाई की नींव पर नहीं खड़ा है। सब पैसे के साथी बन चुके हैं। इस कटु सत्य से आज कोई भी अनभिज्ञ नहीं है। फिर भी इसे सही मानकर चल रहे हैं।

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' कहानी का क्या उद्देश्य है?

14.3.7 शीर्षक का औचित्य

नमक निरीक्षक ने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। इस कहानी में धन के ऊपर धर्म की विजय बताई गई है तथा मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है। यह कहानी समाज की आर्थिक स्थिति को उद्घाटित करती है। मुंशी वंशीधर एक ईमानदार और कर्तव्य परायण व्यक्ति हैं जो समाज में ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा की मिसाल कायम करते हैं। वह नमक के दरोगा रहते हैं। दूसरी ओर पंडित अलोपीदीन दातागंज के सबसे अधिक अमीर और इज्जतदार व्यक्ति रहते हैं। वंशीधर पाठकों को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला चरित्र है क्योंकि, वह दृढ़ निश्चय, कर्मठ और कर्तव्यपरायण व्यक्ति हैं। उन्हें अपने कार्य से प्रेम है। यह चरित्र मनुष्य को ईमानदारी से आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। इस कहानी का संदेश ही इसके शीर्षक की सार्थकता को सिद्ध करता है। केवल एक लकीर मात्र खींच देने से वहाँ के रहने वाले लोगों के दिल नहीं बंट जाते। लोगों का सदैव अपने मूल स्थान से लगाव बना रहता है।

नमक का नया विभाग बनने पर वंशीधर ही नमक विभाग में दरोगा के पद पर नियुक्त होते हैं। वह नमक के दरोगा तो बन जाते हैं किंतु ऊपरी कमाई को अच्छा नहीं समझते बल्कि

ईमानदारी से अपना कार्य करते हैं। अपनी कार्यकुशलता और अच्छे व्यवहार से बड़े-बड़े अधिकारियों का दिल जीत लेते हैं। यह कहानी भारत पाक विभाजन के बाद सरहद के दोनों तरफ के विस्थापित पुनर्वासित जनों के दिलों को टटोलती एक मार्मिक कहानी है। इस कहानी के शीर्षक से यह संदेश मिलता है कि असत्य, अन्याय और भ्रष्टाचार कितना भी क्यों न हो किंतु सत्य की चमक में वह शक्ति होती है कि वह सभी दुराचरणों को भेद सकता है। सत्य का स्थान बड़ा ऊँचा होता है। कहानी का शीर्षक अपने संदेश को निहित किए हुए अत्यंत सार्थक है।

बोध प्रश्न

- 'नमक का दारोगा' शीर्षक उचित क्यों है?

14.3.8 'नमक का दरोगा' की विशेषताएँ एवं महत्व

कहानी सदैव मानव और समाज से जुड़ी होती है और दोनों के लिए इसका विशेष महत्व होता है। 'नमक का दरोगा' कहानी एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी है जिसमें कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई गई है और भ्रष्टाचार को दिखाया गया है। इस कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाते हुए लेखक ने उसे स्थापित किया है। सत्य, निष्ठा, धर्म, निष्ठा और कर्म परायणता को इस कहानी में विशेष महत्व दिया गया है। इस कहानी द्वारा यह संदेश दिया गया है कि एक बेईमान स्वामी भी एक ईमानदार कर्मचारी की तलाश में रहता है और मौका आने पर उसे सम्मानित भी करता है। कहानी आजादी के पहले की है जब नमक का नया नया विभाग बना था। विभिन्न पड़ावों से गुजरती हुई यह कहानी मानव मनोविज्ञान का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है और लेखक इस बात की ओर संकेत करते हैं कि मौका आने पर ईमानदार व्यक्ति का ही सम्मान होता है जो इस कहानी में चरित्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

बोध प्रश्न

- कहानी के दो विशेष गुण क्या होते हैं?
- मानव जीवन में कहानी का क्या महत्व है?

14.4 पाठ सार

कहानी सदैव मनुष्य और समाज से जुड़ी होती है। 'नमक का दरोगा' प्रेमचंद द्वारा रचित आजादी से पहले की कहानी है जिसमें एक ईमानदार नमक निरीक्षक की कहानी को बताया गया है जिसने कालाबाजारी के विरुद्ध आवाज उठाई। यह कहानी धन के ऊपर धर्म के जीत की है। कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है और उसे सम्मानित भी किया गया है। सत्यनिष्ठा, धर्मनिष्ठा और कर्मपरायणता को विश्व के दुर्लभ गुणों में बताया गया है जो इस कहानी में दिखाई देता है।

इस कहानी में लेखक ने कालाबाजारी और भ्रष्टाचार के विरुद्ध आवाज़ उठाई है। अन्त में यह शिक्षा दी गयी है कि एक बेईमान स्वामी भी एक ईमानदार कर्मचारी की तलाश रहती है। कहानी को कहानी तत्वों के आधार पर विश्लेषित किया गया है। नमक का दरोगा कहानी का

कथानक देते हुए संवाद योजना के द्वारा विभिन चरित्रों के व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। हम सभी जानते हैं की कहानी के विकास में देश, काल और वातावरण का विशेष महत्व होता है। यह कहानी आज़ादी के पहले की है।

भाषा और शैली की दृष्टि से यह कहानी सफल है क्योंकि इसमें भाषा की सभी विशेषताएँ दिखाई देती हैं। खड़ी बोली का प्रयोग हुआ है और आवश्यकतानुसार मुहावरों का प्रयोग है। भाव एवं चरित्र मनोविज्ञान के अनुकूल भाषा प्रयोग करने में लेखक सफल दिखाई देते हैं। जब यह कहानी लिखी गई थी उस दौर में फ़ारसी का बोल बाला था। उद्देश्य की दृष्टि से यह कहानी सफल है। इस कहानी की मूल संवेदना समाज और शासन में फैले भ्रष्टाचार की प्रवृत्ती को उजागर करते हुए व्यंग्य के माध्यम से सबके सामने लाना।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. नमक का दरोगा कहानी में मानव मूल्यों का आदर्श रूप दिखाया गया है।
2. यह कहानी आजादी के पहले की है जब नमक का नया-नया विभाग बना था। लेकिन वर्तमान समय में भी पूरी तरह प्रासंगिक है।
3. विभिन्न पड़ावों से गुजरती हुई यह कहानी मानव मनोविज्ञान का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करती है।
4. कहानी में इस बात की ओर संकेत है कि अंततः ईमानदार व्यक्ति का सम्मान होता है। इस आदर्श को कहानी में चरित्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

14.6 शब्द संपदा

1. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
2. आकर्षक = आकर्षण युक्त
3. उत्पन्न करना = पैदा करना
4. ढंग = तरीका
5. तुच्छ से तुच्छ = छोटी से छोटी
6. दिलचस्पी = रुचि
7. निरीक्षक = निरीक्षण करने वाला
8. प्रक्रिया = विधि
9. प्रचलित = प्रचारित या लोकप्रिय
10. प्रधान = प्रमुख
11. प्रयास = कोशिश

12. प्रस्तावना = भूमिका या विषय प्रवेश
13. रूढ़ियाँ = पुरानी परंपराएँ
14. रोचक = रुचिकर
15. विधा = तरीका या ढंग
16. सर्वाधिक = सबसे अधिक
17. सर्वोत्तम = सबसे अच्छा
18. सीमित आकार में = छोटे रूप में
19. स्वाध्याय = स्वयं अध्ययन करना

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'नमक का दरोगा' कहानी का तात्विक विश्लेषण कीजिए।
2. 'नमक का दरोगा' कहानी में उठाई गई समस्याओं का चित्रण कीजिए।
3. 'नमक का दरोगा' कहानी के आधार पर वंशीधर का चरित्र चित्रण कीजिए।
4. 'नमक का दरोगा' कहानी का केंद्रीय भाव लिखते हुए सारांश दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'नमक का दरोगा' कहानी की भाषा-शैली के संबंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. 'नमक का दरोगा' कहानी का मुख्य पात्र का परिचय देते हुए चरित्र चित्रण कीजिए।
3. 'नमक का दरोगा' कहानी से क्या शिक्षा मिलती है?
4. पंडित अलोपीदीन के व्यक्तित्व की विशेषताएँ लिखिए।
5. 'नमक का दरोगा' कहानी की मूल संवेदना क्या है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए

1. 'नमक का दरोगा' कहानी के लेखक कौन हैं?

    (अ) बाबू गुलाब राय (ब) किशोरीलाल गोस्वामी (स) प्रेमचंद

2. अलोपीदीन कहाँ के निवासी थे?

(अ) दातागंज (ब) आगरा (स) इलाहबाद

3. वंशीधर के पिता ने मासिक वेतन को क्या कहा?

(अ) अमावस का चाँद (ब) पूर्णमासी का चाँद (स) ईद का चाँद

4. लोग चोरी छिपे किसका व्यापर करते थे?

(अ) तेल (ब) नमक (स) चीनी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'नमक का दरोगा' में ....की कहानी को बताया गया है।
2. नमक की गाड़ियाँ ....की ओर जा रही थीं।
3. .... ने नमक की गाड़ियों को रोका।
4. मुंशी वंशीधर के पिता ने नौकरी में पद को ....नाम दिया था।

III. सुमेल कीजिए -

1. नमक का दरोगा	(अ) प्रतिष्ठित ज़मींदार
2. नमक के दरोगा का नाम	(आ) छः
3. पंडित अलोपीदीन	(इ) मुंशी वंशीधर
4. कहानियों के तत्व	(ई) प्रेमचंद

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. गद्य यात्रा : श्रीराम शर्मा
2. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : रामकुमार वर्मा
3. कहानी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन : सी एम योहान्नन
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
5. हिंदी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 15 : जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला
15.3.1 जयशंकर प्रसाद का जीवन परिचय
15.3.2 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा
15.3.3 प्रसाद जी का समकालीन परिवेश और उसका प्रसाद पर प्रभाव
15.3.4 जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कहानियाँ
15.3.5 जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषताएँ
15.4 पाठ सार
15.5 पाठ की उपलब्धियाँ
15.6 शब्द संपदा
15.7 परीक्षार्थ प्रश्न
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! जयशंकर प्रसाद को मुख्य रूप से काव्य और नाट्य साहित्य के रचनाकार के रूप में जाना जाता है। लेकिन उन्होंने कथा साहित्य को भी खूब समृद्ध किया। उनके उपन्यासों और कहानियों का का भी उतना ही महत्व है। दरअसल उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं में रचना कार्य किया था। उनकी कहानियाँ अपनी राष्ट्रीय और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण विशेष मानी जाती हैं। इस इकाई में आप जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

15.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के उपरांत आप-

- जयशंकर प्रसाद के जीवन से परिचित हो सकेंगे।
- उनके रचना संसार के बारे में जान सकेंगे।
- उनके व्यक्तित्व के उनके कहानी लेखन पर प्रभाव को समझ सकेंगे।
- उनकी कहानी कला की विशेषताओं को जान सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद और उनकी कहानी कला

15.3.1 जयशंकर प्रसाद का जीवन परिचय

प्रसाद जी का जन्म सन् 1889 में काशी के सुप्रसिद्ध सुँघनी साहु के परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम देवी प्रसाद साहु था। डॉ. सूरजपाल शर्मा ने लिखा है, 'इनके पूर्वज मूलतः

गाजीपुर जिले के सैदपुर नामक गाँव में रहने वाले थे, जो कालान्तर में किसी कारणवश काशी में आकर बस गए थे। काशी में आने के उपरांत इस घराने ने व्यापार में पर्याप्त उन्नति की। इस परिवार के लोगों ने सबसे पहले संवत् 1875 (सन् 1818) में तम्बाकू की पत्ती से एक विशेष प्रकार का चूर्ण बनाने का आविष्कार किया था, जिसे 'सुँघनी' कहते थे। सुँघनी का उत्पादन एवं व्यापार करने के कारण इस परिवार को 'सुँघनी साहु' नाम मिला जो आजकल भी प्रचलित है।'

सुँघनी साहु के परिवार ने वैद्यनाथ धाम से लेकर उज्जयिनी तक समस्त ज्योतिर्लिंगों की यात्रा की भगवान शंकर की आराधना के बाद इस बालक का जन्म होने के कारण उसका नाम शंकर रखा गया। झारखंड के ज्योतिर्लिंग की विशेष कृपा मानकर बचपन में उन्हें 'झारखंडे' भी बुलाया जाता था। पढ़-लिखकर एवं कवि चेतना जाग्रत होने पर प्रसाद जी ने अपना नाम 'जयशंकर प्रसाद' रखा। प्रसाद जी अपने सभी भाई-बहनों में सबसे छोटे थें सन् 1901 में प्रसाद जी के पिताजी का स्वर्गवास हो गया। उस समय प्रसाद जी की अवस्था लगभग 12 वर्ष की थी। पिता के बाद घर का उत्तरदायित्व इनके बड़े भाई पर आया लेकिन बड़े भाई साहब व्यापार को ठीक से चला नहीं सके। व्यापार में घाटा होने लगा। प्रसाद जी जब 15 वर्ष के थे तब माता का और 17 वर्ष की आयु में बड़े भाई का भी देहांत हो गया। इस प्रकार से 17 सल की आयु में प्रसाद जी के ऊपर संपूर्ण परिवार का दायित्व आ गया। विवश होकर प्रसाद जी को दुकान संभालना पड़ा। प्रसाद जी का विवाह तीन बार हुआ था। प्रसाद जी का पहला विवाह सन् 1909 में हुआ था। उस समय प्रसाद जी 20 वर्ष के थे। पहली पत्नी की मृत्यु के बाद प्रसाद जी विवाह करना नहीं चाहते थे लेकिन उन्हें भाभी के आदेश पर दूसरा विवाह करना पड़ा। दूसरी पत्नी की मृत्यु प्रसवकाल में हुई। दूसरी पत्नी की मृत्यु के पाँच साल बाद प्रसाद जी ने तीसरा विवाह किया। तीसरी पत्नी ने एक पुत्र को जन्म दिया। जिसका नाम प्रसाद जी ने रत्नशंकर प्रसाद रखा। प्रसाद जी की मृत्यु सन् 1937 में हुई।

प्रसाद जी की शिक्षा घर पर ही आरंभ हुई। रईसी ठाट-बाट से उनकी शिक्षा आरंभ हुई। मोहिनी लाल गुप्त 'रससिद्ध' प्रसाद जी को घर पर पढ़ाया करते थे। वे ही प्रसाद जी के साहित्यिक गुरु थे। दस वर्ष की अवस्था में प्रसाद जी ने काशी के क्वीन्स कॉलेज में प्रवेश लिया। प्रसाद जी ने यहाँ सातवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की। पिता की मृत्यु के पश्चात प्रसाद जी की स्कूली शिक्षा समाप्त हो गई। प्रसाद को घर पर ही संस्कृत और अंग्रेजी पढ़ाने का प्रबंध किया गया। इसके लिए अलग-अलग शिक्षक रखे गए। प्रसाद जी को संस्कृत पढ़ाने दीनबंधु ब्रह्मचारी आते थे जो वेदों और उपनिषदों के अच्छे ज्ञाता थे।

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी का जन्म कब हुआ था?
- प्रसाद जी के पिता का नाम क्या था?
- प्रसाद जी के पूर्वज मूलतः कहाँ के निवासी थे?
- प्रसाद जी को संस्कृत कौन पढ़ाते थे?

प्रसाद जी के व्यक्तित्व एवं वेशभूषा के संबंध में डॉ. सूरजपाल शर्मा ने लिखा है, 'प्रसाद जी का व्यक्तित्व अत्यंत भव्य एवं सुदर्शन था। शरीर के अवयव अत्यंत पुष्ट और सुगठित थे। कद

अवश्य कुछ छोटा था। उज्ज्वल गौरवर्णीय काया वाले प्रसादजी के चेहरे से तेज टपकता था। बाल्यकाल में उन्हें कसरत करने का शौक था। उनकी वेशभूषा, साधारण किंतु सुरुचिपूर्ण होती थी। ढाका की मलकल का कुर्ता और शांतिपुरी धोती, सिर पर पगड़ी, गले में पुष्पमाल और मस्तक पर त्रिपुण्ड- यह था उनका वेश।' आत्मीयजनों की मृत्यु ने उन्हें शोकमग्न और विषादपूर्ण बना दिया था। व्यापार को फिर से पुनर्जीवित करने के लिए 14 वर्ष उन्हें बहुत परिश्रम करना पड़ा था। जीवन के जिस उम्र में प्रसाद जी को सुख भोग करना चाहिए था उस उम्र में प्रसाद जी चिंता, शोक में डूबे रहने के बाद भी परिश्रम करते रहे। प्रसाद जी अंतर्मुखी व्यक्ति थे। उनकी यह विशेषता उनके साहित्य में भी दिखाई पड़ती है। काशी से उन्हें बहुत प्रेम था। उनके काशी प्रेम के संबंध में प्रेमशंकर शर्मा ने लिखा है, 'काशी से वे इतना अधिक संतुष्ट रहते थे कि बाहर नहीं जाते थे। अंतिम समय में जब जलवायु- परिवर्तन के लिए उपचारकों ने बाहर जाने को कहा तो वे बोले- 'जीवनभर बाबा विश्वनाथ की छाया में रहा अब कहाँ जाऊँ।' साहित्य प्रेम तथा प्रकृति प्रेम तो प्रसाद जी के जीवन का महत्वपूर्ण अंग रहा।

बोध प्रश्न

- व्यापार को पुनर्जीवित करने में प्रसाद जी को कितना समय लगा?
- प्रसाद जी की वेशभूषा के बारे में बताएँ?
- प्रसाद जी का व्यक्तित्व कैसा था?
- प्रसाद जी को किस शहर से विशेष प्रेम था?

15.3.2 जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा

जैसा कि हमने पहले पढ़ा कि प्रसाद जी के पिता की मृत्यु के बाद प्रसाद जी का स्कूल जाना बंद हो गया था लेकिन उन्होंने घर पर ही रखकर संस्कृत और अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया और यह ज्ञान प्राप्त करने के साथ-साथ उनके भीतर साहित्य प्रेम भी जन्म लेने लगा था। 9 वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने कलाधर उपनाम से कविता रचना शुरू कर दिया था। प्रसाद जी सबसे पहले ब्रजभाषा में कविता रचना किया करते थे। इसके बाद वे खड़ी बोली हिंदी में साहित्य रचना करने लगे। प्रसाद जी ने अपनी साहित्यिक यात्रा इन्दु नामक पत्रिका से शुरू की थी। प्रसाद जी की पहली रचना कालक्रमानुसार चित्रधारा है इसका प्रकाशन वर्ष सन् 1912 है। इसके अलावा कानन कुसुम, करुणालय, महाराणा का महत्व, प्रेम पथिक, जनमेजय का नागयज्ञ, ध्रुवस्वामिनी, कामायनी, एक घूँट, आकाशदीप, इन्द्रजाल, कंकाल, तितली, इरावती (अपूर्ण), उर्वशी, स्कंदगुप्त आदि है।

प्रसाद जी अंतर्मुखी व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व के इस विशेषता को उनके साहित्य में भी देखा जा सकता है। 'लहर' कविता में कवि के विभिन्न मानसिक रूपों के चित्र को देखा जा सकता है। आचार्य शुक्ल जी ने 'लहर' कृति के संबंध में आलोचना करते हुए लिखा है, 'लहर में प्रसाद जी ने अपनी प्रगल्भ कल्पना के रंग में इतिहास के खंडों को भी देखा है। जिस करुणा के शांत कछार में बुद्ध भगवान ने धर्म चक्र का प्रवर्तन किया था, उसकी पुरानी झाँकी अशोक की चिंता, शेरशिंह का आत्मसमर्पण, पैशोला की प्रतिध्वनि, प्रलय की छाया में प्राप्त होती जो

अतीत के भीतर कल्पना के प्रवेश का उदाहरण है। इस प्रकार 'लहर' में हम प्रसाद जी को वर्तमान और अतीत जीवन की ठोस प्राकृत-भूमि पर कल्पना प्रतितिष्ठत करने का प्रयत्न करते पाते हैं।'

प्रसाद जी को छायावादी काव्यधारा का जनक भी माना जाता है। छायावादी काव्य की दृष्टि से 'झरना' प्रसाद जी की रचनाओं का पहला संग्रह है। इस काव्य संग्रह में 48 कविताएँ हैं। इन रचनाओं में हमें कवि की परिवर्तित विचारधारा को देखने का अवसर मिलता है। लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता से युक्त प्रसाद जी की भाषा में अद्भुत नाद-सौंदर्य और ध्वन्यात्मकता है। प्रसाद जी ने अपनी भाषा के द्वारा प्रकृति के मानवीकरण को सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। यथा-

धीरे-धीरे हिम आच्छादन, हटने लगा धरातल से।
जगी वनस्पतियाँ अलसाई, मुख धोती शीतल जल से।
नेत्र निमीलन करती मानो, प्रकृति प्रबुद्ध लगी होने।
जलधि लहरियों की अँगड़ाई, बार-बार जाती सोने।

रात से सबेरा होने का कैसा अद्भुत वर्णन है। यही है प्रसाद की भाषा की विशेषता।

प्रसाद जी पर कविगुरु रवीन्द्रनाथ की गीतांजलि का गहरा प्रभाव पड़ा था। वेद तथा शास्त्रों का भी इन्होंने गहन अध्ययन किया था इस कारण इन्हें भारतीय संस्कृति का विशेष ज्ञान था। इसी कारण से प्रसाद जी को दासत्व जीवन पसंद नहीं था। वे अपने देश को न केवल स्वाधीन देखना चाहते थे बल्कि साथ ही वे भारतीयों को अपनी संस्कृति और सभ्यता को लेकर गर्वित होते हुए भी देखना चाहते थे।

प्रसाद जी भारतीयता के अनुरागी थे। उन्होंने साहित्य की रचना मनोरंजन के लिए नहीं की। साहित्यकार के रूप में वे अपने उत्तरदायित्व से परिचित थे। उनके इसी उत्तरदायित्व बोध का उत्कृष्ट उदाहरण है- 1936 में प्रकाशित उनका महाकाव्य 'कामायनी'। प्राचीन भारतीय संस्कृति पर विश्वास रखने के बाद भी वे वैज्ञानिकता की आवश्यकता से भी परिचित थे। 'कामायनी' में प्रसाद जी ने सभ्यता, संस्कृति और विज्ञान का सुंदर समावेश करवाया है। अगर यह कहा जाए कि जयशंकर प्रसाद भारतीय संस्कृति, सभ्यता और विज्ञान के पोषक होने के साथ-साथ साहित्यकार भी थे तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

15.3.3 प्रसाद जी का समकालीन परिवेश और उसका प्रसाद पर प्रभाव

प्रसाद जी ने भारत के गौरवमय अतीत के साथ-साथ अपनी समसामयिक परिस्थितियों को लेकर साहित्य रचना की और भविष्य के भारत की कल्पना भी प्रस्तुत की। उनका रचनकाल 1906 से 1936 तक का रहा। इस अवधि में पराधीन भारत ने राजनैतिक दृष्टि में बहुत कुछ देखा। जैसे- असहयोग आंदोलन, मिण्टो-मार्ले की सुधार योजना की आड़ में 'फूट डालो राज्य करो' की नीति, विश्व युद्ध, नमक कानून तोड़ने के लिए किया गया आंदोलन आदि।

प्रसाद जी बड़े देशभक्त साहित्यकार थे। उन्होंने इन राजनैतिक परिस्थितियों को देखा समझा और अपने ऐतिहासिक नाटकों में राष्ट्रप्रेम तथा आजादी से भरे गीतों को लिखा। वे चाहते

थे कि भारतवासियों का देश प्रेम किसी भी दशा में कम न हो। इसलिए जहाँ-जहाँ उन्हें अवसर मिला उन्होंने भारत की वंदना की।

प्रसाद जी के समय की सामाजिक परिस्थितियाँ काफी विषम थीं। बहुविवाह, अनमेल विवाह, सती प्रथा आदि ने स्त्रियों का जीवन तो नारकीय बना ही दिया था। साथ ही अंग्रेज केवल भारत की जनता का शोषण ही नहीं कर रहे थे अपितु भारत के निम्नवर्गीय जनों का शोषण करनेवाले जमींदारों, साहूकारों एवं पूँजीपतियों को बढ़ावा भी रहे थे। अंग्रेजी शिक्षा ने भारतीय युवकों में जहाँ राष्ट्रीयता स्वतंत्रता-प्राप्ति की भावना एवं वैज्ञानिक चेतना उत्पन्न की, वहीं उसने भारतीय गौरव, प्राचीन संस्कृति एवं धार्मिक भावना का भी विनाश किया। ऐसे में प्रसाद जी ने अपने "ध्रुवस्वामिनी" जैसे नाटक के द्वारा न केवल भारतीय और पाश्चात्य नाट्यशास्त्र का समन्वय किया बल्कि नारी के पुनर्विवाह की घोषणा भी की।

डॉ. प्रेमशंकर शर्मा ने प्रसाद जी की साहित्य-सेवा के विषय में लिखा है, 'कविता, नाटक, उपन्यास और कहानी सभी क्षेत्रों में अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा से कार्य करनेवाले इस महान कलाकार ने अपने समाज की सांस्कृतिक चेतना का रसात्मक संस्करण साहित्य में प्रस्तुत किया है। उनके साहित्य में वे अनुभूतियाँ मिलती हैं, जिनका संबंध परंपरा और पूर्व पीठिका से है। द्विवेदी युग की अतिवृत्तात्मकता और जातीयता के विरोध में जो छायावाद उठ खड़ा हुआ था, उसका चरम विकास कवि प्रसाद में स्पष्ट है।'

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी ने किस आयु में साहित्य रचना का काम शुरू किया था?
- प्रसाद जी ने किस उपनाम से ब्रजभाषा में साहित्य रचना किया करते थे?
- कामायनी का प्रकाशन वर्ष क्या है?
- नारी पुनर्विवाह की घोषणा प्रसाद जी ने अपनी किस रचना के द्वारा की थी?

15.3.4 जयशंकर प्रसाद की प्रमुख कहानियाँ

प्रसाद ने हिंदी कहानी को नया रूप प्रदान किया था। उनकी पहली मौलिक कहानी ग्राम सन् 1911 में इंदु में प्रकाशित हुई थी। प्रसाद जी ने अपने जीवन काल में 70 कहानियाँ लिखीं। उनके 5 कहानी संग्रहों के नाम है- छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आँधी, इन्द्रजाल। रवीन्द्रनाथ ठाकुर और उनकी 'गीतांजलि' से प्रसाद काफी प्रभावित थे। कहानी कला के क्षेत्र में भी उन्होंने रवींद्र की तरह ही भावनात्मक लेखन को महत्व दिया। आइए, प्रसाद जी की कहानी कला को समझने के लिए उनकी कुछ कहानियों का परिचय प्राप्त करें-

स्वर्ग के खंडहर में

प्रसाद जी के द्वारा लिखित यह एक लंबी और जटिल कहानी है। इसकी कथावस्तु मुसलमानों के आक्रमण काल से ग्रहण की गई है- कुमारी लज्जा गांधार के अंतिम आर्य-नरपति भीमपाल के वंशधर देवपाल की ओर आकृष्ट हुई थी, किंतु कश्मीर सुंदरी तारा के कारण उसके प्रेम को आघात पहुँचा और वह भिक्षुणी हो गई। चंगेज खाँ के आक्रमण में देवपाल बंदी हुए और तारा ने आत्महत्या कर ली। उसी समय देवपाल के पुत्र देवकुमार और सेनापति विक्रम की कन्या लीला की रक्षा के लिए उन्हें लज्जा की शरण में भेजा गया। किंतु धर्मभिक्षु के आपत्ति करने पर

लज्जा उन्हें लेकर छद्म वेश में बाहर निकल पड़ी और भिक्षा द्वारा उनका पालन-पोषण करने लगी। एक रात सबके सो जाने के बाद देवकुमार और लीला को गायब कर दिया गया। वह उन्हें खोजती हुई केकय के पहाड़ी दुर्ग के निकट शेख के स्वर्ग में पहुँची। वहाँ से गुल और मीना के रूप में देवकुमार और लीला तथा प्रधान प्रहरी के रूप में देवपाल मिले। यह रहस्य अधिक समय तक रहस्य नहीं रहा। तातार खान के आक्रमण में सभी मारे गए, बची रही केवल मीना।सेनापति विक्रम उस प्रांत के शासक बने और उन्हीं स्वर्ग के खण्डहरों में मीना उनमुक्त भ्रमण करती रही। उसका मस्तिष्क विकृत हो गया था। जब सेनापति बहुत स्मरण दिलाता तो वह कह देती- 'मैं एक भटकी हुई बुलबुल हूँ। मुझे किसी टूटी डाल पर अंधकार बिता लेने दो। इस रजनी-विश्राम का मूल्य अंतिम तान सुनाकर जाऊँगी।'

इस कहानी का शीर्षक अत्यंत आकर्षक है तथा प्रसाद की मनोभावनाओं के अनुकूल है। इसमें गांधार के शाही वंश तथा चंगेज खाँ के आक्रमण काल की ऐतिहासिक घटनाएँ है।

भिखारिन

यह दीन-दुखी जीवन की कहानी है, जो सर्वप्रथम फरवरी सन् 1927 में माधुरी में प्रकाशित हुई थी। प्रस्तुत कहानी की कथावस्तु साधरण किंतु कारूणिक है। कहानी में दिखाया गया है कि मनुष्य धर्म के नाम पर बहुत कुछ करता है किंतु सच्चे धर्म, मनुष्य-सेवा के लिए कुछ भी करते नहीं बनता। दान जिसे मिलना चाहिए, उसे न मिलकर मिलता है धर्म के ठेकेदारों को, व्यभिचारी पण्डों को। किसी भिखारी को दान करना मानो पाप का उपार्जन करना है। वास्तव में सारी कहानी समाज पर एक कटाक्ष है। भिखारिन के निम्नलिखित शब्दों से उसके हृदय की भावनाएँ व्यंजित होती है, उसके इन शब्दों में समाज की सुंदर आलोचना है- 'दो दिन माँगने पर भी तुम लोगों से एक पैसा तो देते नहीं बना, फिर गाली क्यों देते हो बाबू? ब्याह करके निभाना तो बड़ी दूर की बात है।' कहानी कला की दृष्टि से यह कहानी अत्यंत सुंदर है। कहानी में प्रसिद्ध गीत 'सुने री निर्धन के धन राम, सुने री' का एक पद आया है जो समय और अवसर के सर्वथा अनुकूल है। इससे भिखारिन की उदासीनता मिश्रित व्यथा लक्षित होती है।

ग्राम

यह प्रसाद जी द्वारा लिखित मानव मन के अंतर्द्वन्द्व को दर्शानेवाली कहानी है। अंग्रेजों की सहायता पाकर भारतीय जमींदारों ने अपनी ही प्रजा पर बहुत अत्याचार किए देखा जाए तो अगर इन भारतीय जमींदारों की सहायता अंग्रेजों को और अंग्रेजों को इनकी सहायता न मिली होती तो भारत के गाँवों को इतनी दूर्दशा कभी न देखनी पड़ती लेकिन यह भी सच है कि जहाँ दूरात्मा का निवास होता है वहाँ पुण्यात्मा का भी जन्म होता है। ऐसे ही भलेमानुष मोहनलाल इस कहानी के प्रमुख पात्र है और ऐसे ही भलेमानुष थे कहानी के गौण पात्र मृत भूस्वामी जो अपने भलेमानुषता के कारण ही शोषण का शिकार हुए देखिए मृत भूस्वामी की पत्नी का कथन- 'स्त्री कहने लगी, "हमारे पति इस प्रांत के गण्य भूस्वामी थे और वंश भी हम लोगों का बहुत उच्च था। जिस गाँव का अभी आपने नाम लिया है, वही हमारे पति की प्रधान जमींदारी थी। कार्यवश कुंदनलाल नामक एक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। कुछ भी विचार न करने से उनका बहुत रुपया बढ़ गया और जब ऐसी अवस्था पहुँची तो अनेक आय करके हमारे पति धन जुटाकर

उनके पास ले गए, तब धूर्त ने कहा- "क्या हर्ज है बाबू साहब! आप आठ रोज में आना, हम रुपया ले लेंगे और जो घाटा होगा, उसे छोड़ देंगे, आपका इलाका फिर जाएगा, इस समय रेहनामा भी नहीं मिल रहा है।" उसका विश्वास करके पति फिर बैठ रहे और उसने कुछ भी न पूछा। उनकी उदारता के कारण वह संचित धन भी थोड़ा हो गया और उसने दावा करके इलाका- जो कि वह ले लेना चाहता था, बहुत थोड़े रुपये में नीलाम करा लिया। फिर हमारे पति के हृदय में उस इलाके के इस भाँति निकल जाने के कारण बहुत चोट पहुँची और इसी से उनकी मृत्यु हो गई।" ये तो हुई स्त्री की बात अब देखिए भलेमानुष मोहनलाल का अंर्तद्वन्द्व-

"स्त्री की कथा को सुनकर मोहनलाल को बड़ा दुःख हुआ। रात विशेष बीत चुकी थी, अतः रात्रि-यापन करके, प्रभात में मलिन तथा पश्चिमगामी चंद्र का अनुसरण करके, बताए हुए पथ से वह चले गए।पर उनके मुख पर विषाद तथा लज्जा ने अधिकार कर लिया था। कारण यह था कि स्त्री की जमींदारी हरण करनेवाले तथा उसके प्राणप्रिय पति से उसे विच्छेद कराकर इस भाँति दुःख देनेवाले कुंदनलाल, मोहनलाल के ही पिता थे।"

छोटा जादूगर

"कार्निवल के मौदान में बिजली जगमगा रही थी। हँसी और विनोद का कलनाद गूँज रहा था। मैं खड़ा था, उस छोटे फुहारे के पास, जहाँ एक लड़का चुपचाप शरबत पीनेवालों को देख रहा था। उसके गले में फटे कुरते के ऊपर एक मोटी-सी सूत की रस्सी पड़ी थी और जब में कुछ ताश के पत्ते थे। उसके मुख पर गंभीर विषाद के साथ धैर्य की रेखा थी।"

'छोटा जादूगर' कहानी का प्रारंभ इस प्रकार से हुआ है और जैसे-जैसे कहानी आगे बढ़ी है बाल्य जीवन की एक ऐसी कहानी हम तक पहुँची है जिसके द्वारा आर्थिक विपन्नता से ग्रसित एक स्ट्रीट बॉय के चरित्र के आदर्शवादी स्वरूप को हम देख सके हैं। यह एक घटना प्रधान कहानी है। स्ट्रीट बॉय स्वाधीनता के लिए कारागृह में जीवन व्यतीत करनेवाले देशभक्तों के परिवार के प्रतिनिधि के रूप में अपने चरित्र की छाप छोड़ने में सफल हुआ है।

'मनुष्यों की भीड़ में जाड़े की संध्या भी वहाँ गर्म हो रही थी। हम दोनों शरबत पीकर निशाना लगाने लगे। राह में ही उससे पूछा- "तुम्हारे और कौन हैं?"

"माँ और बाबूजी।"

"उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?"

"बाबूजी जेल में हैं"

"क्यों?"

"देश के लिए।" वह गर्व से बोला।"

"और तुम्हारी माँ?"

"वह बीमार है"

"और तुम तमाशा देख रहे हो?"

उसके मुँह पर तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी। उसने कहा, "तमाशा देखने नहीं, दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले जाऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती।"

मैं आश्चर्य से उस तेरह-चौदह वर्ष के लड़के को देखने लगा। स्वाधीनता सेनानियों के कारनामों के किस्से तो फिर भी सुनने को मिल जाती है पर उनके परिवारवालों ने भी कम कष्ट नहीं किया होगा। जिसकी कल्पना भी हम नहीं कर सकते। इस कहानी में प्रसाद जी ने देशभक्तों की पारिवारिक जीवन की त्रासदी का करुण अंकन किया है।

हिमालय का पथिक

यह एकांत-जीवन की सुंदर कहानी है। एक रात, जब गिरि पथ में हिम-वर्षा हो रही थी, पथिक ने हिमालय-प्रदेश के एक कुटीर में शरण ली। उस कुटीर में एक वृद्ध तथा एक युवती रहती थी। धीरे-धीरे किन्नरी और युवक निर्भीकता से मिलने और एक-दूसरे के सन्निकट आने लगे। किंतु उनका यह व्यवहार वृद्ध को अप्रिय लगा। युवक वहाँ से जाने लगा और किन्नरी भी पुकारती हुई उसके पीछे दौड़ पड़ी। वृद्ध हताश नेत्रों से खड़ा देखता और पुकारता रहा। दूसरे ही क्षण खूनी बर्फ, वृद्ध और उन दोनों के बीच में बीच में थी। इसमें कथानक का अभाव है लेकिन फिर भी कहानी सजीव और सरस है। कहानी का प्रारंभ और अंत कथोपकथन से ही हुआ है। इस दृष्टि से कहानी सुंदर है। कहानी में प्रसाद का एकांत-प्रकृति प्रेम झलकता है। यह समाज से दूर, प्रकृति के एकांत कोने में घटित होती है।

प्रतिध्वनि

यह एक सामाजिक कहानी है। इसमें सामाजिक कुरीतियों पर प्रकाश डाला गया है। जिस दिन तारा विधवा हुई उसी दिन रामा ने उस पर रोदन मिश्रित व्यंग्य किया जो तारा के हृदय में चुभ-सा गया। संपन्नता के कारण तारा को विशेष कष्ट का अनुभव न हुआ किंतु रामा अपनी दरिद्रता के दिन कन्या श्यामा के साथ काटने लगी। अर्थाभाव से वह श्यामा का विवाह भी न कर सकी और उसे असहाय छोड़कर कूच कर गई। धीरे-धीरे सारा सामान बिक गया। अंत में जब श्यामा की सबसे प्यारी चीज़ आम का बाग भी बिक गया तो वह विक्षिप्त हो गई। पर बात यहीं समाप्त नहीं हुई। एक दिन तारा के उत्तराधिकारी प्रकाश ने श्यामा के साथ गलत व्यावहार किया। श्यामा का पागलपन सर चढ़ गया और वह अपने बाग के आम तोड़-तोड़कर तब तक प्रकाश को मारती रही जब तक उसकी हिचकियाँ न बँध गई।

चूड़ीवाली

यह कहानी 'चाँद' नामक मासिक पत्रिका में 'कला का मूल्य' नाम से प्रकाशित हुई थी। यह पाँच भागों में विभक्त कहानी है। पाँचों भाग एक-दूसरे के साथ बाँधे हुए हैं। चूड़ीवाली का नाम विलासिनी था। वह नगर की एक प्रसिद्ध नर्तकी की कन्या थी। लेकिन वह कुलवधू बनना चाहती थीं अपनी इसी लालसा को पूरा करने के लिए वह चूड़ीवाली बन गई और सरकार विजय कृष्ण के यहाँ आने-जाने लगी। विजय कृष्ण इतना तो समझते थे कि चूड़ीवाली उन पर आकृष्ट है लेकिन विलासी पुरुष के रूप में उन्होंने उसके मन की भावनाओं को महत्व नहीं दिया। भाग्य का लेखन एक मुकदमें में हार जाने के बाद विनोद कृष्ण अपनी सारी संपत्ति से हाथ धो बैठे। उसकी पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया। विलासिनी सरकार के इस दशा में नहीं देख पाती वह गाँव के बाहर तपस्विनी सा जीवन जीने लगती है। वह पास के गाँव के खेतों में काम करती है और अनाथों तथा भिखारियों की सेवा करने लगती है। इधर सरकार भी तपस्वी वेश में इधर-

उधर घूमते हुए अंत में विलासिनी की कुटिया तक पहुँच ही जाते हैं। दोनों का मिलन होता है। वासना पर त्याग, सेवा की विजय होती है।

प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी के द्वारा इस सत्य पर प्रकाश डाला है कि यह समाज ने धारणा बना ली है कि वेश्याएँ और उनकी संतानें दुष्चरित्र ही होती है लेकिन ऐसा हमेशा नहीं होता, उन्हें कुत्सित बनाने का उत्तरदायित्व समाज पर भी है क्योंकि अगर वे वेश्यावृत्ति छोड़कर समाज के साथ जुड़कर एक स्वस्थ जीवन जीने का प्रयास करती भी हैं तो समाज उन्हें नहीं अपनाता। अगर विलासिनी की तरह सबको थोड़ा समाज की सहायता प्राप्त हो जाए तो किसी भी स्त्री को वेश्या जीवन बिताना ही न पड़े।

प्रणय चिह्न

यह एक प्रेम कहानी है। कथोपकथन की दृष्टि से यह एक सुंदर कहानी है। कहानी तीन भागों मे विभक्त है। प्रथम भाग में- युवक पथिक से अपनी प्रियतमा के पास संदेशा भेजता है, द्वितीय भाग में वह उससे मिलने का प्रस्ताव करती है और तृतीय भाग में उनका मिलन होता है। इस प्रकार से कहानी के तीनों भाग एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। ‘स्वच्छन्दतावाद’ से प्रभावित यह एक रोमांस की कहानी है। यह काल्पनिक कहानी है लेकिन इसमें प्रेम की शक्ति और उसके अनन्यता पर प्रकाश डाला गया है।

रूप की छाया

इस कहानी के केंद्र में नारी मनोविज्ञान है। कहानीकार ने दर्शाया है कि सरला काशी के घाटों का संध्याकालीन दृश्य देख रही थी। सहसा उसकी दृष्टि फटेहाल युवक विद्यार्थी शैलनाथ पर पड़ी। उसकी एक प्रौढ़ा संगिनी सहायता देने के लिए प्रलोभन से उसे अपने साथ ले आई। अब शैलनाथ वहाँ सुख से रहने लगा। एक दिन सरला ने उससे स्पष्ट कह दिया, ‘अब तुम मुझसे छिप नहीं सकते। तुम्हीं मेरे पति हो। एक दिन चाची के बिगड़ने पर सहसा घर से निकल पड़े और फिर लौटकर न आय।’ युवक ‘हाँ’ कहने ही वाला था कि उसके मुख से निकल पड़ा, ‘यह तुम्हारा भ्रम है, तुम्हें रूप की छाया ने भ्रांत कर दिया है। सरला क्षोभ और ग्लानि से गड़ने लगी और क्रमशः घनीभूत रात में उसके रूप की छाया भी विलीन हो गई।

शरणागत

इस कहानी में चंदनपुर के जमींदार किशोर सिंह की पत्नी सुकुमारी और अंग्रेज महिला एलिस के वार्तालाप के द्वारा भारतीय स्त्रियों की पुरानपंथी मानसिकता को उभारा गया है। जैसे-

‘एलिस सचमुच उठी, पर सुकुमारी एक बार किशोर सिंह की ओर वक्रदृष्टि से देखकर हँसती हुई पास की बाहर दरी में भागकर चली गई, किंतु एलिस ने पीछा न छोड़ा। वह भी वहाँ पहुँची और उसे पकड़ा। सुकुमारी एलिस को देख गिड़गिड़ाकर बोली- क्षमा कीजिए, हम लोग पति के सामने कुर्सी पर नहीं बैठतीं और न कुर्सी पर बौठने का अभ्यास ही है।’

एक और उदाहरण देखिए-

एलिस ने सुकुमारी से कहा- आप क्या यहाँ भी न बैठेंगी? क्या यहाँ भी कुर्सी है?

सुकुमारी- परसेगा कौन

एलिस- खानसामा
सुकुमारी- क्यों, क्या मैं नहीं हूँ?
किशोर सिंह- जिद न कीजिए, यह हमारे भोजन कर लेने पर भोजन करती है।'

प्रस्तुत कहानी के द्वारा जयशंकर प्रसाद ने स्त्रियों को भी यह शिक्षा दी है कि उन्हें भी अपने अधिकार के लिए उठ खड़ा होना होगा।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद की पहली मौलिक कहानी कौन-सी है?
- जयशंकर प्रसाद के कहानी संग्रहों के नाम बताइए?
- 'चाँद' मासिक पत्रिका में 'चूड़ीवाली' नामक कहानी पहले किस नाम से छपी थी?
- 'रूप की छाया' कहानी का संबंध किस शहर के साथ है?

15.3.5 जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषताएँ

जयशंकर प्रसाद ने हिंदी कहानी लेखन को एक नया ही स्वरूप प्रदान किया था। प्रसादजी की कहानी कला की विशेताओं को निम्न शीर्षकों के द्वारा आप लोग आसानी से समझ सकेंगे।

कथावस्तु

प्रसाद जी की कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि उनकी कहानियों में प्रागैतिहासिक, वैदिक, उत्तर वैदिक, उनके तत्कालीन समय के भारत और उनके कल्पनानुसार भविष्य के भारत की जो झाँकी उन्होंने प्रस्तुत की है यह अपने आप में उत्कृष्ट है। उनकी यह विशेषता उन्हें दूसरे कहानीकारों से अलग करती है। प्रसाद जी ने अपनी कथावस्तुओं के द्वारा जहाँ एक तरफ अतीत की मर्यादाओं का समर्थन कर कहानियों में आदर्श स्थापित किया है, वहीं दूसरी तरफ प्रचलित कुरीतियों और पाखंडों का भी खुलकर विरोध किया।

वातावरण सृष्टि

जयशंकर प्रसाद की कहानियों में वातावरण सृष्टि का सफल प्रयोग हुआ है। इस संबंध में डॉ. लाल ने भी यही लिखा है कि, 'कला की दृष्टि से वातावरण-प्रधान कहानियों का महत्व सबसे अधिक है। इनमें लेखक को कला की काट-छाँट और तराश दिखाने के लिए उपयुक्त अवसर मिलता है।कवित्वपूर्ण वातावरण, कवित्वपूर्ण भावना और नाटकीय तथा आदर्शवादी परिस्थितियों की सृष्टि में जयशंकर प्रसाद अद्वितीय हैं, उनकी कला कवित्वपूर्ण और स्वच्छंदतावादी है।'

चरित्र का विकास

प्रसाद जी ने अपनी कहानियों के चरित्रों का विकास अधिकतर संकेत रूप में होते हुए दिखाया है। जैसे-जैसे उनकी कहानियाँ आगे बढ़ती गई है वैसे-वैसे पात्र अपने स्थान, काल, कर्तव्य आदि के अनुसार परिपक्व होते गए हैं। जैसे-छोटा जादूगर का 14 वर्षीय बालक, चूड़ीवाली कहानी की विलासिनी आदि। प्रसाद जी कुशल चित्रकार की भाँति थोड़ी सी रेखाओं के द्वारा अपने चरित्र की संपूर्ण झाँकी पाठक के सामने रख देने में भी सिद्धहस्त थे।

शैली तत्व

प्रसाद जि ने अपनी कहानियों में विविध प्रकार की शैलियाँ अपनाईं। जैसे-

'ममता' कहानी साधारण वर्णनात्मक शैली में लिखी गई है-

'रोहतास दुर्ग के प्रकोष्ठ में बैठी हुई युवती ममता शोण के तीक्ष्ण गंभीर प्रवाह को देख रही है। ममता विधवा थी। उसका यौवन शोण के समान ही उमड़ रहा था। मन में वेदना, मस्तक में आँधी, आँखों में पानी की बरसात लिए, वह सुख के कंटक शयन में विकल थी। वह रोहतास-दुर्गपति के मंत्री चूड़ामणि की अकेली दुहिता थी, फिर उसके लिए कुछ अभाव होना असंभव था, परंतु विधवा थी। हिन्दू-विधवा संसार में सबसे तुच्छ निराश्रय प्राणी है, तब उसकी विडम्बना का कहाँ अंत था।'

'छोटा जादूगर' नामक कहानी आत्म चरित्र चित्रण शैली में लिखित है। यथा- 'मैं न जाने क्यों उसकी ओर आकर्षित हुआ? उसके अभाव में भी पूर्णता थी। मैंने पूछा- क्यों जी तुमने इसमें क्या देखा?'

'आकाशदीप' कहानी की संलाप शैली अपने आप में उत्कृष्ट है-

"बंदी।"

"क्या है? सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो? "

"अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

'देवदासी' कहानी पत्रात्मक शैली में रचित है-

"प्रिय रमेश,

समय को उलाहना देने की प्राचीन प्रथा को मैं अच्छी नहीं समझती.....।"

स्पष्ट है कि प्रसाद ने कहानी लेखन के शैली तत्व को महत्व प्रदान किया।

शीर्षक चयन

प्रसादजी की कहानी कला की यह भी एक विशेषता रही कि वे अपनी कहानियों के शीर्षकों का चयन बहुत सोच-समझकर किया करते थे। प्रसाद की कहानियों के शीर्षक प्रायः कहानियों के मुख्य पात्रों के नाम पर आधारित है जेसे- साल्वती, देवरथ, देवदासी, विजया आदि। कहीं-कहीं कहानियों के मुख्य भाव के आधार पर भी उन्होंने कहानियों का शीर्षक रखा है जैसे- पुरस्कार, अपराधी, सहयोग, पाप आदि। इसी प्रकार से मुख्य दृश्य को ध्यान में रखकर उन्होंने कहानियों का नामकरण किया है जैसे- भिखारिन, गूदड़ साई, गुदड़ी में लाल आदि। इस प्रकार प्रसाद ने हिंदी कहानी लेखन को भी नवीन दिशा प्रदान की।

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी की कहानी कला की विशेषता बताइए।
- प्रसाद ने किन-किन शैलियों में कहानी रचना का कार्य किया?
- प्रसाद जी अपनी कहानियों के शीर्षकों का चयन किस प्रकार से करते थे?

15.4 पाठ सार

जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 में काशी के एक धनी परिवार में हुआ था। उनका बचपन बहुत आरंभ से संपूर्ण परिवार के प्रेम छाया में गुजर रहा था, लेकिन आकस्मिक विपरीत परिस्थितियों ने उनकी किशोरावस्था और आगे के जीवन को संघर्षपूर्ण बना दिया। **नौ** वर्ष की आयु में ही उन्होंने 'कलाधर' उपनाम से कविता लेखन शुरू कर दिया था। जैसे-जैसे जीवन का अनुभव मिलता गया, वैसे-वैसे उनकी रचनाओं में लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता, ध्वन्यात्मकता का सौंदर्य बढ़ता चला गया। कहानियों में उन्होंने भावना को अधिक महत्व दिया और राष्ट्रीय, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक परिवेश को उभारा।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. जयशंकर प्रसाद ने हिंदी कहानी को प्रेमचंद की कहानियों के समानांतर एक नया रूप प्रदान किया।
2. प्रसाद जी की पहली मौलिक कहानी 'ग्राम' सन् 1911 में 'इंदु' में प्रकाशित हुई थी। उन्होंने अपने जीवन काल में 70 कहानियाँ लिखीं।
3. प्रसाद जी रवींद्रनाथ ठाकुर और उनकी 'गीतांजलि' से काफी प्रभावित थे। कहानी कला के क्षेत्र में भी उन्होंने रवींद्र की तरह ही भावनात्मक लेखन को महत्व दिया।
4. प्रसाद जी की कहानियों में प्रागैतिहासिक, वैदिक, उत्तर वैदिक, उनके तत्कालीन समय के भारत और उनके कल्पनानुसार भविष्य के भारत की झाँकी प्रस्तुत की गई है। यह विशेषता उन्हें दूसरे कहानीकारों से अलग करती है।
5. प्रसाद जी ने अपनी कहानियों द्वारा जहाँ एक तरफ अतीत की मर्यादाओं का समर्थन कर कहानियों में आदर्श स्थापित किया, वहीं दूसरी तरफ प्रचलित कुरीतियों और पाखंडों का भी खुलकर विरोध किया।

15.6 शब्द संपदा

1. कालांतर = समय के बाद
2. प्रसव काल = बच्चे को जन्म देने का समय
3. उपचारक = डॉक्टर

4. अतिश्योक्ति = बात को बढ़ा-चढ़ाकर बोलना

5. पाश्चात्य शिक्षा = विदेशी शिक्षा

6. अवगत = जानना

7. परिकल्पना = कल्पना

8. विश्वनियंता = ईश्वर

9. धर्माचरण = धर्म का आचरण

10. छद्म वेश = वेश बदल लेना

11. किन्नर = अर्द्धनारीश्वर

12. कारागृह = जेल

13. विपन्नता = गरीबी

14. एकांतवास = अकेले निवास करना

15. चयन = चुनाव

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. जयशंकर प्रसाद के जन्म, शिक्षा तथा साहित्यिक यात्रा पर प्रकाश डालिए।
2. जयशंकर प्रसाद के जीवन दर्शन पर प्रकाश डालिए।
3. जयशंकर प्रसाद की कहानी कला की विशेषाओं पर प्रकाश डालिए।
4. जयशंकर प्रसाद की कुछ कहानियों की संक्षिप्त जानकारी दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व एवं वेशभूषा पर प्रकाश डालिए।
2. प्रसाद जी के समकालीन परिवेश का उन पर क्या प्रभाव पड़ा?
3. प्रसाद जी की कहानियों के शैली तत्व पर प्रकाश डालिए।
4. प्रसाद जी की कहानियों के शीर्षकों की विशेषता पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. प्रसाद जी का परिवार किस वस्तु का व्यापार करता था? ( )

(अ) सुँघनी (आ) सिगरेट (इ) पान (ई) इनमें से कोई नहीं

2. प्रसाद जी को संस्कृत किसने पढ़ाई? ( )

(अ) दीनबंधु शास्त्री (आ) दीनबंधु ब्रह्चारी (इ) दीनबंधु पाठक (ई) दीनानाथ

3. 'प्रणय चिह्न' कहानी कितने भागों में विभाजित है? ( )

(अ) एक (आ) दो (इ) तीन (ई) पाँच

4. 'हिमाद्रि तुंग शृंग से' यह गीत किस नाटक का अंग है? ( )

(अ) स्कन्दगुप्त (आ) जनमेजय का नागयज्ञ (इ) चंद्रगुप्त (ई) ध्रुवस्वामिनी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. प्रसाद जी के पिता का नाम .... था।
2. प्रसाद जी के पिता की मृत्यु सन् .... में हुई
3. प्रसाद जी का पहला विवाह सन् .... में हुआ।
4. प्रसाद जी के पुत्र का नाम ....रखा गया था।

III. सुमेल कीजिए -

1. कंकाल	(अ) पहली छायावादी रचना
2. झरना	(आ) सन् 1912
3. चित्राधार	(इ) सन् 1936
4. कामायनी	(ई) उपन्यास

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद - एक विशेष अध्ययन : गंगासहाय प्रेमी एवं जगदीश
2. प्रतिनिधि कहानियाँ : जयशंकर प्रसाद

इकाई 16 : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 मूल पाठ : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विवेचन
16.3.1 'आकाश दीप' : तात्विक विवेचन
16.3.1.1 कथावस्तु
16.3.1.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण
16.3.1.3 देशकाल व वातावरण
16.3.1.4 संवाद योजना
16.3.1.5 उद्देश्य
16.3.1.6 भाषा-शैली
16.3.1.7 कहानी के शीर्षक का औचित्य
16.4 पाठ सार
16.5 पाठ की उपलब्धियाँ
16.6 शब्द संपदा
16.7 परीक्षार्थ प्रश्न
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का आरंभ सन् 1800 के बाद से माना जाता है। इससे पहले हिंदी गद्य का जो रूप मिलता है वह साहित्य की दृष्टि से विशेष महत्व नहीं रखता। कालक्रम और कहानी कला की दृष्टि से रेवरेंड जे. न्यूटन के द्वारा लिखित 'जमींदार का दृष्टांत' नामक कहानी को हिंदी की पहली कहानी मानना गलत न होगा। वैसे तो, हिंदी कहानी का जन्म सन् 1871 में ही हो चुका था, परंतु उसका विधिवत विकास 20 वीं शताब्दी के प्रथम भाग में हुआ। हिंदी कहानी अपने जन्म और विकास के लिए हमेशा पाश्चात्य अर्थात् विदेशी साहित्य तथा बांग्ला साहित्य का ऋणी रहेगा परंतु इसके साथ-साथ यह कहना भी गलत नहीं होगा कि हिंदी कहानी साहित्य ने अपनी अलग पहचान बनाने में अधिक समय नहीं लिया। हिंदी कहानी को समृद्ध करने में प्रसिद्ध छायावादी कवि और नाटककार जयशंकर प्रसाद का भी योगदान अविस्मरणीय है। प्रस्तुत इकाई में आप उनकी विख्यात कहानी 'आकाशदीप' का गहन अध्ययन करेंगे।

16.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- प्रसाद जी की कहानी 'आकाशदीप' की कथावस्तु से परिचित हो सकेंगे।

- कहानी के तत्वों के आधार पर 'आकाशदीप' की समीक्षा कर सकेंगे।
- प्रसाद जी की लेखन शैली की विशेषता समझ सकेंगे।
- 'आकाशदीप' के शीर्षक के औचित्य और इसकी प्रासंगिकता से अवगत हो सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : 'आकाश दीप' (जयशंकर प्रसाद) : तात्विक विश्लेषण

16.3.1 'आकाश दीप' : तात्विक विवेचन

प्रिय छात्रो! जयशंकर प्रसाद की प्रसिद्ध कहानी 'आकाश दीप' का विश्लेषण कहानी के तत्वों के आधार पर करेंगे।

16.3.1.1 कथावस्तु

"आकाश दीप" जयशंकर प्रसाद का तृतीय कहानी संग्रह है। यह प्रसाद जी की अत्यंत प्रौढ़ रचना है। इस संग्रह में 19 कहानियाँ हैं - जैसे - स्वर्ग के खंडहर में, ज्योतिष्मती, हिमालय का पथिक, अपराधी, आकाशदीप आदि। आइए विद्यार्थियो! अब हम आकाशदीप कहानी की कथावस्तु का ज्ञान प्राप्त कर लें।

प्रसाद जी द्वारा लिखित आकाशदीप एक लंबी अंतर्द्वंद्व प्रधान प्रेम कहानी है। कहानी 7 भागों में विभक्त है। प्रत्येक भाग दूसरे भाग के साथ जुड़ा हुआ है साथ ही साथ कहानी जैसे - जैसे आगे बढ़ी है रहस्य का भी सुंदर समायोजन इसमें हुआ है। कहानी का प्रारंभ कथोपकथन से हुआ है। प्रस्तुत कहानी के दो प्रमुख पात्र है - बुधगुप्त और चम्पा।

रात के अंधेरे में जब सब सो रहे थे ठंडी हवाएँ शरीर कँपा रही थी। समुद्र में हिलोरें उठने लगी। तूफान की संभावना थी। तभी एक बंदी न दूसरे बंदी से पूछा, "मुक्त होना चाहते हो?" दूसरा बंदी प्रश्न का महत्व न समझ सका था शायद वह नींद में था लेकिन पहले बंदी ने आशा न छोड़ी। उसके बंधन ढीले थे। यही अवसर था मौके के फायदा उठाने का, उसने खुद को बंधनमुक्त किया और किसी के कुछ समझने से पहले ही उसने दूसरे बंदी को भी बंधनमुक्त कर दिया। "दोनों ही अंधकार में मुक्त हो गए। दूसरे बंदी ने हर्षातिरेक से उसको गले लगा लिया। सहसा उस बंदी ने कहा - यह क्या? तुम स्त्री हो?"

'क्या स्त्री होना कोई पाप है?' - अपने को अलग करते हुए स्त्री ने कहा।

'शस्त्र कहा है – तुम्हारा नाम?'

"चम्पा।"

तो यही है कहानी की नायिका चम्पा और कहानी का नायक जलदस्यु बुधगुप्त। जाह्नवी के तट पर जो चम्पा नगरी थी चम्पा वही की क्षत्रिय बालिका थी जो माता की मृत्यु के बाद पिता के साथ नाव में ही रहने लगी थी। जलदस्यु बुधगुप्त भी ताम्रलिप्ति का एक क्षत्रिय था लेकिन दुर्भाग्य से जलदस्यु का जीवन बीता रहा था उसने जब चम्पा के पिता के नाव पर आक्रमण किया था तब उसके पिता ने सात जलदस्युओं को मारकर जलसमाधि ली थी। अनाथ चम्पा को अकेले पा कर नाव के स्वामी मणीभद्र ने उसके सामने घृणित प्रस्ताव रखा उसके मना कर देने पर उसने चम्पा को बंदी बना लिया था। पर आज वह उसी जलदस्यु बुधगुप्त के साथ ही स्वतंत्र हो चुकी थी जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उसके पिता की मृत्यु का कारण था और अब

वह नाव के नायक को हराकर स्वयं सेनापति बन चुका था। पर अब उसे क्या करना चाहिए? इसे लेकर वह अनिश्चित ही रहना चाहती थी। इधर नाव एक सुनसान द्वीप से जा टकराई जहाँ कोई नहीं था वह नया द्वीप था बुधगुप्त ने कहा - "जब इसका कोई नाम नहीं है, तो हम लोग इसे चम्पा द्वीप कहेंगे।"

इस घटना को घटे पाँच साल बीत गए। अब बुधगुप्त महानाविक है। बाली, जावा, सुमात्रा तक का वाणिज्य उसके अधिकार में है। वह चम्पा को अपनी रानी बनाकर संसार के सभी सुख देना चाहता है लेकिन चम्पा विलासिता से दूर, प्रेमभाव से दूर अपनी माँ को याद करके "आकाशदीप" जलाना ही अपने जीवन का लक्ष्य बना चुकी है। वह भटके हुए नाविकों को सही मार्ग दिखाना चाहती ही ताकि कोई अपनी परिवार से दूर न हो। बुधगुप्त न जाने कितनी बार उसे कह चुका है, मैं तुम्हारे पिता का घातक नहीं हूँ चम्पा! वह एक दूसरे दस्यु के शस्त्र से मरे"। चम्पा भी इस बात को सच मानना चाहती थी वह कहती भी है, "यदि मैं इसका विश्वास कर सकती। बुधगुप्त, वह दिन कितना सुंदर होता, वह क्षण कितना स्पृहणीय! आह! तुम इस निष्ठुरता में भी कितने महान होते।" लेकिन चम्पा के मन का अंतर्द्वंद्व कभी समाप्त नहीं होता और एक दिन वह स्पष्ट रूप में बुधगुप्त को अपना निर्णय सुनाकर कह देती है, "बुधगुप्त! मेरे लिए सब भूमि मिट्टी है; सब जल तरल है; सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक! तुम स्वदेश लौट जाओ, विभवों का सुख भोगने के लिए, और मुझे, छोड़ दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुख की सहानुभूति और सेवा के लिए"। बुधगुप्त चम्पा को वही छोड़ कर स्वदेश के लिए निकल पड़ा "यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। चम्पा आजीवन उस दीप - स्तम्भ में आलोक जलती रही। किन्तु, उसके बाद भी बहुत दिन, दीपनिवासी, उस माया - ममता और स्नेह सेवा की देवी की समाधि-सदृश पूजा करते थे।

एक दिन काल के कठोर हाथों ने उसे भी अपनी चंचलता से गिर दिया।"

कहानी का प्रारंभ जितनी रोमांचकारी तरीखे से हुई है कहानी का अंत भी उतनी ही सुंदरता के साथ हुई है। प्रेम,अंतर्द्वंद्व और कर्तव्यपालन के बीच पूरी कहानी में संघर्ष स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ता है और अंत में जीत कर्तव्य पालन की हुई है।

16.3.1.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण

किसी भी कहानी को आगे बढ़ाने के लिए, उसमे रहस्य को बनाए रखने के लिए और उसे अंत तक ले जाने के लिए कहानी के पात्रों का होना बहुत आवश्यक है। जयशंकर प्रसाद द्वारा लिखित "आकाशदीप" कहानी के दो प्रमुख पात्रों चम्पा और बुधगुप्त ने भी प्रस्तुत कहानी को उत्कृष्ट शिखर तक पहुँचा दिया है। इसलिए इन दोनों पात्रों के चारित्रिक विशेषता को समझना आप विद्यार्थियों के लिए आवश्यक हो जाता है।

चम्पा का चरित्र चित्रण

चम्पा का चरित्र अनोखा है। उसके मन के, अंतरद्वन्द्व ने कहानी को प्रारंभ से लेकर अंत तक प्रभावित किया है। वह अपने माता-पिता की इकलौती संतान थी। यह सही बात है कि बहुत काम आयु में उसने अपने माता-पिता को खो दिया था लेकिन जितना समय उसने अपने

परिवार के साथ बिताया था वे स्मृतियाँ उसके हृदय में जीवंत थी। माँ से ही उसने सीखा था "आकाशदीप" जालना और अपने पिता की मृत्यु को अर्थात हत्या को वह भूल नहीं सकी थी। तभी तो वह कहानी के अंत तक बुधगुप्त के प्यार को स्वीकार नहीं कर सकी। यह उसकी मातृ-पितृ भक्ति को ही दर्शाता है। चम्पा बंधक का जीवन बिता रही थी लेकिन वह क्षत्रिय बालिका थी। इसी कारण से क्षत्रियों की वीरता और उत्साह उसमें स्वाभाविक रूप में था। रात के अँधेरें में जिस प्रकार से उसने जलदस्यु बुधगुप्त और स्वयं को जिस चपलता से मुक्त किया उसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है। चम्पा में लालच की भावना नहीं हैं। उसे वैभव से घृणा थी क्योंकि उसने देखा था वैभव मनुष्य को हृदयहीन बना देता है। उसे साधारण जीवन पसंद था तभी तो वह बुधगुप्त से भी कहती है, "मुझे इस बंदीगृह से मुक्त करो। अब तो बाली, जावा, सुमात्रा का वाणिज्य केवल तुम्हारे ही अधिकार में है महानाविक! परंतु, मुझे उन दिनों की स्मृति सुहावनी लगती है, जब तुम्हारे पास एक ही नाव थी और चम्पा के उपकूल में पण्य लड़ कर हम लोग सुखी जीवन बिताते थे-इस जल में अगणित बार हमलोगों की तरी आलोकमय प्रभात में तारिकाओं की मधुर ज्योति में-थिरकती थी।"

चम्पा ईमानदार प्रेमिका थी। प्रेम तो उसे भी बुधगुप्त से था। पर उसके हृदय का अंतर्द्वंद्व हमेशा उसे बुधगुप्त से दूर करता रहा। उसने अपने हृदय को बुधगुप्त के सामने खोलकर रख दिया, "विश्वास? कदापि नहीं, जब में अपने हृदय पर विश्वास नहीं कर सकी, उसी ने मुजे धोखा दिया, तब में कैसे कहूँ? मैं तुम्हें घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिए मार सकती हूँ। अंधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।" चम्पा रो पड़ी।

चम्पा के चरित्र को उत्कृष्टता के चरम शिखर पर पहुँचाती है उसकी सहानुभूति और त्याग भावना। वह बुधगुप्त के मार्ग की बाधा नहीं बनती है। वह उसे स्वदेश लौट जाने की प्रेरणा देती है। वह आजीवन भूले-भटके नाविकों को सही मार्ग दिखने के लिए 'आकाशदीप' भी जलाती रही।

बोध प्रश्न

- चम्पा के चरित्र को कहानी में इतना महत्व क्यों मिला है?
- वे कौन से दो गुण है जिनके कारण से चम्पा का चरित्र कहानी में उत्कृष्ट शिखर तक पहुँच गया है?
- चम्पा में क्षत्रियों के गुण थे यह आपको कैसे समझ आया?

बुधगुप्त का चरित्र चित्रण

बुधगुप्त जयशंकर प्रसाद के द्वारा लिखित 'आकाशदीप' कहानी का एक अकेला प्रमुख पुरुष पात्र है। वैसे तो कहानी को छाप ने बहुत अधिक प्रभावित किया है लेकिन बुधगुप्त की चारित्रिक विशेषताओं को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता।

वैसे तो,बुधगुप्त कहानी के प्रारंभ में जलदस्यु का जीवन बिता रहा था लेकिन वह था तो ताम्रलिप्ति का क्षत्रिय। जिस कारण से उसमे वीरता की कोई कमी नहीं थी। चम्पा के द्वारा बंधनमुक्त किए जाने के बाद ही वह अपने रणकौशल की पूरी तैयारी कर लेता है और नाव के नायक से युद्ध करके उसे पराजित कर कुछ ही क्षण में वह नाव का पोताध्ययक्ष बन गया।

क्षत्रियों की पहचान जैसे उनकी रणकौशल से बनती है ठीक वैसे ही उनकी पहचान उनकी क्षमा भाव से भी बनती है। बुधगुप्त में क्षमा भाव पाई गई है। नाव के नायक के साथ भले ही वह युद्ध करता है लेकिन नायक पराजित होकर जब प्राणभिक्षा माँगता है तब उसे बंधक न बनाकर उसे अपने साथ ह रख लेता है।

बुधगुप्त ने बंधक के रूप में, जलदस्यु के रूप में अपने जीवन को बिता रहा था लेकिन उसमें महत्वाकांक्षा की कोई कमी नहीं थी उसे बस एक अवसर की तलाश थी और जैसे ही उसे वह अवसर मिलता है वह उसका सदुपयोग करते हुए न् केवल "चम्पा द्वीप" नामक एक नए द्वीप को बसाता है बल्कि पाँच साल के भीतर ही वह अपने व्यापार को बाली, जावा, सुमात्रा तक विकसित कर लेता है वह ऐसा कर पाता है क्योंकि अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए वह परिश्रम करने को भी तैयार था। बुधगुप्त धर्म और आस्था में विश्वास रखनेवाला व्यक्ति नहीं था। वह शस्त्र बल को ही पूर्ण बल माननेवाला व्यक्ति था। वह चम्पा के द्वारा जलाए जानेवाले "आकाशदीप" का भी मज़ाक उड़ाता हुए कहता है,"हँसी आती है। तुम किसको दीप जलाकर पाठ दिखलाना चाहते हो उसको जिसको तुमने भगवान मान लिया है।"

बुधगुप्त भले ही ईश्वर और आस्था में विश्वास नहीं रखता था लेकिनऊसके हृदय में देशप्रेम की भावना की कोई कमी नहीं थी। वह चम्पा से भी कहता है, "स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश!वह महिमा की प्रतिमा!मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है;" वह भारत जाकर जीवन को नए सिरे से तैयार करना चाहता था। इसके लिए वह चम्पा का भी साथ चाहता था तभी तो वह चम्पा से कहता भी है कि, "चलोगी चम्पा? पोतवाहिनी पर असंख्य धनराशि लड़कर राजरानी-सी जन्मभूमि के अंक में? आज हमारा परिणय हो, कल ही हमलोग भारत के लिए प्रस्थान करें।"

बुधगुप्त के हृदय में अपनी मातृभूमि के लिए जितना प्रेम था उतना ही प्रेम वह चम्पा से भी करता था। यह प्रेमभाव उसके हृदय में तब से था जब से उसने चम्पा को देखा था। चाहता तो वह चम्पा को बलपूर्वक भी अपना बना सकता था लेकिन उसका प्रेम चम्पा के लिए पवित्र था तभी तो वह चम्पा से कहता है, "यह चम्पा, तुम कितनी निर्दयी हो! बुधगुप्त को आज्ञा देकर देखो तो,वह क्या नहीं कर सकता। जो तुमहारे लिए नए द्वीप की सृष्टि कर सकता है, नई प्रजा खोज सकता है, नए राज्य बना सकता है, उसकी परीक्षा लेकर देखो तो। कहो, चम्पा! वह कृपाण से अपना हृदय-पिण्ड निकाल अपने हाथों अतल जल म विसर्जन कर दे।" महनवीक-जिसके नाम से बाली, जावा और चम्पा का आकाश गूँजता था, पवन थर्राता था-घुटनों के बाल चम्पा के सामने छलछलाई आँखों से बैठ था।" पर चम्पा का प्रेम उसके सामने भाग्य में नहीं था। उसने इस सच्चाई को स्वीकार लिया। चम्पा द्वीप चम्पा को ही सौंपकर वह अपनी यात्रा पर निकाल गया, लेकिन चम्पा की अस्मिता, उसकी इच्छा का सम्मान वह अंत तक करता रहा।

मुझे पूर्ण विश्वास है, आप लोगों को बुधगुप्त का चरित्र भलीभाँति समझ आ गया है।

बोध प्रश्न

- बुधगुप्त कहाँ का क्षत्रिय था?
- बुधगुप्त ने अपना व्यापार किस-किस द्वीप तक फैलाया था?

- बुधगुप्त की आस्था किनमें नहीं थी?
- चम्पा के अलावा बुधगुप्त के हृदय में किसके लिए प्रेम था?

16.3.1.3 देशकाल व वातावरण

कहानी की सफलता एवं सार्थकता के लिए यह आवश्यक है कि उसकी कथावस्तु में देशकाल एवं वातावरण को सजीव रूप में प्रस्तुत किया जाए। वैसे तो "आकाशदीप"कहानी का संबंध किसी ऐतिहासिक घटना के साथ नहीं है लेकिन इसका संबंध समय के उस कालचक्र के साथ है जब अथाह समुंदरों में जलदस्यु पाए जाते थे,वे नाविकों,व्यापारियों,को लूट लेते थे। एक समय ऐसा था जब भारत के व्यापारी जावा,सुमात्रा,बाली आदि द्वीपों के साथ व्यापार किया करते थे।

"बेला से नाव टकराई। चम्पा निर्भीकता से कूद पड़ी। माँझी भी उतरे। बुधगुप्त ने कहा- "जब इसका कोई नाम नहीं है,तो हमलोग इसे चम्पा-द्वीप कहेंगे।"

बस ऐसे ही न जाने कहाँ-कहाँ भारतीयों ने नए द्वीपों की खोज की जिनका उल्लेख भले ही इतिहास की पुस्तकों में न मिलता हो परंतु,देश-विदेश में फैले भारतीय निवासी इसी सत्य का प्रतीक है और 'आकाशदीप' उसी देशकाल एवं वातावरण को हम पाठकों तक पहुँचानेवाली कथा है।

नाविकों के जीवनशैली को प्रस्तुत कहानी में सजीव रूप में दर्शाया गया है,'चम्पा के एक उच्चसौध पर बैठी हुई तरुणी चम्पा दीपक जल रही थी। बड़े यत्न से अभ्रक की मंजूषा में दीप धर कर उसने अपनी सुकुमार उंगलियों से डोरी खींची। वह दीपाधार चड़ने लगा। भोली-भाली आँखें उसे ऊपर चड़ते बड़े हर्ष से देख रही थीं,डोरी धीरे-धीरे खींचीं गई। चम्पा की कामना थी कि उसका 'आकाशदीप'नक्षत्रों से हिलमिल जाए।"

इसी प्रकार से जयशंकर प्रसाद ने 'आकाशदीप' कहानी में नाविकों के तत्कालीन नृत्य-गीत,उनके आचार-विचार को भी सुंदर ढंग से उभारा है। देखिए- 'शैल के एक ऊँचे शिखर पर चंपा के नाविकों को सावधान करने के लिए सुदृद दीप-स्तंभ बनवाया गया था। आज उसी का महोत्सव है। बुधगुप्त स्तम्भ के द्वार पर खड़ा था। शिविका से सहायता देकर चम्पा को उसने उतार। दोनों ने भीतत पदार्पण किया था कि बाँसुरी और ढोल बजने लगे।'

इस प्रकार से हम यह कह सकते है कि प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी के द्वारा बड़ी सफलता से उसे युग को हम तक पहुँचाया है जिसकी आज हम केवल कल्पना ही कर सकते है।

बोध प्रश्न

- कहानी की सफलता के लिए क्या आवश्यक है?
- एक समय भारत का व्यापारिक संबंध किस-किस द्वीप के साथ था?

16.3.1.4 संवाद योजना

कहानी को सफल बनाने के लिए उसमें सशक्त संवाद योजना का रहना भी बहुत आवश्यक है। जैसा कि पहले ही यह स्पष्ट हो गया है कि 'आकाशदीप' एक अंतर्द्वंद्व प्रधान प्रेम कहानी है। प्रसाद जी ने अपनी संवाद योजना में कहीं भी इस अंतर्द्वंद्व को टूटने नहीं दिया है।

अंतर्द्वंद्व जहाँ होगा वहाँ प्रश्नोंत्तर का क्रम भी लगातार चलता रहेगा। यह स्वाभाविक है प्रसाद जी ने इस स्वाभाविक क्रम को कहीं भी टूटने नहीं दिया है देखिए-

"बंदी!"

"क्या है?सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो"?

"अभी नहीं, निडर खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न् मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से कोई कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आंधी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शेतहील है।"

"तो क्या तुम भी बंदी हो?"

"हाँ धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।"

"शस्त्र मिलेगा?"

"मिल जाएगा। पोत से सम्बद्ध रज्जु कट सकोगे?"

"हाँ।"

दो बंदियों के बीच में जिस तरह की वार्तालाप होनी चाहिए ठीक उसी प्रकार की संवाद योजना की व्यवस्था प्रसाद जी ने की है।

चम्पा ने किस प्रकार से अपने जीवन को समय के हाथों छोड़ दिया था इसे प्रसाद जी ने केवल एक पंक्ति की संवाद के द्वारा पाठकों तक पहुँचाया है -"मैं अपने अद्रष्ट को अनिर्दिष्ट ही रहने दूँगी। वह जहाँ ले जाए।"

यह एक प्रेम कहानी है इसलिए जयशंकर प्रसाद जी ने प्रेमाभिव्यक्ति से संबंधित संवादों की सरस प्रस्तुति बड़ी ही सजीवता के साथ की है देखिए-

"वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तम से अपनी आँखें बंद करने लगी थी। दीर्घ निश्वास लेकर महानाविक ने कहा-"इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति में एक प्रकाश-गृह बनाऊँगा, चम्पा! यहीं उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुंधली संध्या उससे आलोकपूर्ण हो जाए!"

'आकाशदीप' कहानी में वर्तमान, अतीत और भविष्य तीनों के मिलन को देखा जा सकता है। इन तीनों कालों कोण एक साथ प्रस्तुत करने के लिए जिस प्रकार की संवाद योजना की आवश्यकता पड़ती है उस संवाद योजना का समायोजन प्रसाद जी ने सुंदरता के साथ किया है। डेकिए चम्पा ने अपने अतीत को कैसे याद किया है, "मेरी माता, मिट्टी का दीपक बाँस की पिटारी में भागीरथी के तट पर बांस के साथ ऊँचे टाँग देती थी। उस समय वह प्रार्थना करती- 'भगवान मेरे पाठ-भ्रष्ट नाविक को अंधकार में ठीक पाठ पर ले चलना' और जब मेरे पिता बरसों पर लौटते तो कहते- 'साध्वी! तेरी प्रार्थना से भगवान ने संकटों में रक्षा की है। वह गदगद हो जाती।"

इसी प्रकार से चम्पा का अपने भविष्य को लेकर सोचना और उसे अभिव्यक्त करना- "पहले विचार था कि कभी-कभी इस दीप-स्तंभ पर से आलोक जलाकर अपने पिता की समाधि

की इस जल में अन्वेषण करूँगी। किन्तु देखती हूँ, मुझे भी इसी आग में जालना होगा, जैसे 'आकाशदीप'।

प्रसाद जी के संवाद योजना की एक बहुत बड़ी विशेषता यह भी है कि वे अपनी संवाद योजना के द्वारा अपनी रचनेओं के पात्रों की मनोदशा को भी चित्रित करने में सिद्धहस्त थे। देखिए प्रस्तुत उदाहरण को, 'हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके मन में एक संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगाने लगी। समुद्र-वृक्ष पर विलंबमयी राग-रंजीत संध्या थिरकने लगी। चम्पा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे। दुरदंत दस्यु ने देखा, अपनी महिमा में अलौकिक एक तरुणी बालिका! वह विस्मय से अपने हृदय को टटोलने लगा। उसे एक नई वस्तु का पता चल। वह थी-कोमलता!'

इस प्रकार से हम यह कह सकते हैं कि संवाद योजना की दृष्टि से 'आकाशदीप' एक सफल कहानी है।

16.3.1.5 उद्देश्य

कोई भी साहित्यकार केवल अपने आनंद के लिए साहिया रचना नहीं करता। साहित्य समाज का आईना है इसलिए साहित्यकार का समाज के प्रति जवाबदेही बनी रहती है। इसी नैतिक चेतना बोध के कारण से ही साहित्यकार एक उद्देश्य को लेकर ही साहित्य रचना का काम करता है। 'आकाशदीप' कहानी को भी प्रसाद जी ने उद्येश्य को लेकर ही लिखा है। भले ही प्रस्तुत कहानी में भारत की विस्तृत झांकी प्रस्तुत न् की गई हो लेकिन बुधगुप्त के देशप्रेम की भावना के द्वारा प्रसाद जी ने भारत की महिमा का गुणगान कर दिया है।

चम्पा के जीवन के द्वारा जहाँ एक तरफ स्त्री की लाचारी को उन्होनें दर्शाया है वहीं चम्पा की वीरता के द्वारा क्षत्राणी स्त्री का गुणगान किया है। स्त्री के आत्मोत्सर्ग तथा सेवाभाव को भी चम्पा के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

चम्पा, बुधगुप्त और चम्पा द्वीप की कहानी केवल उनकी कहानी नहीं है, यह उस युग को भी दर्शाता है जिसकी जानकारी साधारणतया इतिहास की पुस्तकों में नहीं मिलती। एक दिन स्वर्ण-रहस्य के प्रभात में चम्पा ने अपने दीप-स्तम्भ पर से देखा-सामुद्रिक नावों की एक श्रेणी का उपकूल छोड़कर पश्चिम-उत्तर की ओर महाजल-व्याल के समान संतरण कर रही है। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

यह कितनी ही शताब्दियों पहले की कथा है। इस कहानी का उद्देश्य यह समझाना भी रहा कि मनुष्य को कभी विश्वास, साहस आदि का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। दूसरों को उपदेश देने से बेहतर अपने आचरण पर ध्यान रखना चाहिए क्योंकि दूसरे हमारे आचरण से भी प्रभावित होते ही हैं जैसे- चम्पा के साथ रहते-रहते, उसके आचरण से प्रभावित होते-होते बुधगुप्त न केवल दस्युवृत्ति छोड़ देता है बल्कि अब वह दूसरों की भावनाओं को स्वयं की भावना से अधिक महत्व देना भी सिख गया है तभी तो वह चम्पा से कहता है,"तब मैं अवश्य चल जाऊँगा, चम्पा! यहाँ रहकर मैं अपने हृदय पर अधिकार रख सकूँ-इसमें संदेह है। आह! उन लहरों में मेरा विनाश हो जाए। "महावविक के उच्छवास में विकलता थी। फिर उसने पूछा- "तुम अकेली यहाँ क्या करोगी?"

ये बातें केवल बुधगुप्त के प्रेम को नहीं दर्शाते हैं बल्कि उसके हृदय परिवर्तन का प्रतीक है एन बातें। चम्पा के कर्तव्यबोध के सामने वह अपने प्रेम को तुच्छ पता है और अपने प्रेम की भी बली दे देता है।

16.3.1.6 भाषा-शैली

प्रसाद जी को भाषा की बड़ी अच्छी समझ थी। किस स्थान पर किस भाषा का प्रयोग करना चाहिए इस विषय का ध्यान प्रसाद जी ने अपनी सभी रचनाओं में रखा। तो फिर, 'आकाशदीप' इसका अपवाद कैसे हो सकती थी। 'आकाशदीप' की भाषा शैली भी चमत्कृत कर देनेवाली है।

'आकाशदीप' कहानी की भाषा पर प्रसाद के कवि हृदय का पर्याप्त प्रभाव देखने को मिलता है। देखिए प्रसाद जी ने कैसे प्रकृति का चित्रण किया है, "अनंत जलनिधि में उषा का मधुर आलोक फूट उठा। सुनहली किरणों और लहरों की कोमल सृष्टि मुस्कुराने लगी। सागर शांत था।"

प्रसाद ने हमेशा ही स्त्री सौन्दर्य को मर्यादित ढंग से प्रस्तुत किया है। स्त्री सौन्दर्य को प्रकृति सौंदर्य के साथ जोड़कर देखना तो प्रसाद की अपनी विशेषता रही है। 'आकाशदीप' में भी उन्होनें अपनी इसी विशेषता को चम्पा के माध्यम से प्रदर्शित किया है। "चम्पा की आँखें निस्सीम प्रदेश में निरुदेश्य थीं। किसी आकांक्षा के लाल डोरे न थे। धवल अपंगों में बालकों के सदृश विश्वास था। हत्या-व्यवसायी दस्यु भी उसे देखकर काँप गया। उसके माँ में एक संभ्रमपूर्ण श्रद्धा यौवन की पहली लहरों को जगनी लगी। समुद्र-वृक्ष पर विलंबमयी राग-रंजीत संध्या थिरकने लगी। चम्पा के असंयत कुंतल उसकी पीठ पर बिखरे थे।"

प्रसाद जी की भाषा में त्वरितता का गुण स्वाभाविक रूप में पाई जाती है। तभी तो वे अपनी रचनाओं में वीर रस को भी सहजता के साथ अभिव्यक्त कर पाते थे। 'आकाशदीप' में भी उनकी भाषा शैली की इस विशेषता को हम देख सकते हैं, 'भक्षण घात-प्रतिघात आरंभ हुआ। दोनों कुशल,दोनों दोनों त्वरित गतिवाले थे। बड़ी निपुणता से बुधगुप्त ने अपना कृपाण दाँतों से पकड़कर अपने दोनों हाथ स्वतंत्र कर लिए। चम्पा भय और विस्मय से देखने लगी। नाविक प्रसन्न हो गए। परंतु बुधगुप्त ने लाघव से नायक का कृपाणवाला हाथ पकड़ लिया और विराट हुंकार से दूसरा हाथ कटि में डाल, उसे गिरा दिया। दूसरे ही क्षण प्रभात की किरणों में बुधगुप्त का विजयी कृपाण उसके हाथों में चमक उठा।'

तो देखा, आप लोगों ने कैसे पलक झपकते प्रसाद जी ने एक भयंकर युद्ध का वर्णन कर दिया। इन विशेषताओं के कारण से ही 'आकाशदीप' कहानी को हम संवाद योजना की दृष्टि से एक सफल कहानी कह सकते हैं।

16.3.1.7 कहानी के शीर्षक का औचित्य

जयशंकर प्रसाद जी के द्वारा लिखित 'आकाशदीप' अत्यंत संक्षिप्त और सार्थक कहानी है। 'आकाशदीप' केवल एक दीपक नहीं यह एक भावना है, इसके साथ मानव मन की आस्थाएं जुड़ी हुई है। 'प्राचीन काल' में जब नाविक घर छोड़कर वाणिज्य के लिए अगाध समुद्र में निकाल पड़ते थे तब उनके घर की स्त्रियाँ उनकी मंगलकामना हेतु 'आकाशदीप' जलाकर प्रार्थना किया

करती थी। उनके मन में यह विश्वास भी था कि अगर अंधेरे में, तूफान में, अथाह समुद्र में उनका नाविक रास्ता भूल जाएगा तो उस समय उनके द्वारा जलाए गए दीप के प्रकाश के सहारे वे फिर से ठीक रास्ते वापस आ जाएँगे। इस आस्था के सहारे स्त्रियाँ अपने नाविक की प्रतीक्षा करते हुए सदियों गुज़ार दिया करती थी। इस आस्था को वह अपने भावी पीढ़ी में भी संप्रेषित किया करती थी। जैसा कि, चम्पा ने अपनी माँ से ही तो सीखा था 'आकाशदीप' जलाना। कहानी भले ही प्रेम कहानी हो लेकिन यहाँ प्रेम के व्यक्तिगत स्वरूप पर सामूहिक लोकमंगल की भावना कहानी के प्रारंभ से लेकर अंत तक हावी रही है। चम्पा और बुधगुप्त दोनों एक दूसरे से प्रेम करते थे। बुधगुप्त ने अपने प्रेम की बली चढ़ा दी चम्पा के कर्तव्य भावना को सम्मान देने के लिए तो चम्पा चाहकर भी पुत्री धर्म से पीछे न हट सकी वह पिता के हत्या के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दोषी को अपना जीवन साथी न बना सकी। दोनों का हृदय ठीक वैसे जलता रहा जैसे 'आकाश' की ओर देखकर नाविक की प्रतीक्षा में 'आकाशदीप' का हृदय जलता है।

कहानी के अंत में जब चम्पा भूले भटके नाविकों को रास्ता दिखाने के लिए 'आकाशदीप' जलाते रहने को ही अपना कर्म मन लेती है तब तो यह शीर्षक और भी अधिक सार्थक बन जाता है। नृशंसता पर कोमलता, घृणा पर प्रेम, व्यक्तिगत स्वार्थ पर कर्तव्य की विजय का प्रतीक है प्रसाद जी के द्वारा लिखित कहानी 'आकाशदीप'।

हम यह कह सकते हैं कि कहानी का शीर्षक उपयुक्त और सफल है।

बोध प्रश्न

- स्त्रियाँ किसलिए 'आकाशदीप' जलाती थी?
- चम्पा ने किसे देखकर 'आकाशदीप' जलाना सीखा?

16.4 पाठ सार

विद्यार्थियो! प्रस्तुत इकाई का अध्ययन करते हुए आपलोगों के साथ-साथ मैं भी पाठ सार में पहुँच गई हूँ।

प्रस्तुत इकाई के प्रारंभ में ही आपने हिंदी कहानी की विकासयात्रा की जानकारी को प्राप्त किया। आपने पढ़ा कि कहानी पहले मौखिक रूप में ही बोली और सुनी जाती थी। धीरे-धीरे कहानी लिखी जाने लगी। वैसे तो कहानी को प्रेमचंद ने यथार्थवादी आदर्शवाद के साथ जोड़कर नई दिशा प्रदान की थी लेकिन प्रसाद जी ने हिन्दी कहानी को प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के साथ जोड़कर उसको संपूर्ण विश्व के साथ जोड़ दिया। इसी ज्ञान को प्राप्त करने के साथ ही साथ आपने जयशंकर प्रसाद की साहित्यिक यात्रा की जानकारी प्राप्त की।

मूल पाठ में आपलोगों ने 'आकाशदीप' कहानी का अध्ययन किया। यह अंतर्द्वंद्व प्रधान एक लंबी प्रेम कहानी है। इस कहानी के दो प्रमुख पत्र हैं-चम्पा और बुधगुप्त। कहानी का प्रारंभ वार्तालाप से हुआ है। जब चम्पा और बुधगुप्त दोनों बंदी थे। चम्पा की वीरता,चपलता और उत्साह के कारण से न केवल चम्पा बल्कि बुधगुप्त भी स्वतंत्र हो सका। उनलोगों की नाव एक नई, निर्जन द्वीप से टकराई जिसका नाम बुधगुप्त ने 'चम्पा द्वीप' रख दिया। यहाँ से उनकी एक नई जीवन यात्रा शुरू हुई। पाँच साल में बुधगुप्त ने अपने व्यापार को जावा, सुमात्रा, बाली तक

विस्तृत कर लिया। वह चम्पा के साथ विवाह करके अपने व्यापार एवं जीवन को और आगे बढ़ाना चाहता था लेकिन चम्पा एक क्षण भी इस बात को नहीं भूल पाती थी कि उसकी पिता की हत्या में कहीं न कहीं बुधगुप्त का भी दोष था। ऐसा नहीं कि उसे बुधगुप्त से प्रेम नहीं था लेकिन उसके प्रेम से अधिक बलवान था उसके हृदय का अंतर्द्वंद्व। जीवन तो अंतर्द्वंद्व क सहारे नहीं चल सकता निर्णय तो लेना ही पढ़ता है और एक दिन चम्पा ने निर्णय ले ही लिया। उसने साफ शब्दों में बुधगुप्त को कह दिया कि वह चम्पा द्वीप में रहकर ही वहाँ के निवासियों की सेवा करेगी और भटके हुए निवासियों को मार्ग दिखने के लिए जीवनपर्यंत 'आकाशदीप' जलाती रहेगी। अब बुधगुप्त करता भी तो क्या? उसने बल प्रयोग करके कभी चम्पा को प्राप्त करने के बारे में सोचा नहीं था इसलिए वह चम्पा की बात को सम्मान प्रदान करते हुए वहाँ से अपनी यात्रा के लिए निकल पड़ा।

यहीं पर आकर कहानी समाप्त हो जाती है। 7 खंडों में विभाजित प्रस्तुत कहानी में जयशंकर प्रसाद ने अपनी संवाद योजना, भाषा शैली का उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत किया है। प्रसाद जी ने अपनी संवाद योजना के द्वारा अपने पात्रों के मनोभावनाओं को व्यक्त किया है, वार्तालाप और प्रश्नोत्तरों के माध्यम से उन्होनें कहीं भी कहानी के मूलतत्व 'अंतर्द्वंद्व' को टूटने नहीं दिया। 'आकाशदीप' कहानी की भाषा में गद्यात्मकता की अपेक्षा पद्यात्मकता का प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है। प्रसाद जी ने प्रस्तुत कहानी में प्रकृति का अनुपम सौंदर्य उकेरा ही है लेकिन यहाँ विशेष बात यह रही कि उन्होंने प्रस्तुत कहानी में समुद्र की सुंदरता के विभिन्न रूपों को दर्शाया है। स्त्री सौन्दर्य के मर्यादित रूप वर्णन को भी 'आकाशदीप' कहानी में हम देख सकते हैं। कहानी अपने उद्देश्य कथन की दृष्टि से भी सफल है। चम्पा के जीवन के द्वारा जहाँ एक तरफ स्त्री जीवन की लाचारी को दिखाया गया वहीं चम्पा के माध्यम से यह बात भी सामने आई है कि स्त्री क्षत्राणी रूप में खड़ी हो जाए तो उससे अधिक शक्तिशाली और कोई नहीं हो सकता। प्रस्तुत कहानी के द्वारा यह बात भी सामने आई है कि मनुष्य को कभी विश्वास, साहस आदि का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। मनुष्य को अपने आचरण को परिष्कृत रखने का भी प्रयास सदैव करना चाहिए क्योंकि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में हमारे चरित्र से समाज के दूसरे लोग प्रभावित होते हैं। जैसे कि बुधगुप्त के साथ हुआ चम्पा के साथ रहते-रहते वह उसके सद्‌गुणों से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने न केवल दस्युवृत्ति छोड़ दी बल्कि एक सफल व्यापारी बना कहानी के अंत तक वह व्यक्तिगत सुख को त्याग देनेवाला एक सफल प्रेमी भी बना। प्रस्तुत कहानी में भारत के सौन्दर्य की विस्तृत झाँकी को भले ही न दर्शाया गया हो लेकिन बुधगुप्त के द्वारा कही गई यह बात, "स्मरण होता है वह दार्शनिकों का देश! वह महिमा की प्रतिमा! मुझे वह स्मृति नित्य आकर्षित करती है।" भारत की महिमा को वर्णित करने में सक्षम है।

कुल मिलाकर हम ख सकते हैं कि प्रसाद जी द्वारा लिखित 'आकाशदीप' एक उत्कृष्ट कहानी है।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. 'आकाशदीप' कहानी का संबंध किसी ऐतिहासिक घटना के साथ नहीं है, लेकिन इसकी पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है।
2. इस कहानी का संबंध उस समय से है जब अथाह समुद्रों में जलदस्यु पाए जाते थे जो नाविकों और व्यापारियों को लूटते थे। उन दिनों भारत के व्यापारी जावा, सुमात्रा, बाली आदि द्वीपों के साथ व्यापार किया करते थे।
3. प्रसाद जी ने 'आकाशदीप' में स्त्री मन के अंतर्द्वंद्व को उभारते हुए प्रतिशोध पर प्रेम की विजय दिखाई है। इस लिहाज से यह एक अद्‌भुत प्रेम-कथा है।
4. 'आकाशदीप' में भारत के सौन्दर्य की विस्तृत झाँकी भले ही न मिलती हो लेकिन उसकी महिमा की ओर संकेत अवश्य किया गया है।

16.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व = स्वयं की विचार के साथ ही स्वयं का युद्ध
2. आकांक्षा = इच्छा
3. कुंतल = बाल
4. जलदस्यु = जल के रास्ते लुटनेवाले लूटेरे
5. ज्योति = प्रकाश
6. दार्शनिक = महान विचारक
7. धवल = सफेद
8. निद्रा = नींद
9. निस्सीम = सीमाहीन
10. पवन = हवा
11. पुलकित = आनंद
12. प्रभात = सबेरा
13. मर्मस्पर्शी = हृदय को छू लेनेवाली
14. वाणिज्य = व्यापार
15. विभवों = संपत्ति
16. शिथिल = ढीला
17. संध्या = शाम
18. सहसा = अचानक
19. स्मरण = याद
20. हर्षातिरेक = अत्यधिक प्रसन्नता

16.7 परीक्षा हेतु प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'आकाशदीप' कहानी का सारांश संक्षेप में लिखिए।
2. बुधगुप्त और चम्पा के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
3. कहानी 'आकाशदीप' में वर्णित देशकाल पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'आकाशदीप' कहानी के संवाद योजना पर प्रकाश डालियें।
2. 'आकाशदीप' कहानी के उद्देश्य कथन पर प्रकाश डालिए।
3. 'आकाशदीप' कहानी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

II. सही विकल्प चुनिए -

1. हिंदी कहानी का जन्म कब हुआ? ( )
   (अ) सन् 1871 (आ) सन् 1775 (इ) सन् 1886 (ई) सन् 1867
2. प्रसाद जी की मृत्यु कब हुई? ( )
   (अ) सन् 1937 (आ) सन् 1936 (इ) सन् 1947 (ई) इनमें से कोई नहीं
3. प्रसाद जी का परिवार किस वस्तु का व्यापार करता था? ( )
   (अ) सुँघनी (आ) सिगरेट (इ) तंबाकू (ई) पान
4. प्रसाद जी का जन्म कहाँ हुआ था? ( )
   (अ) मथुरा (आ) काशी (इ) कोलकाता (ई) दिल्ली

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. बुधगुप्त .... का क्षत्रिय था।
2. बुधगुप्त को .... ने बंधनमुक्त किया था।
3. 'आकाश दीप' कहानी संकलन का प्रथम संस्करण सन् .... में प्रकाशित हुआ था।

III. सुमेल कीजिए -

1. स्कंदगुप्त	(अ) कविता
2. झरना	(आ) नाटक
3. काव्य और कला	(इ) कहानी
4. छाया	(ई) निबंध

مولانا آزاد نیشنل اردو یونیورسٹی
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी Estd. 1998 MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनधि कहानियाँ : जयशंकर प्रसाद
2. जयशंकर प्रसाद - एक विशेष अध्ययन : गंगासहाय 'प्रेमी' एवं जगदीश शर्मा

इकाई 17 : यशपाल और उनकी कहानी कला

रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना
17.2 उद्देश्य
17.3 मूलपाठ : यशपाल और उनकी कहानी कला
17.3.1 यशपाल का संक्षिप्त जीवन परिचय
17.3.2 यशपाल की रचना यात्रा
17.3.3 यशपाल की विचारधारा
17.3.4 यशपाल की कहानियों का कथ्य
17.3.5 यशपाल की कहानियों की भाषा-शैली
17.3.6 हिंदी कथा साहित्य में यशपाल का महत्व और स्थान
17.4 पाठ सार
17.5 पाठ की उपलब्धियाँ
17.6 शब्द संपदा
17.7 परीक्षार्थ प्रश्न
17.8 पठनीय पुस्तकें

17.1 प्रस्तावना

मार्क्सवादी जीवन-दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटी के और सुलझे हुए हैं तथा वे उन्हें बहुत ही प्रभावशाली ढंग से व्यक्त भी करते हैं। उनके अनुसार आज मानवता का रूप बदल गया है। आदमी, आदमी से घृणा करता है। शक्तिशाली कमज़ोर को चुसता है। सभी साधन जैसे न्याय, सरकार, पुलिस तथा रक्षा सभी अमीरों के लिए ही बनाए गए हैं। यशपाल प्रगतिवाद के समर्थक माने जाते हैं। उन्होंने प्रगतिवाद के संबंध में बताया कि साहित्य में समाज के उन लोगों की अनुभूतियाँ मुख्य रूप से व्यक्त होती है जो शक्तिशाली है। आज निम्न वर्ग की अनुभूतियाँ भी साहित्य में व्यक्त होने लगी है क्योंकि आज यह वर्ग भी मुख्य धारा में दिखाई देने लगा है।

यशपाल जी के अध्ययन और अनुभव ने उन्हें बहुत महत्वपूर्ण बना दिया है। उन्होंने अपने विचारों को बहुत ही इमानदारी के साथ अपनी कृतियों में दि खाने का प्रयास किया है। यशपाल जी की कहानी कला पर प्रकाश डालें तो पाते हैं कि इनकी कहानियों में तीन बाते मुख्य हैं - घटना, रोचकता और उद्देश्य। लेखक एक निश्चित उद्देश्य के ध्यान में रखकर घटनाओं का ताना-बाना बुनता है। इनकी कहानियों में मनोविश्लेषण, रमणीयता, आधुनिकशैली एवं शिल्प की प्रौढ़ता पाई जाती है।

17.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- साहित्यकार यशपाल के व्यक्तित्व के परिचित हो सकेंगे।
- उनकी रचनाओं से परिचित होंगे।
- यशपाल की साहित्यिक विचारधाराओं से परिचित होंगे।
- इनकी कहानियों के कथ्य को जान सकेंगे।
- कहानियों की भाषा-शैली से परिचित होंगे।
- हिंदी साहित्य में यशपाल के महत्व को जान सकेंगे।

17.3 मूल पाठ : यशपाल और उनकी कहानी कला

17.3.1 यशपाल का संक्षिप्त जीवन परिचय

मार्क्सवादी जीवन-दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटी के तथा सुलझे हुए हैं। यशपाल का जन्म 3 दिसंबर, 1903 को पंजाब में किरोज़पुर छावनी में एक साधारण परिवार में हुआ था। उनकी माता श्रीमती प्रेमदेवी अनाथालय के एक स्कूल में अध्यापिका थी। उनके पिता का अपने परिवार के प्रति उतना लगाव नहीं था। इसलिए यशपाल की माता अपने दोनों बेटों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में बहुत अधिक सजग रहती थी।

यशपाल के विकास में गरीबी के प्रति तीखी घृणा तथा आर्य समाज और स्वाधीनता आंदोलन के प्रति उनका आकर्षण उन्हें व्यक्तित्व के विकास में बहुत सहायक सिद्ध हुए। यशपाल के रचनात्मक विकास में उनके बचपन में भोगी गई गरीबी की अहम भूमिका थी। उनका गद्य साहित्य बहुत ही विशाल है। उपन्यास, कहानी, निबंध, यात्रावृत्त, संस्मरण, जीवनी आदि अनेक गद्य विधाओं को उन्होंने समृद्ध किया है।

यशपाल के लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, लेकिन अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से की है। यशपाल के हर लेखन में मनुष्य समुदाय के हितों की बात की गई है। उनकी रचनाओं में समाज के शोषित, उत्पीड़ित तथा सामाजिक बदलाव के लिए संघर्ष करते हुए व्यक्तियों का वर्णन किया गया है। उन्होंने अपनी कृति के माध्यम से समाज में व्याप्त धार्मिक ढोंग और समाज की झूठी नैतिकताओं पर भी प्रहार किया है। यशपाल जी को अपनी कृतियों पर बहुत सारे पुरस्कारों से नवाज़ा गया है। 'मेरी तेरी उसकी बात' नामक उपन्यास पर उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया था। उन्होंने बहुत सारी रचनाओं का देसी-विदेसी भाषाओं में अनुवाद भी किया है। यशपाल के अब तक 16 कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इनके मुख्य कहानी संग्रह हैं - पिंजड़े की उड़ान, फूलो का कुर्ता, भस्माहत चिंगारी, धर्मयुद्ध, सच बोलने की भूल, धर्मयुद्ध, तर्क का तूफान, उत्तमी की माँ आदि।

यशपाल को सर्वाधिक ख्याति उपन्यासों के क्षेत्र में मिली है। दादा कामरेड, देशद्रोही, दिव्या, पार्टी कामरेड, मनुष्य के रूप, अमिता, झुठा सच) दो भाग (आदि उपन्यास आपकी रचना शक्ति के प्रतीक बनकर प्रसिद्ध हो चुके हैं। आपके अनूदित उपन्यासों की संख्या भी बहुत

अधिक है, अनूदित उपन्यासों में पक्काकदम, जुलैखा, फासला चलनी में अमृत आदि मुख्य है। यशपाल एक निर्भीक स्पष्टवादी और राष्ट्रवादी लेखक थे। वे अंग्रेज़ों के विरुद्ध आंदोलन करते हुए बहुत बार जेल भी गए।

यशपाल ने धर्म की रूढ़िवादिता, अंधविश्वास सामाजिक कुरीतियों का विरोध किया है, अतः उनका समग्र लेखन आम इंसान से जुड़ा हुआ है।

बोध प्रश्न

- यशपाल का समग्र लेखन किस्से जुड़ा हुआ है?
- यशपाल किस प्रकार के साहित्यकार माने जाते हैं?

17.3.2 यशपाल की रचना यात्रा

प्रेमचंदोत्तर साहित्यकारों में अपनी विशिष्ट विचारधारा और सर्जनात्मक शक्ति के कारण यशपाल ने हिंदी साहित्य में अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व बना लिया था। प्रारंभ में उनका जीवन क्रांतिकारी दल से संबंध था, अतः इसी कारण मार्क्सवादी विचाधारा का उन पर गहरा प्रभाव था। यशपाल एक समर्थ लेखक माने जाते हैं।

यशपाल ने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है, किंतु उपन्यास के क्षेत्र में इनका विशिष्ट स्थान है। इनके लेखन की प्रमुख विधा उपन्यास है, किंतु अपने लेखन की शुरूआत उन्होंने कहानियों से की है। यशपाल ने नई कहानी के दौर में स्त्री के देह और मन के कृत्रिम विभाजन के विरुद्ध एक संपूर्ण स्त्री की छवि पर ज़ोर दिया है।

यशपाल की कहानीयाँ आज के दौर की कहानियों की आधारशिला मानी जाती है। यशपाल एक समर्थ लेखक थे उन्होंने 1940 से 1976 तक की अवधी में 16 कहानी संग्रह प्रकाशित हुए हैं। 17 वाँ संग्रह मरणोपरांत प्रकाश में आया। यशपाल ने 8 बड़े तथा 3 लघु उपन्यास, तीन एकांकी, 10 निबंध संग्रह तीन संस्मरण पुस्तकें लिखी हैं। सिंहावलोकन नाम से आपने अपनी आत्मकथा लिखी है। आपने 'विप्लव' नामक पत्रिका का संपादन भी किया है। इन्होंने अनुवाद के क्षेत्र में भी अपनी लेखनी चलाई है।

कहानीकार के रूप में यशपाल

हिंदी जगत में यशपाल को पहले पहल एक कहानीकार के रूप में जाना जाता था। इनके लगभग सोलह कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। उन्होंने मुख्यतः अपनी कहानियों में मध्यवर्ग की विसंगतियों, कमज़ोरियों, विरोधाभासों, रूढ़ियों आदि को प्रदर्शित किया है। इनके मुख्य कहानी संग्रह हैं - तर्क का तुफान, भस्माहत, धर्मयुद्ध ज्ञानदास, फूलो का कुर्ता, पिंजरे की उड़ान, तुमने क्यों कहा मै सुंदर हूँ, चिंगारी और उत्तमी की माँ आदि।

बोध प्रश्न

- यशपाल के कहानियों में क्या पाया जाता है?
- यशपाल के कहानी संग्रहों का नाम बताइए।

उपन्यासकार के रूप में यशपाल

यशपाल एक मार्क्सवादी साहित्यकार माने जाते हैं। और उनकी यह विचारधारा उनके साहित्य में प्रदर्शित भी होती है। उपन्यासों के माध्यम से यशपाल अपने दृष्टिकोण को और भी

अच्छी तरह से दिखाने का प्रयास किया है। उनका पहला उपन्यास दादा कामरेड क्रांतिकारी जीवन का चित्रण करते हुए मज़दूरों के संगठन को राष्ट्र के उद्धार के लिए अधिक उपर्युक्त माना है। इनके अन्य उपन्यास हैं - देशद्रोही, पार्टी कामरेड, अमिता, मनुष्य के रूप, झूठा-सच, बारह घंटे, दिव्या, मेरी तेरी उसकी बात आदि।

यहाँ यशपाल के दो प्रमुख उपन्यासों 'दादा कामरेड' तथा 'झूठा सच' के बारे में जानना जरूरी है। 1941 में प्रकाशित 'दादा कामरेड' में लेखक ने स्थापित मान्यताओं और नई उभरती मूल्य चेतना के द्वंद्व को चित्रित किया है। इसमें पात्रों के माध्यम से जनवादी चेतना को विशेष रूप से उभारा गया है। डॉ. रामदरश मिश्र के शब्दों में -

> "लेखक ने जनवादी चेतना को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना चाहा है। देश पराधीन था, पराधीनता न केवल विदेशी शासनजन्य थी बल्कि स्वदेशी-विदेशी जीवन पद्धति से भी पैदा हुई थी। उपन्यासकार की दृष्टि इसे बारीकी से पहचानती है। तभी वह एक ओर विदेशी शासन से लड़ने वाली शक्तियों का समर्थन करता है, दूसरी ओर वह उन शक्तियों के अंतर्विरोधों को समझकर शक्ति को सही हाथों में सौंपना चाहता है। (हिंदी उपन्यास : एक अंतर्यात्रा, पृ.136)

1958 में प्रकाशित 'झूठा सच' (दो खंड) यशपाल का अत्यंत चर्चित महाकाय उपन्यास है। इसमें भारत विभाजन की पूर्व पीठिका, विभाजन की विभीषिका और उसके उत्तर प्रभाव का बहुत विषाद और प्रभावशाली चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसे 'युद्ध और शांति', 'रंगभूमि' तथा 'गोदान' की परंपरा का महाकाव्यात्मक उपन्यास कहा गया है। 'झूठा सच' में -

> "लेखक ने बंटवारे के समय और उसके पूर्व-पश्चात की सांप्रदायिक विभीषिका में जलते हुए भारत और पाकिस्तान की जन-यातना का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। देखने में लगता है कि दनों देशों की जनता स्वभावतः अपने सांप्रदायिक विद्वेष की आग में धधक उठी थी। किंतु यह होकर भी झूठ था। सच थी जनता को बर्गालाकर अपने को तृप्त करने वाली राजनीतिक नेताओं की अदम्य अमानवीय प्यास। (वही, पृ.143)

बोध प्रश्न

- यशपाल की रचनाएँ 'दादा कामरेड' और 'झूठा सच' किस-किस वर्ष में प्रकाशित हुईं?
- 'दादा कामरेड' में यशपाल ने क्या स्थापित किया था?
- 'झूठा सच' का कथा सूत्र किस पर आधारित है?
- यशपाल के पहला उपन्यास का नाम बताइए।

निबंधकार के रूप में यशपाल

यशपाल एक सफल कहानीकार, उपन्यासकार होने के साथ-साथ कुशल निबंधकार भी माने जाते हैं। इनके निबंधों की मूल-विशेषता यह है कि तर्क, न्याय समाजवाद के प्रति आस्था भौतिकवाद का समर्थन उसमें दिखाई देता है। यह एक उच्च कोटि के निबंधकार माने जाते हैं। इनके निबंधों में ऐतिहासिकता के साथ-साथ समकालीनता भी पाई जाती है। इनके मुख्य निबंध

निम्नलिखित चक्कर क्लब, बात बात में बात, न्याय का संघर्ष, जग का गुजरा और मैं क्यों लिखता हूँ आदि।

बोध प्रश्न

- यशपाल के निबंधों की मूल विशेषता क्या है?

आत्मकथा साहित्य

यशपाल जी ने अपनी आत्मकथा बहुत ही विस्तार से सिंहावलोकन नाम से लिखी है। यह तीन भाग में है। इसमें यशपाल जी ने अपनी बाल्यावस्था, दाम्पत्य जीवन, पारिवारिक जीवन, जेल का जीवन तथा किस प्रकार वे क्रान्तिकारी बने इन सब का वर्णन बहुत ही विस्तार से किया है।

यात्रा साहित्य

यशपाल जी का यात्रा साहित्य बहुत ही उद्देश्यपूर्ण माना जाता है। इन्होंने कई जगहों की यात्रा की। इन यात्राओं का विवरण यशपाल ने अपने यात्रा साहित्य लोहे की दीवार के दोनों ओर, शहबीति, बीबीजी कहती हैं, मेरा चेहरा रोबीला है आदि में बहुत ही सुंदर ढ्रंग से किया है। लोहे की दीवार के दोनों ओर में इन्होंने यूरोपीय पूँजीवादी देशों तथा सोवियत रूस की जीवन-पद्धति का अध्ययन बहुत ही गंभीरता से किया है।

अतः यशपाल के साहित्य का अध्ययन करने के बाद हम कह सकते हैं कि यह एक यथार्थनिष्ठ साहित्यकार है। इसलिए उन्होंने अन्याय, अत्याचार शोषण और गरीबी का खुलकर अपने साहित्य में विरोध किया है। इनका कथा साहित्य बहुत ही विशाल है।

17.3.3 यशपाल की विचारधारा

यशपाल हिंदी के प्रथम मार्क्सवादी साहित्यकार माने जाते हैं। उनकी रचनाओं का मूल स्वर मार्क्सवाद पर आधारित है। इन्होंने मार्क्सवाद का गहन अध्ययन किया और उससे बहुत अधिक प्रभावित भी हुए तथा अपने संपूर्ण साहित्य में उसे उतारने का प्रयत्न भी किया। उनकी रचनाओं का मूल स्वर मार्क्सवादी है। वे कहते हैं कि 'मैं सर्वसाधारण जनता को शोषित और अन्याय पीड़ित मानता हूँ। इस अन्याय से जनता की मुक्ति का उपाय कम्यूनिज्म की द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी विचारधारा को मानता हूँ।'

यशपाल ने अपने जीवन में ही देश की परतंत्रता और इससे मुक्त होने के संघर्षों को निकट से देखा, परखा तथा उसमें सक्रिय रूप से भागीदार भी बने तथा जेल की यात्रा भी की। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद रियासतों जमींदारों और सामन्ती-व्यवस्था के अस्त-व्यस्त होने की स्थिति उत्पन्न हो गयी थी। तथा इसका प्रभाव शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक सभी व्यवस्थाओं पर पड़ा था। अतः इस समय परिवर्तन का दौर समाज के प्रत्येक क्षेत्र में बहुत तेजी से हो रहा था।

यशपाल के साहित्य में पूँजीवादी-सामन्तवादी समाज व्यवस्था की परंपरागत नैतिक मान्यताओं के प्रति विद्रोह का भाव है। उनके सभी उपन्यासों में प्रतिक्रियावादी और प्रगतिशील पात्रों के संघर्ष दिखाई देता है। यह भी देखा जाता है कि समाज में हमेशा दो वर्ग रहता है। शोषक और शोषित। शोषक वर्ग के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध शोषित वर्ग सदा संघर्ष

करता है और शोषक वर्ग उतनी ही कठोरता से उसका दमन करता है। मार्क्सवाद यथार्थ पर आधारित है और यही यथार्थ यशपाल को बहुत ज्यादा आकर्षित भी करता था। इसी कारण बुर्जुआ संस्कृति और पिछड़ी सभ्यता उन्हें आकृष्ट नहीं कर सकी। वे निर्धन के अधिकार के लिए हमेशा अग्रसर रहे और यही कारण है कि उन्होंने अपने लक्ष्यों के वैज्ञानिक रूप को मार्क्सवाद में देखकर अंगीकार किया है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'देखा-सोचा समझा' में लिखा है -"मैं कम्युनिज्म को सर्वसाधारण जनता की मुक्ति का साधन वैज्ञानिक विचारधारा समझता हूँ। अपनी संपूर्ण शक्ति को उस वाद के प्रति 'देय' स्वीकार करने में मुझे कोई संकोच नहीं है।"

इस प्रकार देखा जाता है कि यशपाल की विचारधारा प्रमुखतः मार्क्सवाद से बहुत अधिक प्रभावित है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यशपाल भौतिकवादी है। स्त्री के प्रति उनके विचार को हम देखें तो पाते हैं कि वे स्त्री को प्रत्येक क्षेत्र में पूर्ण रूप से पुरुषों की तरह ही स्वतंत्र देखना चाहते हैं। तथा मानव-जीवन के विकास के लिए यशपाल मार्क्सवादी विचार पद्धति पर आधारित शासन व्यवस्था के समर्थक हैं। धर्म, इश्वर, नीति और अध्यात्म में उनका विश्वास नहीं है तथा कला के प्रति उनका दृष्टिकोण समाजवादी है।

अंततः यशपाल की विचारधारा के बारे में विश्वनाथ त्रिपाठी का यह कथन द्रष्टव्य है कि-

> "यशपाल कट्टर कम्युनिस्ट लेखक थे। वे साहित्य को सामाजिक परिवर्तन के लिए रचते थे। उनके लखन का निश्चित प्रयोजन है। वे वैज्ञानिकता, तर्कशीलता, समता के प्रचारक हैं, सामंतवाद, साम्राज्यवाद, धार्मिक कर्मकांडों और अंधविश्वासी होशन के कट्टर दुश्मन। वे संसार के उन विरल लेखकों में से हैं जिन्होंने शोषण के अंत के लिए साम्राज्यवादियों के विरुद्ध पिस्तौल और कलम दोनों का इस्तेमाल लक्षणा में नहीं, अभिधा में क्या। वे जनता के विश्वसनीय लेखक ही नहीं, क्रांतिकारी भी हैं।" (भारतीय लेखक : यशपाल विशेषांक)

बोध प्रश्न

- यशपाल के साहित्य का मूल स्वर क्या है?
- विश्वनाथ त्रिपाठी ने यशपाल के बारे क्या कहा है?
- यशपाल के अनुसार अन्याय से जनता की मुक्ति का उपाय क्या है?

17.3.4 यशपाल की कहानियों का कथ्य

यशपाल के द्वारा लिखे गए कथा साहित्य में कहानियों का बहुत अधिक महत्व है। इनकी दृष्टि में "कहानी द्वारा मनुष्य मानव-समाज के सदस्य रूप में अपनी समस्याओं में रूचि लेकर उनका चिंतन करना है। कथाकार के प्रयत्न उस प्रकार के चिंतन और विचार की प्रक्रिया को रुचिकर बना सकने का यंत्र होता है। यह प्रक्रिया कहानी के रुचिकर रूप में मानव-समाज के सम्मुख आती है।" यशपाल की कहानियों के 16 संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। हर संग्रह में 10-12 कहानियाँ हैं। इस प्रकार इन्होंने 1939 से लेकर अब तक करीब दो सौ पच्चीस कहानियों की रचना की है। इन कहानियों के माध्यम से उन्होंने अपने विचारों और अनुभवों को कलात्मक एवं रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। हम पाते हैं कि यशपाल जी की कहानियों में तीन बातें प्रधान है -

घटना, रोचकता और उद्देश्य। लेखक एक निश्चित उद्देश्य को रखकर घटनाओं का ताना-बाना बुनता है। कुछ कहानियों के आधार पर इस तथ्य को हम जान सकते हैं।

यशपाल ने अपनी कहानी 'धर्मयुद्ध' में श्री कन्हैयालाल के रूढ़िवादी माता-पिता और आजकल के आचार-विचार को पूरी निष्ठा से ग्रहण करने वाले श्रीलाल के बीच होने वाले खींचा-तानी को एक नाटकीय अंदाज से पेश किया है। श्री लाल की व्यवहार-बुद्धि के कारण माता-पिता की पुरातन-पंथी धार्मिक मान्यताएँ व्यर्थ हो जाती है और श्रीलाल की काकटेल पार्टी सफल होती है।

इसी प्रकार 'उतराधिकारी' कहानी में पहाड़ी सिपाही हरसिंह जिस अपराध के कारण अपनी पत्नी 'मानी' को मार डालने को उद्यत होता है किन्तु उसी प्रकार का अपराध करने पर भी अपनी दूसरी पत्नी 'कुशली' को सकुशल घर ले आता है। यह जानते हुए भी कि कुशली से उत्पन्न बालक उसका नहीं है वह उसे अपना उत्तराधिकारी मानता है। युद्ध में चोट लगने के कारण वह स्वयं पुत्र उत्पन्न करने में असमर्थ है, ऐसी स्थिति में वह परिस्थितियों से समझौता करता है। 'उत्तमी की माँ' कहानी में भी यशपाल ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि जीवन की सहज वृत्तियों के दमन का दुष्परिणाम कितना भयंकर हो सकता है।

यशपाल की कहानी 'तुमने क्यों कहा था मैं सुंदर हूँ' को मनोवैज्ञानिक कहा जा सकता है। इस कहानी में लेखक एक मनोवैज्ञानिक सत्य स्पष्ट करना चाहता है कि जीवन में सहज शारीरिक तृप्ति अनेक कुण्ठाजनित रोगों की दवा है। 'खच्चर और आदमी' संग्रह की कहानियों में भी लेखक का उद्देश्य स्पष्ट रूप से लक्षित होता है। 'मक्खी या मकड़ी' कहानी में यह लेखक ने दिखाने का प्रयत्न किया है कि वर्तमान जीवन व्यवस्था में धाँधली के मकड़ों का जाल फैला हुआ है और अच्छे लोग मक्खियों की तरह फँस कर छटपटा रहे हैं। यशपाल की 'अश्लील' कहानी में एक नैतिक और भावात्मक प्रश्न उठाया गया है। इसके माध्यम से नारी-जीवन की सार्थकता का कलापूर्ण व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

यशपाल का अंतिम कहानी-संग्रह 'भूख के तीन दिन' है। इस संग्रह की कहानियों में बेरोजगारी, आर्थिक विषमता, वर्ग-विषमता आदि समस्याओं को दिखाया गया है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अपने लंबे जीवन अनुभव के बल पर वे विविध प्रकार के कथात्मक संदर्भों की सृष्टि करने में समर्थ है। उनकी सृष्टि कथा-रस की माँग को पूरा करती है तथा उनकी प्रगतिशील जीवन-दृष्टि का समर्थन करती है।

यशपाल की कहानियों में सामंती सभ्यता के कठोर रूप और उसके धीरे-धीर पतन का मार्मिक चित्रण मिलता है। इस संबंध में डॉ. गोपाल राय ने यह मत प्रकट किया है कि -

> "भारत का सामंती अतीत और उसका चिंतन चाहे जितना भी गौरवशाली रहा हो, उसका वर्तमान तो शोषण, दमन, देशद्रोह और मूल्यहीनता का पर्याय बन चुका है; और मार्क्सवादी यशपाल इसका उद्घाटन करना अपनी कला का उद्देश्य मानते हैं। ... सामंती प्रकृति अपनी बदहाली में कितनी दयनीय और त्रासद हो जाती है, इसका अंकन 'तर्क का तूफान' में संकलित कहानी 'पर्दा' में देखा जा सकता है। .... इस कहानी की शक्ति 'कम्युनिस्ट विचारधारा' में

उतनी नहीं है, जितनी मानवीय स्थितियों की विषमता और विडंबना पर आधारित उस करुणागर्भित व्यंग्य में जो पाठक के चित्त को झकझोर देता है।" (हिंदी कहानी का इतिहास, पृ. 352)

बोध प्रश्न

- यशपाल की कहानियों के संबंध में गोपाल राय का क्या मत है?
- 'मक्खी या मकड़ी' कहानी के उद्देश्य को स्पष्ट कीजिए?

17.3.5 यशपाल की कहानियों की भाषा-शैली

भाषा के संबंध में यशपाल के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे। वे हिंदी और उर्दू को एक ही भाषा मानते थे। उनका मानना था कि हिंदी और उर्दू का भेद अंग्रेजों का उत्पन्न किया हुआ था। हिंदुओं और मुसलमानों में भेद-भाव बढ़ाने के लिए ही हिंदी और उर्दू को दो अलग भाषाएँ बताया गया। अंग्रेज अपनी घृणित शासन-व्यवस्था के प्रति हिंदुओं और मुसलमानों के विरोध से डरे हुए थे। "उन्होंने अपनी नौकरशाही का काम चलाने के लिए एक जटिल भाषा गढ़ डाली और इसके लिए फारसी लिपि नियत कर इसका नाम उर्दू रख दिया।" इन सभी मान्यताओं के अनुसार उन्होंने भाषा के संबंध में बहुत ही उदार दृष्टिकोण अपनाया है। यशपाल ने उर्दू, अंग्रेजी तथा तत्सम, तद्भव, देशज सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग अपनी कहानियों में किया है।

यशपाल की भाषा शैली की बात करें तो हम यह कह सकते हैं कि वह कथ्य के अनुसार अपना स्वरूप निर्माण करती है। उन्होंने संदर्भ को सजीव बनाने के लिए परिवेश के अनुसार शब्दों का चयन किया है। जन-बोली में प्रचलित देशज शब्दों से लेकर उर्दू पश्तो, अंग्रेजी और रूसी भाषा तक के शब्द आपके साहित्य में प्रयोग किए गए हैं।

यशपाल ने हिंदी गद्य-शैली को भी नई दिशा दी है। इन्होंने काव्यात्मक शैली के अतिरिक्त वर्णनात्मक तथा प्रसन्न विचारात्मक शैली का भी प्रयोग अपनी कृतियों में किया है। आप में व्यंग्य की भी अच्छी क्षमता है और संदर्भ के अनुसार आप व्यंग्यात्मक शैली का भी प्रयोग करते हैं।

बोध प्रश्न

- यशपाल के साहित्य में किस प्रकार की भाषा शैली को देखा जा सकता है?

17.3.6 हिंदी कथा साहित्य में यशपाल का महत्व और स्थान

यशपाल बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार माने जाते हैं। वे समाज की कुरीतियों से बहुत ही असंतुष्ट रहते थे। प्रारंभ में उनका कार्य क्षेत्र क्रांतिकारी रहा, किंतु बाद का जीवन परिश्रम, आत्मविश्वास और दृढ़ता जैसे तत्वों से परिपूर्ण रहा। यशपाल प्रेमचंद के बाद सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करने वाले प्रमुख साहित्यकार माने जाते हैं। वे मार्क्सवादी लेखक है इसलिए वे सामाजिक, क्रांति का समर्थक करते हुए भी अनैतिकता, बल प्रयोग एवं हिंसा के मार्ग का कड़ा विरोध करते हैं।

यशपाल के साहित्य लिखने का मुख्य उद्देश्य है कि इनके साहित्य के माध्यम से समाज में फैली हुई कुरीतियों को दूर करना। उन्होंने अतीत और वर्तमान दोनों को अपनी रचनाधर्मिता का हिस्सा बनाते हुए लगभग एक दर्जन उपन्यास और दो सौ से भी अधिक कहानियाँ लिखी।

भारतीय समाज के निम्न मध्यवर्ग, दलितों-शोषितों और मजदूरों की समस्या के अतिरिक्त यशपाल ने नारी शोषण पर भी प्रकाश डाला है। आम लोगों को आसानी से समझने की रचना शैली यशपाल जी के साहित्य में पाई जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि यशपाल जी का स्थान हिन्दी साहित्य में बहुत महत्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- यशपाल ने अपने साहित्य में किन-किन विषयों पर बल दिया है?

17.4 पाठ-सार

मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल सर्वाधिक सशक्त है। उनके विचार बहुत ही उच्च कोटि के तथा सुलझे हुए थे। तथा वे उन्हें बहुत ही सुन्दर ढंग से व्यक्त भी करते थे। इनका जन्म फीरोज़पुर छावनी में 3 दिसंबर, 1903 ई को पंजाब में एक साधारण परिवार में हुआ था।

यशपाल का आर्य समाज और स्वाधीनता आंदोलन के प्रति बहुत लगाव था। वे एक सफल कहानीकार, उपन्यासकार, निबंधकार तथा नाटककार रहे हैं। वे मार्क्सवादी विचारधारा से प्रेरित रहे अतः उनकी रचनाओं पर मार्क्सवाद का प्रभाव पाया जाता है। वे एक यथार्थवादी रचनाकार माने जाते हैं। यशपाल सामाजिक रूढ़ियों, पुरातनपंथी विचारों के घोर विरोधी थे तथा वे एक प्रगतिशील विचारक माने जाते हैं।

यशपाल जी का रचना संसार बहुत विशाल है, उनकी अब तक 17 कहानी संग्रह, आठ बड़े तथा तीन लघु उपन्यास, तीन एकांकी दस निबंध संग्रह, तीन संस्मरण पुस्तकें आदि प्रकाशित हो चुकी हैं।

यशपाल के साहित्य की विशेषता है कि वह मानव मन की गहराइयों तक पहुँच जाता है। इनका साहित्य सही अर्थों में हिंदी साहित्य के लिए एक वरदान है। 26 दिसंबर, 1976 को यशपाल जी का निधन हो गया।

17.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. मार्क्सवादी जीवन दर्शन से प्रभावित प्रगतिशील रचनाकारों में यशपाल का स्थान प्रमुख माना जाता है।
2. यशपाल प्रेमचंद के बाद सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण करने वाले प्रमुख साहित्यकार माने जाते हैं।
3. यशपाल का कथा साहित्य बहुत ही विशाल है। उन्होंने गद्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है।
5. एक प्रगतिशील लेखक के रूप में यशपाल ने अपनी कहानियों में सामाजिक रूढ़ियों और पुरातनपंथी विचारों के प्रति घोर विरोध दर्ज किया।

6. यशपाल ने अपनी कहानियों में विभिन्न स्रोतों से भाषा ग्रहण की। उन्होंने तत्सम, तद्भव और देशज शब्दों के साथ बेझिझक उर्दू, अंग्रेजी और पश्तो शब्दों का प्रयोग किया।
7. यशपाल ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज की सभी समस्याओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया।

17.6 शब्द संपदा

1. उतराधिकारी	=	वारिस उतराधिकार, पाने वाला व्यक्ति
2. उत्पीड़न	=	दबाना अत्याचार
3. उद्देश्य	=	लक्ष्य, प्रयोजन
4. पुरातनपंथी	=	पुराने विचारों वाला रूढ़िवादी
5. प्रगतिशील	=	बराबर आगे बढ़ने वाला
6. रूढ़ियों	=	परंपरा प्रथा
7. रोचक	=	मनोरंजक दिल्चस्प
8. वरदान	=	कृपा
9. वर्ग भेद	=	वर्ण संबंधी भेद-भाव
10.विचारक	=	विचार करने वाला व्यक्ति दार्शनिक
11.सशक्त	=	मज़बूत
12.स्वास्थ्य लाभ	=	रोगमुक्ति विरोध होने की प्रक्रिया

17.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. यशपाल के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
2. यशपाल की रचना यात्रा का वर्णन कीजिए।
3. यशपाल के साहित्य की मुख्य विचारधाराओं का वर्णन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. यशपाल के कहानियों की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
2. हिंदी कथा साहित्य में यशपाल के महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. यशपाल की कहानियों के कथ्य का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. यशपाल किस युग के कहानीकार हैं? ( )
   (अ) छायावादी (आ) भारतेंदु (इ) द्विवेदी (ई) प्रेमचंदोत्तर

2. यशपाल का जन्म किस वर्ष में हुआ? ( )
   (अ) 1905 ई. (आ) 1910 ई. (इ) 1899 ई. (ई) 1903 ई.

3. यशपाल के साहित्य पर किस वाद का प्रभाव है? ( )
   (अ) प्रगतिवाद (आ) प्रयोगवाद (इ) मार्क्सवाद (ई) नकेनवाद

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. यशपाल मुख्यतः .... दर्शन से प्रभावित थे।
2. यशपाल ने अपने लेखन की शुरूआत .... से की थी ।
3. यशपाल का प्रथम उपन्यास .... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. सिंहावलोकन	(अ) उपन्यास
2. बीबी जी कहतीं हैं	(आ) कहानी
3. उत्तमी की माँ	(इ) निबंध
4. दिव्या	(ई) आत्मकथा

17.8 पठनीय पुस्तकें

1. यशपाल रचनावली : लोक भारतीय प्रकाशन
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
3. हिंदी गद्य साहित्य : रामचंद्र तिवारी

इकाई 18 : 'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

18.1 प्रस्तावना
18.2 उद्देश्य
3.18 मूल पाठ : 'परदा' कहानी : तात्विक विवेचन
18.3.1 कथावस्तु
18.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण
18.3.3 देश काल अथवा वातावरण
18.3.4 संवाद योजना
18.3.5 भाषा-शैली
18.3.6 उद्देश्य
18.3.7 शीर्षकौचित्य
18.4 पाठ सार
18.5 पाठ की उपलब्धियाँ
18.6 शब्द संपदा
18.7 परीक्षार्थ प्रश्न
18.8 पठनीय पुस्तकें

18.1 प्रस्तावना

यशपाल की कहानी 'परदा' सही अर्थों में एक मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है। यह कहानी झुठे अहंकार को दिखाने का प्रयत्न करती है। कहानी में 'परदा' का फटना और गिरना सामन्ती प्रथा के अहंकार का टूटना दिखाता है। दरवाजे पर लटका 'परदा' उस परिवार के लिए दिखावटी सुरक्षा का माध्यम है। जिन लोगों की सारी कोशिश हमेशा अमीर बनने की होती है, जो अमीर लोगों की नकल करते हैं, तथा उनके जैसा बनना चाहते हैं और अपनी गरीबी को छिपाते रहते हैं। वे न तो अमीर की श्रेणी में आ पाते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। इस कहानी के मुख्य पात्र के बारे में बात की जाए तो 'परदा' ही इसका मुख्य पात्र है। इसको ही केंद्र में रखकर सारी कहानी चलती रहती है। यह 'परदा' ही अपने घर की लाज बचाने के लिए अंतिम रेशे तक संघर्ष करता है।

18.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- 'परदा' कहानी की कथा वस्तु तथा वातावरण से परिचित हो सकेंगे।
- वर्तमान मध्यवर्ग के यथार्थ को जान सकेंगे।
- समाज में व्याप्त झूठी प्रतिष्ठा के ढोंग पर विचार कर सकेंगे।
- मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी को देख सकते हैं।

18.3 मूल पाठ : ‘परदा’ कहानी : तात्विक विवेचन

18.3.1 कथा वस्तु

‘परदा’ कहानी की कथा वस्तु की जब हम बात करते हैं, तो यह कहानी चौधरी पीरबख्श के परिवार की है जिनके दादा अपने समय में चुंगी महकमे के दारोग़ा थे। उन्होंने अपना मकान भी बनवाया था जो हवेली के नाम से जाना जाता था। किंतु दो ही पीढ़ियों में उनके वंशज पीरबख्श की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई थी। उसके पश्चात जीवन की विषम परिस्थितियों से जूझते हुए पीरबख्श के चरित्र के रूप में कथानक का विकास होता है।

चौधरी पीरबख्श प्राईमरी से आगे पढ़ न सके थे तथा इसी बीच उनका ब्याह भी हो गया। इस कहानी का आरम्भ पीर बख्श के परिवार से होता है। परिवार चलाने के लिए बीस रुपये मासिक में उन्हें एक तेल मिल में मुंशी की नौकरी करनी पड़ी। मज़दूरी या दस्तकारी वह कर नहीं सकते थे, क्योंकि उन्हें अपने खानदान की इज्जत का बहुत ख्याल था। कुछ दिनों के बाद उन्होंने पास में मज़दूरों की कच्ची बस्ती में दो रुपये महीने पर मकान ले लिया था। क्योंकि उस पुराने घर में परिवार का आकार बड़ा होने पर सभी का एक साथ गुज़ारा नहीं हो पा रहा था। पंद्रह वर्ष में चौधरी की तनख्वाह 30 से 35 रुपये हो गई थी। चौधरी पीर बख्श एक अच्छे घराने के आदमी हैं पर धीरे-धीरे बहुत तंगी के अवस्था में आ जाते हैं। घर की इज़्ज़त ढकने के लिए किवाड़ों पर पर्दा लगाए रखते हैं।

एक बार मुसीबत में आकर वे एक खान से थोड़े से रुपये कर्ज़ के तौर पर लेते हैं। लेकिन वे समय पर कर्ज़ चुका नहीं पाते क्योंकि परिवार के बढ़ने से धीरे-धीरे पीरबख्श की आर्थिक हालत बहुत खराब हो जाती है। घर में खाने के भी लाले पड़ जाते हैं। घर की जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए धीरे-धीरे घर के गहने और दूसरी बहुमूल्य वस्तुओं को बेचा जाने लगा। घर की महिलाओं को घर से बाहर निकलने की इजाज़त नहीं थी। इसलिए बाहर के लोगों की पीरबख्श की आर्थिक स्थिति की कोई खबर नहीं थी।

पीरबख्श की खानदानी इज़्ज़त को घर की ड्योढी पर पड़ा ‘परदा’ बचाए रखता है। लेकिन जब खान क्रोध से किवाड़ों पर टंगे परदे को खिंचता है तो पर्दा टूट जाने से लोगों के सामने उनकी वास्तविक स्थिति सामने आ जाती है। खान से लिया गया उधार न चुका सकने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो जाती है जो भयानक रूप धारण करती है। इसे कहानी की संघर्ष अवस्था कहा जा सकता है। ‘परदा’ कहानी में चरम सीमा की अवस्था तब आती है जब पीरबख्श के द्वारा कर्ज का पैसा न लौटाने पर खान क्रोध से पीरबख्श के घर की ड्योढ़ी पर लटका हुआ टाट का फटा पुराना गला हुआ पर्दा तोड़कर आंगन में फेंक देता है। उस समय का मार्मिक दृश्य पाठक पर गहरे अवसाद की अमिट छाप छोड़ जाता है। लोगों के सामने उनकी वास्तविक स्थिति सामने आ जाती है और यह वास्तविक स्थिति इतनी ज्यादा भयावह होगी इसकी पाठक ने भी कल्पना नहीं की होगी।

‘परदा’ हटते ही चौधरी लुढ़क पड़े और घर की औरतें तथा लड़कियाँ घटना से आतंकित होकर आँगन में इकट्ठा हो गई। वे इस तरह सिकुड़ गई थी जैसे उनके शरीर का एकमात्र वस्त्र

गिर गया हो। वह 'परदा' एक प्रकार से घर भर की औरतों के शरीर का वस्त्र था, क्योंकि उनके शरीर पर बचे चिथड़े उनके अंग को ढकने में असमर्थ था। वहां इकट्ठा भीड़ ने शर्म से आँखें फेर ली। उनकी अंदर की हालत देखकर 'खान' की कठोरता पिघल गई ग्लानि से खान 'परदा' फेंक देता है। धीरे-धीरे भीड़ कम हो जाती है। चौधरी साहब को जब होश आता है तो 'परदा' आंगन में पड़ा दिखाई देता है अतः उसे टाँगने की उनमें हिम्मत न थी बल्कि यह कहा जा सकता है कि उसकी अब आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि 'परदा' जिस भावना का प्रतीक था वह अब मर चुका था।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में 'परदा' किसका प्रतीक है?

18.3.2 पात्रों का चरित्र चित्रण

'परदा' कहानी में पात्रों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। इसमें मुख्यतः दो पात्र हैं पहला चौधरी पीरबख्श और दूसरा पंजाबी बबर अली 'खान' संपूर्ण कहानी का केंद्रीय चरित्र पीरबख्श को ही माना जा सकता है।

चौधरी पीरबख्श

चौधरी पीरबख्श अपने खानदान की इज़्ज़त को तथा मुहल्ले में उनका जो गौरव था उसे बचाने के लिये हमेशा तत्पर रहने वाले इंसान थे। इनका चरित्र चित्रण इस कहानी में बहुत ही सजीव रूप से हुआ है। ये अपनी गरीबी को दूसरों से छुपाने की हमेशा चेष्टा करते हैं। यह एक कर्तव्यनिष्ठ प्राणी थे, अपने परिवार के लिए सब कुछ करने को तैयार रहते हैं। उच्च कुल के कारण वह मेहनत मज़दूरी तो नहीं कर पाते हैं । इसी कारणवश अपना खर्च चलाने के लिए उन्हें कर्ज़ लेना पड़ता है। उनका चरित्र यह बताता है कि वह किस प्रकार अपने घर परिवार के संस्कार से प्रभावित होता है और अपनी झूठी इज़्ज़त को बचाए रखने के लिए परेशान रहता है। उसने अपनी गरीबी को छिपाने तथा झूठी शान को बनाए रखने के लिए अपने घर की ड्योढ़ी पर अपनी खानदानी दरी लटका देता है। अतः हम देखते हैं कि पीरबख्श का चरित्र भारतीय समाज के करोड़ों निम्न मध्यवर्गीय लोगों की दीन-हीन दिशा की ओर संकेत करता है।

बोध प्रश्न

- चौधरी पीरबख्श के चरित्र की क्या विशेषताएँ?
- चौधरी पीरबख्श झूठी शान को बचाए रखने के लिए क्या करते हैं?

पंजाबी बबर अलीखाँ

पंजाबी खान बबर अली कठोरता और हृदय हीनता का परिचय देता है। उसकी कठोरता, निर्भयता सुदखोरी की आदत तथा वाणी की कटुता एक प्रकार से समाज केसंपूर्ण शोषक, पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। खान इस कहानी में इस तरह से आता है जो हँसते हुए उधार देकर पैसे लेते समय दयाहीन बन जाता है। अपने कर्ज़ और सूद की किश्त न मिलने पर वह अपने हाथ के डंडे से कर्जदार का दरवाज़ा पीटता रहता है। उसे लोग शैतान समझते हैं। उस समय खान एक शैतान का रूप लगता है। जब पीरबख्श लाचार होकर उसके पास पैसे लेकर ठीक समय पर न दे सका तब वह हृदयहीन व्यक्ति के रूप में उसके घर जाकर गुस्से से ड्योढ़ी

पर लटके हुए परदे को खींच लेता है। लेकिन जब अंदर की औरतों की दयनीय स्थिति देखता है तो उसका पत्थर सा कठोर मन मोम में बदल जाता है। वह परदे को फेंककर चला जाता है।

बोध प्रश्न

- बबर अलीखाँ किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है?
- बबर अलीखाँ के चरित्र की क्या विशेषताएँ?

18.3.3 देशकाल अथवा वातावरण

कहानीकार यशपाल समाज का यथार्थ चित्रण करने वाले एक महत्वपूर्ण साहित्यकार माने जाते हैं। 'परदा' कहानी सही अर्थों में मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है। जिन लोगों को हमेशा अमीर बनने की है या अमीरी का झूठा दिखावा करते हैं अर्थात् अपनी गरीबी को छिपाना चाहते हैं। अतः इस कारण वे न तो अमीर की श्रेणी में आते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। चौधरी पीरबख्श आज उन तमाम मध्यवर्गीय नौकरीपेशा लोगों को समान नज़र आते हैं जो मल्टीनेशनल सपने देखते हैं। पाँव जमीन से उखड़ चुके होते हैं, तनख्वाह तो घर, कार, ए.सी की ई.एम.आई देने में ही निकल जाती है। फिर भी कपड़े ब्रांडेड ही इस्तमाल करते हैं अतः दिखावे का जमाना है। चौधरी पीरबख्श का 'परदा' भी उनके ब्रांड को दर्शाता है।

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने आधुनिक युग के समाज की वास्तविक स्थिति का चित्र प्रस्तुत किया है। कहानी उन दिनों की है जब भारत स्वाधीन नहीं हुआ था परंतु उन दिनों हमारे निम्न मध्यवर्ग तथा निम्नवर्गीय समाज की जो स्थिति थी आज भी लगभग वैसी ही है, आज भी सफेदपोश वर्ग जो कहने के लिए उच्च वर्ग की श्रेणी में आते जो अपनी झूठी शान के नाम पर असलियत को स्वीकार नहीं कर पाता है और चौधरी पीरबख्श की भाँति आर्थिक संकट में पिसता रहता है। आज के मध्यवर्गीय परिवारों की झूठी आडंबरता का ढोंग भी इस कहानी में दिखाई देता है। यशपाल एक सामाजिक कहानीकार है उन्होंने मध्यवर्गीय परिवार को अपनी कहानी के लिए चुना है। तथा साथ में गरीबों की कच्ची और गंदी बस्ती के वातावरण का सजीव चित्र खींचा है। प्रस्तुत कहानी मानव जीवन के सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक यथार्थ को पाठक के सम्मुख रखती है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में किस प्रकार के वातावरण का वर्णन किया गया है?
- इस कहानी के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवारों की क्या स्थिति दिखाई गई है?
- यशपाल ने मध्यवर्गीय परिवार को ही क्यों चुना?

18.3.4 संवाद योजना

'परदा' कहानी की संवाद योजना संक्षिप्त है तथा इसमें कल्पना का बहुत कम प्रयोग हुआ है। इसके संवाद भावाभिव्यक्ति से परिपूर्ण अत्यंत प्रभावशाली तथा रोचक है। इस कहानी में कहानीकार ने संवाद के माध्यम से कथा का विकास करता है, जिस कारण कहानी में नाटकीयता एवं सजीवता आ गई है। इस कहानी का अधिकांश भाग वर्णनात्मक है अतः इस कारण 'परदा' कहानी के संवादों का भी विकास कम हुआ है। फिर भी जो संवाद प्रयुक्त हुए हैं वे

बहुत ही स्वाभाविक हैं। तथा चरित्र की विशेषताओं को उद्घाटित करने में सक्षम हैं। जैसे खान क्रोध में डण्डा फटकार कर कह रहा था,

"पैसा नहीं देना था तो लिया क्यों? तनख्वाह किधर में जाता? अरामी हमारा पैसा मारेगा अम तुम्हारा खाल खींच लेगा .... पैसा नहीं है तो गर पर 'परदा' लटका के शरीफजादा कैसे बनता? तुम अम को बीबी का गैना दो, बर्तन दो, कुछ तो भी दो। अम ऐसे नई जायेगा।"

चौधरी पीरबख्श ने बिलकुल बेबस और लाचारी में दोनों हाथ उठाकर खुदा से खान के लिए माँग कर कसम खायी-पैसा भी घर में नहीं, बर्तन भी नहीं, कपड़ा भी नहीं। खान चाहे तो बेशक उनकी खान उतार कर बेच ले। खान और भी भड़क उठा -"अम तुम्हारा दुआ का क्या करेगा अम तुम्हारा खाल क्या करेगा उसका तो जुती बी नई बनेगा तुम्हारा खाल से तो ये टाट अच्छा।" यहा अलीखाँ का कथन उसकी अमानवीय चरित्र की ओर संकेत करता है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में संवाद योजना किस प्रकार की है?
- कथा को विकसित करने में संवाद योजना कैसे सहायक होता है?

18.3.5 भाषा-शैली

भाषा के संबंध में यशपाल के विचार बहुत ही प्रगतिशील थे। वे हिंदी और उर्दू को एक ही भाषा मानते हैं। उनका मानना था कि हिंदी और उर्दू का भेद अंग्रेज़ों का उत्पन्न किया हुआ था। अगर हम 'परदा' कहानी की बात करें तो इस कहानी की सफलता का रहस्य यह है उसकी सहज स्वाभाविक भाषा। भाषा इतनी स्वाभाविक है कि कहानी यथार्थ के बहुत निकट लगती है।

यह कहानी एक मुसलमान परिवार की है अतः इसमें पात्रों और वातावरण के अनुरूप उर्दू शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग किया गया है। जैसे -महकमा, ओहदा, माहवार, कुनबा, इज़्ज़त आदि। इस कहानी में पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। इस कहानी में मध्यवर्गीय परिवारों के वातावरण को स्पष्ट रूप से अवगत कराया गया है। अतः कहानी की भाषा सरल, सुबोध, मार्मिक तथा स्वाभाविक है। कहीं-कहीं पर कठोरता तथा उद्दंडता वाले शब्द भी दिखाई पड़ते हैं। 'परदा' कहानी में अनेक प्रकार की शैलियों का भी प्रयोग किया गया है।

बोध प्रश्न

- पात्रों के अनुरूप कथाकार ने भाषा का प्रयोग किस प्रकार किया है?
- भाषा के अनुसार इस कहानी की सफलता का रहस्य क्या है?

18.3.6 'परदा' कहानी का उद्देश्य

यशपाल 'परदा' कहानी के माध्यम से वर्तमान मध्यवर्ग के यथार्थ जीवन और मनोवृत्तियों का चित्रण किया है। यह एक प्रतीकात्मक कहानी है और इसके माध्यम से लेखक आज समाज में जो खोखलापन है उसको दिखाना चाहते हैं। यह 'परदा' जो सच्चाई को ढकने का प्रतीक है अर्थात खोखलेपन पर पड़े हुए आवरण अर्थात पर्दे को हटाकर उसकी असली तस्वीर हमारे सामने प्रस्तुत करना है।

हमारे समाज का निम्न मध्यवर्ग अशिक्षित निर्धन शोषित लाचार होते हुए भी ऊपरी तौर पर एक झूठी शान का दिखावा करने से पीछे नहीं हटता समाज में बहुत से मनुष्य अपनी झूठी इज़्ज़त के लिए परेशान रहते हैं। निम्न मध्यवर्ग की आय उनके खर्चों की तुलना में बहुत कम होती है किंतु वह अपनी झूठी शान और अपने गौरव की रक्षा करने के लिए लोग झूठी शान और बाहरी आडंबरों का सहारा लेते हैं। इस कहानी के माध्यम से यशपाल ने इस कहानी द्वारा भारतीय समाज में व्याप्त झूठी प्रतिष्ठा की बुराई पर से 'परदा' उठाया है। 'परदा' कहानी में लेखक 'परदा' को प्रतीक के रूप में चित्रित कर एक कटु सत्य को समाज के सामने उद्घाटित किया है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।
- 'परदा' कहानी में परदा किसका प्रतीक है?

18.3.7 शीर्षकौचित्य

प्रस्तुत कहानी का शीर्षक 'परदा' बहुत ही औचित्य पूर्ण कहा जा सकता है। किसी भी लेखक का यह उद्देश्य होता है वह कहानी का शीर्षक ऐसा रखता है कि पाठक जब उसे देखे तो कहानी का उद्देश्य उसे बहुत हद तक समझ में आ जाए। 'परदा' कहानी में यशपाल जी ने एक मध्यवर्गीय परिवार की विडंबना को दर्शाने का प्रयत्न किया है।

'परदा' का शाब्दिक अर्थ होता है, किसी चीज़ को ढकना और यहाँ पर इस कहानी का शीर्षक बहुत ही उचित दिखाई पड़ता है। क्योंकि इसमें एक परिवार जो अपनी झूठी शानो-शौकत को बनाए रखना चाहता है और उस पर हमेशा 'परदा' डालना चाहता है।

समाज की झूठी धारणा तथा अपनी प्रतिष्ठा के झूठे प्रलोभन में फँसे व्यक्ति का सजीव चित्रण करके लेखक ने समाज के समक्ष एक आदर्श रखा है। समाज में कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्हें हमेशा अमीर बनने की कोशिश रहती है। उनके पास जितनी धन-संपत्ति होती है, उससे वे संतुष्ट नहीं रहते हैं। हमेशा अमीरों की नक़ल करने में रहते हैं। उनके जैसा बनना चाहते हैं। तथा अपनी गरीबी को छिपाने की कोशिश उम्र भर करते रहते हैं। ऐसा करने से वे न तो अमीर की श्रेणी में रहते हैं और न ही अपनी गरीबी को स्वीकार कर पाते हैं। सच कहा जाए तो लेखक ने इस कहानी के माध्यम से यह बताने का प्रयत्न किया है कि लोग किस प्रकार अपनी सच्चाई पर 'परदा' डालते हैं और कल्पना की दुनिया में जीते रहते हैं।

इस कहानी के शीर्षक की बात करें तो हम देखते हैं कि 'परदा' इस कहानी का प्राण है तथा 'परदा' से ही कहानी का प्रारंभ होता है और 'परदा' पर ही कहानी का अंत होता है। शीर्षक की सार्थकता इस बात से भी सिद्ध होती है कि कहानी के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ही इसका शीर्षक 'परदा' रखा गया जो सही लगता है। निम्नलिखित पंक्तियाँ कहानी के शीर्षक को और अधिक सार्थकता देते हैं -

"किवाड़ न रहने पर 'परदा' ही आबरू का रखवाला था। यह 'परदा' भी तार-तार होते-होते एक रात आंधी में किसी भी हालत में लटकने लायक नहीं रह गया।"

अतः हम कह सकते हैं कि 'परदा' शीर्षक सोद्देश्य और सार्थक है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी के माध्यम से लेखक क्या बताना चाहते हैं?
- इस कहानी के लिए 'परदा' शीर्षक कहाँ तक उचित है?

'हिंदी कहानी का इतिहास' में 'परदा' का विवेचन

यशपाल की कहानी 'परदा' के महत्व को इस बात से अच्छी तरह समझा जा सकता है कि डॉ. गोपाल राय ने 'हिंदी कहानी का इतिहास' में विस्तार से इस कहानी की विवेचना की। वे मानते हैं कि 'परदा' यशपाल की उन कहानियों में प्रमुख है जो विचारधारा पर आधारित होते हुए भी अनुभव से पैदा हुई संवेदना से ओत-प्रोत है। वे इसे शुद्ध अनुभव और विचारों द्वारा आधारित कहानी मानते हैं। निष्कर्ष के रूप में यहाँ उनकी यह विस्तृत टिप्पणी द्रष्टव्य है -

> "1941 के दशक में लखनऊ में रहते हुए यशपाल को आर्थिक दृष्टि से खस्तेहाल नवाबों के वंशजों को देखने का अनुभव हुआ होगा। सामंती प्रकृति अपनी बदहाली में कितनी दयनीय और त्रासद हो जाती है, इसका अंकन तर्क का तूफान में संकलित कहानी 'परदा' में देखा जा सकता है। गुरबत के दुश्चक्र में वंशानुगत आबरू को बचाने का प्रयास कितना करुण होता है और उसकी रक्षा के क्रम में वह कितनी और उघड़ती जाती है, यही इस कहानी का कथ्य है। इस कहानी के रेशे-रेश में कम्युनिस्ट विचारधारा स्पंदित है। वह पात्रों की स्थितियों और उनकी प्रतिक्रियाओं के संघात-समुच्चय से निचुड़ती है। वह कथानक पर आरोपित नहीं, कथानक में रची-बसी है। पर इस कहानी की शक्ति 'कम्युनिस्ट विचारधारा' में उतनी नहीं है, जितनी मानवीय स्थितियों की विषमता और विडंबना पर आधारित उस करुणागर्भित व्यंग्य में जो पाठक के चित्त को झकझोर देता है।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.354)

डॉ. गोपाल राय ने ध्यान दिलाया है कि इस कहानी में चित्रित चौधरी खानदान अपने उच्च वर्गीय नैतिक और मर्यादापरक मूल्यों में जकड़ा होने के साथ-सतह आर्थिक दृष्टि से बेहद दरिद्र होने के कारण एक करुण त्रासदी का शिकार होता है। इस दरिद्रता के कारण वह पारंपरिक मूल्यों को निभाने लायक भी नहीं रह गया है। इतना ही नहीं -

> "उसका 'हवेली' नाम से पुकारा जाने वाला मकान परिवार में बढ़ते सदस्यों की वजह से इतना तंग हो चुका है कि जो दरोगा साहब के जमाने में बैठक कही जाती थी, वह अब 'जनाने' में शामिल हो गई है और 'घर की इज्जत' को देखते ड्योढ़ी पर परदा लटकाना पड़ा है। इससे चौधरी पीरबख्श की आर्थिक स्थिति की वास्तविकता छिप जाती है और खानदानी इज्जत भी ढकी रह जाती है। ... पर यह परदा चौधरी पीरबख्श को कर्ज देने वाले खान के निर्मम व्यवहार के सामने टिक नहीं पाता। खान वह परदा ही झटक लेता है और उसके साथ ही चौधरी का पूरा वजूद ही हिल जाता है।" (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.354)

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी ने परदे को पाखंड माना है और चौधरी को नए जमाने का विरोधी, तर्कहीन और जमाने से पिछड़ा हुआ दकियानूस साबित

किया है। लेकिन डॉ. गोपाल राय मानते हैं कि वास्तव में चौधरी पीरबख्श नए जमाने के विरोधी नहीं हैं, बल्कि वे पुराने जमाने का ऐसा अप्रासंगिक अवशेष हैं, जिसे मिटना ही है। दरअसल, अभाव ग्रस्त व्यक्ति का सबसे बड़ा दुश्मन उसकी पारंपरिक एवं पिछले जमाने की मर्यादा ही होती है। लेखक ने उन्हीं जड़ और अप्रासंगिक हो चुकी मान्यताओं को टूटते हुए दिखाया है।

बोध प्रश्न

- 'परदा' कहानी में किस प्रवृत्ति को देखा जा सकता है?
- विश्वनाथ त्रिपाठी ने परदे को क्या माना है?
- चौधरी पीरबख्श के संबंध में गोपाल राय का क्या विचार है?

18.4 पाठ-सार

यशपाल द्वारा लिखित 'परदा' एक प्रतीकात्मक कहानी हैं। इस कहानी के माध्यम से लेखक यह बताना चाहता है कि लोग आज समाज में अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए परेशान रहते हैं। तथा समाज में व्याप्त जो खोखलापन है उसको भी दिखाने का प्रयास किया है। यह कहानी एक मुस्लिम परिवार की है जिसका मुख्य पात्र चौधरी पीरबख्श और बबर अली खान हैं।

चौधरी पीरबख्श के दादा अपने समय में चुंगी महकमे में दारोगा थे। आय अच्छी तो उस समय एक घर भी बनवाया था जिसे वे लोग हवेली के नाम से पुकारते थे। किंतु दो ही पीढ़ियों में उनके वंशज पीरबख्श की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई। उन्हें बीस रुपये मासिक में एक तेल मिल में मुंशी की नौकरी करनी पड़ी। और छोटा काम वह कर नहीं सकते थे क्योंकि उन्हें अपने खानदान की इज़्ज़त का ख्याल था। अपने घर की ड्योढ़ी पर वह 'परदा' डाल कर रखते थे जो उनके घर की इज़्ज़त का रखवाला था। उनकी आर्थिक हालत धिरे-धिरे और भी खराब हो गई अब उन्हें बबर खान से कुछ पैसे उधार लेने पड़े। उनके घर की महिलाओं को घर से बाहर निकलने की इजाजत नहीं थी इस कारण बाहर के लोगों को पीरबख्श की आर्थिक स्थिति का कुछ पता नहीं था।

खान से लिया गया उधार न चुका सकने के कारण स्थिति और भी गंभीर हो जाती है, जो बहुत ही भयानक रूप धारण कर लेती है। खान क्रोध में ड्योढ़ी पर लटका पर्दा तोड़कर आँगन में फेंक देता है। उसके बाद का दृश्य देखकर सभी अचरज में पड़ जाते हैं। चौधरी लुढ़क पड़े और घर की औरतें तथा लड़कियाँ घटना से आतंकित होकर आँगन में इकट्ठा हो गई। वे इस तरह से सिकुड़ गई थी जैसे उनके शरीर का एकमात्र वस्त्र गिर गया हो। वह 'परदा' एक प्रकार से घर मर की औरतों के शरीर का वस्त्र था। क्योंकि उनके शरीर पर बचे चिथड़े उनके अंग को ढकने में असमर्थ थे। अंदर की हालत देखकर खान की कठोरता भी पिघल गई शर्म से खान 'परदा' फेंक देता है। अतः यह 'परदा' उनकी इज़्ज़त का रखवाला था।

18.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. साहित्यकार यशपाल द्वारा लिखित 'परदा' कहानी एक प्रतीकात्मक कहानी है।
2. 'परदा' कहानी सही अर्थों में मध्यवर्गीय समाज की विडंबनाओं की कहानी है।
3. इस कहानी के माध्यम से निम्न मध्यवर्ग के यथार्थ को जान सकते हैं।
4. इस कहानी के माध्यम से मुस्लिम समाज में व्याप्त गरीबी को देख सकते हैं।
5. झूठी प्रतिष्ठा के ढोंग का क्या दुष्परिणाम होता है, उसको इस कहानी में समझ सकते हैं।
6. कर्ज़ लेने के क्या दुष्परिणाम होते हैं, उसको भी इस कहानी के माध्यम से समझ सकते हैं।
7. कहानी में सामंती मूल्यों के पतन का दारुण यथार्थ उभरकर सामने आया है।

18.6 शब्द संपदा

1. उद्दण्डता	=	दुष्टता
2. ओहदा	=	पद
3. औचित्यपूर्ण	=	उचित
4. कर्तव्यनिष्ठ	=	ज़िम्मेदारी
5. कुनबा	=	परिवार
6. गुज़ारा	=	व्यतीत करना
7. टाट	=	पटसन का बना मोटा कपड़ा
8. ड्योढ़ी	=	दहलीज, पौरी
9. प्रतिनिधित्व	=	प्रतिमान
10. प्रतिष्ठा	=	सम्मान, इज़्ज़त
11. प्रलोभन	=	लालच
12. बहुमूल्य	=	बेशक़ीमती, मूल्यवान
13. माहवार	=	प्रतिमाह
14. विडंबना	=	अजीब तरह की स्थिति

18.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'परदा' कहानी की भाषा शैली या उसकी देशकाल अथवा वातावरण पर विचार कीजिए।
2. 'परदा' कहानी के आधार पर चौधरी पीरबख्श या बबर अली खाँ का चरित्र-चित्रण प्रस्तुत कीजिए।

3. ‘परदा’ कहानी के शीर्षकौचित्य पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. ‘परदा’ कहानी के उद्देश्य पर विचार कीजिए।
2. ‘परदा’ कहानी की संवाद योजना पर अपने विचार लिखिए।
3. ‘परदा’ कहानी की कथावस्तु को संक्षेप में लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. ‘परदा’ कहानी के लेखक हैं? ( )
   (अ) प्रेमचंद (आ) जयप्रकाश कर्दम (इ) यशपाल (ई) असग़र वजाहत
2. चौधरी पीरबख्श के दादा किस महकमें में दारोगा थे? ( )
   (अ) चुंगी (आ) रेलवे (इ) आयकर (ई) पुलिस
3. पंजाबी पठान का क्या नाम था? ( )
   (अ) खानबख्श (आ) बरकत अली (इ) चौधरी पीरबख्श (ई) बबर अली खाँ

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. चोर से ज्यादा फ़िक्र थी .... की।
2. ‘परदा’ कहानी मध्यवर्गीय .... की गाथा कहती है।
3. उस पूरी बस्ती में चौधरी पीरबख्श ही .... और .... थे।

III. सुमेल कीजिए –

1. सच्चाई को ढकने का प्रतीक	(अ) झूठी शान
2. चौधरी पीरबख्श	(आ) प्रगतिशील रचनाकार
3. यशपाल	(इ) पूँजीपति वर्ग का प्रतिनिधि
4. बबर अलीखाँ	(ई) परदा

18.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र
2. यशपाल रचनावली
3. यशपाल पुनर्मूल्यांकन : कुँवरपाल सिंह
4. हिंदी कहानी विवेचना : सं. विमल खांडेकर

इकाई 19 : उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला

रूपरेखा

19.1 उद्देश्य
19.2 प्रस्तावना
19.3 मूल पाठ : उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला
19.3.1 जीवन परिचय
19.3.2 रचना परिचय
19.4 पाठ सार
19.5 पाठ की उपलब्धियाँ
19.6 शब्द संपदा
19.7 परीक्षार्थ प्रश्न
19.8 पठनीय पुस्तकें

19.1 उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन से आप -

- सुविख्यात कथाकार उषा प्रियंवदा की कहानी कला के बारे में जानेंगे।
- कहानी से जुड़े विभिन्न पक्षों का विश्लेषण भी कर सकेंगे।
- उषा प्रियंवदा की कहानी कला के साथ उनका जीवन परिचय भी जानेंगे।
- कहानी कला के माध्यम से उनकी रचनाओं की विशेषता से परिचित होंगे।

19.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला के बारे में जानेंगे। इस इकाई में हम उनकी जीवन के विभिन्न पहलुओं के साथ उनकी कहानी काला के संदर्भ में विवेचन, विश्लेषण करेंगे। उषा प्रियंवदा नई कहानी आंदोलन से जुड़ी हुई एक प्रमुख कहानीकार हैं। नई कहानी आंदोलन में कई महिला कथाकारों का योगदान रहा जिसमें मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती के साथ-साथ उषा प्रियंवदा का नाम प्रमुख तौर पर सामने आता हैं। उषा प्रियंवदा की कई कहानियाँ नई कहानी आंदोलन के भावबोध और यथार्थ के अभिव्यक्ति की प्रतिनिधि कहानी के बतौर कथा आलोचना में देखी समझी जाती हैं। उषा प्रियंवदा का अधिकांश लेखन मध्य वर्गीय जीवन बोध को लेकर लिखा गया हैं। खासकर मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन में संबंधों के भीतर निर्मित होने वाले तनाव और द्वंद्व को अपनी कहानी में उन्होंने सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत किया हैं।

19.3 मूल पाठ : उषा प्रियंवदा और उनकी कहानी कला

इस इकाई में उषा प्रियंवदा के कहानी कला को जानने की कोशिश होगी। नयी कहानी के शुरुआती दिनों में उषा प्रियंवदा की एक कहानी वापसी (कहानी, 1960) आयी थी, जिसे आलोचक नामवर सिंह ने खास तौर पर रेखांकित किया था। उषा प्रियंवदा एक सशक्त

रचनाकार हैं। इनके कथा साहित्य में छठे और सातवे दशक के शहरी परिवारों का सवेदनापूर्ण चित्रण मिलता है। इन्होंने शहरी जीवन की बढ़ती उदासी, अकेलेपन आदि का अंकन सम्वेदनापूर्वक किया है। इनकी कुछ रचनाएँ इस प्रकार हैं : वनवास, कितना बड़ा झूठ, शून्य, ज़िन्दगी और गुलाब के फूल, एक कोई दूसरा, मेरी प्रिय कहानियाँ, सम्पूर्ण कहानियाँ।

19.3.1 जीवन परिचय

उषा प्रियंवदा का जन्म 24 दिसंबर, 1930 को कानपुर में हुआ। उषा प्रियंवदा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी साहित्य में एम.ए. तथा पीएच. डी. की पढ़ाई पूरी करने के बाद दिल्ली के लेडी श्रीराम कालेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। इसी समय उन्हें फुलब्राइट स्कालरशिप मिली और वे अमरीका चली गईं। अमरीका के ब्लूमिंगटन, इंडियाना में दो वर्ष पोस्ट डॉक्टरल अध्ययन किया और 1964 में विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में सहायक प्रोफेसर के पद पर कार्य प्रारंभ किया। आजकल वे सेवानिवृत्त होकर लेखन और भ्रमण कर रही हैं। उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य में छठे और सातवें दशक के शहरी परिवारों का संवेदनापूर्ण चित्रण मिलता है। उस समय शहरी जीवन में बढ़ती उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन करने में उन्होंने अत्यंत गहरे यथार्थबोध का परिचय दिया है। लंबे समय तक अमेरिका में रहकर प्रवासी हिंदी लेखक के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित की। उषा प्रियंवदा ने अंग्रेजी में शिक्षा प्राप्त करने के बाद श्रीराम कॉलेज दिल्ली, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, विस्कांसिन विश्वविद्यालय, मैडिसन में दक्षिण एशियाई विभाग में भी अध्यापन के कार्य से जुड़ी रही।

19.3.2 रचना परिचय

उषा प्रियंवदा नई कथाकार में अग्रणी हैं। उन्होंने दर्जनों कहानियाँ लिखी हैं। इनके तीन कहानी संग्रहों में जिन्दगी और गुलाब के फूल एक कोई दूसरा तथा कितना बड़ा झूठ उपलब्ध हैं। ये संग्रह वस्तु और शिल्प दोनों दृष्टियों से श्रेष्ठ हैं। उनकी कहानियों में वापसी, मछलियाँ और प्रतिध्वनि उल्लेखनीय हैं।

कहानी संग्रह

- ज़िंदगी और गुलाब के फूल
- एक कोई दूसरा
- मेरी प्रिय कहानियाँ
- वनवास
- कितना बड़ा झूठ
- शून्य
- संपूर्ण कहानियाँ

उपन्यास

- पचपन खंभे

- लाल दीवारें
- रुकोगी नहीं राधिका
- शेष यात्रा
- अंतर्वंशी

उषा प्रियंवदा की कहानियों का मूल कथ्य और विशेषताएँ

उषा जी की समस्त कहानियाँ मध्यमवर्गीय जीवन के सुख दुःख, आशा, निराशा एवं जीवन संघर्ष पर आधारित हैं। स्त्रियों की दशा को लेकर नई पुरानी पीढ़ी के टकराव का चित्रण किया हैं। होस्टल में पढ़ने वाली छात्रा, नौकरी पेशा अकेली रहने वाली औरत, विदेश जाने वाली स्त्री के संत्रास का चित्रण इन्होंने बखूबी किया हैं।

राजेन्द्र यादव के अनुसार वापसी कहानी हमारे समाज के टूटन की कहानी हैं। जिसमें युवा वर्ग अपने ही बुजुर्गों को अवमानना की जिंदगी बिताने के लिए मजबूर करता हैं। आपकी कहानियों में मुख्यतः मध्यमवर्गीय व्यक्तिवादी चेतना व्यंजित हुई हैं। उषा जी की कहानियाँ भारतीय नारी की असहायता एवं मजबूरियों को उजागर करती हैं। नारी होने के नाते वे नारी की पीड़ा को समझती भी है और उसे सशक्त कथानक व भाषा शैली में व्यक्त करने में भी सक्षम हैं। इनकी कहानियाँ की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं। भारतीय नारी के आदर्शस्वरूप की स्थापना, उसकी स्त्रियोचित इर्ष्या का वर्णन एवं नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण। नारी के स्वभावगत गुण विनम्रता, दया एवं समर्पण की भावना को बड़ी तीव्रता के साथ अभिव्यंजित किया हैं। वह किसी का हो जाने में गर्वित अनुभव करती हैं। पश्चिमी नारी की भाँति पुरुष बनाना और बदलना उसकी फिदरत में नहीं हैं। मछलियाँ एवं प्रतिध्वनि ऐसी ही कहानियाँ हैं।

बोध प्रश्न

- उषा प्रियंवदा किस आंदोलन की कहानीकार हैं?
- उषा प्रियंवदा की कहानियों में कौन सी चेतना अभिव्यक्त हुई हैं, बताएँ?
- उषा प्रियंवदा की किस कहानी को आलोचक नामवर सिंह ने रेखांकित किया था?

उषा प्रियंवदा की कहानी कला

उषा प्रियंवदा नए कथाकारों की पंक्ति में अग्रगण्य हैं। स्त्री लेखन को समृद्ध और नई ऊँचाइयाँ प्रदान करने में इनका विशेष योगदान हैं। इनका संबंध इलाहबाद से रहा हैं। उच्च मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मी उषाजी ने इलाहबाद विश्वविद्यालय से अंग्रेजी साहित्य में एम.ए किया और वहीं अध्यापन कार्य भी किया। अमेरिका जाकर अनुसंधान कार्य किया एवं विस्कांसिन विश्वविद्यालय में हिंदी शिक्षण का कार्य भी किया। वहाँ से लौटकर शेष समय दिल्ली में व्यतीत किया। उषा प्रियंवदा का अधिकांश लेखन नारी विमर्श पर आधारित हैं। उन्होंने भारतीय नारी की असहाय स्थिति एवं मूक सहनशीलता का चित्रण बखूबी किया हैं। साथ ही मध्यमवर्गीय परिवार की समस्याओं, विघटनकारी स्थिति एवं बुजुर्गों की उपेक्षा का चित्रण भी सटीक भाषा में किया हैं।

भारतीय परिवारों में नारी आदर्शरूपा रही हैं। वह अपने त्याग, प्रेम एवं समर्पण द्वारा परिवार के सदस्यों के लिए अपना सुख भूल जाती हैं। उसका पति के प्रति एकनिष्ठ प्रेम व समर्पण अतुलनीय हैं। मछलियाँ कहानी की विजी कहती हैं 'नटराजन मुनिष् कहा करता था कि प्यार चुक जाता है, भावनाएँ मर जाती हैं। अक्सर मैं सोचती हूँ कि मुझमें ऐसा क्यों नहीं होता हैं। मैं क्यों निर्मम कठोर क्यों नहीं हो पाती।' इस कथन में नारी की समर्पण भावना व्यक्त हुई हैं। पुरुष प्रधान समाज में नारी सामाजिक उपेक्षा और तिरस्कार का कष्ट भोगती रही हैं। इसी कारण पुरुष वर्ग के शोषण का शिकार हुई हैं। वह पुरुष ही नहीं नारी के हाथों भी शोषित हो रही हैं। 'मछलियाँ' कहानी में ही विजी कहती है कि बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाती हैं। उसकी सहेली मुकी उसके प्रेम को छीन लेती हैं। इसी कारण उसमें स्त्रियोचित इर्ष्या का भाव उदित हुआ हैं। वह भारत लौट आती हैं।

उषा प्रियंवदा की कहानियों में पुरुष के लम्पट स्वभाव का चित्रण भी हो गया हैं। पुरुष नारी के निश्छल स्वभाव को समझ नहीं पाता। मुकी नटराजन से अंत में इसलिए विवाह नहीं करती, क्योंकि उसका आकर्षण विजी की तरफ भी था। उषाजी की कहानियाँ भावमूलक हैं। कहानी का प्रत्येक पात्र भावुक हैं। यद्यपि इनकी कहानियों में आर्थिक विषमता का भी चित्रण हुआ हैं, किन्तु पात्र भावात्मक धरातल पर ही जीते हैं।

उषा प्रियंवदा हिंदी कथा जगत में विशिष्ट कथाकार के रूप में जानी जाती है। 1961 में इनका पहला कहानी-संग्रह 'फिर बसंत आया' पाठक जगत के सामने आया और उसके बाद उनकी कई कहानी एवं उपन्यास पाठक जगत को मिलते गए। उषा प्रियंवदा की इन सभी कथाओं में यथार्थ युगबोध निहित है। बदलते आधुनिक भारतीय समाज में पारिवारिक रिश्तों में बदलाव, बेकारी, अकेलापन, उदासी, नारी अस्मिता जैसी कई महत्त्वपूर्ण विषय उनकी कथाओं में अभिव्यक्त हुई है। वैसे तो उनकी कहानियाँ विभिन्न प्रकार के मुद्दों को लेकर होते है लेकिन सभी कहानियों में कुछेक तत्व समान रूप से दिखायी पड़ते है। वे है अकेलापन, उदासी, निराशा इत्यादि जो कि आज के आधुनिक भौतिकवादि जगत की देन है। लोग आज अपने जीवन में भौतिक सुखों की तलाश में सबसे ज्यादा भटकते है, साथ में यह भी कह सकते हैं कि वे अन्य सुखों की तलाश में भी भटकते रहते है जिसके कारण वे अपने आस-पास की ज़िन्दगी में जो कुछ भी है या जो कोई भी है उनसे दूर हो जाते है या कट जाते है जिससे साथ वाला अकेला हो जाता है। अतः उषा जी ने अपनी कहानियों में जो कुछ भी व्यक्त किया है वह हमारे सामने कई सवाल विचार के लिए छोड़ जाती है। इसलिए उनकी कहानी इस दौर में ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो जाती है। उनके कहानी लिखने की एक विशेष कला है कि वे अपने मुद्दों को सीधे-सीधे बयान नहीं करतीं बल्कि एक विशेष वातावरण तैयार करती हैं जिसमें पात्र चढ़ता-उतरता रहता है। उनके मानसिक उतार-चढ़ाव, उनके व्यवहार, उनकी बात-चीत आदि से ही सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। उनकी कहानियों की विशेषता की चर्चा करते विजयमोहन सिंह का कहना है कि उनकी कहानी एक विशेष प्रकार का मानसिक तथा परिवेशगत वातावरण रचती है, जिसमें उदासी, अकेलापन और बाहर या दूसरे से न जुड़ पाने की एक अभिशप्त स्थिति अंकित की जाती है। वह प्रायः उच्च शिक्षा प्राप्त कामकाजी आधुनिक स्त्री की नियति बन जाती है। खासतौर पर

एक ऐसी स्त्री जो स्वतन्त्र, निजी और लीक से तनिक हटकर जीना चाहती है। इनकी कहानियां दो प्रकार की हैं - प्रारंभिक कहानियां मध्य वर्गीय नारी जीवन के विविध आयामों को रेखांकित करती हैं।

परिवार में द्वन्दात्मक स्थिति, मानसिक तनाव, संघर्ष, पीड़ा, निराशा और हताशा के क्षणों को जीती नारी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी तालमेल बिठाने का अथक प्रयास करती है। इन सब का प्रभाव उसके रागात्मक संबंधों पर भी पड़ता है जिससे उसकी पीड़ा अधिक गहराती है। लेखिका ने यथासंभव तटस्थ रहते हुए नारी जीवन के विविध और सजीव चित्र उकेरे हैं। इन कहानियों का उत्स उषा जी के निजी अनुभव है इसलिए इनके चित्र अत्यंत सजीव व मार्मिक हैं। शैशव में ही पिता के वात्सल्य पूर्ण संरक्षण से वंचित उषा जी ने अपनी वैधव्य अभिशप्त माँ की उपेक्षा, अवहेलना, अपमान, तिरस्कार एवं पीड़ा को देखा था और किसी हद तक वे इसकी भुक्तभोगी भी थी। इसकी प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष छाया उनकी प्रारंभिक कहानियों में देखी जा सकती है। 'जिंदगी और गुलाब के फूल' की कहानियों के विषय में श्री देवी शंकर अवस्थी का अभिमत है- "जिंदगी और गुलाब के फूल की कहानियां कहीं भी नए तरीक के पाठक की मांग नहीं करती, सामान्य अनुभवों को इस तरह नया संदर्भ देती हैं कि पाठक को कहीं भी संस्कारगत धक्का नहीं लगता।"

उषा प्रियंवदा ने अपने कथा साहित्य में मध्यवर्गीय परिवारों में हो रहे आधुनिक परिवर्तन और नारी की बदलती भूमिका के सूक्ष्मता से विश्लेषित किया है। उषा प्रियंवदा की कहानियों में व्यष्टि से समष्टि तक का चित्रण मिलता है। उनकी कहानियों में जीवन का अकेलापन, ऊब और उदासीनता का यथार्थबोध पहली बार हिंदी में गहरी संवेदनशीलता के साथ उभर कर आया। डॉ. गोरधनसिंह शेखावत ने उषा प्रियंवदा की कहानियों के बारे में लिखा है- 'उषा जी की कहानियों में जीवन और परिवार को अनुभूतिप्रवण चित्र दिखाई पडते हैं। आधुनिक नगर बोध की उदासी, अकेलेपन, ऊब आदि का अंकन उन्होंने यथार्थ के साथ किया है। उनकी कहानियों में चमत्कार नहीं, पर इनकी कहानियाँ गहरा प्रभाव छोडती हैं। उषा जी की कहानियों में हमें आधुनिक नगरीय जीवन के अत्यन्त अनुभूतिप्रवण चित्र मिलते हैं। इससे कहानियों का कलात्मक संतुलन इस धारणा का खण्डन करता है कि नारी कथाकारों में भावुकता की प्रधानता होती है। परंतु उषा जी ने बौद्धिक ईमानदारी के साथ चेतना के गहरे स्तरों को वाणी देने का सफल प्रयास किया है जिसके कारण आप कथा साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट बन गई हैं। इन्द्रनाथ मदान के शब्दों में -

'उषा प्रियंवदा की कहानी-कला से रूढ़ियों, मृत परम्पराओं, जड मान्यताओं, मीठी-मीठी चोटों की ध्वनि निकलती है। घिरे हुए जीवन की उदासी एवं उबासी उभरती है, आत्मीयता व करुणा के स्वर फूटते हैं। सूक्ष्म व्यंग्य कहानीकार के बौद्धिक विकास और कलात्मक संयम का परिचय देता है जो तटस्थ दृष्टि और गहन चिंतन का परिणाम है। पिछले कई दशकों से ये निरंतर सृजनरत हैं और इस अवधि में इन्होंने जो कुछ लिखा है, वह परिमाण में कम होते हुए भी विशिष्ट है।'

उषा प्रियंवदा की पारिवारिक जीवन से संबंधित कहानियों में अमरीकी जीवन के भी विभिन्न चित्र प्रस्तुत हुए हैं। इसमें बार-बार अकेलेपन और अजनबीपन के भाव उभरकर आते हैं। बिन्दु एक ही है- वैयक्तिक सुख-दुःख; किंतु उसके कारण भिन्न हैं। कभी आर्थिक, कभी पारिवारिक, कभी असफल प्रणय व उन्मुक्त प्रेम। इस अकेलेपन में व्यक्ति अपने भरे-पूरे परिवार में, भीड़-भाड़ में अपने को निपट अकेला पाता है। समृद्धि के बीच भी उसे अथाह विरक्तता का अहसास होता है, प्रिय से प्रिय व्यक्ति के संग रहकर भी उसे अजीब विसंगति का बोध होता है।

संभवतः परिस्थितियों से पलायन कर जाना आज के मनुष्य की नियति है। समाज ने जो भी संबल प्रदान किए हैं वह उसे स्वीकार्य नहीं हैं और नवीन संबल वह बना नहीं पाया है। पुराने मूल्य पूर्णतया टूटे नहीं हैं, नए मूल्य पूर्णतया स्थापित नहीं हो पाए। परिणामस्वरूप मनुष्य दोनों के मध्य अटककर रह गया है। ऐसे मनुष्य से सहानुभूति ही प्रकट की जा सकती है। उषा जी की कई कहानियों में ऐसी ही शून्यता, एकाकीपन, निराशा तथा अजनबीपन आदि अनुभूतियाँ परिलक्षित होती हैं।

उषा प्रियंवदा का सृजन उनके परिवेश, निजी व्यक्तित्व और गहन संवेदना का प्रतिफल है। उषा जी व्यक्ति स्वातंत्र्य की पक्षधर हैं। यह स्वातंत्र्य स्त्री व पुरुष दोनों के संदर्भ में है। इसका उदाहरण वे स्वयं और उनकी कृतियाँ हैं। वे कभी बंधकर चलना पसंद नहीं करतीं। न ही जीवन में और न ही सृजन में।

सही अर्थों में देखा जाए तो उषा प्रियंवदा ने दिखने में छोटी लगने वाली सामाजिक समस्याओं की गहराई में जा कर कहानी-लेखन का कार्य किया और देश-काल एवं वातावरण के अनुसार उसका फलक विस्तृत होता चला गया। कच्चे धागे कहानी में कुंतल के अपने पडोसी जीजी से संबंध और उनके भाई से विवाह के सपने कच्चे धागे से कोमल और नाजुक होते हैं जो क्षणभर में बिखरकर चकनाचूर हो जाते हैं। यहाँ पर कहानीकार ने दहेज समस्या को भी उभारा है। जिंदगी और गुलाब के फूल कहानी में सेवारत सुबोध स्वाभिमान की रक्षा हेतु त्यागपत्र देकर बेरोजगार हो जाता है। इस कहानी में बेरोजगार सुबोध की पारिवारिक उपेक्षा एवं मानसिक अंतर्द्वंद्व का मार्मिक चित्रण हुआ है।

उषा प्रियंवदा की उत्कृष्ट कहानी वापसी में परिजनों की आधुनिक भौतिकवादी, स्वच्छंद जीवन दृष्टि तथा घोर व्यक्तिवादी जीवन दर्शन के कारण पैंतीस वर्ष की नौकरी के बाद अर्थात् अपनी सेवानिवृत्ति के बाद शेष जीवन स्वजनों के साथ सुकून से बिताने का सपना संजोये घर लौटे गजाधर बाबू का यह सपना दिवास्वप्न ही प्रतीत होता है। भरे-पूरे परिवार में स्वकेंद्रित परिजनों के बीच गजाधर बाबू स्वयं को उपेक्षित महसूस करते हैं। विपरीत मानसिक संवेदनाओं से सामना करने के बाद अंततः परिजनों की उपेक्षा और कटु उक्तियों से आहत गजाधर बाबू पुनः सेठ रामजीमल की चीनी मिल में नौकरी करने के लिए विवश हो नए लक्ष्य की ओर चले जाते हैं। परिजनों में भी मुख्य रूप से उनकी पत्नी की उपेक्षा वे सह नहीं पाते और गजाधर बाबू एक बार फिर घर से वापसी कर जाते हैं। वापसी कहानी में मानवीय संवेदनाओं का सूक्ष्म चित्रण हमारे समक्ष उपस्थित होता है। विशेष रूप से उस समय जब उनकी धर्मपत्नी रसोई से उनकी चारपाई यह कहकर निकालती है कि यहाँ अब चलने-फिरने की जगह नहीं रही। वृद्धावस्था में

परिवार और पत्नी का साथ चाहने वाले व्यक्ति पर जब ऐसा होता है तो निस्संदेह उसका मोहभंग होकर मानवीय संवेदनाएँ बिखरकर चूर-चूर हो जाती हैं। जैसे किसी मेहमान के लिए कोई अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है उसी प्रकार बैठक में कुर्सियों को दीवार से सटाकर बीच में गजाधर बाबू के लिए एक पतली सी चारपाई डाल दी गई-गजाधर बाबू उस कमरे में पडे-पडे कभी-कभी अनायास ही उस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते। इससे लगता है कि बदलते वर्तमान परिवेश में वृद्ध पिता अकेलेपन व टूटन का शिकार हो रहे हैं। बुजुर्ग पीढ़ी की यह नियति अत्यंत शोचनीय है।

उषा प्रियंवदा ने अपनी कहानियों में समाज की समसामयिक समस्याओं की गहराई में उतरकर अपनी सूक्ष्म दृष्टि से उनकी नब्ज टटोलते हुए व्यक्ति के जीवन से जुड़ी समस्याओं को उजागर किया है। उन्होंने नारी जीवन में आने वाले परिवर्तनों को बखूबी परखा है। उषा प्रियंवदा ने आजादी से पहले और आजादी के बाद महिलाओं के दृष्टिकोण में आये परिवर्तनों को बारीकी के साथ पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। उनके इस व्यापक दृष्टिकोण को पाठकों ने स्वीकारा है। परिणामस्वरूप उनकी मानवीय संवेदनाएँ जन-जन की मानवीय संवेदना के रूप में बहुत ही सशक्त अभिव्यक्ति के साथ व्यक्त हुई हैं। उषा प्रियंवदा ने स्त्री की इच्छा, कामना और त्वरित निर्णय लेने से जुड़े प्रश्नों को विभिन्न दृष्टिकोणों से अपनी कहानियों में चित्रित किया है। उन्होंने इसे स्त्री और पुरुष पात्रों के माध्यम से उठाया है। इनकी कहानियों में स्त्री स्वतंत्रता के मानदंड विभिन्न रूपों में परिलक्षित होते हैं। छुट्टी का दिन और पूर्ति कहानियों में चित्रित नायिका को देखकर लगता है कि क्या अपने पैरों पर खड़े हो जाने और परिवार वालों से रिश्ता तोडकर स्वतंत्र जीवन मात्र से ही स्त्री सशक्त हो पाएगी? वस्तुतः इन दोनों कहानियों में स्त्री आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर भी जीवन के अकेलेपन से पीड़ित है। धन कमा लेने मात्र से अकेलेपन को दूर नहीं किया जा सकता है। छुट्टी का दिन की माया को अकेलेपन से भागने पर मुक्ति नहीं मिलती और इस स्थिति के लिए वह स्वयं को ही दोषी ठहराती है। प्रस्तुत कहानी में उषा प्रियंवदा का यह दृष्टिकोण बेहद प्रभावित करता है कि जीवन में अर्थोपार्जन भी वर्तमान परिवेश में जीवनयापन के लिए जरूरी है। लेकिन अकेलेपन से मुक्ति मिले बिना सुकून की आशा नहीं की जा सकती।

‘संबंध’ कहानी की श्यामला मानसिक अव्यवस्था की शिकार है। घर से दूर विदेश में बसी श्यामला न तो अपने परिवार वालों या दाम्पत्य बंधन में बँधना चाहती है और न ही इनसे दूर रहकर सुखी ही रह पाती है। माँ-बाप और बहन उससे इसी कारण असंतुष्ट हैं। श्यामला लौटकर भारत भी नहीं आना चाहती है। उसने अपनी नौकरी के लिए बहुत कुछ किया था। वह कहती है, एक निरुपाय, बेसहारा, आक्रोश कर दिया तो सबके लिए जितना हो सका, जैसे जिया अब भी क्यों बोझ ढोया जाए। एक भावुक कर्त्तव्य के वश पर अब क्यों वे सब उसे अपनी जिंदगी नहीं जीने देते जैसे भी वह चाहे।

विदेशी परिवेश में मानसिक द्वंद्व का कारण भारतीय परिवेश के संस्कारों और परंपराओं को उस समाज में खोजना है। इसी के परिणामस्वरूप निर्मित धारणा ही व्यक्ति के संस्कारों की

टकराहट का हेतु बनती है। आप्रवासी भारतीयों की इस जैसी समस्याओं का मार्मिक चित्रण हमें उषा प्रियंवदा की कहानियों में दिखाई देता है।

'चाँदनी में बर्फ पर' कहानी में एक ऐसे युवक का चित्रण किया गया है जो अपने उज्ज्वल भविष्य के लिए अपने माता-पिता और प्रेमिका कल्याणी को छोड़कर विदेश जाकर मीरा नाम की विदेशी लड़की से विवाह कर लेता हैं। मीरा स्वच्छंद विचारों वाली आधुनिक स्त्री है। हेम से विवाह के पहले उसके कई पुरुष मित्रों से संबंध रहे हैं। मित्रों के साथ स्केटिंग करना, घर पर शोर मचाना हेम को पसंद नहीं है। वह चाहता है कि मीरा भारतीय नारी की तरह झगड़े, चिल्लाए और उस पर अधिकार जताए, पर मीरा ऐसा कुछ भी नहीं करती है। वह अपनी मरजी से स्वच्छंद जीवन जीती है।

विदेश में कल्याणी को अविनाश की पत्नी के रूप में देखकर हेम उसे पाने के लिए पुनः लालायित हो उठता है। वह चाहता है कि कल्याणी उससे यूँ ही मिलती रहे, परंतु कल्याणी अपने भारतीय संस्कारों के कारण हेम के निवेदन को अस्वीकार कर देती है।

उषा प्रियंवदा ने प्रस्तुत कहानी में कल्याणी और मीरा दो स्त्रियों के माध्यम से पूर्वी व पश्चिमी संस्कारों के अंतर को बड़ी बारीकी से प्रभावी रूप में दिखाया है। उषा जी की यह कहानी उन भारतीय युवाओं की गाथा है जो स्वयं की उन्नति के लिए विदेशी संस्कारों वाली लड़की से विवाह तो कर लेते हैं पर उनकी स्वच्छंदता को वे बर्दाश्त नहीं कर पाते हैं। उनकी अपेक्षा रहती है वह आदर्श भारतीय नारी के गुणों का निर्वाह करे, परंतु ऐसा न होने पर संबंधों की डोर ढीली पड़ जाती है और संस्कारों की टकराहट उत्पन्न होती है।

'कितना बड़ा झूठ' कहानी की नायिका किरण विवाहिता और दो बच्चों की माँ होते हुए भी विदेशी समाज की देखा-देखी मैक्स नामक पुरुष से संबंध रखती है। वह चाहती है कि मैक्स केवल उसका होकर रहे, पर पश्चिमी संस्कारों में पला मैक्स किरण को छोड़कर वारिया से शादी कर लेता है। विदेश में एक ही से बंधकर रहने की परंपरा बहुत ही कम है। यह हमें स्वदेश में ही देखने को मिलता है। भारतीय परंपरा के अनुसार विवाहित का परस्त्री-पुरुष से संबंध अनैतिक माना गया है। पाश्चात्य संस्कृति के अनुकरण के कारण ही विदेशों में रहने वाले भारतीयों का व्यवहार विकृत होता जा रहा है।

'एक और विदाई' कहानी की नमिता को लगता है कि उसका पति उससे प्रेम नहीं करता है। इस कारण पति-पत्नी में दूरियाँ हैं। इसी दूरी से छुटकारा पाने के लिए पति और परिवार को छोड़कर वह विदेश पढ़ने के लिए चली जाती है। विदेशी समाज में रहते हुए वह स्त्री-पुरुष के उन्मुक्त संबंधों को नजदीक से देखती है। वह देखती है कि किस तरह स्त्री-पुरुष एक से ज्यादा आपसी संबंध बनाते हैं, ऐसे संबंध, जिनमें ठहराव नहीं है। वह विदेशी जीवनशैली से ऊब जाती है और अपने संस्कारों व मर्यादा को भूल नहीं पाती है। उसे एहसास होता है कि उसका प्यार, जीने का सहारा अपना देश ही है और उसकी जिंदगी उसका पति ही है। इसलिए वह अपने देश लौटने का निर्णय कर लेती है। कहानी की नायिका नमिता काँपते कंठ से बार-बार कहती है- लो मैं आ गई, लो मैं आ गई हूँ।

'सुरंग' कहानी के तीनों पात्र खोखली जिंदगी जी रहे हैं। माँ, अरुणा और बेबी। हरिद्वार से देहरादून आने वाली गाड़ियाँ जब सुरंग के पास खड़ी रहती हैं तो लंबी सीटी मारती है। यह सीटी पात्रों के घर में सुनाई देती है। माँ घर के अंदर सुबकने लगती है। सुरंग में ही अरुणा के भाई की मौत हो गई थी। रेल की पटरी के निकट तक जाने की मनाही पिता ने सबको कर दी थी। अरुणा को बचपन से ही ट्रेनें अच्छी लगती थीं। सिग्नलों की लंबी कतारें, देहरादून से आने-जाने वाली गाड़ियों का स्लेटी धुआँ, पटरियाँ, अरुणा उनमें खो जाती थी। अरुणा के भाई की उपस्थिति कहानी में नहीं है, परंतु उसका प्रभाव घर के सभी सदस्यों पर है। माँ, जब से बेटा मरा है, प्रायः सारा दिन घर से बाहर ही रहने लगी है। तीन घंटे भजन-कीर्तन के बाद भी उसके चेहरे से खीज की रेखाएँ नहीं जातीं। अरुणा के अपने दुःख अलग हैं जिनसे निष्कृति पाने की चेष्टा में उसकी कलाइयों पर परमानेंट दाग रह गये हैं। जगह-जगह भटकने पर अरुणा अपने शहर लौट आती है। अब तक उसकी नियुक्ति बाहर के शहरों में ही रही थी।

आधुनिकता के नाम पर आर्थिक लोभ के कारण एक पत्नी का शोषण स्त्री-पुरुषों के संबंधों में दूरियाँ पैदा कर देता है। 'स्वीकृति' कहानी के पति-पत्नी रुचि में अंतर के कारण एक-दूसरे से दूर हो जाते हैं। जिसका परिणाम पति-पत्नी, सत्य और जपा दोनों को भुगतना पड़ता है। पति अपनी नवविवाहिता पत्नी को सिर्फ पैसे कमाने के साधन के रूप में देखता है। लेकिन पत्नी-पति के साथ रहकर उसके साहचर्य का सुख उठाना चाहती है। परिणामस्वरूप दोनों के संबंधों में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

उषा प्रियंवदा में कहानी लेखन की एक विशेष कला है। वे अपने मुद्दों, विचारों को सीधे-सीधे बयान नहीं करतीं बल्कि एक विशेष वातावरण तैयार करती हैं जिसमें मुख्य पात्र उतरता-चढ़ता रहता है। कहानी के पात्रों के उतार-चढ़ाव, उनके व्यवहार, उनकी बातचीत आदि से ही सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। उषा प्रियंवदा की कहानियों में निहित बोध में सबसे अधिक स्वर जो उभरकर आता है वह है अकेलेपन और उदासीनता का। आज इस भाग-दौड की जिन्दगी में व्यक्ति चाहे कितना भी अपने मित्र, परिचित, प्रेम या परिवार के साथ रह ले, लेकिन कहीं-न-कहीं से कभी-न-कभी वह अपने आप को अकेला महसूस करता है और अकेलेपन की ओर अग्रसर होता है, जो उसके जीवन को नीरस बना देता है। उषा प्रियंवदा के ये सब पात्र एक अधूरा और यातनाप्रद जीवन जी रहे हैं। अपने देश से बाहर किसी सम्पन्न और पराये मुल्क में अकेला और अलग रहना इस यंत्रणा का एक विशिष्ट पहलू है जिसको उनकी ये कहानियाँ निरंतर रेखांकित करती हैं। आधुनिकता और पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के बीच आधुनिक नारी इतना बिखर गई है कि उसका कोई निजी स्तर नहीं रह गया है। वह न तो पूर्णरूप से पाश्चात्य संस्कारों से प्रभावित हो पाती है और न ही भारतीय आदर्शों को निभा पाती है। अर्थ और स्वार्थ पर टिके वैवाहिक जीवन की जटिलता का सशक्त चित्रण उनकी कहानियों में प्रमुखता से मिलता है। जीवन के छोटे-बड़े अनुभवों एवं संवेदना को कुशलता के साथ व्यक्त करके आप्रवासी भारतीय नारियों की विविध पक्षों का यथा वृद्ध समस्या आदि का भी पूर्ण संवेदनात्मक चित्रण उषा जी के कथा साहित्य में मिलता है।

बोध प्रश्न

- उषा प्रियंवदा का पहले कहानी संग्रह का शीर्षक क्या है अतः कब प्रकाशित हुआ?
- उषा प्रियंवदा की कहानियों का कौन-सा पक्ष है जो पहली बार हिंदी कहानी में गहरी संवेदनशीलता के साथ उभर कर आया।
- किस कहानी के माध्यम से पूर्वी व पश्चिमी संस्कारों के अंतर को बड़ी बारीकी से दिखाया है।
- पारिवारिक संबंधों के बिखरते पक्ष को उषा प्रियंवदा ने किस कहानी में अभिव्यक्त किया हैं?
- महिला कहानीकारों में उषा प्रियंवदा को बतौर कहानीकार कैसे देखते हैं?
- आधुनिकता के आईने में उषा प्रियंवदा की कहानी कला की विशेषता क्या है?

19.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के सातवें दशक से लेखिकाओं ने सूक्ष्मता से अपने विचारों को अभिव्यक्त किया है। लेखिकाओं ने साहित्य की विविध विधाओं में लेखनी चलाई और नारी जीवन से जुडी हर समस्या को साहित्य के माध्यम से जनमानस तक लाने का प्रयास किया है। महिला कथाकारों ने कथा साहित्य के माध्यम से अपनी मौलिक सृजन प्रतिभा से हिंदी साहित्य संसार को नया मोड दिया है, इसलिए इनका कथा साहित्य हिंदी जगत् के लिए बहुत ही मौलिक एवं महत्त्वपूर्ण रहा है।

सभी लेखिकाओं ने नारी के व्यक्तित्व को एक ठोस धरातल प्रदान किया है और नारी जीवन की विडंबना को सूक्ष्मता तथा गंभीरता से अंकित किया है। इसके साथ ही मानवीय जीवन से संबंधित विविध पहलुओं को भी संवेदनात्मक दृष्टि से देखा और परखा है। स्त्री कथाकारों में उषा प्रियंवदा का लेखकीय दृष्टि से विशेष महत्त्व रहा है। इन्होंने वापसी कहानी से हिंदी कहानी के क्षेत्र में एक विशिष्ट पहचान स्थापित की है। उषा प्रियंवदा ने आधुनिकता की चुनौती को स्वीकार कर जीवन को उसके वास्तविक रूप में पहचाना है। समकालीन महिला कथाकारों में उषा प्रियंवदा एक उल्लेखनीय लेखिका हैं जो अपनी विशिष्ट लेखन शैली के कारण साहित्य जगत् में सफलता हासिल कर पाई हैं। इनका कथा-साहित्य मानवीय संवेदनाओं के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है।

19.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. उषा प्रियंवदा के कथा साहित्य का केंद्र नारी, उसकी सुख दुखात्मक स्थितियां, अंतर्द्वंद, आकांक्षा तथा पुरुष के साथ उसका संबंध है।
2. उनकी रचनाओं में भारत और अमेरिका की विरोधी संस्कृतियों की टकराहट भी सुनाई देती है। विषय की एकरूपता होते हुए भी सजीव, यथार्थ, परिवेश चित्रण तथा सुगम, सुबोध, भाव व पात्रानुकूल भाषा-शैली की रवानगी के कारण उनकी कृतियां सरस और रोचक हैं।
3. अनेक समकालीन साहित्यकारों ने नारी के संत्रस्त जीवन के प्रति संवेदना रखते हुए भी उसके द्वारा भोगी जाने वाली शारीरिक, मानसिक यातनाओं का अंकन नहीं किया। लेकिन उषा जी ने अपने लेखन में साहस का परिचय दिया है।

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

4. उषा प्रियंवदा सदियों से उपेक्षित, सड़े-गले रीति-रिवाजों और मर्यादाओं के थोथे आवरण में जकड़ी, छटपटाती नारी की मुक्ति और उसे स्वतंत्र अस्मिता की पहचान कराने के लिए प्रयत्नशील लेखिकाओं में अग्रणी हैं।
5. उषा प्रियंवदा का लेखन केवल स्त्री प्रश्नों तक सीमित नहीं है। उन्होंने इससे आगे बढ़कर मानवीय जीवन से संबंधित विविध पहलुओं को भी संवेदनात्मक दृष्टि से देखा और परखा है।

19.6 शब्द संपदा

1. अंतर्द्वंद्व = ऊहापोह, कशमकश, मानसिक संघर्ष, अंदर ही अंदर चलने वाला द्वंद्व, दुविधा
2. अध्यापन = पढ़ाने का कार्य, विद्यार्थियों को पढ़ाने की वृत्ति या पेशा
3. अनुसंधान = किसी विषय का अच्छी तरह अनुशीलन करके उसके संबंध में नई बातों या तथ्यों का पता लगाने की क्रिया
4. अस्मिता = अपनी सत्ता का भाव
5. आयाम = किसी भी मत, धारणा या पदार्थ के विविध पहलू
6. उदासीनता = खिन्नता, उदासीन होने की अवस्था या भाव, तटस्थता; विरक्ति, मायूसी।
7. कुंठित = जड़, मूर्ख
8. खोखली = निरर्थक, सारहीन, भावशून्य, शक्तिहीन, दुर्बल
9. धरातल = ऊपरी सतह, पृथ्वी, भूमि, ज़मीन।
10. नीरस = फीका
11. भुक्तभोगी = जिसने सुख-दुख झेला हो, जिसे किसी अपराध का फल भोगना पड़ा हो।
12. मध्यमवर्गीय = आर्थिक व सामाजिक रूप से मानव समाज का बीच का वर्ग
13. यातना = कष्ट
14. लम्पट = कामी, व्यभिचारी
15. लीक = लकीर, रेखा, मर्यादा
16. विडंबना = नकल उतारना, चिढ़ाना
17. विमर्श = विचार, विवेचन, परीक्षण
18. विसंगति = समकालीन जीवन की वह स्थिति जहाँ प्रत्येक मूल्य या धारणा का ठीक विपरीत या उल्टा रूप दिखाई पड़ता है
19. संत्रस्त = संतापित
20. समकालीन = एक ही समय का

21. सम्बल = सहारा, ताकत

22. सेवानिवृत्त = रिटायर्ड

19.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. उषा प्रियंवदा के लेखन यात्रा पर प्रकाश डालें।
2. समकालीन महिला कथाकार में उषा प्रियंवदा दूसरे कहानीकारों से कैसे अलग है?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. उषा प्रियंवदा के विदेश प्रवास के संबंध में लिखिए।
2. उषा प्रियंवदा की शैक्षणिक पृष्ठभूमि के बारे में बताइए।
3. हिंदी कहानी में उषा प्रियंवदा के स्थान के संबंध में चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. ज़िंदगी और गुलाब क्या है? ( )
   (अ) कहानी संग्रह (आ) उपन्यास (इ) निबंध (ई) इनमें से कोई नहीं
2. उषा प्रियंवदा ने अमेरिका के किस विशविद्यालय में अध्यापन किया? ( )
   (अ) विस्कांसिन विश्वविद्यालय (आ) इंडियाना विश्वविद्यालय
   (इ) हावर्ड विश्वविद्यालय (ई) इनमें से कोई नहीं
3. 'पचपन खंभे लाल दीवारें' कौन सी विधा की रचना है? ( )
   (अ) कहानी (आ) निबंध लेखन (इ) यात्रा वृतांत (ई)उपन्यास

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. उषा प्रियंवदा का जन्म सन .... में हुआ।
2. शोध के उद्देश्य से उषा प्रियंवदा अमेरिका के .... विश्वविद्यालय गई थी।
3. उषा प्रियंवदा का जन्म उत्तर प्रदेश के .... में हुआ था।

III. सुमेल कीजिए -

1. ज़िंदगी और गुलाब के फूल	अ) उपन्यास
2. एक कोई दूसरा	आ) कहानी संग्रह
3. रुकोगी नहीं राधिका	इ) कहानी संग्रह
4. वापसी	ई) गजाधर बाबू

19.8 पठनीय पुस्तकें

1. नई कहानी - उपलब्धि और सीमाएँ : शेखावत गोरधनसिंह
2. संपूर्ण कहानियाँ : उषा प्रियंवदा
3. हिंदी कहानी का इतिहास : गोपाल राय

مولانا آزاد نیشنل اُردو یونیورسٹی
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 20 : 'वापसी' (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन

रूपरेखा

20.1 प्रस्तावना
20.2 उद्देश्य
20.3 मूल पाठ : 'वापसी' (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन
20.3.1 विषयवस्तु
20.3.2 कहानी के तत्वों की दृष्टि से 'वापसी' का विवेचन
20.4 पाठ सार
20.5 पाठ की उपलब्धियाँ
20.6 शब्द संपदा
20.7 परीक्षार्थ प्रश्न
20.8 पठनीय पुस्तकें

20.1 प्रस्तावना

वापसी कहानी आज के आधुनिक जीवन में पारिवारिक विसंगति को रेखांकित करने वाली मार्मिक कहानी है। गजाधर बाबू रेलवे की नौकरी के कारण अपने परिवार से वर्षों तक अलग रहते हैं अतः जब वे सेवानिवृत्त होकर जब घर लौट आते हैं तब उन्हें अहसास होता है कि उनकी उपस्थिति अपने ही घर में असंगत है। इस कहानी में गजाधर बाबू के अकेलेपन की पीड़ा को, समाज के साथ आधुनिक पीढ़ी की बदली हुई मानसिकता को तथा सामजिक परिवर्तनों के साथ लोगों के बीच बदलते संबंधों को यथार्थ रूप में प्रकट किया गया है। आजीवन परिवार का बोझ ढोने के बावजूद परिवार का मुखिया अर्थात गजाधर बाबू अकेले रहने के लिए विवश हो जाते हैं। उनका अकेलापन आधुनिक जीवन के मध्य उभरती हुई विवशता का अकेलापन है। आज सभी परिवारों की पुराणी पीढ़ी इस समस्या का शिकार है अथवा इस समस्या से जूझ रही है। लेखिका ने इस कहानी के माध्यम से इसी समस्या पर प्रकाश डाला है।

20.2 उद्देश्य

इस कहानी के माध्यम से आप

- कहानी 'वापसी' के प्रतिपाद्य का विवेचन कर सकेंगे।
- 'वापसी' में निहित पारिवारिक जीवन की विसंगतियों को समझ सकेंगे।
- आधुनिक जीवन में बदलते मानवीय मूल्यों एवं संबंधों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- परिवार में स्नेह एवं आत्मीयता के अभाव में एक सेवानिवृत्त व्यक्ति के एकाकीपन तथा अजनबीपन की पीड़ा को समझ सकेंगे।
- पुरानी पीढ़ी तथा नए पीढ़ी के संबंधों में आ रहे बदलाव को जान सकेंगे।
- कहानी के तत्वों की कसौटी पर 'वापसी' की समीक्षा कर सकेंगे।

20.3 मूल पाठ : वापसी (उषा प्रियंवदा) : तात्विक विवेचन

प्रिय छात्रो! कहानी कला के तत्वों के आधार पर उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' की परख करने से पूर्व इस कहानी के प्रतिपाद्य को समझना जरूरी है। इसलिए आइए, पहले विवेच्य कहानी की विषयवस्तु से परिचित हो लें।

20.3.1 विषयवस्तु

गजाधर बाबू ने कमरे में जमा सामान पर एक नजर दौड़ाई - दो बक्स, डोलची, बालटी- 'यह डिब्बा कैसा है, गनेशी?' उन्होंने पूछा। गनेशी बिस्तर बाँधता हुआ, कुछ गर्व, कुछ दुख, कुछ लज्जा से बोला, 'घरवाली ने साथ को कुछ बेसन के लड्डू रख दिए हैं। कहा, बाबूजी को पसंद थे। अब कहाँ हम गरीब लोग, आपकी कुछ खातिर कर पाएँगे।' घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक विषाद का अनुभव किया, जैसे एक परिचित, स्नेह, आदरमय, सहज संसार से उनका नाता टूट रहा हो।

"कभी-कभी हम लोगों की भी खबर लेते रहिएगा।" गनेशी बिस्तर में रस्सी बाँधता हुआ बोला।

"कभी कुछ जरूरत हो तो लिखना गनेशी। इस अगहन तक बिटिया की शादी कर दो।"

गनेशी ने अँगोछे के छोर से आँखें पोंछीं, "अब आप लोग सहारा न देंगे, तो कौन देगा? आप यहाँ रहते तो शादी में कुछ हौसला रहता।"

गजाधर बाबू चलने को तैयार बैठे थे। रेलवे क्वार्टर का यह कमरा, जिसमें उन्होंने कितने वर्ष बिताए थे, उनका सामान हट जाने से कुरूप और नग्न लग रहा था। आँगन में रोपे पौधे भी जान-पहचान के लोग ले गए थे और जगह-जगह मिट्टी बिखरी हुई थी। पर पत्नी, बाल-बच्चों के साथ रहने की कल्पना में यह बिछोह एक दुर्बल लहर की तरह उठ कर विलीन हो गया।

गजाधर बाबू खुश थे, बहुत खुश। पैंतीस साल की नौकरी के बाद वह रिटायर हो कर जा रहे थे। इन वर्षों में अधिकांश समय उन्होंने अकेले रह कर काटा था। उन अकेले क्षणों में उन्होंने इसी समय की कल्पना की थी, जब वह अपने परिवार के साथ रह सकेंगे। इसी आशा के सहारे वह अपने अभाव का बोझ ढो रहे थे। संसार की दृष्टि में उनका जीवन सफल कहा जा सकता था। उन्होंने शहर में एक मकान बनवा लिया था, बड़े लड़के अमर और लड़की कांति की शादियाँ कर दी थीं, दो बच्चे ऊँची कक्षाओं में पढ़ रहे थे। गजाधर बाबू नौकरी के कारण प्रायः छोटे स्टेशनों पर रहे और उनके बच्चे और पत्नी शहर में, जिससे पढ़ाई में बाधा न हो। गजाधर बाबू स्वभाव से बहुत स्नेही व्यक्ति थे और स्नेह के आकांक्षी भी। जब परिवार साथ था, ड्यूटी से लौट कर बच्चों से हँसते-बोलते, पत्नी से कुछ मनोविनोद करते, उन सबके चले जाने से उनके जीवन में गहन सूनापन भर उठा। खाली क्षणों में उनसे घर में टिका न जाता। कवि प्रकृति के न होने पर भी उन्हें पत्नी की स्नेहपूर्ण बातें याद आती रहतीं। दोपहर में गर्मी होने पर भी, दो बजे तक आग जलाए रहती और उनके स्टेशन से वापस आने पर गरम-गरम रोटियाँ सेंकती... उनके खा चुकने और मना करने पर भी थोड़ा-सा कुछ और थाली में परोस देती, और बड़े प्यार से आग्रह करती। जब वह थके-हारे बाहर से आते, तो उनकी आहट पा वह रसोई के द्वार पर निकल आती और

उसकी सलज्ज आँखें मुस्करा उठतीं। गजाधर बाबू को तब हर छोटी बात भी याद आती और वह उदास हो उठते... अब कितने वर्षों बाद वह अवसर आया था, जब वह फिर उसी स्नेह और आदर के मध्य रहने जा रहे थे।

बोध प्रश्न

- घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक विषाद का अनुभव क्यों किया?
- किस आशा के सहारे गजाधर बाबू अपने अभाव का बोझ ढो रहे थे?
- गजाधर बाबू स्वभाव से कैसे व्यक्ति थे?

टोपी उतार कर गजाधर बाबू ने चारपाई पर रख दी, जूते खोल कर नीचे खिसका दिए, अंदर से रह-रह कर कहकहों की आवाज आ रही थी। इतवार का दिन था और उनके सब बच्चे इकठ्ठे हो कर नाश्ता कर रहे थे। गजाधर बाबू के सूखे चेहरे पर स्निग्ध मुस्कान आ गई, उसी तरह मुस्कराते हुए वह बिना खाँसे अंदर चले आए। उन्होंने देखा कि नरेंद्र कमर पर हाथ रखे शायद गत रात्रि की फिल्म में देखे गए किसी नृत्य की नकल कर रहा था और बसंती हँस-हँस कर दुहरी हो रही थी। अमर की बहू को अपने तन-बदन, आँचल या घूँघट का कोई होश न था और वह उन्मुक्त रूप से हँस रही थी। गजाधर बाबू को देखते ही नरेंद्र धप से बैठ गया और चाय का प्याला उठा कर मुँह से लगा लिया। बहू को होश आया और उसने झट से माथा ढक लिया, केवल बसंती का शरीर रह-रह कर हँसी दबाने के प्रयत्न में हिलता रहा।

गजाधर बाबू ने मुस्कराते हुए उन लोगों को देखा। फिर कहा, 'क्यों नरेंद्र, क्या नकल हो रही है?' 'कुछ नहीं बाबूजी।' नरेंद्र ने सिटपिटा कर कहा। गजाधर बाबू ने चाहा था कि वह भी इस मनोविनोद में भाग लेते, पर उनके आते ही जैसे सब कुंठित हो चुप हो गए। उससे उनके मन में थोड़ी-सी खिन्नता उपज आई। बैठते हुए बोले, 'बसंती, चाय मुझे भी देना। तुम्हारी अम्मा की पूजा अभी चल रही है क्या?'

बसंती ने माँ की कोठरी की ओर देखा, 'अभी आती ही होंगी', और प्याले में उनके लिए चाय छानने लगी। बहू चुपचाप पहले ही चली गई थी, अब नरेंद्र भी चाय का आखिरी घूँट पी कर उठ खड़ा हुआ, केवल बसंती, पिता के लिहाज में, चौके में बैठी माँ की राह देखने लगी। गजाधर बाबू ने एक घूँट चाय पी, फिर कहा, 'बिट्टी - चाय तो फीकी है।'

'लाइए चीनी और डाल दूँ।' बसंती बोली।

'रहने दो, तुम्हारी अम्मा जब आएगी, तभी पी लूँगा।'

थोड़ी देर में उनकी पत्नी हाथ में अर्ध्य का लोटा लिए निकली और अशुद्ध स्तुति कहते हुए तुलसी में डाल दिया। उन्हें देखते ही बसंती भी उठ गई। पत्नी ने आ कर गजाधर बाबू को देखा और कहा, 'अरे, आप अकेले बैठे हैं - ये सब कहाँ गए?' गजाधर बाबू के मन में फाँस-सी करक उठी, 'अपने-अपने काम में लग गए है -आखिर बच्चे ही है।'

पत्नी आकर चौके में बैठ गईं, उन्होंने नाक-भौं चढ़ा कर चारों ओर जूठे बर्तनों को देखा। फिर कहा, 'सारे में जूठे बर्तन पड़े हैं। इस घर में धरम-धरम कुछ नहीं। पूजा करके सीधे चौके में घुसो।' फिर उन्होंने नौकर को पुकारा, जब उत्तर न मिला तो एक बार और उच्च स्वर में, फिर

पति की ओर देख कर बोलीं, 'बहू ने भेजा होगा बाजार।' और एक लंबी साँस ले कर चुप हो रही।

गजाधर बाबू बैठकर चाय और नाश्ते का इंतजार करते रहे। उन्हें अचानक ही गनेशी की याद आ गई। रोज सुबह, पैसेंजर आने से पहले वह गरम-गरम पूरियाँ और जलेबी बनाता था। गजाधर बाबू जब तक उठ कर तैयार होते, उनके लिए जलेबियाँ और चाय ला कर रख देता था। चाय भी कितनी बढ़िया, काँच के गिलास में ऊपर तक भरी लबालब, पूरे ढाई चम्मच चीनी और गाढ़ी मलाई। पैसेंजर भले ही रानीपुर लेट पहुँचे, गनेशी ने चाय पहुँचाने मे कभी देर नहीं की। क्या मजाल कि कभी उससे कुछ कहना पड़े।

पत्नी का शिकायत-भरा स्वर सुन उनके विचारों में व्याघात पहुँचा। वह कह रही थीं, 'सारा दिन इसी खिच-खिच में निकल जाता है। इस गृहस्थी का धंधा पीटते-पीटते उमर बीत गई। कोई जरा हाथ भी नहीं बँटाता।'

'बहू क्या किया करती है?' गजाधर बाबू ने पूछा।

'पड़ी रहती है। बसंती को तो, फिर कहो कॉलेज जाना होता है।'

गजाधर बाबू ने प्यार से समझाया, 'तुम सुबह पढ़ लिया करो। तुम्हारी माँ बूढ़ी हुई, उनके शरीर में अब वह शक्ति नहीं बची है। तुम हो, तुम्हारी भाभी है, दोनों मिल कर काम में हाथ बँटाना चाहिए।'

बसंती चुप रह गई। उसके जाने के बाद उसकी माँ ने धीरे से कहा, 'पढ़ने का तो बहाना है। कभी जी ही नहीं लगता। लगे कैसे? शीला से ही फुरसत नहीं, बड़े-बड़े लड़के हैं उनके घर में, हर वक्त वहाँ घुसा रहना, मुझे नहीं सुहाता। मना करूँ तो सुनती नहीं।'

नाश्ता कर गजाधर बाबू बैठक में चले गए। घर छोटा था और ऐसी व्यवस्था हो चुकी थी कि उसमें गजाधर बाबू के रहने के लिए कोई स्थान न बचा था। जैसे किसी मेहमान के लिए कुछ अस्थायी प्रबंध कर दिया जाता है, उसी प्रकार बैठक में कुरसियों को दीवार से सटा कर बीच में गजाधर बाबू के लिए पतली-सी चारपाई डाल दी गई थी। गजाधर बाबू उस कमरे में पड़े-पड़े, कभी-कभी अनायास ही, इस अस्थायित्व का अनुभव करने लगते। उन्हें याद हो आती उन रेलगाड़ियों की, जो आतीं और थोड़ी देर रुक कर किसी और लक्ष्य की ओर चली जातीं।

घर छोटा होने के कारण बैठक में ही अब अपना प्रबंध किया था। उनकी पत्नी के पास अंदर एक छोटा कमरा अवश्य था, पर वह एक ओर के मर्तबान, दाल-चावल के कनस्तर और घी के डिब्बों से घिरा था; दूसरी ओर पुरानी रजाइयाँ दरियों में लिपटी और रस्सी से बँधी रखी थीं; उसके पास एक बड़े-से टीन के बक्स में घर भर के गरम कपड़े थे। बीच में एक अलगनी बँधी हुई थी, जिस पर प्रायः बसंती के कपड़े लापरवाही से पड़े रहते थे। वह भरसक उस कमरे में नहीं जाते थे। घर का दूसरा कमरा अमर और उसकी बहू के पास था, तीसरा कमरा, जो सामने की ओर था, बैठक था। गजाधर बाबू के आने से पहले उसमें अमर की ससुराल से आया बेंत की तीन कुरसियों का सेट पड़ा था, कुरसियों पर नीली गद्दियाँ और बहू के हाथों के कढ़े कुशन थे।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू को अचानक ही गनेशी की याद क्यों आई?
- गजाधर बाबू के रहने का प्रबंध बैठक में क्यों किया गया था?

जब कभी उनकी पत्नी को काई लंबी शिकायत करनी होती, तो अपनी चटाई बैठक में डाल पड़ जाती थीं। वह एक दिन चटाई ले कर आ गईं। गजाधर बाबू ने घर-गृहस्थी की बातें छेड़ीं, वह घर का रवैया देख रहे थे। बहुत हल्के से उन्होंने कहा कि अब हाथ में पैसा कम रहेगा, कुछ खर्च कम होना चाहिए।

'सभी खर्च तो वाजिब-वाजिब हैं, किसका पेट काटूँ? यही जोड़-गाँठ करते-करते बूढ़ी हो गई, न मन का पहना, न ओढ़ा।'

गजाधर बाबू ने आहत, विस्मित दृष्टि से पत्नी को देखा। उनसे अपनी हैसियत छिपी न थी। उनकी पत्नी तंगी का अनुभव कर उसका उल्लेख करतीं। यह स्वाभाविक था, लेकिन उनमें सहानुभूति का पूर्ण अभाव गजाधर बाबू को बहुत खटका। उनसे यदि राय-बात की जाय कि प्रबंध कैसे हो, तो उन्हें चिंता कम, संतोष अधिक होता। लेकिन उनसे तो केवल शिकायत की जाती थी, जैसे परिवार की सब परेशानियों के लिए वही जिम्मेदार थे।

'तुम्हें किस बात की कमी है अमर की माँ - घर में बहू है, लड़के-बच्चे हैं, सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता।' गजाधर बाबू ने कहा और कहने के साथ ही अनुभव किया। यह उनकी आंतरिक अभिव्यक्ति थी - ऐसी कि उनकी पत्नी नहीं समझ सकती। 'हाँ, बड़ा सुख है न बहू से। आज रसोई करने गई है, देखो क्या होता है?' कहकर पत्नी ने आँखें मूँदीं और सो गईं। गजाधर बाबू बैठे हुए पत्नी को देखते रह गए। यही थी क्या उनकी पत्नी, जिसके हाथों के कोमल स्पर्श, जिसकी मुस्कान की याद में उन्होंने संपूर्ण जीवन काट दिया था? उन्हें लगा कि लावण्यमयी युवती जीवन की राह में कहीं खो गई है और उसकी जगह आज जो स्त्री है, वह उनके मन और प्राणों के लिए नितांत अपरिचित है। गाढ़ी नींद में डूबी उनकी पत्नी का भारी-सा शरीर बहुत बेडौल और कुरूप लग रहा था, चेहरा श्रीहीन और रूखा था। गजाधर बाबू देर तक निस्संग दृष्टि से पत्नी को देखते रहे और फिर लेट कर छत की ओर ताकने लगे।

अंदर कुछ गिरा और उनकी पत्नी हड़बड़ा कर उठ बैठीं, 'लो बिल्ली ने कुछ गिरा दिया शायद', और वह अंदर भागीं। थोड़ी देर में लौट कर आईं तो उनका मुँह फूला हुआ था, 'देखा बहू को, चौका खुला छोड़ आई, बिल्ली ने दाल की पतीली गिरा दी। सभी तो खाने को हैं, अब क्या खिलाऊँगी?' वह साँस लेने को रुकीं और बोलीं, 'एक तरकारी और चार परॉँठे बनाने में सारा डिब्बा घी उँड़ेल कर रख दिया। जरा-सा दर्द नहीं है, कमाने वाला हाड़ तोड़े और यहाँ चीजें लुटें। मुझे तो मालूम था कि यह सब काम किसी के बस का नहीं है।'

गजाधर बाबू को लगा कि पत्नी कुछ और बोलेगी तो उनके कान झनझना उठेंगे। ओंठ भींच, करवट ले कर उन्होंने पत्नी की ओर पीठ कर ली।

रात का भोजन बसंती ने जान-बूझ कर ऐसा बनाया था कि कौर तक निगला न जा सके। गजाधर बाबू चुपचाप खा कर उठ गए, पर नरेंद्र थाली सरका कर उठ खड़ा हुआ और बोला, 'मैं ऐसा खाना नहीं खा सकता।'

बसंती तुनक कर बोली, 'तो न खाओ, कौन तुम्हारी खुशामद करता है।'

'तुमसे खाना बनाने को कहा किसने था?' नरेंद्र चिल्लाया।

'बाबूजी ने।'

'बाबूजी को बैठे-बैठे यही सूझता है।'

बसंती को उठा कर माँ ने नरेंद्र को मनाया और अपने हाथ से कुछ बना कर खिलाया। गजाधर बाबू ने बाद में पत्नी से कहा, 'इतनी बड़ी लड़की हो गई और उसे खाना बनाने तक का शऊर नहीं आया।'

'अरे, आता तो सब कुछ है, करना नहीं चाहती।' पत्नी ने उत्तर दिया। अगली शाम माँ को रसोई में देख, कपड़े बदल कर बसंती बाहर आई, तो बैठक से गजाधर बाबू ने टोक दिया, 'कहाँ जा रही हो?'

'पड़ोस में शीला के घर।' बसंती ने कहा।

'कोई जरूरत नहीं है, अंदर जा कर पढ़ो।' गजाधर बाबू ने कड़े स्वर में कहा। कुछ देर अनिश्चित खड़े रह कर बसंती अंदर चली गई। गजाधर बाबू शाम को रोज टहलने चले जाते थे, लौट कर आए तो पत्नी ने कहा, 'क्या कह दिया बसंती से? शाम से मुँह लपेटे पड़ी है। खाना भी नहीं खाया।'

गजाधर बाबू खिन्न हो आए। पत्नी की बात का उन्होंने कुछ उत्तर नहीं दिया। उन्होंने मन में निश्चय कर लिया कि बसंती की शादी जल्दी ही कर देनी है। उस दिन के बाद बसंती पिता से बची-बची रहने लगी। जाना होता तो पिछवाड़े से जाती। गजाधर बाबू ने दो-एक बार पत्नी से पूछा तो उत्तर मिला, 'रूठी हुई है।' गजाधर बाबू को रोष हुआ। लड़की के इतने मिजाज, जाने को रोक दिया तो पिता से बोलेगी नहीं। फिर उनकी पत्नी ने ही सूचना दी कि अमर अलग रहने की सोच रहा है।

'क्यों?' गजाधर बाबू ने चकित हो कर पूछा।

पत्नी ने साफ-साफ उत्तर नहीं दिया। अमर और उसकी बहू की शिकायतें बहुत थीं। उनका कहना था कि गजाधर बाबू हमेशा बैठक में ही पड़े रहते हैं, कोई आने-जानेवाला हो तो कहीं बिठाने को जगह नहीं। अमर को अब भी वह छोटा-सा समझते थे और मौके-बेमौके टोक देते थे। बहू को काम करना पड़ता था और सास जब-तब फूहड़पन पर ताने देती रहती थीं। 'हमारे आने से पहले भी कभी ऐसी बात हुई थी?' गजाधर बाबू ने पूछा। पत्नी ने सिर हिला कर बताया कि नहीं। पहले अमर घर का मालिक बन कर रहता था, बहू को कोई रोक-टोक न थी, अमर के दोस्तों का प्रायः यहीं अड्डा जमा रहता था और अंदर से नाश्ता चाय तैयार हो कर जाता रहता था। बसंती को भी वही अच्छा लगता था।

गजाधर बाबू ने बहुत धीरे से कहा, 'अमर से कहो, जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है।'

अगले दिन वह सुबह घूम कर लौट तो उन्होंने पाया कि बैठक में उनकी चारपाई नहीं है। अंदर जा कर पूछने ही वाले थे कि उनकी दृष्टि रसोई के अंदर बैठी पत्नी पर पड़ी। उन्होंने यह कहने को मुँह खोला कि बहू कहाँ है, पर कुछ याद कर चुप हो गए। पत्नी की कोठरी में झाँका तो

अचार, रजाइयों और कनस्तरों के मध्य अपनी चारपाई लगी पाई। गजाधर बाबू ने कोट उतारा और कहीं टाँगने को दीवार पर नजर दौड़ाई। फिर उसे मोड़ कर अलगनी के कुछ कपड़े खिसका कर एक किनारे टाँग दिया। कुछ खाए बिना ही अपनी चारपाई पर लेट गए। कुछ भी हो, तन आखिरकार बूढ़ा ही था। सुबह-शाम कुछ दूर टहलने अवश्य चले जाते, पर आते-जाते थक उठते थे। गजाधर बाबू को अपना बड़ा-सा क्वार्टर याद आ गया। निश्चित जीवन, सुबह पैसेंजर ट्रेन आने पर स्टेशन की चहल-पहल, चिर-परिचित चेहरे और पटरी पर रेल के पहियों की खट-खट, जो उनके लिए मधुर संगीत की तरह थी। तूफान और डाक गाड़ी के इंजनों की चिंघाड़ उनकी अकेली रातों की साथी थी। सेठ रामजी मल की मिल के कुछ लोग कभी-कभी पास आ बैठते, वही उनका दायरा था, वही उनके साथी। वह जीवन अब उन्हें एक खोई निधि-सा प्रतीत हुआ। उन्हें लगा कि वह जिंदगी द्वारा ठगे गए हैं। उन्होंने जो कुछ चाहा, उसमें से उन्हें एक बूँद भी न मिली।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू ने बसंती को क्यों डाँटा?
- गजाधर बाबू को ज़िंदगी द्वारा ठगे जाने का अहसास क्यों हुआ?

लेटे हुए वह घर के अंदर से आते विविध स्वरों को सुनते रहे। बहू और सास की छोटी-सी झड़प, बाल्टी पर खुले नल की आवाज, रसोई के बर्तनों की खटपट और उसी में दो गौरैयों का वार्तालाप और अचानक ही उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब घर की किसी बात में दखल न देंगे। यदि गृहस्वामी के लिए पूरे घर में एक चारपाई की जगह नहीं है, तो यहीं पड़े रहेंगे। अगर कहीं और डाल दी गई तो वहाँ चले जाएँगे। यदि बच्चों के जीवन में उनके लिए कहीं स्थान नहीं, तो अपने ही घर में परदेसी की तरह पड़े रहेंगे... और उस दिन के बाद सचमुच गजाधर बाबू कुछ नहीं बोले। नरेंद्र रुपये माँगने आया तो बिना कारण पूछे उसे रुपये दे दिए। बसंती काफी अँधेरा हो जाने के बाद भी पड़ोस में रही तो भी उन्होंने कुछ नहीं कहा - पर उन्हें सबसे बड़ा गम यह था कि उनकी पत्नी ने भी उनमें कुछ परिवर्तन लक्ष्य नहीं किया। वह मन-ही-मन कितना भार ढो रहे हैं, इससे वह अनजान ही बनी रहीं। बल्कि उन्हें पति के घर के मामले में हस्तक्षेप न करने के कारण शांति ही थी। कभी-कभी कह भी उठतीं, 'ठीक ही है' आप बीच में न पड़ा कीजिए, बच्चे बड़े हो गए हैं, हमारा जो कर्तव्य था, कर रहे हैं। पढ़ा रहे हैं, शादी कर देंगे।'

गजाधर बाबू ने आहत दृष्टि से पत्नी को देखा। उन्होंने अनुभव किया कि वह पत्नी और बच्चों के लिए केवल धनोपार्जन के निमित्त मात्र हैं। जिस व्यक्ति के अस्तित्व से पत्नी माँग में सिंदूर डालने की अधिकारिणी है, समाज में उसकी प्रतिष्ठा है, उसके सामने वह दो वक़्त भोजन की थाली रख देने से सारे कर्तव्यों से छुट्टी पा जाती है। वह घी और चीनी के डिब्बों में इतनी रमी हुई है कि अब वही उसकी संपूर्ण दुनिया बन गई है। गजाधर बाबू उनके जीवन के केंद्र नहीं हो सकते, उन्हें तो अब बेटी की शादी के लिए भी उत्साह बुझ गया। किसी बात में हस्तक्षेप न करने के निश्चय के बाद भी उनका अस्तित्व उस वातावरण का एक भाग न बन सका। उनकी उपस्थिति उस घर में ऐसी असंगत लगने लगी थी, जैसे सजी हुई बैठक में उनकी चारपाई थी। उनकी सारी खुशी एक गहरी उदासीनता में डूब गई।

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू को सबसे बड़ा गम किस बात का था?

इतने सब निश्चयों के बावजूद एक दिन बीच में दखल दे बैठे। पत्नी स्वभावानुसार नौकर की शिकायत कर रही थीं, 'कितना कामचोर है, बाजार की भी चीज में पैसा बनाता है, खाने बैठता है, तो खाता ही चला जाता है।' गजाधर बाबू को बराबर यह महसूस होता रहता था कि उनके घर का रहन-सहन और खर्च उनकी हैसियत से कहीं ज्यादा है। पत्नी की बात सुन कर कहते कि नौकर का खर्च बिलकुल बेकार है। छोटा-मोटा काम है, घर में तीन मर्द हैं, कोई न कोई कर ही देगा। उन्होंने उसी दिन नौकर का हिसाब कर दिया। अमर दफ्तर से आया तो नौकर को पुकारने लगा। अमर की बहू बोली, 'बाबूजी ने नौकर छुड़ा दिया है।'

'क्यों?'

'कहते हैं खर्च बहुत है।'

यह वार्तालाप बहुत सीधा सा था, पर जिस टोन में बहू बोली गजाधर बाबू को खटक गया। उस दिन जी भारी होने के कारण गजाधर बाबू टहलने नहीं गए थे। आलस्य में उठ कर बत्ती भी नहीं जलाई थी - इस बात से बेखबर नरेंद्र माँ से कहने लगा, 'अम्माँ, तुम बाबूजी से कहती क्यों नहीं? बैठे-बिठाए कुछ नहीं तो नौकर ही छुड़ा दिया। अगर बाबूजी यह समझें कि मैं साइकिल पर गेहूँ रख आटा पिसाने जाऊँगा, तो मुझ से यह नहीं होगा।' 'हाँ अम्माँ,' बसंती का स्वर था, 'मैं कॉलेज भी जाऊँ और लौट कर घर में झाड़ू भी लगाऊँ, यह मेरे बस की बात नहीं है।'

'बूढ़े आदमी हैं,' अमर भुनभुनाया, 'चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं?' पत्नी ने बड़े व्यंग्य से कहा, 'और कुछ नहीं सूझा, तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई तो पंद्रह दिन का राशन पाँच दिन में बना कर रख दिया।' बहू कुछ कहे, इससे पहले वह चौके में घुस गईं। कुछ देर में अपनी कोठरी में आईं और बिजली जलाई तो गजाधर बाबू को लेटे देख बड़ी सिटपिटाईं। गजाधर बाबू की मुख-मुद्रा से वह उनमें भावों का अनुमान न लगा सकीं। वह चुप आँखें बंद किए लेटे रहे।

गजाधर बाबू चिट्ठी हाथ में लिए अंदर आए और पत्नी को पुकारा। वह भीगे हाथ निकलीं और आँचल से पोंछती हुई पास आ खड़ी हुईं। गजाधर ने बिना किसी भूमिका के कहा, 'मुझे सेठ रामजी मल की चीनी मिल में नौकरी मिल गई है। खाली बैठे रहने से तो चार पैसे घर में आएँ, वही अच्छा है। उन्होंने तो पहले ही कहा था, मैंने ही मना कर दिया था।' फिर कुछ रुक कर, जैसे बुझी हुई आग में चिनगारी चमक उठे, उन्होंने धीमे स्वर में कहा, 'मैंने सोचा था कि बरसों तुम सबसे अलग रहने के बाद, अवकाश पा कर परिवार के साथ रहूँगा। खैर, परसों जाना है। तुम भी चलोगी?' 'मैं?' पत्नी ने सकपका कर कहा, 'मैं चलूँगी तो यहाँ का क्या होगा? इतनी बड़ी गृहस्थी, फिर सियानी लड़की...'

बात बीच में काट गजाधर बाबू ने हताश स्वर में कहा, 'ठीक है, तुम यहीं रहो। मैंने तो ऐसे ही कहा था।' और गहरे मौन में डूब गए।

नरेंद्र ने बड़ी तत्परता से बिस्तर बाँधा और रिक्शा बुला लाया। गजाधर बाबू का टीन का बक्स और पतला-सा बिस्तर उस पर रख दिया गया। नाश्ते के लिए लड्डू और मठरी की डलिया हाथ में लिए गजाधर बाबू रिक्शे पर बैठ गए। दृष्टि उन्होंने अपने परिवार पर डाली। फिर दूसरी ओर देखने लगे और रिक्शा चल पड़ा।उनके जाने के बाद सब अंदर लौट आए। बहू ने अमर से पूछा, 'सिनेमा ले चलिएगा न?' बसंती ने उछल कर कहा, 'भइया, हमें भी।'

गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चौके में चली गईं। बची हुई मठरियों को कटोरदान में रख कर अपने कमरे में लाईं और कनस्तरों के पास रख दिया, फिर बाहर आ कर कहा, 'अरे नरेंद्र, बाबू की चारपाई कमरे से निकाल दे। उसमें चलने तक की जगह नहीं है।'

बोध प्रश्न

- गजाधर बाबू ने धीमे स्वर में क्या कहा?

20.3.2 कहानी के तत्वों की दृष्टि से 'वापसी' का विवेचन

प्रस्तुत कहानी (वापसी)की सबसे बड़ी विशष्टता यह है कि कथ्य को अत्यंत सहज ढंग से सरल तथा बोलचाल की भाषा के माध्यम से गहरे और मार्मिक प्रभाव के साथ व्यक्त किया गया है। एक परिवार के चित्रण के माध्यम से दो पीढ़ियों के मध्य मानसिक तनाव, वैचारिक संघर्ष, संबंधों की शिथिलता, पति-पत्नी के मध्य सहानुभूति तथा आत्मीयता का अभाव, सेवानिवृत्त व्यक्ति के प्रति अनादर, सहनुभूतिहीनता आदि की ओर संकेत किया गया है।

बोध प्रश्न

- इस कहानी में किसकी ओर संकेत किया गया है?

1. कथावस्तु–

कहानी के तत्वों के आधार पर विवेचन करें तो हम पाते हैं कि किसी भी कहनी के **कथावस्तु** को समझने के लिए यह समझना जरूरी है कि कहानी की रचना किस लिए की गई है? इस कहानी के माध्यम से रचनाकार क्या कहना चाहता है और जो कहना चाहता है उसके लिए उसने कथानक को किस तरह विकसित किया है? इसे समझने के लिए वापसी कहानी के केंद्रीय भाव को समझना होगा। सेवानिवृत्ति के बाद गजाधर बाबू को वह दुनिया नहीं मिली जिसकी उन्होंने उम्मीद की थी। उन्हें यह अहसास हो जाता है कि अपने ही घर में वे बिन बुलाए मेहमान की तरह है। कहानी गजाधर बाबू की नौकरी से पहली वापसी से शुरू होकर घर से दूसरी वापसी में ख़त्म हो जाती है।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी का केंद्रीय भाव क्या है?

2. चरित्र चित्रण–

चरित्र चित्रण की बात की जाए तो 'वापसी' कहानी गजाधर बाबू को केंद्र में रखकर लिखी गई है। कहानी में मुख्य चरित्र भी वाही है और उन्हीं का चरित्र सबसे अधिक मुखर होकर सामने आया है। इसके अतिरिक्त उनके पत्नी का चरित्र दूसरे पात्रों की तुलना में अधिक उभरकर

आता है। शेष सभी पात्र कहानी की जरूरत के अनुसार आते-जाते रहते हैं और उनका चरित्र बहुत ज्यादा उभरकर नहीं आता।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी के केंद्रीय पात्र का नाम बताइए।

3. परिवेश-

कहानी का **परिवेश** मध्यवर्ग का है। कहानी में भौतिक परिवेश के अलावा कई ऐसी बातें आती हैं जो यह बताती है कि गजाधर बाबू और उनका परिवार औसत दर्जे का परंपरागत मध्यवर्गीय परिवार है। अचारों के मर्तबान, चावल के कनस्तर, घी का डिब्बा, टीन के बक्स में रखे गरम कपडे, बेंत की कुर्सियाँ और इसी तरह के घरेलु सामान का उल्लेख इस तथ्य की ओर ही संकेत करता है। परिवार के लोगों का आपसी व्यवहार का रूप भी मध्यवर्गीय भारतीय परिवार के अनुरूप है।

बोध प्रश्न

- 'वापसी' कहानी का परिवेश क्या है?

4. संवाद-

'वापसी' में लेखिका ने छोटे और पात्रानुकूल संवादों की सहायता से कहानी की अभिव्यक्ति को प्रभावशाली बनाया है। इनसे पात्रों का चरित्र भी खुलता है और अंतर्द्वंद्व भी प्रकट होता है। कहानी के सूत्र को तो आगे बढ़ने में मदद मिलती ही है। उदाहरण के लिए एक संवाद देखें-

'बूढ़े आदमी हैं,' अमर भुनभुनाया, 'चुपचाप पड़े रहें। हर चीज में दखल क्यों देते हैं?'

पत्नी ने बड़े व्यंग्य से कहा, 'और कुछ नहीं सूझा, तो तुम्हारी बहू को ही चौके में भेज दिया। वह गई तो पंद्रह दिन का राशन पाँच दिन में बना कर रख दिया।'

5. भाषा-शैली-

भाषा की बात करें तो मूल कथ्य की तरह कहानी की भाषा भी यथार्थपरक है। पूरी कहानी बहुत ही सधी हुई भाषा में लिखी गई है। शब्द और वाक्यों का प्रयोग बड़ी सावधानी से किया गया है। प्रत्येक बात को इस तरह कहा गया है कि उसके पीछे की भावना का भी पाठक को बोध हो। कहानी में स्थितियों और भावों को बहुत ही संयमित भाषा में रखा गया है।

इस कहानी में प्रमुखतः वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। कहानी में कोई अति नाटकीय प्रसंग नहीं है। एक मध्यवर्गीय परिवार के घरेलू और यथार्थ प्रसंग ही एक-एक कर पाठकों के समक्ष आते हैं। सभी प्रसंग कहनी के मुख्य कथ्य को पुष्ट करने के लिए ही रखे गए हैं। कहानी को यथार्थवादी पद्धति से लिखा गया है। कहानी धीरे-धीरे विकसित होती है। कहानी का पूरा ताना-बाना सामान्य प्रसंगों से ही बुना गया है, लेकिन पूरे कहानी की परिणति मध्यवर्गीय परिवार में हो रहे बदलाव को बहुत ही तीखे और संवेदनशील ढंग से उभारती है। इस कहानी के शिल्प की यही विशेषता है।

कुल मिलाकर कहानी अपने कथ्य के अनुरूप शैली और भाषा में रची गयी है इसी कारण पाठक पर गहरा प्रभाव डालती है।

6. उद्देश्य -

'वापसी' एक उद्देश्यपूर्ण कहानी है। इस कहानी की संरचना के केंद्र में एक मध्यवर्गीय शहरी परिवार में बुजुर्ग लोगों की बदलती स्थिति को उभरने का उद्देश्य सक्रिय है। इस लिहाज से यह कहानी वृद्धावस्था विमर्श को पुष्ट करने वाली मार्मिक कहानी सिद्ध होती है।

20.4 पाठ सार

आधुनिकता ने जहाँ सभ्यता और संस्कृति के नए आयामों का उद्घाटन किया है वहाँ जीवन मूल्यों का विघटन, संबंधों में शिथिलता, बिखराव, अजनबीपन तथा एकाकीपन की पीड़ा भी उसकी महत्वपूर्ण देन है। 'वापसी' कहानी में इसी पीड़ा को भावबोध के स्तर पर बड़े संयमित रूप में कौशल के साथ व्यक्त किया गया है। 'वापसी' एक वातावरण प्रधान, यथार्थवादी कहानी है। इस कहानी के माध्यम से उषा प्रियंवदा ने पारिवारिक विघटन तथा संबंधों की शिथिलता का मार्मिक अंकन किया है। इस कहानी में परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व है। आधुनिकता के इस दौर में दो पीढ़ियों के बीच हो रहे बदलाव व टकराव का लेखा जोखा प्रस्तुत है। कहानी में सेवानिवृत्त हो कर घर लौटे गजाधर बाबू को अपने ही घर में पराया कर दिए जाने के कटु अनुभवों को चित्रित किया गया है। स्टेशन मास्टर की नौकरी से सेवानिवृत्त होने के बाद गजाधर बाबू बड़े उत्साह से अपने परिवार के साथ रहने की इच्छा लिए घर लौटते हैं। रेलवे क्वार्टर में रह कर नौकरी करते हुए गजाधर बाबू को पैंतीस सालों तक परिवार से दूर रहना पड़ा था ताकि उनका परिवार शहर में सुख- सुविधाओं के बीच रह सके। शहर में रहने से उन्हें किसी प्रकार की कमी का बोध न होने पाए। नौकरी से सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने सोचा कि अब जिंदगी के बचे दिन अपने परिजनों के साथ प्यार और आराम से बिताएंगे। एक सुंदर और सुखद घर का सपना संजोए वे घर लौटे तो उन्होंने पाया कि परिवार के लोग अपने - अपने ढंग से जी रहे हैं। बेटा घर का मालिक बना हुआ है। बेटी और बहू घर का कोई काम नहीं करतीं और यदि उन्हें रसोई बनाने को कहा जाए तो वे जानबूझ कर आवश्यकता से अधिक राशन खर्च कर देती हैं इसलिए उनकी पत्नी ने घर और रसोई की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है। घर के अन्य कामों के लिए नौकर रखा गया है, जिसकी कोई आवश्यकता ही नहीं है। जिस परिवार के लिए कई वर्षों तक छोटे - मोटे स्टेशन के क्वाटर में अकेले रहकर उन्होंने अपना जीवन गुजार दिया उसी परिवार के किसी सदस्य के मन में उनके प्रति कोई लगाव नहीं है। बच्चों के लिए वे केवल पैसा कमाने का साधन मात्र हैं। गजाधर बाबू की उपस्थिति व किसी कार्य में उनका हस्तक्षेप बेटे बहू को स्वीकार नहीं हो पाती। उनके होने से उन्हें अपने मन से जीने की स्वतंत्रता नहीं मिल पाती। उनकी अपनी बेटी भी एक छोटी सी डांट पर मुँह फुला देती है तथा उसने कटकर रहने लगती है। उनकी पत्नी उन्हें समझने की बजाय उलटे उन्हीं को बच्चों के फैसलों के बीच में न पड़ने की सलाह देती है।

सेवानिवृत्ति के बाद अपने ही घर में वे स्वयं को अनावश्यक, अजनबी तथा नगण्य मानने लगे। उनका उत्साह, आशाएँ तथा सुख की कल्पनाएँ टूट जाती हैं। अंत में परिवार के सदयों की बदलती मानसिकता से ऊबकर तथा विवश होकर निस्संग भाव से सेठ रामजीमल की चीनी

मिल में नौकरी के लिए जाने का निश्चय कर लेते हैं। कोई उन्हें रोकने का प्रयास नहीं करता वरन सभी लोग उनके जाने का बड़ी तत्परता से प्रबंध करते हैं। उनके जाने के बाद परिवार के सभी सदस्य अपने मन के अनुसार जीवन बिताने के लिए मुक्त हो जाते हैं। इतना ही नहीं उनके अस्तित्व की प्रतीक चारपाई को कमरे से निकाल दिया जाता है। जीवनभर दायित्वों का बोझ ढोनेवाले गजाधर बाबू परिवार के लिए स्वयं बोझ बन जाते हैं।

20.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

आधुनिक हिंदी साहित्य में उषा प्रियंवदा जी का विशिष्ट स्थान है। नई कहानी में अपनी उत्कृष्ट रचनाओं के कारण उषा जी बहुचर्चित और बहुप्रशंसित रहीं। अपनी रचनाशीलता के कारण ही वे आज भी हिंदी कहानी की महत्वपूर्ण हस्ताक्षर बनी हुई हैं। उषा प्रियंवदा की कहानियों में आज के व्यक्ति की दशा और दिशा का जीवन्त चित्रण देखने को मिलता है जो पाठकों को सहज रूप में अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। विद्यार्थी इस पाठ के माध्यम से परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व को समझ सके हैं। आधुनिकता के इस दौर में दो पीढ़ियों के बीच हो रहे बदलाव व टकराव को समझने में यह पाठ या इकाई अत्यंत महत्वपूर्ण है। सेवानिवृत्त हो कर घर लौटे गजाधर बाबू को अपने ही घर में पराया कर दिए जाने के कटु अनुभवों को समझने में और आज के सामजिक परिवेश में उसकी प्रासंगिकता पर अवलोकन करने की क्षमता को विकसित करने में यह कहानी सहायक सिद्ध होगी।

20.6 शब्द संपदा

1. अंगोछा = तौलिया
2. अगहन = अग्रहायण, मार्गशीर्ष मास, हिंदी कैलेण्डर का नवाँ महीना।
3. अर्घ्य = पूजा में देने योग्य वस्तु
4. अलगनी = कपड़े टाँगने के लिए बाँधी रस्सी
5. अस्थाय = क्षणिक
6. आहत = घायल, चोट खाया हुआ, ज़ख्मी
7. कनस्तर = टीन का पीपा
8. कुंठित = निराश, खिन्न, हताश
9. खिन्नता = उदास होना, चिंता, विकलता
10. खिसकाना = हटाना
11. खुशामद = चापलूसी
12. डोलची = छोटी टोकरी

13. तुनककर = छोटी सी बात पर नाराज होना

14. दायरा = कार्य का क्षेत्र, अधिकार का क्षेत्र

15. फाँस सी करकना = फाँस सी चुभना

16. फूहड़पन = बेढ़ंगापन, भद्दे ढंग से काम करना

17. बक्सा = कपडे रखने का संदूक

18. बिछोह = वियोग, विरह, दुःख

19. मठरी = मैदे के बनी नमकीन टिकिया

20. मर्तबान = चीनी-मिट्टी का बर्तन जिसमे अचार रखते हैं

21. रवैया = व्यवहार, चलन, प्रथा

22. लिहाज = ध्यान, किसी को उपेक्षित न करने का भाव

23. विषाद = दुःख

24. व्याघात = बाधा, रुकावट

25. शऊर = काम का ढंग जानने वाला

26. श्रीहीन = कांतिहीन, शोभाहीन

27. सिटपिटाना - घबराहट से सहम जाना

20.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. वापसी कहानी के कथ्य को ध्यान में रखकर उसका मूल्यांकन कीजिए।
2. वापसी कहानी में किन-किन समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है? स्पष्ट कीजिए।
3. गजाधर बाबू का चरित्र-चित्रण कीजिए।
4. वापसी कहानी के शीर्षक की सार्थकता पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. गजाधार बाबू की वापसी के लिए आप किसे दोषी मानते हैं और क्यों?

2. “वापसी कहानी में आधुनिक परिवार की विसंगति की स्पष्ट झलक मिलती है” स्पष्ट कीजिए।

3. कहानी का सार संक्षेप में लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. गजाधर बाबू अपने घर क्यों लौटे थे? ( )

अ) बीमारी के वजह से आ) सेवानिवृत्त होकर

इ) अवकाश ग्रहण कर के ई) बेटे के विवाह निमित्त

2. गजाधर बाबू के लिए बैठने का साधन ____________ था? ( )

अ) कुर्सी आ) मेज़ इ) चारपाई ई) आँगन

3. बीता हुआ जीवन गजाधर बाबू को कैसा प्रतीत हुआ? ( )

अ) बेकार-सा आ) खोयी निधि-सा इ) नीरस-सा ई) बढ़िया-सा

4. इनमें कौनसी चारित्रिक विशेषता गजाधर बाबू पर लागू नहीं होती?( )

अ) संवेदनशील आ) परंपरावादी इ) सहृदय ई) गुस्सैल

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. घर जाने की खुशी में भी गजाधर बाबू ने एक ………….. का अनुभव किया।

2. गजाधर बाबू स्वभाव से बहुत ………….. व्यक्ति थे और स्नेह के आकांक्षी भी।

3. ‘सिर्फ रुपये से ही आदमी अमीर नहीं होता।' यह कथन ………….. का है।

III. सुमेल कीजिए -

1. गजाधर बाबू	(अ) उषा प्रियंवदा
2. घर छोटा होने के कारण	(आ) परिवार के साथ रहने की कल्पना मे
3. वापसी	(इ) ‘ठीक है, तुम यहीं रहो’
4. गजाधर बाबू खुश थे	(ई) बैठक में उनका प्रबंध कर दिया गया
5. गजाधर बाबू ने हताश स्वर में कहा	(उ) रिटायर होकर घर जा रहे थे

20.8 पठनीय पुस्तकें

1. मेरी प्रिय कहानियाँ : उषा प्रियंवदा

2. कहानी-नयी कहानी : नामवर सिंह

इकाई 21: रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध

रूपरेखा

21.1 प्रस्तावना
21.2 उद्देश्य
21.3 मूल पाठ : रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध
21.3.1 रामचंद्र शुक्ल का सामान्य परिचय
21.3.2 रामचंद्र शुक्ल की निबंध दृष्टि
21.3.3 विचारात्मक निबंध
21.3.4 समीक्षात्मक निबंध
21.3.5 भाषा शैली
21.4 पाठ सार
21.5 पाठ की उपलब्धियाँ
21.6 शब्द संपदा
21.7 परीक्षार्थ प्रश्न
21.8 पठनीय पुस्तकें

21.1 प्रस्तावना

हिंदी निबंध के इतिहास का विभाजन क्रमशः भारतेंदु युग, द्विवेदी युग, शुक्ल युग और शुक्लोत्तर युग के रूप में किया गया है। रामचंद्र शुक्ल हिंदी साहित्य के एक युग प्रवर्तक रचनाकार हैं। इनके वैचारिक, सैद्धांतिक और साहित्यिक विचारों को 'निबंध' के रूप में विद्वानों ने स्थायी महत्व का स्वीकार करते हुए इनके प्रौढ़ लेखन समय को 'शुक्ल युग' (1920-1940) के नाम से संबोधित किया। इनका लेखन काल लगभग 40 वर्ष का रहा। इनके निबंध साहित्यप्रेमियों की आत्मा को पोषित करने के साथ ही शिक्षा जगत के लिए आज भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने तब थे जब विश्वविद्यालय शिक्षा का प्रावधान हुआ था पर उस स्तर की पुस्तकों का घोर अभाव था। शिक्षा जगत में इनका योगदान अमूल्य है। "छायावाद-युग के समानांतर निबंध-क्षेत्र में विशिष्ट लेखन रामचंद्र शुक्ल का है। उनके विषय वैदुषिक ढंग के हैं, पर शैली में लालित्य है।...आचार्य शुक्ल के निबंध दो तरह के हैं या तो भावों-मनोविकारों संबंधी जैसे 'उत्साह', 'श्रद्धा-भक्ति', 'करुणा', 'ईर्ष्या', 'क्रोध' या फिर आलोचना के सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप को लेकर जैसे 'कविता क्या है?', 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था', 'भारतेंदु हरिश्चंद्र', 'मानस की धर्मभूमि'। स्पष्ट ही इन दोनों वर्गों में विषय अपनी प्रकृति से पूरी तरह वैदुषिक हैं, या मनोविज्ञान के क्षेत्र से या साहित्य-चिंतन के क्षेत्र से। ऐसे विषयों पर ललित शैली में निबंध-लेखन निश्चय ही कठिन है। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)।"

21.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप हिंदी गद्य साहित्य के अंतर्गत 'रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध' का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- रामचंद्र शुक्ल के व्यक्तित्व और कृतित्व को जान सकेंगे।
- विभिन्न विद्वानों के निबंध संबंधी दृष्टिकोण का संक्षिप्त परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- रामचंद्र शुक्ल की निबंध संबंधी मान्यताओं से परिचित हो सकेंगे।
- रामचंद्र शुक्ल के निबंधों का महत्व समझ सकेंगे।

21.3 मूल पाठ : रामचंद्र शुक्ल और उनके निबंध

21.3.1 रामचंद्र शुक्ल का सामान्य परिचय

हिंदी साहित्य के प्रतिष्ठित इतिहासकार रामचंद्र शुक्ल (1884-1941) निबंध सम्राट होने के साथ कवि, कहानीकार, संपादक, जीवनचरित लेखक, अनुवादक, शब्द कोश निर्माता और प्रखर आलोचक भी हैं। इनके द्वारा रचित कहानी है 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903)। 'मधुस्रोत' इनका काव्य संग्रह है। अपने जीवनकाल में लेखन के साथ अध्यापन का कार्य भी इन्होंने किया। संपादन का कार्य इन्होंने बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन की 'आनंद कादंबिनी' से विद्यार्थी जीवन में ही आरंभ किया। नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा 11 खंडों में प्रकाशित 'हिंदी शब्दसागर' के निर्माण में सहायक संपादक के रूप में इन्होंने अपनी सेवा दी। इनके लेखन में सभी शास्त्रों की प्रतिच्छाया नजर आती है। विविध भाषाओं के साहित्य के साथ लेखन में कला, मनोविज्ञान, दर्शन, अध्यात्म, धर्म, न्याय इत्यादि विषयों का समावेश इनके व्यापक और जन सरोकारी दृष्टिकोण का परिचय देता है। साहित्य, समाज और भाषा को एक साथ रखकर उसका विवेचन-विश्लेषण करने में सिद्धहस्त रामचंद्र शुक्ल की विद्वता का सारस्वत सम्मान उनके समकालीन, पूर्ववर्ती और परवर्ती सभी ने किया है। उनका साहित्य और समीक्षा हिंदी साहित्य के पठन-पाठन का अनिवार्य अंग है। "भारतीय काव्यालोचन का इतना गंभीर और स्वतंत्र विचारक हिंदी में तो दूसरा हुआ ही नहीं, अन्यान्य भारतीय भाषाओं में भी हुआ है या नहीं, ठीक से नहीं कह सकते। (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी)।" अंग्रेजी से हिंदी में अनुवाद-कार्य का आरंभ भी इन्होंने विद्यार्थी जीवन से ही किया। यही उनके निबंध लेखन की पृष्ठभूमि भी बनी। लेकिन केवल अनुवाद कर लेने से कोई निबंध लेखक नहीं हो सकता। अपने क्षेत्र का धुरंधर तो कतई नहीं हो सकता। लेखन की जो गंभीरता इनके निबंधों में देखने को मिलती है उसका संबंध उनकी अन्तःचेतना से जोड़कर देखा जाना चाहिए। वह अंतःचेतना जो तटस्थ भी है और रागपूर्ण भी। वह अंतःचेतना जो मनुष्य के अस्तित्व की समर्थक है, जो उसके भावों को उसके तल में जाकर छूती है, जो सामाजिक हर्ष-विषाद की साक्षी है- इस अंतःचेतना के प्रभाव में जब शब्द लिखे जाते हैं तो उन शब्दों की सत्ता देशकाल की सीमा से परे विराट हो जाती है। ऐसे ही शब्द रामचंद्र शुक्ल ने लिखे जिन्हें हम आज भी आत्मसात करते हैं।

'साहित्य' इनका प्रथम निबंध है जो 1904 में सरस्वती में छपा था। 1909 में इसी पत्रिका में 'कविता क्या है' निबंध प्रकाशित हुआ। इनकी पहली आलोचनात्मक पुस्तक 'काव्य में

रहस्यवाद' (1929) है। उसके बाद 'विचार वीथी' (1930) निबंध संग्रह प्रकाशित हुआ। इसमें प्रकाशित निबंध ही बाद में चिंतामणि के प्रथम दो खंडों के रूप में क्रमशः 1939 और 1945 में प्रकाशित हुए। इन दोनों खंडों में संकलित निबंध 1912 से 1919 की कालावधि में लिखे गए थे। इन दोनों खंडों से शेष आचार्य शुक्ल के असंकलित निबंधों को संगृहीत कर नामवर सिंह ने चिंतामणि भाग-3 के रूप में उन्हें पुस्तकाकार कर, उनका संपादन किया। यह निबंध संग्रह पहले 1983 में प्रकाशित हुआ। चिंतामणि के इस तीसरे खंड में 21 निबंध हैं। क्षात्र धर्म का सौंदर्य, प्रेम आनंद स्वरूप है, प्रेमघन की छाया स्मृति, कविता क्या है, साहित्य, उपन्यास, कल्पना का आनंद, विश्व प्रपंच की भूमिका, शेष स्मृतियाँ की प्रवेशिका, बुद्धचरित की भूमिका इत्यादि इस संकलन के कुछ विशिष्ट निबंध हैं। चिंतामणि भाग-4 का संपादन कुसुम चतुर्वेदी और ओम प्रकाश सिंह ने किया है। इसमें विभिन्न पुस्तकों की भूमिकाएँ और विभिन्न साहित्यिक समारोहों एवं गोष्ठियों में रामचंद्र शुक्ल द्वारा दिए गए वक्तव्यों को संकलित किया गया हैं।

रामचंद्र शुक्ल के अनुवाद कार्य भी उल्लेखनीय हैं। सर टी. माधवराव की पुस्तक माइनर हिंट्स का अनुवाद 'राज्य प्रबंध शिक्षा'के नाम से किया। 'प्लेन लीविंग हाई थिंकिंग', हेनरी न्यूमैन के 'लिटरेचर', एडिसन के 'एसेज ऑन इमेजिनेशन' का अनुवाद क्रमशः 'आदर्श जीवन' (1914), साहित्य (1904), कल्पना का आनंद (1905) इत्यादि शीर्षकों से किया। उन्होंने एडविन अर्नाल्ड के 'लाइट ऑफ एशिया' का 'बुद्धचरित' शीर्षक से ब्रजभाषा में पद्यानुवाद किया। रिडल ऑफ़ द यूनिवर्स का अनुवाद 'विश्व प्रपंच दर्शन' (1920) के नाम से किया। उनकी कई आलोचनात्मक ग्रंथों का लेखन और संपादन किया, देखें- तुलसी ग्रंथावली (1923), जायसी ग्रंथावली (1925), भ्रमरगीत सार (1926), गोस्वामी तुलसीदास इत्यादि। आचार्य शुक्ल के स्वर्गप्रयाण के पश्चात उनके सैद्धांतिक निबंधों के संग्रह के रूप में 'रस मीमांसा' पुस्तक 1949 ई.में प्रकाशित हुई।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल का साहित्यिक परिचय दें।
- रामचंद्र शुक्ल के अनुवाद कार्यों का उल्लेख करें।

21.3.2 रामचंद्र शुक्ल की निबंध दृष्टि

एक ही विषय पर विभिन्न व्यक्तियों द्वारा लिखे गए निबंधों में समानता देखने को नहीं मिलती है। इसका कारण है विभिन्न व्यक्तियों की रुचियां, भावाभिव्यक्ति का तरीका और भावानुभूति की क्षमता एक-दूसरे से भिन्न होती हैं। उनकी इस व्यक्तिगत भिन्नता से निबंध की विषयवस्तु प्रभावित होती है। इसी से निबंध एक व्यक्तिनिष्ठ विधा का रूप ग्रहण करता है। रामचंद्र शुक्ल के अनुसार, "व्यक्तिनिष्ठता का अर्थ है व्यक्ति का विषयगत दृष्टिभेद"।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की निबंध यात्रा का आरंभिक बिंदु भी कितना प्रौढ़ है, इसका पता उनके 'कविता क्या है?' जैसे पहले दौर के निबंध से चलता है, जो 'चिंतामणि- भाग 1' में संकलित है। अपने लेखन के प्रथम चरण में इतने गंभीर विषय का चयन और उसका गहन विश्लेषण करना निबंधकार की अप्रतिम प्रतिभा और उनकी साहित्य निष्ठा का परिचायक है। इस निबंध में उन्होंने कविता संबंधी अपनी मौलिक मान्यताओं का प्रतिपादन किया है। अपनी

साहित्य यात्रा की गति और साहित्यिक रूचि के सामानांतर उन्होंने इस निबंध के विषय को विस्तृत किया है। चलते रहने की यह मानसिक वृत्ति वाला साहित्य ही जीवंत साहित्य होता है। मनुष्य के जीवन में स्थिरता केवल प्राणांत के एक क्षण के लिए ही ग्राह्य है क्योंकि अगले ही क्षण वहाँ भी गति है। साहित्य का संस्कार व्यक्ति को गतिवान करता है। उसकी समझ को निरंतर परिष्कृत करता है। इसका प्रमाण है आचार्य शुक्ल और उनके निबंध। इनमें भी विशेष रूप से निबंध 'कविता क्या है'। इस संदर्भ में 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' पुस्तक में रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं, "काव्य-शास्त्र की बड़ी समृद्ध परंपरा भारत और पश्चिम दोनों जगह रही है, जिसका अच्छा और सुलझा हुआ परिचय आचार्य शुक्ल को था। पर दोनों परंपराओं से जरा भी आक्रांत हुए बिना लेखक यहाँ कविता के सामान्य और व्यापक रूप की अपने ढंग से व्याख्या करता है। यह निबंध साहित्य के क्षेत्र में लेखक के वैचारिक आत्मविश्वास का पहला सबल प्रमाण है, जैसे कि भाव और मनोविकार संबंधी निबंध मनोविज्ञान के क्षेत्र में। कुल मिलाकर आचार्य शुक्ल का यह गद्य लेखन सही अर्थों में ललित निबंध का रूप है, उसकी शैली में लालित्य है, जबकि अपने व्यवस्थित प्रस्तुतिकरण में वे निबंध हैं। द्विवेदी युग के बाद, छायावादी काव्य में जीवनानुभव का जैसा संश्लिष्ट चित्रण है, उसका समानांतर रूप प्रेमचंद में विशेषतः उत्तरकालीन कथा-साहित्य में मिलता है। मानव स्वभाव का वैसा ही संश्लिष्ट चित्रण रामचंद्र शुक्ल के मनोविकार संबंधी निबंधों में हुआ है।"

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल की दृष्टि में व्यक्तिनिष्ठता से क्या अभिप्राय है?
- क्या रामचंद्र शुक्ल के अनुसार निबंध लेखन किस प्रकार की प्रक्रिया है?

21.3.3 विचारात्मक निबंध

चिंतामणि के प्रथम खंड का संपादन रामचंद्र शुक्ल ने स्वयं किया। यह पुस्तक उनके विचारात्मक, साहित्य सिद्धांत विषयक और साहित्यिक समीक्षा संबंधी निबंधों का संग्रह है। साहित्य सिद्धांत विषयक मत और साहित्यिक समीक्षा निबंध की श्रेणी में नहीं आते हैं, ऐसा डॉ. नगेन्द्र का मानना है। उन्होंने केवल विचारात्मक निबंध को निबन्ध की श्रेणी में रखा है, शेष दोनों कोटियों को आलोचना के अंतर्गत रखा है और इन्हें आलोचनात्मक लेख की संज्ञा दी है।

भाव या मनोविकार इस संग्रह का पहला निबंध है। भाव क्या है? "नाना विषयों के बोध का विधान होने पर ही उनसे संबंध रखनेवाली इच्छा की अनेकरूपता के अनुसार अनुभूति के भिन्न-भिन्न योग संघटित होते हैं जो भाव या मनोविकार कहलाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि सुख और दुःख की मूल अनुभूति ही विषय-भेद के अनुसार प्रेम, हास, उत्साह, आश्चर्य, क्रोध, भय, करुणा, घृणा इत्यादि मनोविकारों का जटिल रूप धारण करता है।" जब हम किसी तरह की हानि सहते हैं तब हमें अपनी स्थिति पर दुःख होता है। जब हमें ज्ञात होता है कि वह हानि किसी ने हमें जान-बूझ कर पहुंचाई है तब हमारी चेतना उस दुःख की अनुभूति के साथ मिलकर 'क्रोध' भाव को धारण करती है। मनुष्य दुःख से बचना चाहता है। वह दुःख के अनुमान मात्र से अपनी रक्षा की व्यवस्था खोजने लगता है। इसी प्रकार मनुष्य के सुख की अनुभूति भी सुख के मूल कारक को पाने या उसकी रक्षा करने या उसके साथ रहने के लिए प्रेरणा देनेवाले भाव लोभ

और प्रेम के वश में रहती है। भावों को दिखाने के लिए शारीरिक चेष्टा मनुष्य की सामान्य श्रेणी करती है। विशिष्ट और सभ्य श्रेणी के लोग बात बोलकर काम चला लेते हैं। इसी संदर्भ में लेखक ने कहा है कि वाणी के प्रसार की कोई सीमा नहीं है। मनुष्य में उत्पन्न होनेवाले इन भावों का उपयोग लोकहितकारी और लोकनाशक, दोनों ही स्वरूपों में किया जाता रहा है। अपनी इच्छा को सद्वृत्ति की ओर मोड़ना विश्व के हित में है। धर्म, राज और संप्रदाय सभी अपना उल्लू सीधा करते हैं। वे सामान्य मनुष्य को दंड और नरक का भय दिखाते हैं या अपनी कृपा और स्वर्ग के सुख का लोभ दिखाते हैं। मनुष्यत्व की गरिमा को ताक पर रखकर मनुष्य अपनी इच्छा से दुम हिलाता है। सत्ताधीशों में भी भय का भाव रहता है। राजा प्रजा को डराकर उसके भीतर अन्याय का विरोध करने की शक्ति पर अंकुश लगाता है। धर्मक्षेत्र के प्रतिष्ठित आचार्यों को अपने प्रभाव की चिंता सताती है जिसकी रक्षा के लिए वे सामान्य मनुष्य का उपयोग करते हैं। विभिन्न मत और संप्रदाय के प्रवर्तक एक दूसरे पर दोष मढ़कर नीचा दिखाते हैं। ये कार्य अपराध हैं। "भावक्षेत्र अत्यंत पवित्र क्षेत्र है। उसे इस प्रकार गंदा करना लोक के प्रति भारी अपराध समझना चाहिए।" भाव की लोक में प्रतिष्ठा का अभिप्राय स्वयं के साथ विश्वमंगल की ओर बढ़ना है। पूरी सृष्टि में हृदय का प्रसार करना है अर्थात सबमें प्रेमभाव से स्थित रहना है। यह मनुष्यता की उच्चभूमि है जिसकी प्राप्ति कव्ययोग की साधना से संभव है। कविता ही मनुष्य की सच्ची प्रवृत्ति-निवृत्ति की भावना को जागृत रखती है।

संग्रह का दूसरा निबंध उत्साह है जो साहस और धीरता से अलग अर्थ रखता है। युद्ध करने वाले वीर न अपनी मृत्यु की परवाह करते हैं और न किसी प्रहार की। उनका यह गुण उनका साहस है। युद्धरत मनुष्य का साहस प्रायः आनंदरहित होता है। कष्ट सहन करना साहस है। अत्यधिक कष्ट या पीड़ा शांति से सहन करते जाना 'धीरता' है। मनुष्य के इस साहस और धीरता के साथ किए जानेवाले काम में जब पूरी तत्परता बरतता है और आनंदित होता है तब वहां उत्साह है, ऐसा कहा जाएगा। किसी सार्थक उद्देश्य के साथ आनंदित होकर कष्ट सहन करना उत्साह है, जैसे- शोध कार्य के लिए हिमाच्छादित पर्वतों की चढ़ाई। इस भाव से मनुष्य के संबंध में यह ज्ञात होता है कि वह कष्ट से नहीं डरता है पर समाज द्वारा मान-अपमान से उसे मानसिक दुःख प्राप्त होता है। मनुष्य इससे बचना चाहता है। सामाजिक प्रतिष्ठा को खोने के डर से लोग हानिकर प्रथाओं का भी निर्वाह करते चले आ रहे हैं। बिना अपनी निंदा-स्तुति की परवाह किए समाज में अच्छा बनने के लिए किसी प्रचलित प्रथा का पूरे आनंद से विरोध करने वाले लोगों को उत्साही के साथ बेशर्म कहा जाता है। इनसे बेहतर वे लोग हैं जो सामाजिक प्रथा में निहित सामाजिक विश्वास को मानते हैं और व्यर्थ ही प्रथाओं के खंडन-मंडन करनेवालों द्वारा उडाए जाने वाले मजाक सहित अपनी निंदा को सहन कर लेते हैं। कर्म के शुभ परिणाम को दृष्टि में रखकर किया गया किसी भी प्रचलित प्रथा का विरोध उचित है और ऐसे लोग उत्साही कहे जाते हैं। उत्साह के भाव में भी मनोवृत्ति की पवित्रता प्रधान है। लोभरहित मानसिकता वाले व्यक्ति ही वास्तविक उत्साह को धारण करते हैं। कर्मवीर मनुष्य अन्याय और अत्याचार का विरोध करने के लिए जब कुछ प्रयत्न करता है तब उसमें उत्साह दिखाई देता है। किसी व्यक्ति या वस्तु के साथ उत्साह का सीधा संबंध नहीं होता है। सच्चा उत्साह कर्म से सीधे जुड़ा होता है।

कर्म फल को ध्यान में रखकर किए गए काम असफलता की स्थिति में मन में अवसाद भर देते हैं। उत्साह प्रसन्नतापूर्वक साहस के साथ किया गया कर्म है। आत्म रक्षा, पर रक्षा, देश रक्षा आदि के निमित्त साहस की जो उमंग देखी जाती है उसके सौंदर्य के समकक्ष किसी को पीड़ा देने, डकैती इत्यादि का भाव कभी नहीं पहुँच सकता। पर डाकुओं के शौर्य और साहस की कहानियाँ सुनी-सुनाई जाती है। समाज सुधार की आड़ में भी लोग अपनी तुच्छ मनोवृत्ति का पोषण कर लेते हैं। ऐसे समाज सुधारकों का दया और साहस का भाव उत्साह नहीं है।

श्रद्धा और भक्ति संग्रह का तीसरा निबंध है। लोक में किसी के कल्याणकारी प्रभाव को देखते हुए उसके प्रति मन में पूज्य बुद्धि का संचार होता है, यही भाव श्रद्धा है। यह प्रेम से अलग है। प्रेम किसी के प्रभाव को देखकर उत्पन्न नहीं होता है। प्रेम के लिए किसी का अच्छा लगना पर्याप्त है। केवल अच्छा लगने से किसी के प्रति श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती। श्रद्धा व्यक्ति के गुणों के प्रति होती है। व्यक्ति के जिन गुणों से संसार को लाभ पहुँचता है, उन गुणों से संपन्न व्यक्ति के प्रति मन में जो पूज्य बुद्धि संचरित होती है वही श्रद्धा है। वीर, गुणी, दानी, परोपकारी, सज्जन और धर्मात्मा व्यक्ति श्रद्धा के पात्र हैं। "श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है, प्रेम का एकांत। प्रेम में घनत्व अधिक है और श्रद्धा में विस्तार। किसी मनुष्य से प्रेम रखनेवाले दो ही एक मिलेंगे, पर उस पर श्रद्धा रखनेवाले सैंकड़ों, हजारों, लाखों, करोड़ों मिल सकते हैं।" श्रद्धा भाव युक्त मनुष्य में ही धर्म कर्मों के प्रति महत्व का भाव होता है। श्रद्धा एक सामाजिक भाव है जिसमें श्रद्धावान व्यक्ति अपने श्रद्धेय से प्रतिदान में कुछ नही मांगता है। प्रेम में कोई मध्यस्थ नहीं होता है पर श्रद्धा में श्रद्धालु और श्रद्धेय के मध्य एक वस्तु का होना अनिवार्य है। श्रद्धालु व्यक्ति केवल श्रद्धेय को प्रसन्न करना चाहता है। "श्रद्धा के विषय तीन हैं- शील, प्रतिभा और साधन-संपत्ति।" साधन संपत्ति से शील और प्रतिभा दोनों का विकास होता है। शील से समाज की स्थिति बनी रहती है और प्रतिभा से समाज में आनंद की सृष्टि होती है। जब मनुष्य के मन का पूज्य भाव और हृदय का आंतरिक प्रेम मिलकर एक हो जाता है तब उत्पन्न होती है 'भक्ति'। जब श्रद्धेय के दर्शन और गुण श्रवण से मन में अनुराग और आनंद की धारा फूटती है तब अंतःकरण भक्ति के प्रकाश से प्रकाशित होता है। एक भक्त अपने आराध्य के अनुरूप अपने जीवन-शैली में परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। मनुष्य की यह भक्ति मनुष्य के प्रति भी होती है और असीम तथा विराट ईश्वर के प्रति भी। दूसरे के प्रभाव के सामने स्वयं को बहुत छोटा (लघु) समझना मनुष्य का 'दैन्य' भाव है। इस भाव को धारण करने वाले मनुष्य में ही श्रद्धा की भावना जन्म लेती है। इसमें जब साहचर्य की भावना जुड़ती है तब प्रेम उत्पन्न होता है। श्रद्धा-प्रेम का समन्वित स्वरूप ही भक्ति है। ईश्वर (राम, कृष्ण) की ओर मनुष्य का मन उसके कर्म सौंदर्य को देखकर, उसपर रीझकर आकर्षित होता है। रामचंद्र शुक्ल की मान्यता है कि पाप का फल छिपानेवाला पाप छिपानेवाले से अधिक अपराधी है पर ऐसे बहुत से लोग होते हैं जो किसी का घर जलाते हाथ जलता है तो कहते हैं कि होम करते जला है। दुराचारियों के जीवन का सामाजिक उपयोग करने के लिए ही-संसार में धर्म की मर्यादा स्थापित करने के लिए ही श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्ध में प्रवृत्त किया। क्षात्र धर्म का पालन संसार की आवश्यकता है। इसमें कर्म का सौंदर्य विविध रूपों में अभिव्यक्ति पाता है, 'शक्ति के साथ क्षमा, वैभव के साथ विनय, पराक्रम के साथ रूप माधुर्य, तेज के साथ

कोमलता, सुखभोग के साथ परदुख कातरता; प्रताप के साथ कठिन धर्म पथ का अवलंबन' इत्यादि। सभी रागात्मिका वृत्तियों को उत्कर्ष पर ले जाने का सामर्थ्य इसी क्षात्र धर्म में है।

अगला निबंध है करुणा। यह दुःख का एक भाव है जो मनुष्य में 'भलाई' की उत्तेजना का जनक है। 'भलाई' की उत्तेजना दुःख और आनंद, दोनों ही श्रेणियों में होती है। दुःख की श्रेणी में क्रोध करुणा का विपरीत भाव है। दुःख की श्रेणी में हानि पहुँचाने वाले भाव भी होते हैं पर आनंद कि श्रेणी में ऐसा कोई भाव नहीं है। मनुष्य अपने प्रियजनों के सुख से ही आनंदित होता है। अज्ञात लोगों के सुख वैभव से वह विशेष रूप से प्रभावित नहीं होता है। पर करुणा की प्रवृत्ति मन में अजनबी लोगों के लिए भी जागती है। रामचंद्र शुक्ल ने सामाजिक जीवन की स्थिति और पुष्टि के लिए करुणा के प्रसार को आवश्यक माना है। करुणा अपने स्वरूप में क्षोभ या विषाद से अलग है। क्षोभ और विषाद प्रिय के विरह से उपजा हुआ दुःख का भाव है। करुणा प्राप्त करने वाला व्यक्ति कृतज्ञता और श्रद्धा की भावना से करुणा करनेवाले को देखता है। क्रोध और प्रेम की भांति यहाँ किसी प्रकार के प्रतिदान की भावना काम नहीं करती है। एक भाव को व्यक्ति का दूसरा भाव ही नियंत्रित या प्रेरित करता है न कि अंतःकरण की कोई अन्य वृत्ति, स्मृति, अनुमान या बुद्धि। मनुष्य के मनोवेग और उसके परिणाम के तीन विरोधी तत्व हैं- आवश्यकता, नियम और न्याय। जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में लोग आवश्यकता के अनुरूप अपने मनोवेगों पर संयम बरतते देखे जाते हैं। मनोवेग कार्यसिद्धि में बाधक न बने इसलिए व्यक्ति क्रोधी मनुष्य के अपमानजनक वाक्य को भी सह लेता है। यह आवश्यकता है। नियम पालन के लिए राजा हरिश्चंद्र के जीवन को होगा जो करुणा का अन्यतम उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त भाव या मनोविकार की श्रेणी में निबंध के रूप में जो विषय रामचंद्र शुक्ल ने चुने हैं, वे इस प्रकार हैं- लज्जा और ग्लानि, लोभ और प्रीति, घृणा, ईर्ष्या, भय और क्रोध इत्यादि। लोभ और प्रीति निबंध का विशद विवेचन इकाई 22 के अंतर्गत किया गया है। इस निबंध में बताया गया है कि लोभ और प्रेम का मूल भाव एक ही होता है। प्रिय में प्रेम की प्रतीति का बोध कराने के लिए प्रेमी बहुत बार 'दैन्य' धारण करता है। अपनी दीनता से वह प्रिय के हृदय में दया और करुणा उत्पन्न करना चाहता है। लोभ और प्रीति की व्यापक संकल्पना का अध्ययन आप इकाई 22 में करेंगे।

लज्जा और ग्लानि निबंध में यह बताया गया है कि लज्जा होने के लिए व्यक्ति को उसके अपने अवगुणों से परिचित होना आवश्यक है। व्यक्ति के यही अवगुण जब परिचित या अपरिचित लोगों के सामने आता है तब उसमें लज्जा का भाव आता है। लज्जा का संबंध हमारे आचरण पर दूसरे व्यक्ति की प्रतिक्रिया से अधिक हमारे अनुमान पर निर्भर करती है। लज्जित होने के लिए अपने बुरे आचरण की निंदा सुनना आवश्यक नहीं है। कई बार ऐसा भी होता है कि हमने अपने खराब आचरण से जिनका अहित किया है। वे हमारे सम्मुख आने पर भी हमसे बिना किसी शिकायत के हमसे प्रेमपूर्ण व्यवहार करते हैं और हमारे गुणों को उजागर करते हैं। उस क्षण से अधिक बड़ा लज्जा का और क्या क्षण होगा! केवल कोई निंदा करेगा इस से बचना वास्तविक रूप से लज्जित होना नहीं है। यह एक प्रकार का डर है, लज्जा नहीं। अपने विषय में दूसरों के विचार या भावना को जानकर ही लज्जा की प्रतीति होती है। संकोच इसका थोड़ा

हल्का स्वरूप है। संकोच की अधिकता का त्याग श्रेयष्कर है। अधिक संकोच का स्वभाव व्यक्ति के व्यक्तित्व को कुंठित कर देता है। वह स्वाभाविक व्यवहार भी ठीक से नहीं निभा पाता है। भोजन और व्यवहार में लज्जा का न होना ही अच्छा है। लज्जा को स्त्री का आभूषण कहते-कहते पुरुष प्रधान समाज ने उसकी लज्जा को भी अपने विलास का साधन बना लिया है, यह रामचंद्र शुक्ल की मान्यता है। "अपनी बुराई, मुर्खता, तुच्छता इत्यादि का एकांत अनुभव करने से वृत्तियों में जो शैथिल्य आता है, उसे 'ग्लानि' कहते हैं।" इस भाव को वे लोग भोगते हैं जिनका मन निर्मल और अंतःकरण सात्विक होता है। कठोर और स्वार्थी लोगों के लिए लज्जा का भाव उपयुक्त है। ग्लानि में मनुष्य संताप से नहीं बच सकता है। इसका अनुभव एकांत में भी होता है। चित्रकूट में जब राम कैकेयी से मिले तब कैकेयी के मन में अपने किए गए काम के लिए ग्लानि का भाव था।

घृणा क्या है? संसार में जो विषय अरुचिकर प्रतीत होते हैं उन विषयों से बराबर दूरी साधे रहने की सचेतन प्रेरणा देने वाला जो दुःख होता है वह घृणा है। जिनके प्रति मन में घृणा का भाव है उनके साहचर्य से दुःख होता है। अरुचिकर विषय का संपर्क न होना ठीक रहता है। घृणा के दो विभाग हैं- स्थूल और मानसिक। स्थूल घृणा का संबंध आँख, कान और नाक के संपर्क क्षेत्र तक सीमित रहता है। मानसिक घृणा का क्षेत्र विस्तृत है। यह मन के व्यापार से संबंधित है। घृणा करनेवाला व्यक्ति अपने घृणा के विषय को नष्ट करना या हानि पहुँचाना नहीं चाहता है जबकि एक क्रोधी अपने क्रोध के विषय को नष्ट करना चाहता है। घृणा मन में संकोच उत्पन्न करता है जो व्यवहार में दिखाई देता है। साधारण व्यक्तियों को जिन विषयों पर क्रोध आता है साधु लोग उनसे उदासीन रहते हैं या अपनी प्रारंभिक अवस्था में उसे घृणा से देखते हैं। उदासीनता सभ्य समाज की घृणा के लिए प्रयुक्त किया जानेवाला शब्द है। वन में सैनिक समाज के साथ भरत को आते देख कर उनका प्रयोजन जानने से पूर्व निषादराज गुह के मन में भरत के प्रति घृणा का भाव आया जो प्रयोजन जानने के बाद दूर हो गया। सुगंध-दुर्गंध, सुंदरता-कुरूपता इत्यादि घृणा के स्थूल विषय हैं। घृणा के मानसिक हैं – वेश्यागमन, जुआ, मद्यपान, स्वार्थपरता, कायरता, आलस्य, लंपटता, पाखंड, अनधिकार-चर्चा, मिथ्याभिमान इत्यादि।

ईर्ष्या का भाव मन में दूसरों के सुख-समृद्धि और उत्कर्ष को देखकर आता है। रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में, " जैसे दूसरे के दुःख को देख दुःख होता है वैसे ही दूसरे के सुख या भलाई को देखकर भी एक प्रकार का दुःख होता है, जिसे ईर्ष्या कहते हैं। यह एक संकर भाव है जिसकी संप्राप्ति आलस्य, अभिमान और नैराश्य के युग्म से होती है।" आलस्य अभिमान और निराशा का भाव मनुष्य में ही प्रबल रूप में रहता है इसलिए इस प्रकृति के मनुष्य ही स्वभाव से ईर्ष्यालु होते हैं। दूसरे की उन्नति देखकर उनके हृदय पर साँप लोट जाता है। यहाँ पाने की ललक नहीं होती। उसकी जगह ईर्ष्यालु व्यक्ति यह चाहता है कि अमुक उन्नत मनुष्य गर्त में चला जाए। उसके सुख के साधन किसी प्रकार उससे छिन जाए। ईर्ष्या धारक मनुष्य के शरीर और आत्मा को उसकी ईर्ष्यालु चेतना निगल जाती है। 'ईर्ष्या इतनी कुत्सित वृत्ति है कि सभा-समाज में, मित्रमंडली में, परिवार में, एकांत कोठरी में, कहीं भी स्वीकार नहीं की जाती।" कोई मुझसे घृणा करता है, यह जानकर व्यक्ति में भी बदला लेने या उससे घृणा करने की भावना जागती है।

इस भाव की परिणति क्रोध में भी हो सकती है यदि अपने प्रति दूसरे की ईर्ष्या भावना से अपना कुछ अहित साधन हो जाए। क्रोध विनाश का मूल है। ईर्ष्या व्यक्ति और समाज के विकास मार्ग का अवरोध है।

दुःख का कारण और स्वरूप जानने के बाद मनुष्य बिना क्रोध किए नहीं रह पाता है। यह मनुष्य की स्वाभाविक वृत्ति है। जब मनुष्य के स्वभाव में सामान्यतः भय शामिल हो जाता है तब यह भय कायरता के रूप में जाना जाता है। कायर होना पुरुषों के लिए निंदा का विषय है। यह उनकी कमजोरी को दिखाता है। स्त्री की कायरता को उनकी लज्जा के समान ही रसिकों के मनोरंजन की वस्तु माना गया है। कायरता को इस प्रकार विश्लेषित करते हुए रामचंद्र शुक्ल ने इसे पुरानी चाल की भीरुता (कायरता) कहा है। कायरता की नई चाल क्या है? अपनी शक्ति में विश्वास की कमी और सहनशक्ति की कमी- ये दो तथ्य कायरता से जुड़े हुए हैं। इस अर्थ में व्यापारी और पंडित भी कायर कहे जाते हैं यदि उन्हें अपने व्यापार कौशल और विद्याबल पर पूर्ण विश्वास न हो। यदि उनमें धनहानि और मानहानि सहने की क्षमता न हो। भीरुता के स्तर पर केवल धर्मभीरु तनिक प्रशंसा के अधिकारी माने गए हैं। धर्म के भय से बुराई न करने की इच्छा रखने वाले से कहीं अधिक प्रशंसनीय वे हैं जो बुराई को अच्छा ही नहीं समझते। 'किसी आती हुई आपदा की भावना या दुःख के कारण के साक्षात्कार से जो एक प्रकार का आवेगपूर्ण अथवा स्तंभ-कारक मनोविकार होता है उसी को भय कहते हैं।' दुःख की संभावना के अनुमान से जो आवेग शून्य भय होता है, उसे आशंका कहते हैं। दुःख और बाधाओं से भरे इस संसार में न हम किसी को भय दें और ना किसी को इतना अधिकार ही कि वह हमें भयभीत कर सके। फिर भी यदि कोई भयभीत करता है तो उस भय से ट्रस्ट होने के बजाय उससे मुक्त होना मानव का अधिकार है। भय का प्रसार रुके और निर्भयता स्थापित हो।

क्रोध सभी मनोविकारों से अधिक फुर्तीला है। यह सभी भावों के साथ जुड़कर उसके साध्य को साधने में सहायक हो जाता है। सामाजिक जीवन में सात्विक क्रोध अनिवार्य हो जाता है। इसके न होने पर कष्ट पहुँचाने की प्रवृत्ति वाले लोग निरंकुश हो जाएँगे। क्रोध के विधान का उद्देश्य आनेवाली विपत्ति से अपनी रक्षा करना है। दुःख के कारण का सही ज्ञान न होने की अवस्था में किए गए क्रोध में धोखे की पूर्ण गुंजाइश होती है। क्रोध की सीमा जब अपने दुःख तक सीमित रहती है तब तक उसका स्वरूप पूरा विकसित नहीं होता है लेकिन जब यह दूसरों के दुःख से जुड़कर, लोककल्याण की भावना से भावित होता है तब क्रोध का सौंदर्य अपनी चरम स्थिति को छूता है। क्रोध का यही रूप सात्विक क्रोध है जिसे राम के चरित्र में देखा गया, जो क्रौंच वध से दुखी वाल्मीकि के हृदय में उपजा, जो कृष्ण के चरित में समाया हुआ है।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल के निबंधों के वर्गीकरण के संदर्भ में विद्वानों की क्या राय है?
- भाव या मनोविकार से आप क्या समझते हैं?

21.3.4 समीक्षात्मक निबंध

विचारात्मक निबंधों में समाज के साथ जोड़ते हुए मनुष्य के भाव-व्यापार का सूक्ष्म विवेचन किया गया है। समीक्षात्मक निबंध की दो श्रेणियाँ हैं- सैद्धांतिक निबंध और व्यावहारिक

निबंध। सैद्धांतिक निबंध के अंतर्गत इन्होंने साहित्य-सिद्धांतों की स्थापना की। कविता क्या है, काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था, साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद, रसात्मक बोध के विविध स्वरूप, काव्य में रहस्यवाद, काव्य में अभिव्यंजनावाद इत्यादि रामचंद्र शुक्ल के सैद्धांतिक निबंध हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र, तुलसी का भक्तिमार्ग, मानस की धर्मभूमि इत्यादि निबंध व्यावहारिक निबंध के अंतर्गत आते हैं।

कविता क्या है निबंध में रामचंद्र शुक्ल ने कविता को भावयोग कहा है। कर्मयोग और ज्ञानयोग के समकक्ष यह भावयोग अवस्थित है। इस संसार में जब तक व्यक्ति संसार की एक इकाई के रूप में रहकर संसार के दुःख-सुख की अनुभूति करता है तब तक वह संसार की सत्ता में बंधा रहता है। जब वह संसार में अपनी अलग स्थिति को भूल जाता है तब सुख-दुःख की ये अनुभूतियां भी समाप्त हो जाती हैं। उसका व्यक्तित्व ही एक अनुभूति बन जाता है। यह अवस्था मुक्त हृदय की अवस्था है। 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द-विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।' कविता अनुभूति योग है जिसमें व्यक्ति अपनी रोज के झंझटों से पल्ला झाड़कर लोक की अनुभूतियों के संसार में विचरण करता हुआ संसार के वैविध्य भरे स्वरूप के मर्म को जानता-समझता हुआ, उसी में तल्लीन हो जाता है। लोक सामान्य की भाव भूमि का यह स्पर्श भावों और मनोविकारों को परिष्कृत करता हुआ सारी सृष्टि से नेह का नाता जोड़ता है। कविता की आधार भूमि यही है। सृष्टि के कण-कण में कविता का विषय होने का सामर्थ्य है। पर काव्य दृष्टि के अभाव में कविता रचना संभव नहीं है। काव्य दृष्टि के विकास के लिए हृदय की इस मुक्तावस्था तक आना आवश्यक है। कविता मनुष्य में राग को जगाती है। यह सारी सृष्टि के साथ मनुष्य के हृदय का संबंध बनाती है। इसकी आवश्यकता को बताते हुए रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है, "मनुष्य अपने ही व्यापारों का ऐसा सघन और जटिल मंडल बाँधता चला आ रहा है जिसके भीतर बंधा-बंधा वह शेष सृष्टि के साथ अपने हृदय का संबंध भुला रहता है। इस परिस्थिति में मनुष्य को अपनी मनुष्यता खोने का डर बराबर रहता है। इसी से अंतःप्रकृति में मनुष्यता को समय-समय पर जगाते रहने के लिए कविता मनुष्य जाति के साथ लगी चली आ रही है और चली चलेगी। जानवरों को इसकी जरूरत नहीं।"

बोध प्रश्न

- कविता के संबंध में रामचंद्र शुक्ल ने क्या कहा?

21.3.5 भाषा-शैली

किसी भी रचना की भाषा-शैली का गहरा संबंध लेखक के व्यक्तित्व से होता है। रामचंद्र शुक्ल ने अपने निबंधों में विषय का विश्लेषण बहुत सूक्ष्मता से किया है। इन्होंने मूल विषय को परिभाषित किया है। उसे कोटियों में बाँट कर सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखा है तथा अन्य पक्षों के साथ तुलना करते हुए उसकी प्रतिष्ठा की है। उनके साहित्य में लोकमंगल की दृष्टि प्रधान रही है। भाषा के स्तर पर इनमें लोकभाषा और शास्त्रीय भाषा का समन्वित रूप देखने को मिला है। शास्त्रीय भाषाओं की कठिनता को इनकी विवेचन पद्धति ने हर लिया है।

सूत्रबद्ध तरीके से विषय का विस्तार किया गया है। हर सूत्र की व्याख्या तब तक की गई है जब तक वह साधारण के समकक्ष नहीं आ जाती। शास्त्रीयता और साधारणता के बीच की दूरी को पाटने के लिए उन्होंने कई उद्धरण जीवन से और साहित्य से उठाकर रखा है। तुलसी और रसखान की कविता, फारसी साहित्य, आमजीवन के उदाहरण, कुछ अपने संस्मरण और कुछ सबकी अनुभूतियाँ इन सबको अपने निबंध में उन्होंने पिरोया है। विषय की गंभीरता को हल्का करने या रोचक बनाने के लिए हास्य और व्यंग्य की शैली अपनाई गई है। इनके निबंधों में प्रयुक्त हास्य और व्यंग्य भाव की अभिव्यंजना करते हुए हल्के प्रतीत नहीं होते। हाँ इनसे विषय की रोचकता बरक़रार रहती है। लोकभाषा के साथ मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग यहाँ बहुलता में किया गया है, जैसे- किसी को धूल में मिला डालना, चटनी कर डालना, किसी का घर खोदकर तालाब बना डालना इत्यादि। विषय को स्पष्ट करने में लेखक द्वारा अपनाई गई प्रविधि ही शैली कहलाती है। उनके निबंध में विचार, भाव, वर्णन, विवरण और सिद्धांत - ये सभी समाहित हैं। भाषा भावों को अभिव्यक्त करने में सक्षम है और वाक्य प्रयोग लालित्यपूर्ण है।

बोध प्रश्न

- रामचंद्र शुक्ल के साहित्य में कौन सी दृष्टि प्रधान रही?

21.4 पाठ सार

निबंध गद्य साहित्य की एक विधा है। इसके द्वारा किसी भी विषय पर गंभीर विवेचन या उसका विश्लेषण किया जाता है। निबंध के लिए किसी भी विषय को चुना जा सकता है। इसका स्वरूप हमेशा गंभीर नहीं होता है। व्यंग्य, हास्य, संवाद और अनुभूतियों के समावेश से निबंध को रोचक स्वरूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। हास्य और व्यंग्य का पुट देकर भी गंभीर विषयों की सार्थक व्यंजना की जा सकती है। निबंध के दो स्वरूप होते हैं- व्यक्तिनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ। व्यक्तिनिष्ठ निबंध में विचारात्मक और भावात्मक निबंध आते हैं। वर्णनात्मक और विवरणात्मक निबंध वस्तुनिष्ठ निबंध की श्रेणी में आते हैं। व्यक्तिनिष्ठ निबंध मनोवैज्ञानिकता प्रधान होते हैं। रामचंद्र शुक्ल के सभी निबंध चिंतामणि के चार खंडों में संकलित हैं। अपने विचारात्मक निबंधों में मनोभावों का गहन विश्लेषण करते हुए इन्होंने सामाजिकता को सम्मुख रखा। मनोविज्ञान की समझ से व्यक्ति के मानसिक स्तर की टोह लेते हुए, इन्होंने समाज में व्यक्ति के भावों की अभिव्यक्ति के स्वरूप को विवेचित किया है। व्यक्तिगत मनोभावों से समाज प्रभावित होता है और समाज से व्यक्ति का अस्तित्व है। व्यक्ति समाज की महत्वपूर्ण इकाई है। उसके सुखद और दुखद अनुभव समाज को प्रभावित करते हैं और समाज की प्रतिक्रिया मनुष्यता के जीवन को प्रभावित करती है। उसके भावों को नियंत्रित करती है। रामचंद्र शुक्ल की निबंध यात्रा न कोरी बौद्धिक यात्रा है न कोरी भावुकता की यात्रा। उनके निबंधों की विषयवस्तु और प्रतिपादन शैली में बुद्धि और हृदय का सम्यक प्रसार दिखाई देता है। एक अनुभव सिद्ध निबंधकार के रूप में अपने निबंध के संदर्भ में उनकी स्वयं की उक्ति का विशेष महत्व है, “अपना रास्ता निकालती हुई बुद्धि जहाँ कहीं मार्मिक या भावाकर्षक स्थलों पर पहुँची है, वहां हृदय थोडा-बहुत रमता अपनी

प्रवृत्ति के अनुसार कुछ कहता गया है। इस प्रकार यात्रा के श्रम का परिहार होता रहा है। बुद्धि पथ पर हृदय भी अपने लिए कुछ-न-कुछ पाता रहा है।" साहित्य समीक्षा और सिद्धांत के क्षेत्र में स्थापित इनकी मान्यताएँ शिक्षा जगत में अपना विशिष्ट महत्व रखती हैं।

21.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी में साहित्य के इतिहासकार और प्रमुख आलोचक के साथ-साथ युग प्रवर्तक निबंधकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं।
2. साहित्य में सैद्धांतिक समीक्षा का आरंभ रामचंद्र शुक्ल के निबंधों से ही हुआ।
3. निबंध लेखन की इनकी लालित्यपूर्ण शैली को देखते हुए इन्हें कलात्मक निबंध का भी जनक माना जाता है।
4. मानव जीवन के गंभीर भावों और मनोविकारों पर लिखते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने साहित्य को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। रस-मीमांसा में रस का विवेचन भी इसी दृष्टि से किया गया है।

21.6 शब्द संपदा

1. अपना उल्लू सीधा करना	= अपना काम निकालना
2. टोह लेना	= वस्तु और स्थिति को जानना-समझना
3. भावानुभूति	= भावों को अनुभूत करना
4. भावाभिव्यक्ति	= भावों की अभिव्यक्ति, भावों को प्रकट करना
5. श्रद्धालु	= जिनमें श्रद्धा की भावना रहती है, श्रद्धावान
6. श्रद्धेय	= जिनके प्रति किसी के मन में श्रद्धा का भाव उत्पन्न होता है
7. समन्वित	= मिला हुआ
8. साहचर्य	= साथ

21.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल के साहित्यिक अवदान पर चर्चा कीजिए।
2. रामचंद्र शुक्ल के निबंधों का परिचयात्मक अवलोकन प्रस्तुत करें।
3. रामचंद्र शुक्ल के निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।

4. क्या रामचंद्र शुक्ल के निबंध में आप इन्हें पाते हैं- प्रकृति चित्रण, राष्ट्रीय भावना, मानवता की उच्चभूमि, प्रेम की उच्च भूमि? यदि हाँ तो उदाहरण सहित उल्लेख करें।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रामचंद्र शुक्ल के भाव और मनोविकार संबंधी निबंध पर प्रकाश डालिए।
2. करुणा और प्रेम लोक का मंगल करने वाले भाव हैं। क्या क्रोध में भी लोकमंगल (मनुष्यों के समूह का हित साधन) की क्षमता है? अपने पक्ष को तर्क सहित सिद्ध कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. क्षात्र धर्म का संबंध किससे है? ( )
   (अ) प्रेम (आ) लोभ (इ) लोक-रक्षा (ई) रागों का दमन
2. दुःख की श्रेणी में करुणा का उल्टा क्या है? ( )
   (अ) क्षमा (आ) दया (इ) त्याग (ई) क्रोध
3. रामचंद्र शुक्ल ने अपने किस निबंध को बार-बार परिष्कृत किया? ( )
   (अ) भारतेंदु हरिश्चंद्र (आ) विश्व प्रपंच की भूमिका (इ) घृणा (ई) कविता क्या है

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. श्रद्धा का व्यापार स्थल विस्तृत है, प्रेम का ....।
2. भाव और मनोविकार संबंधी ....निबंध रामचंद्र शुक्ल ने लिखे हैं।
3. रामचंद्र शुक्ल के सभी निबंध ....के चार खंडों में संकलित हैं।
4. श्रद्धा और प्रेम का योग ....है।

III. सुमेल कीजिए -

1. शक्ति	(अ) पर दुःख कातरता
2. सुख–भोग	(आ) क्षमा
3. वैभव	(इ) रूप माधुर्य
4. पराक्रम	(ई) विनय

21.8 पठनीय पुस्तकें

1. त्रिवेणी : रामचंद्र शुक्ल
2. चिंतामणि भाग-1 : रामचंद्र शुक्ल
3. चिंतामणि भाग-2 : विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
4. चिंतामणि भाग-3 : नामवर सिंह
5. चिंतामणि भाग-4 : कुसुम चतुर्वेदी, ओम प्रकाश सिंह
6. आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना : रामविलास शर्मा
7. निबंध निलय : सत्येंद्र

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी Estd. 1998 MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 22 : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना

रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना
22.2 उद्देश्य
22.3 मूल पाठ : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना
22.3.1 लोभ और प्रीति : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप
22.3.2 लोभ और प्रीति के अवयव और विषय
22.3.3 लोभ की अवधारणा : सामाजिक परिदृश्य
22.3.4 प्रीति का व्यापक स्वरूप
22.3.5 लोभ और प्रीति निबंध की भाषा-शैली
22.4 पाठ सार
22.5 पाठ की उपलब्धियाँ
22.6 शब्द संपदा
22.7 परीक्षार्थ प्रश्न
22.8 पठनीय पुस्तकें

22.1 प्रस्तावना

विश्व साहित्य में निबंध विधा के प्रवर्तन का श्रेय फ्रांस निवासी 'मॉनटेन' (Montaign) को दिया जाता है। हिंदी साहित्य में इसका आरंभ हिंदी के आधुनिक काल से माना जाता है। निबंध का आरंभिक स्वरूप भारतेंदु युग के लेखन में देखने को मिलता है। इसके बाद आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का युग आता है। इस युग में हिंदी निबंध का स्वरूप परिष्कृत हुआ। निबंध लेखन में भावाभिव्यक्ति के साथ व्याकरण प्रयोग पर भी विशेष ध्यान दिया गया। इस विधा को जीवंत बनाने के द्विवेदी युग के सुप्रयास से निबंध का आयाम विस्तृत हुआ। निबंध की इस विकास यात्रा में आचार्य रामचंद्र शुक्ल का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। द्विवेदी युग से जिस समीक्षात्मक निबंध का विकास हुआ उसमें मनोवैज्ञानिकता के समावेश का श्रेय आचार्य शुक्ल को जाता है। इन्होंने मनुष्य जीवन के सूक्ष्म जगत (मनोवेगों) के साथ साहित्य के सूक्ष्म सिद्धांतों को अपने निबंध का विषय बनाया। 'लोभ और प्रीति' आचार्य शुक्ल का विचारात्मक निबंध है। निबंध संग्रह चिंतामणि भाग-1 में संकलित यह निबंध 'भाव और मनोविकार' संबंधी निबंधों की श्रेणी में आता है।

22.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रों! इस इकाई में आप 'लोभ और प्रीति' निबंध का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- लोभ और प्रीति के संकुचित और व्यापक स्वरूप को जान सकेंगे।
- लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य शुक्ल की अवधारणा को स्पष्ट कर सकेंगे।

- लोभ और प्रीति के अवयव तथा उसके विषय से परिचित हो सकेंगे।
- लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य रामचंद्र शुक्ल की मान्यताओं का समीक्षात्मक विवेचन कर सकेंगे।

22.3 मूल पाठ : 'लोभ और प्रीति' (रामचंद्र शुक्ल) की विवेचना

22.3.1 लोभ और प्रीति : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप

लोभ का आश्रय मन-मस्तिष्क है। प्रीति का आश्रय हृदय है। लोभ कोरी बुद्धि के संग से उत्पन्न होता है और प्रीति विशुद्ध भावना से जन्म लेती है। प्रीति में सत्व गुण की अधिकता होती है जबकि लोभ में तमोगुण और रजोगुण प्रधान होते हैं। लोभ का सामान्य अर्थ है 'लालच'। प्रीति का सामान्य अर्थ है 'प्रेम'।

आचार्य शुक्ल के शब्दों में लोभ की परिभाषा

- "जिस प्रकार का सुख या आनंद देनेवाली वस्तु के संबंध में मन की ऐसी स्थिति को जिसमें उस वस्तु के अभाव की भावना होते ही प्राप्ति, सानिध्य या रक्षा की प्रबल इच्छा जग पड़े, लोभ कहते हैं।"
- "मन की ललक यदि वस्तु के प्रति है तो लोभ" है।
- "जहाँ लोभ सामान्य या जाति के प्रति होता है वहाँ वह लोभ ही रहता है।
- "लोभ सामान्योन्मुख होता है।"
- "कहीं कोई अच्छी चीज सुनकर दौड़ पड़ना लोभ है।"
- दो कोटि (सजीव, निर्जीव) की दो सत्ताओं का बाह्य संपर्क लोभ है।

आचार्य शुक्ल के शब्दों में प्रीति की परिभाषा

- "विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति के प्रति होने पर लोभ वह सात्विक रूप प्राप्त करता है जिसे प्रीति या प्रेम कहते हैं।"
- "मन की ललक यदि ...किसी प्राणी या मनुष्य के प्रति होती है तो प्रीति कहलाती है।"
- लोभ "जहाँ पर किसी जाति के एक ही विशेष व्यक्ति के प्रति होता है वहाँ 'रुचि' या 'प्रीति' का पद प्राप्त करता है।"
- "प्रेम विशेषोन्मुख" होता है।
- किसी विशेष वस्तु पर इस प्रकार मुग्ध रहना कि उससे कितनी अच्छी-अच्छी वस्तुओं के सामने आने पर भी उस विशेष वस्तु से प्रवृत्ति न हटे, रुचि या प्रेम है।
- प्रेम में एक कोटि की दो सत्ताओं के अंतःकरण का मेल होता है।
- प्रेम सृष्टि के बीच सौन्दर्य विधान की प्रेरक दिव्य शक्ति है।

ये परिभाषाएँ लोभ और प्रीति के स्वरूप को स्पष्ट कर रही हैं। जिस किसी भी वस्तु से मनुष्य को सुख मिलता है या जो उसके ऐश्वर्य को बढ़ाकर उसे आनंद प्रदान करता है उन वस्तुओं के प्रति उसमें घोर आसक्ति की भावना पाई जाती है। पर उसे अपनी इस आसक्ति और उस वस्तु के दूर होने से उत्पन्न दुःख का ज्ञान तब होता है जब कोई आकर उससे वह वस्तु ले जाना चाहता

है। उस स्थिति में उस वस्तु से सुखोपभोग करने वाला व्यक्ति वस्तु को मांगने वाले व्यक्ति से व्याकुल होकर कहता है, "अभी रहने दो"। सुखोपभोग की अपनी इच्छा की महत्ता से भी मनुष्य तब परिचित होता है जब कोई उससे उसके सुख के साधन को ले जाना चाहता है। मनुष्य में निहित वासना उसकी लोभ वृत्ति है। लोभ में मनुष्य-चरित्र के दो गुण दिखाई देते हैं-

1. वह दूसरे की उस वस्तु को पाना चाहता है जिससे वह अपनी वासना की पूर्ति कर सके।
2. जिस वस्तु द्वारा वह स्वयं सुख का उपभोग कर रहा है उससे अलग होने की कल्पना या आशंका मात्र से वह दुखी हो जाता है।

जिस सुख का भोग मनुष्य कर रहा है उसके दूर होने की कल्पना मात्र से वह दुखी हो जाता है। सुख के जो साधन मनुष्य के पास नहीं हैं, उसकी अप्राप्ति की स्थिति में वह दुखी रहता है। यह लोभ का दुखात्मक पक्ष है। लोभ का स्वरूप इसी पक्ष में पूर्ण रूप से अभिव्यक्त होता है। अपनी वस्तु के प्रति लोभ की भावना ही मनुष्य में उसे किसी को न देने की भावना भरती है। लोभ का सुखात्मक पक्ष दूरगामी परिणामों से अनजान प्रत्यक्षतः त्वरित आनंद की अनुभूति करानेवाला होता है।

इस लोभवृत्ति में जब सात्विकता के साथ एकनिष्ठता घर कर लेती है तब इसका स्वरूप प्रीति, रुचि या प्रेम में परिणत हो जाता है। एकनिष्ठ प्रेम को स्पष्ट करने के लिए आचार्य शुक्ल ने रूप-लोभी का उदाहरण दिया है। किसी भी व्यक्ति की रूप की प्रशंसा सुनते ही मन में पहला भाव लोभ का आता है। यह लोभ मुग्धता सुंदर-से-सुंदर व्यक्ति को देखकर अपना पाला बदलता रहता है। इस परिवर्तनशील वृत्ति को 'प्रवृत्ति का व्यभिचार' की संज्ञा दी गई है। जब यह लोभ की वृत्ति किसी एक व्यक्ति के निमित्त स्थिर हो जाती है तब मनुष्य रूप-लोभी की श्रेणी से प्रेमी की श्रेणी में आ जाता है।

बोध प्रश्न

- लोभ और प्रीति से आप क्या समझते हैं?
- लोभ की स्थिति में मनुष्य के चरित्र में कौन से गुण परिलक्षित होते हैं?

22.3.2 लोभ और प्रीति के अवयव और विषय

लोभ और प्रीति के दो अवयव हैं- संवेदनात्मक और इच्छात्मक। इन दोनों अवयवों की उपस्थिति में ही लोभ और प्रीति पूर्ण रूप से प्रकट होते हैं। संवेदनात्मक अवयव की उपस्थिति से किसी वस्तु से व्यक्ति सुख और आनंद की अनुभूति प्राप्त करता है। इस अवस्था में वह उस वस्तु को लेने की या स्वयं से दूर न होने देने की चेष्टा नहीं करता है ना ही वह उसके न नष्ट होने की इच्छा करता है। किसी वस्तु का अच्छा लगना और उससे सुख एवं आनंद की अनुभूति प्राप्त करना संवेदनात्मक अवयव है। यहाँ व्यक्ति का इंद्रिय सुख इच्छारहित है। इच्छात्मक अवयव इच्छाएँ प्रकट होती हैं। ये प्रकट होनेवाली इच्छाएँ हैं- सुखप्रद वस्तु को प्राप्त करना, सुखप्रद प्राप्त वस्तु को स्वयं से दूर न होने देना और उसे नष्ट न होने देना। केवल किसी वस्तु के अच्छे लगने से मन-ही-मन प्रमुदित होने की अवस्था या उसका सुखोपभोग करने से व्यक्ति को लोभी नहीं कहा जा सकता है। उसके लोभ में जब इच्छात्मक अवयव का संयोग होता है तभी उसका लोभ बाहरी

दुनिया पर प्रकट होता है। 'इच्छा' लोभ और प्रीति का आवश्यक अंग है। प्रेमी का प्रेम भी ऐसे ही जगजाहिर होता है। जब किसी व्यक्ति के संदर्भ में कोई यह संकेत देता है कि वह उसे 'बहुत अच्छा और प्रिय लगता है तो लोग कहते हैं कि 'वह उसे चाहता है।''

व्यक्ति की अभिरुचि भिन्न होती है। आचार्य शुक्ल ने इसके लिए चौबे जी का उदाहरण दिया। 'भूखे रहने पर पेड़ा सबको अच्छा लगता है पर चौबेजी पेट भर भोजन के ऊपर भी पेड़े पर हाथ फेरते हैं।' पेड़े को देखकर चौबे जी के सब्र का बाँध टूट जाता है और वे पेट भरे रहने पर भी उसे ग्रहण करते हैं जबकि सामान्यतया लोग भूखे होने पर भोजन की ओर ध्यान देते हैं। यहाँ चौबे जी की रुचि मिठाई में है और मिठाइयों में भी उनका प्रिय पेड़ा है। ज्ञातव्य है कि सभी इंद्रियों का विषय अलग होता है जिसके अनुरूप लोगों की अभिरुचि के विषय भी अलग-अलग हो सकते हैं। लोगों की अपनी रुचि ही उन्हें लोभ की प्रेरणा देती है। रुचि के विभिन्न विषय के कुछ उदाहरण देखें- कमल का फूल, रमणी का सुंदर मुख, वीणा की तान, अपनी तारीफ, जूही और केसर की गंध, रबड़ी और मालपुआ, मुलायम गद्दा। ये विभिन्न अच्छे लगनेवाले विषय क्रमशः इन इंद्रियों से संबंधित हैं- आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा। रुचि के इन विषयों के प्रति मनुष्य का आकर्षण आचार्य शुक्ल के अनुसार सीधी-सादी और स्वाभाविक है क्योंकि इन वस्तुओं से मनुष्य को आनंद मिलता है। इन आनंदप्रद वस्तुओं की प्राप्ति के स्रोत जो पूर्णतया आनंदरहित हैं, उन्हें पाने की मनुष्य की इच्छा उसका लोभ है। वर्तमान समय में 'लोभी' शब्द का विशेष अर्थ रुपये-पैसे और धन के लोभी के रूप में ही किया जाता है। रुपये-पैसे और धन की ओर मनुष्य का आकर्षित होने का कारण क्या है? रूप, रस और गंध रहित उस धातुखंड से प्राप्त किए जा सकनेवाले सुख और आनंद भी मनुष्य की समझ से अब बाहर हैं। उसके बृहत्तर प्रयोग की ओर उसका ध्यान नहीं है। धन संचय की प्रवृत्ति पूरे जोर पर है। मनुष्य की इस प्रवृत्ति को ही लक्ष्य करके आचार्य शुक्ल ने लिखा है, जिस वेग से मनुष्य उस पर टूटते हैं उस वेग से भौंरे कमल पर और कौए मांस पर भी न टूटते होंगे। धन मनुष्य के जीवन की एक आवश्यकता है। पर आज यह मनुष्य का जीवन बन गया है। पहले मनुष्य धन जुटाता था सुख-साधन की पूर्ति के लिए पर अब धन जुटाना उसका लक्ष्य हो गया है। अपने दुःख के निवारण के लिए भी धन को खर्च करने से मनुष्य हिचकता है। अभूतपूर्व सुख को वह प्राप्त करना चाहता है पर उसे पाने में धन-खर्च की बात आते ही वह अपना हाथ रोक लेता है। मनुष्य के जीवन का मुख्य लक्ष्य धन संचय करना बन गया है। धन का साधन से साध्य बन जाना मनुष्य के परिवर्तित होते मनोविज्ञान की ओर इशारा कर रहा है। मानव जीवन में व्याप्त हो रहा यह परिवर्तन सकारात्मक नहीं कहा जा सकता।

बोध प्रश्न

- लोभ और प्रीति के कितने अवयव होते हैं? विस्तार से बताएँ।
- 'व्यक्ति की रुचि और लोभ का विषय'- ये दोनों आपस में किस प्रकार संबंधित हैं?

22.3.3 लोभ की अवधारणा : सामाजिक परिदृश्य

जब कोई वस्तु अच्छी लगती है तब लोभ होता है। व्यक्ति के लोभ की सीमा वस्तु के स्थिति पर निर्धारित होती है। वह अच्छी लगनेवाली वस्तु यदि व्यक्ति के पास है तो वह चाहेगा

कि उसकी वह प्रिय वस्तु उससे दूर नहीं हो या कोई उसे नष्ट न कर सके। यदि उसे अच्छी लगनेवाली वस्तु उसके पास नहीं है तो वह उसे पाना चाहेगा। जिस प्रकार प्रिय वस्तु के संबंध में मनुष्य में ये दो प्रकार की इच्छाएं उत्पन्न होती हैं उसी प्रकार संपर्क की इच्छा भी दो प्रकार की होती है। व्यक्ति चाहता है कि उसका संपर्क इतना गहरा हो जितना किसी का नहीं हो या जितना संपर्क बहुत सारे लोग एक साथ मिलकर रखते हैं, उतना वह अकेले ही रखे।

किसी वस्तु में केवल अपनी प्रियता की प्रतीति से समाज का ध्यान उस ओर नहीं जाता। लेकिन जब मनुष्य उस वस्तु को लेने के लिए प्रयत्नशील होता है या दूसरों को उसे प्राप्त करने से रोकने की कोशिश करता है तब समाज की नजर में व्यक्ति का लोभ दिखाई देने लगता है। इनमें से कुछ लोग हमारे लोभ के पक्ष में खड़े हो जाते हैं और कुछ निंदारत हो जाते हैं। एक लोभी के लोभकर्म की निंदा एक लोभी से अधिक अच्छे तरीके से कोई नहीं कर सकता है। जो मांगने पर अपनी वस्तु औरों को न दे वह लोभी है। जो किसी से कुछ माँगता है वह भी लोभी है। यहाँ दो व्यक्ति हैं पर उनका प्रिय वस्तु एक ही है जिसे लेने और न देने के अपने संकल्प से दोनों एक-दूसरे को व्याकुल करते हैं। इसी संदर्भ में आचार्य शुक्ल ने कवि रहीम के दोहे का प्रयोग करते हैं-

“रहिमन वे नर मर चुके जे कहुं माँगन जाहिं।
उनसे पहले वे मुए जिन मुख निकसत नाहिं।।”

‘किसी वस्तु को प्राप्त करने की प्रतिषेधात्मक इच्छा सदोष है या निर्दोष यह लोभ के विषय पर निर्भर करता है।’ इस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना करना पड़ता है।

लोभ के विषय दो प्रकार के होते हैं- सामान्य और विशेष। सामान्य लोभ के विषय का संबंध मानव की मूलभूत आवश्यकताओं (भोजन, वस्त्र, आवास, धन) से है। इसकी प्राप्ति के स्रोत को सभी प्राप्त करना चाहते हैं। सभी मनुष्यों के इस सामान्य लोभ की ओर बहुत से लोगों का ध्यान जाता है। यदि किसी को कोई विशेष वस्त्र या विशेष मिठाई पसंद है और वह उसको पाना या दूसरे को न देना चाहता है तो इस ओर बहुत कम लोग का ध्यान जाएगा। जिनका ध्यान जाएगा उनके मन में भी विरोध की भावना नहीं होगी क्योंकि यह व्यक्ति विशेष की अपनी रुचि है। सभी लोगों की रुचियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं। रुचि की भिन्नता से लोभ का लक्ष्य भी भिन्न हो जाता है।

यदि सभी मनुष्य अलग-अलग वस्तुओं (गाय, घोड़ा, कपड़ा, ईंट, सोना, चाँदी, तांबा इत्यादि) का लोभ करते तो किसी में भी परस्पर विरोध नहीं होता। यही नहीं व्यवस्था यह भी होती कि इन वस्तुओं में से किसी के पास इतनी शक्ति न होती जिससे अन्य वस्तुओं की प्राप्ति की जा सके तब भी विरोध की भावना नहीं जन्म लेती। ये व्यवस्थाएँ स्वप्न की शोभा हैं यथार्थ पर इनका कोई ठिकाना नहीं है। अर्थ विनिमय की प्रणाली के अंतर्गत रुपये-पैसे या कीमती धातु के बदले अन्य सामानों की प्राप्ति की जाती है। इससे और अधिक प्राप्त करने की मनुष्य की ललक बढ़ी है। वह सभी साधनों को पाने का स्रोत ‘टके’ को मानता है जो है भी; और उसे पाने के लिए असंतोषी हो गया है। वह संसार का सारा धन बटोर लेना चाहता है। उसे इसके ‘ठीकरा’ होने का अहसास ही नहीं है।

समाज में आज धन का बोलबाला है। न्याय, शिक्षा और राज सम्मान भी टके के गुलाम हैं। संसार में पूर्वनियत सभी प्रकार के कर्तव्य और धर्म टके की चाकरी करने लगे हैं। समाज में केवल बनिया रह गए हैं मानो क्षत्रिय और ब्राह्मण लुप्त हो गए हैं। वीर अपनी वीरता दिखाने के लिए अपना मोल लगाते हैं। आचार्य धनहीन विद्यार्थियों को शिक्षा देने से मुकरते हैं। पैसे के बल पर कोई कमजोर और कायर अपने को बलवान साबित कर लेता है। शासन और सत्ता पर भी पैसे का ही जोर है। राजनीति अब केवल शब्द और व्यवस्था भर है। राजनीति अब केवल अपने देश की प्रजा का विकास नहीं चाहती। वह अपनी वैश्विक पहचान बनाना चाहती है और इसके लिए उसने व्यापार को अपना आश्रय चुना है।

अंतरराष्ट्रीय व्यापार व्यवस्था में मित्र कम प्रतिद्वंद्वी अधिक मिले। सामने से मुस्कुराकर जिसने एक हाथ मिलाया उसीने दूसरे हाथ से पाँव के नीचे से जमीन भी खींच ली। जब क्षात्रधर्म कायम था तब रण होता था और उसमें जय-पराजय का निर्णय होता था। अब घात लगाकर दूसरे का धनहरण करना ही श्रेयस्कर समझा जाता है। यह धन संचय की भावना का बृहत्तर दुष्परिणाम है। व्यापार का नशा भी इसी श्रेणी में आता है। आवश्यकता से अधिक माल की तैयारी करना और फिर उसे अन्य देशों में निर्यात करने की चिंता में पड़े रहना कहाँ तक ठीक है भला! पुनः क्षात्र धर्म की स्थापना होनी चाहिए और यह होगा- ऐसा आचार्य शुक्ल का विश्वास है।

लोभ के विशेष विषय के अंतर्गत एक सच्चा लोभी अपनी प्रिय वस्तु को पाने के लिए बड़ा-से-बड़ा त्याग भी सहर्ष करता है। जैसे महर्षि वशिष्ठ की गाय को पाने के लिए महर्षि विश्वामित्र अपना सारा राजपाट देने के लिए तैयार हो गए थे। 'अन्य का त्याग अनन्य और सच्चे लोभ की पहचान है।' लोभ का स्वरूप निर्विरोध भी होता है। लुटेरे या डाकू के दल की एकता के मूल में लोभ का यही निर्विरोध स्वरूप है। उस दल के सभी सदस्यों का लक्ष्य एक है क्योंकि उनकी रुचि एक है। उनका लोभ भी एक ही वस्तु पर रहता है जिसे पाने के लिए वे आपस में सद्भावना बनाए रखते हैं।

आपसी सद्भाव के अभाव में उनका दल टूट सकता है। इस स्थिति में परस्पर विरोध का सामना भी करना पड़ सकता है जिससे लक्ष्य को पाने में बाधा उत्पन्न होगी। पर डाकुओं के दल का हर सदस्य एक-दूसरे की इच्छापूर्ति के मार्ग में साधक बन कर आता है। व्यक्ति का जो लोभ दूसरे व्यक्ति की सुखशांति और स्वच्छंदता के मार्ग में बाधक बनता है वैसे लोभ की निंदा समाज के सहृदय सदस्य करते हैं। इन सहृदय सदस्यों का लोभ मनुष्य की सुखशांति और स्वच्छंदता में निहित है। इस लोभ से किसी को विरोध नहीं हो सकता। बगीचे की शोभा में सबको लोभ होता है और यह निर्विरोध है क्योंकि अभी तक यह अर्थ विनिमय प्रणाली से मुक्त है। यदि देखना भी सशर्त होता तो इसमें भी विरोध की गुंजाइश होती। धन की कामना और कुछ लोगों का निषेध- इन दोनों ही सूरत में बगीचे की शोभा को देखना विरोधपूर्ण होता। सुंदरता को जितना सब निहारते हैं उतने तक ही हम भी रहें तो हमारा लोभ निर्विरोध होगा।

लोभ में रक्षा की इच्छा भी व्याप्त रहती है। इसके भी दो प्रकार हैं- जो वस्तु अच्छी लगी उसे स्वाधिकार में रखने की इच्छा या केवल उसे बने रहने देने की इच्छा। लोभ या प्रीति की

अधिकता से मनुष्य में अविश्वास की भावना उत्पन्न होती है जिससे किसी साझे सामान को वह केवल अपने अधिकार में रखना चाहता है। किसी मीठे आम के पेड़ की रखवाली सब लोग मिलकर करते हैं और फल खाते हैं तो यहाँ कोई बाधा नहीं है। यदि फल के सामूहिक उपभोग को बाधित किए बिना कोई अकेला व्यक्ति उस वृक्ष को अपने अधिकार में रखेगा तब भी कोई बाधा उत्पन्न नहीं होगी। बाधा तब उत्पन्न होगी जब सामूहिक उपभोग बाधित होगा। एक दूसरा उदाहरण आचार्य शुक्ल ने मंदिर का लिया जिसमें सबका आनंद और सुख निहित है और सभी इसके निमित्त किए जानेवाले कार्यों में स्वेच्छा से योगदान देते हैं। यह लोभ निर्विरोध है और सबको एकता के सूत्र में बाँधता भी है।

लोभ का सबसे प्रशंसनीय स्वरूप वह है जिसमें किसी चीज के केवल बने रहने की कामना होती है। उस वस्तु की रक्षा की यह भावना उसके उपयोगिता को ध्यान में रखकर उत्पन्न नहीं होती। इसके लिए आचार्य शुक्ल ने एक बच्चे को अपना कहने वाली दो माँओं का दृष्टांत दिया है। दोनों बच्चे को अपना कह रही थी। काज़ी ने फैसला किया कि ठीक है बच्चे को काटकर आधा-आधा बाँट दिया जाएगा। यह सुनकर दोनों में से एक स्त्री ने कहा बच्चा उसी को दे दीजिए, मुझे नहीं चाहिए। यह कहनेवाली स्त्री के मन में बच्चे की रक्षा की लाभरहित भावना थी। वही उसकी माँ थी। यह सच्चे लोभ का उदाहरण है। माँ को 'पक्का लोभी' कहा जा सकता है। इसी प्रकार घर, गाँव (पुर) और देश की रक्षा की भावना में भी लोभ का यही पवित्र स्वरूप निहित है।

बोध प्रश्न

- लोभ के अंतर्गत मनुष्य में वस्तु की प्राप्ति के अतिरिक्त संपर्क की इच्छा और रक्षा की इच्छा भी जागती है। इन्हें स्पष्ट करें।
- किस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना करना पड़ता है और किस प्रकार के लोभ को विरोध का सामना नहीं करना पड़ता है? उदाहरणसहित समझाएँ।
- लोभ के विषय कितने प्रकार के होते हैं? स्पष्ट करें।

22.3.4 प्रीति का व्यापक स्वरूप

एक प्राणी के प्रति दूसरे प्राणी का लोभ 'प्रीति' (प्रेम) है। परिचय और सानिध्य प्रीति के मूल कारक तत्व हैं। मनुष्य के अंतःकरण में कई भाव पलते हैं। प्रेम भी उनमें से एक है। यह प्रेम स्थान से भी हो सकता है जिसका उदाहरण देशप्रेम या मातृभूमि से प्रेम है। किसी स्थान से मनुष्य का लोभ स्थायी तब होता है जब उस स्थान से वह परिचित होता है। परिचय ही प्रेम का प्रवर्तक है। परिचय होना यानी हिल-मिल जाना जिसे आचार्य शुक्ल ने 'परच जाना' कहा है।

स्थान से प्रेम करना यानी उस स्थान से जुड़े हर प्राकृतिक वस्तु से प्रेम करना है। किसी स्थान के पेड़-पौधे, लता-झाड़ी, वन, पर्वत, नदी, पशु-पक्षी और मनुष्य- इन सबसे प्रेम करना ही देशप्रेम है। इनसे प्रेम करना यानी इनका हितचिंतन करना है। लोभ या प्रेम ही व्यक्ति में त्याग की भावना को जगाता है और अनायास व्यक्ति सर्वहित साधन की ओर उन्मुख हो जाता है। यह देशप्रेम कितनों में होता है? क्या हममें है? क्या हममें अपनी मातृभूमि और वहाँ के वासियों के प्रति सच्चा अनुराग है? क्या हमें अपने अतीत की याद है? क्या वह हमें प्रिय है? यदि इनका उत्तर नहीं है तो हमें यह सब 'हाँ' में परिणत करना होगा। यह विडंबना है कि वर्तमान समय में

अपने देश से नजदीक का परिचय होना बाबूपन की शान घटाता है। महुआ की मिठास को जानने और उसे अभिव्यक्त करने का काम केवल देहातियों का है। एक शहरी व्यक्ति इनसे जितना अनजान रहे उतना ही बेहतर। यह आचार्य शुक्ल को एक लखनवी महाशय ने बताया। यह संस्मरण इस निबंध का हिस्सा है।

स्थान का लोभ वस्तु-लोभ की श्रेणी में ही आएगा क्योंकि स्थान जीवित प्राणी नहीं है। उसका हृदय भी नहीं होता पर वह हृदययुक्त प्राणी का निवास स्थान है। मनुष्य के अतिरिक्त कई प्रकार के जीव उसकी सुंदरता बढ़ाते हैं। वह निवासी मनुष्य उस स्थान के हर चीज को चाहता है। उससे प्रेम करता है पर प्रत्युत्तर में प्रेम की प्राप्ति किसी स्थान से संभव नहीं है। इस लोभ को धारण किए बिना देशप्रेम की बात करना केवल डींग हाँकना है जिसे आचार्य शुक्ल ने 'कोरा बकवाद' कहा है। व्यक्ति-लोभ को आचार्य शुक्ल वस्तु-लोभ से विलक्षण मानते हैं। कारण कि यहाँ दोनों पक्ष में मनस्तत्व उपस्थित है। व्यक्ति का व्यक्ति के प्रति प्रेम में हृदय का साथ दोनों तरफ से रहता है। प्रेमी अपने प्रिय के अंतर्मन पर छाने के लिए व्यग्र रहता है। वह प्रिय में अपने प्रेम की प्रतीति देखना चाहता है और प्रिय को उसके प्रेम का अहसास है इसकी पुष्टि चाहता है। इसे आचार्य शुक्ल ने 'तुष्टि का विधान' कहा है। इस विधान की पूर्ति के लिए प्रेमी और प्रिय का संपर्क आवश्यक है। यह संपर्क तभी संभव है जब प्रिय के मन में प्रेमी से संपर्क की इच्छा जगे। बलपूर्ण चेष्टा से यह नहीं होगा यह होगा हृदय के आपसी मेल से। यही प्रेम की पूर्णता या उसका चरम विकास है।

'वस्तु' लोभ की चेतना से मुक्त रहता है। निर्जीव वस्तु इच्छा से मुक्त रहता है। प्रभावी होने की इच्छा सजीवों में होती है। 'जब किसी नवयुवक का चित्त किसी युवती की ओर आकर्षित होता है, तब ऐसे स्थानों पर जाते समय जहाँ उसके दिखाई पड़ने की संभावना होती है, उसका ध्यान कपड़े-लत्ते की सफाई और सजावट की ओर कुछ अधिक हो जाता है। सामने होने पर बातचीत और चेष्टा में भी एक खास ढब देखा जाता है। अवसर पड़ने पर चित्त की कोमलता, सुशीलता, वीरता, निपुणता इत्यादि का भी प्रदर्शन होता है।' प्रिय को रिझाने की हरसंभव कोशिश की जाती है। प्रिय का मन भी प्रेमी पर मोहित हो रहा है; इसका पता चलते ही प्रेमी का प्रिय के प्रति लोभ जो प्रेमलोक के ऊपरी सतह पर तैर रहा था अब उसकी गहराई में उतर जाता है और प्रेमी अपने उस आनंदलोक में मग्न हो जाता है। हृदय के ऐक्य की अनुभूति से उत्पन्न आनंद जीवन में नया रस भरती है।

जीवन का हर क्षण दुगुने आनंद और उत्साह से भर जाता है। प्रिय से विरह की दशा में सारा संसार दुखदायक बन जाता है। हर चीज से अरुचि उत्पन्न हो जाती है। प्रेमी स्वत्व को भी भूल कर प्रिय की याद में रम जाता है। प्रिय का आनंद ही उसका अपना आनंद हो जाता है। 'दो हृदयों की यह अभिन्नता अखिल जीवन की एकता के अनुभव पथ का द्वार है। प्रेम का यह रहस्यपूर्ण महत्व है।'

प्रेम के दो स्वरूप हैं। एक अंतर्मुखी और दूसरा बहिर्मुखी। अंतर्मुखी प्रेम की परिणति प्रेम के ऐकांतिक स्वरूप में होती है। यह प्रेम जब दो सामान्य मनुष्यों के मध्य होता है तब उनका संसार सिमट जाता है। मनुष्य जीवन के सामान्य कार्य व्यापार जो केवल उन प्रेम करने वाले दो

प्राणियों तक सीमित हैं, वे बस उनमें ही निमग्न रहते हैं। उनके सारे सद्‌गुण और सद्भाव निजी प्रेम का मार्ग प्रशस्त करने में व्यर्थ हो जाते हैं। साहस, धैर्य, दृढ़ता और कष्ट-सहिष्णुता ये सभी मानवीय गुण बस प्रेम के उन्माद को जीवित रखने में खर्च हो जाते हैं। यह प्रेम प्रेमी जोड़े में समाज और परिवार के प्रति वैराग्य उत्पन्न कर देता है। उन्हें न घर सूझता है न समाज। पर यही प्रिय के अतिरिक्त कुछ न सूझनेवाला प्रेम यदि परमात्मा से किया जाए तो इसका स्वरूप दिव्य माना जाएगा, जैसे गोपियों का प्रेम कृष्ण के लिए। भक्तिमार्ग में संसार के प्रति वैराग्य की भावना और इष्ट से अनन्य प्रेम करने का सबसे सुलभ साधन ऐकांतिक प्रेम को माना गया है।

प्रेम का दूसरा स्वरूप लोकबद्ध है जो लोक को आनंद देनेवाला है इसलिए इसे लोकरंजनकारी भी कहा जाता है। इसमें अंतःकरण का विशुद्ध प्रेम अपने बहिर्मुखी स्वरूप में रहता है। वह लोक से जुड़ता है और अपने पवित्र प्रकाश से पूरे लोक को आलोकित करता है। प्रेमी अपने प्रेम की मधुरिमा से पूरे संसार को व्याप लेता है। अपने भीतर का आह्लाद वह सारे जीवों पर आरोपित भरता है। प्रेम के इस स्वरूप को वही धारण कर सकता है जो अपने अस्तित्व से प्रेम करता हो। प्रेमी का हृदय इस संसार की सुंदरता से अभिभूत रहता है और वह इसकी अनुभूति अपने प्रिय को भी कराना चाहता है। सुंदरता का दर्शन प्रेम का दिव्य प्रभाव है। मानव जीवन में सौंदर्य के कई रूप हैं- प्रेम, वस्तु, कर्म, वाक और भाव। सौंदर्य के इन रूपों को सभी देखना और दिखाना चाहते हैं। प्रिय के समक्ष अपने इन गुणों का प्रदर्शन करने के लिए प्रेमी का मन उमंग और उत्साह से भरा होता है। पुराने ज़माने में रणभूमि में युवक योद्धा के उत्साह के पीछे भी प्रेम भावना कार्य करती थी। उन्हें लगता था कि उनकी प्रेयसी उन्हें ऊँची अट्टालिकाओं से झाँक रही होंगी। कर्म का सबसे मुश्किल क्षेत्र युद्ध है पर वीरों का कर्म-सौंदर्य यहीं दिखाई देता है। यह वीरगाथा काल के साहित्य में भी नजर आता है जहाँ युद्ध और प्रेम के संयुक्त प्रसंग वाली कविताएँ उपलब्ध हैं।

हिंदी के प्रबंध काव्यों में भी प्रेम का विस्तार लोक के अंग-प्रत्यंग में दिखाई देता है। इसका सबसे सुलभ उदाहरण 'सीता और राम का प्रेम' है। उनके प्रेम का विस्तार आदिकवि वाल्मीकि ने मिथिला और अयोध्या के महल और बगीचे से बाहर दंडकारण्य के उनके कर्मक्षेत्र में दिखाया। इनका प्रेम लोकजीवन को भयमुक्त करता है। 'सीता-हरण होने पर राम का वियोग जो सामने आता है वह भी चारपाई पर करवटें बदलनेवाला नहीं है, समुद्र पार कराकर पृथ्वी का भार उतारनेवाला है।' आचार्य शुक्ल की मान्यता में इस प्रेम का मान ऐकांतिक प्रेम से अधिक है। यह प्रेम व्यक्ति के जीवन का दायरा विस्तृत करता है। उसे कर्मपथ पर अग्रसर करता है। यह प्रेम संजीवनी के सामान है। इस रंजनकारी प्रेम का स्वरूप बहुत विस्तृत है। सृष्टि का हर कोना इसकी सीमा है। यह लोकबद्ध प्रेम विद्वान की बुद्धि, कवि की प्रतिभा, चित्रकार की कला, उद्योगी की तत्परता और वीरों के उत्साह को समान रूप से प्रभावित करता है। यह समता भगवान के अनुग्रह के अतिरिक्त कहीं और से नहीं प्राप्त हो सकता। अतः भगवद्भक्ति के लिए भी यह लोकबद्ध प्रेम ही अधिक उपयुक्त है।

'जगत के बीच हृदय का सम्यक प्रसार ही भक्ति है।' यहाँ किसी प्रकार का वैराग्य भी नहीं चाहिए। यह भक्ति रागनुमा है। सबसे राग का संबंध जोड़ना ही सच्ची भक्ति है। चराचर

जगत को राममय देखते हुए 'नेह का नाता' निभाना ही परम प्रेम रूपी भक्ति है। इस संबंध को निभाने में जो अवरोध उत्पन्न करे वह अवश्य ही त्यागने योग्य है। आचार्य शुक्ल कहते हैं, 'मेरे देखने में तो वही रामभक्त-सा लगता है जो अपने पुत्र-कलत्र, भाई-बहिन, माता-पिता से स्नेह का व्यवहार करता है, रास्ते में चींटियाँ बचाता है, किसी प्राणी का दुःख देख आँसू बहाता हुआ रुक जाता है, किसी दीन पर निष्ठुर अत्याचार होते देख क्रोध से तिलमिलाता हुआ अत्याचारी का हाथ थामने के लिए कूद पड़ता है, बालकों की क्रीड़ा देख विनोद से पूर्ण हो जाता है, लहलहाती हुई हरियाली देख लहलहा उठता है और खिले हुए फूलों को देख खिल जाता है।' इन सबको देखकर जो उदासीन रहता है वह भक्त नहीं हो सकता। जिसके लिए अखिल ब्रह्मांड प्रेम का पात्र है वही सच्चा भक्त है।

बोध प्रश्न

- वस्तु लोभ से व्यक्ति लोभ विलक्षण है। सिद्ध करें।
- 'परच जाना' से क्या तात्पर्य है?

22.3.5 'लोभ और प्रीति' निबंध की भाषा-शैली

'लोभ और प्रीति' विचारात्मक निबंध है। इसमें लोकभाषा, हिंदी, संस्कृत और उर्दू भाषा के शब्द प्रयुक्त हुए हैं। व्यास शैली को अपनाकर निबंधकार ने लोभ और प्रीति के संकुचित और व्यापक स्वरूप को बहुत प्रकार से स्पष्ट करते हुए समझाया है। यह स्पष्टीकरण क्रमबद्ध तरीके से किया गया है। इसलिए कह सकते हैं कि यहाँ क्रमसंवर्धन शैली का प्रयोग हुआ है। भाषा प्रवाहमयी है अतः यहाँ धारा शैली भी है। देश से परिचय के क्रम में और अन्य कई जगहों पर लेखक की शब्द योजना और वाक्य प्रयोग इतने प्रभावी हैं कि जिस दृश्य या स्थिति का वे वर्णन कर रहे हैं; उनका चित्र हमारे सामने उपस्थित हो जाता है। अतः यहाँ चित्रांकन शैली का भी प्रयोग हुआ है। निजी जीवन के अनुभव और लोकजीवन की विशिष्टता दोनों का संयोग देखने लायक है। निबंध की विषयवस्तु गंभीर है। इसका विवेचन भी गंभीर है जिसमें रोचक दृष्टान्तों, साहित्यिक उद्धरणों और व्यंग्य वाक्यों का पुट देकर सामान्य समझ के स्तर को छूने का प्रयास किया गया है। भाषा हृदयंगम करने लायक और ओजपूर्ण है।

22.4 पाठ सार

इस निबंध के माध्यम से आचार्य शुक्ल ने मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्तियों की छानबीन की है। लोभ और प्रेम मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। साहित्य में लोभ विशेष रूप से रूपलोभी के लिए प्रयुक्त होता है। समाज में लोभ का अर्थ धन के लोभ से किया जाता है। धन का लोभ मनुष्य में असंतोष की भावना को जगाता है और उसकी अन्य स्वाभाविक प्रवृत्तियों का दमन करता है। ये अन्य दमित प्रवृत्तियां इस प्रकार हैं- क्रोध, दया, घृणा, लज्जा इत्यादि। लोभी का साध्य धन रहता है। उसे जमा करने के लिए वह मान और अपमान में समान भाव रखता है। न्याय-अन्याय से उसे फर्क नहीं पड़ता है। वह अपने इंद्रिय सुख के लिए भी धन खर्च नहीं करता है। एक शुद्ध धनलोभी का आचरण विवेकहीन होता है। जो कष्ट मिटाने, सुख पाने या सुख के अभाव की आशंका से धन संचय की ओर प्रवृत्त होते हैं; वे लोभी नहीं हैं। इन तीन स्थितियों से

विलग धनसंचय में रत मनुष्य जघन्य लोभी है। प्रेम संबंधी स्वीकृति के आधार पर प्रेम में भी तीन प्रकार की संभावित स्थितियाँ होती हैं-

1. प्रेम यदि प्रेमी और प्रिय के मध्य आरंभ से ही सम रूप से है तो प्रेम की यह स्थिति युगपद कहलाती है।
2. यदि प्रेम पहले एक में होकर फिर दूसरे में होता है या एक में ही उत्पन्न होकर रह जाता है, दूसरे में होता ही नहीं तो यह प्रेम की विषम स्थिति है।
3. तुल्यानुराग की प्रतिष्ठा की भावना के तहत प्रेमी अपने प्रेम से अनजान प्रिय को अपने प्रेम की जानकारी देना चाहता है ताकि उसे भी बराबर का प्रेम मिले और यह प्रेम बना रहे। तुल्यानुराग की प्रतिष्ठा के लिए प्रेमी दया और करुणा जैसे भावों का भी सहारा लेता है।

प्रेम के निर्मल स्वरूप में आत्मतुष्टि की भावना नहीं रहती। यहाँ प्रिय बना रहे भले ही वह प्रेमी से प्रेम न करे- यह भाव ही प्रबल रहता है। प्रेमी अपने प्रिय के लिए यह कामना ईश्वर से करता है। प्रिय का सुख और आनंद ही प्रेमी का भी सुख और आनंद है। यदि प्रेमी प्रेम के इस उच्च भूमि को नहीं समझता है तो वह प्रिय से सानिध्य की इच्छा का त्याग नहीं कर पाएगा। फलतः उसका मन अशांत होगा और प्रतिक्रिया स्वरूप उसमें क्रोध, ईर्ष्या और वैर भाव जैसी दुर्भावनाओं का समावेश हो जाएगा जिससे जीवन नरक बन जाएगा।

22.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार लोभ और प्रीति का मूल भाव एक ही है। दोनों की उत्पत्ति रुचि से होती है पर उनकी चरम परिणति भिन्न है। लोभ जब तक क्षुद्र स्वार्थ में लिपटा रहता है तब तक वह लोभ रहता है लेकिन जब वह बृहत्तर देश-काल से जुड़ जाता है तब वह प्रेम बन जाता है। लोभ का जुड़ाव वस्तु से होता है और प्रेम का व्यक्ति से।
2. इच्छात्मक और संवेदनात्मक अवयवों के संयोग से ही लोभ और प्रीति का पूर्ण स्वरूप प्रकट होता है। इच्छा लोभ और प्रीति का एक आवश्यक अंग है।
3. अधिकांश मनुष्यों के जीवन का लक्ष्य धन संचय करना बन गया है। दुनिया टके (रुपया-पैसा) पर टिकी है। जब लोगों के मन से व्यापार का उन्माद दूर होगा तभी पृथ्वी पर शांति होगी।
4. लोभ या प्रेम या प्रेम की सबसे बड़ी विलक्षणता यह है कि यही एक ऐसा भाव है जिसकी व्यंजना हँसकर भी की जाती है और रोकर भी; जिसके व्यंजक दीर्घ निःश्वास और अश्रु भी होते हैं तथा हर्षपुलक और उछलकूद भी।

22.6 शब्द संपदा

1. अवयव = अंग, हिस्सा
2. घर करना = जगह बनाना
3. ठीकरा = फोड़ना = दोष मढ़ना

4. त्वरित = तेजी से

5. मुकरना = इनकार करना

6. सुखोपभोग = सुख का उपभोग करना

22.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. लोभ और प्रीति संबंधी आचार्य शुक्ल की अवधारणा को स्पष्ट करें।
2. लोभ और प्रीति निबंध वस्तुनिष्ठ है या व्यक्तिनिष्ठ। इस विषय पर अपना विचार स्पष्ट करें।
3. लोभ और प्रीति मनुष्य के अन्य मनोविकारों से किस प्रकार संबंधित हैं?
4. लोभ और प्रीति निबंध की भाषा-शैली पर सोदाहरण प्रकाश डालें।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. लोभ और प्रीति को परिभाषित करते हुए उनकी समानता और असमानता पर प्रकाश डालें।
2. पक्के लोभी और सच्चे प्रेमी की आचार्य शुक्ल की मान्यता को स्पष्ट करें।
3. समकालीन परिप्रेक्ष्य में यह निबंध प्रासंगिक है। सिद्ध करें।
4. अर्थ विनिमय प्रणाली से लोभ किस प्रकार जुड़ा हुआ है और समाज इससे किस तरह प्रभावित है, स्पष्ट करें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. प्रेम की उच्च भूमि कब दिखाई देती है? ( )
   (अ) युगपद (आ) तुल्यानुराग की प्रतिष्ठा (इ) प्रेम का प्रभाव प्रिय पर न दिखे
2. प्रेम के कितने स्वरूप हैं? ( )
   (अ) 2 (आ) 3 (इ) 1
3. चेतना का विधान किसके भीतर नहीं होता है? ( )
   (अ) लोभी (आ) प्रेमी (इ) वस्तु

II रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. प्रेमकाव्यों में प्रायः ....ही प्रेम का प्रवर्तक होता है।
2. शृंगार के दो पक्ष हैं ....और ....।

3. लोगों ने शृंगार को ....कहा है।
4. लोभ या प्रेम की तरह ....और जुगुप्सा स्थायित्व प्राप्त करते हैं।

III सुमेल कीजिए -

1.	साहचर्यगत प्रेम	(अ) लोक का कंटक
2.	सामान्य लोभ	(आ) देशप्रेम
3.	विशेष लोभ	(इ) अनन्य त्याग की भावना
4.	समस्त संसार की रक्षा चाहने वाले का विरोधी	(ई) असंतोष की भावना

22.8 पठनीय पुस्तकें

1. चिंतामणि भाग-1 : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल निबंध-यात्रा : कृष्णदेव झारी
3. साहित्यमनीषी आचार्य रामचंद्र शुक्ल : रामचंद्र तिवारी

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 23 : हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध

रूपरेखा

23.1 प्रस्तावना
23.2 उद्देश्य
23.3 मूल पाठ : हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध
23.3.1 जीवन परिचय
23.3.2 विचारधारा एवं व्यक्तित्व
23.3.3 साहित्यिक परिचय
23.3.4 हिंदी निबंध साहित्य और हजारीप्रसाद द्विवेदी
23.3.5 द्विवेदी जी के निबंध
23.3.6 द्विवेदी जी के निबंधों का संक्षिप्त विश्लेषण
23.3.7 द्विवेदी जी के निबंधों में भाषा
23.3.8 द्विवेदी जी के निबंधों में शैली
23.5 पाठ का सार
23.6 पाठ की उपलब्धियाँ
23.7 शब्द संपदा
23.8 परीक्षार्थ प्रश्न
23.9 पठनीय पुस्तकें

23.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार माने जाते हैं। हिंदी साहित्य के लिए उनकी देन अपरिमित है। वे उच्चस्तरीय निबंधकार, उपन्यासकार, आलोचक, चिंतक एवं अनुसंधानकर्ता थे। मानवीय मूल्यों की स्थापना पर आचार्य द्विवेदी ने विशेष बल दिया है। अपनी रचनाओं के माध्यम से साहित्य, संस्कृति, प्रकृति-सौंदर्य, लोकजीवन और समसामयिक समस्याओं का समवेत रसास्वादन करवाने की उनमें अद्भुत क्षमता है। उनके निबंधों में उनके व्यक्तित्व की झलक मिलती है। उनके साहित्य में एक ओर भारतीय दर्शन और शास्त्रीय ज्ञान की गहराई है तो दूसरी ओर लोक जीवन के अनुभवों का संसार। जटिल गंभीर बातों को भी सरल-सुबोध भाषा और मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना द्विवेदी जी की विशेषता है।

23.2 उद्देश्य

हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध-साहित्य से संबंधित इस पाठ के अध्ययन से आप:

- आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- द्विवेदी जी के रचना-संसार के बारे में जान सकेंगे।
- द्विवेदी जी के निबंधों की विशेषताएँ जानकारी सकेंगे।

- द्विवेदी जी की सांस्कृतिक चेतन से अवगत हो सकेंगे।
- द्विवेदी जी के निबंधों की भाषा-शैली के बारे में जान सकेंगे।

23.3 मूल पाठ : हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध

23.3.1 जीवन परिचय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी (19 अगस्त 1907-19 मई 1979) का जन्म श्रावण शुक्ल एकादशी संवत 1964 अर्थात 19 अगस्त सन 1907 ई. को उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के आरत दुबे का छपरा, ओझवलिया नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री अनमोल द्विवेदी और माता श्रीमती ज्योतिष्मती था। इनका परिवार ज्योतिष विद्या के लिए प्रसिद्ध था। इनके पिता संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। द्विवेदी जी के बचपन का नाम व्योमकेश द्विवेदी था। उनके जनम के बाद उनके नाना जी को एक लंबी लड़ाई के बाद विजय प्राप्ति हुई थी और उसे उन्होंने नाती को दे दी। इस घटना के बाद उनका नाम बदलकर हजारीप्रसाद द्विवेदी कर दिया गया। पिताजी की प्रेरणा से द्विवेदी संस्कृत एवं ज्योतिष शास्त्र की के प्रति आकृष्ट हुए। बचपन में घर में ही उन्होंने संस्कृत सीखा।

उसी गाँव के स्कूल में उनकी प्रारंभिक पढ़ाई संपन्न हुई। 1920 में बसरिकापुर के मिडिल स्कूल से प्रथम श्रेणी में मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद उन्होंने गाँव के निकट ही पराशर ब्रह्मचर्य आश्रम में संस्कृत का अध्ययन प्रारंभ किया। आगे की पढ़ाई के लिए सन 1923 में वे बनारस गए। वहाँ रणवीर संस्कृत पाठशाला, कमच्छा से प्रवेशिका परीक्षा में प्रथम श्रेणी प्राप्त की। 1927 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय से हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी वर्ष भगवती देवी से उनका विवाह संपन्न हुआ। 1929 में इण्टरमीडिएट और संस्कृत साहित्य में शास्त्री की परीक्षा उत्तीर्ण की। 1930 में ज्योतिष विषय में आचार्य की उपाधि प्राप्त की। 8 नवंबर 1930 में द्विवेदीजी शांतिनिकेतन चले गए और वहाँ पर हिंदी का अध्यापन करने लगे। गुरुदेव रवींद्रनाथ और आचार्य क्षितिमोहन सेन के प्रभाव से साहित्य का गहन अध्ययन किया तथा लेखन कार्य में लगे रहे। लगभग बीस वर्षों तक शांतिनिकेतन में हिंदी का अध्यापन और हिंदी की सेवा करने के बाद जुलाई 1950 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में प्रोफ़ेसर और अध्यक्ष के रूप में उन्होंने कार्यभार संभाला। 1950-53 तक विश्वभारती विश्वविद्यालय की एक्जीक्यूटिव कौंसिल के सदस्य के रूप में योगदान दिया। 1952 में हिंदी साहित्य का आदिकाल विषय पर बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना में आचार्य की पाँच व्याख्यान माला का आयोजन किया गया था। 1954 में साहित्य अकादमी से प्रकाशित नेशनल बिब्लियोग्राफ़ी के निरीक्षक बने। 1955 में अखिल भारतीय हिंदी परिषद के अध्यक्ष पद पर मनोनीत हुए। 1957 में राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित हुए। 1960 में पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ में हिंदी के प्रोफ़ेसर व अध्यक्ष रहे। 1967 में पुन: काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी विभागाध्यक्ष रहे। 1968 में विश्वविद्यालय के रेक्टर पद पर उन्हें नियुक्त किया गया। लगभग दो वर्ष बाद अर्थात 25 फ़रवरी 1970 को इस पद से वे मुक्त हुए। इसी दौरान कुछ समय के लिए हिंदी का ऐतिहासिक व्याकरण योजना के निदेशक, उत्तरप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी के अध्यक्ष भी बने रहे।

1972 से आजीवन उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ के उपाध्यक्ष पद पर निरंतर अपनी सेवाएँ देते रहे। लखनऊ विश्वविद्यालय ने आचार्य द्विवेदी को डी.लिट की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया। 1973 में आलोक पर्व निबंध संग्रह के लिए उन्हें साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 4 फ़रवरी 1979 को पक्षाघात के शिकार हुए और 19 मई 1979 को ब्रेन ट्यूमर से दिल्ली में उनका निधन हो गया।

द्विवेदी जी ने बाल्यकाल से ही श्री व्योमकेश शास्त्री से कविता लिखने की कला सीखी। शांतिनिकेतन में इनकी प्रतिभा निखरने लगी। रवींद्रनाथ ठाकुर के संपर्क में आने से बांग्ला साहित्य का भी इन पर भरपूर असर पड़ा। सिद्ध साहित्य, जैन साहित्य एवं अपभ्रंश साहित्य को प्रकाश में लाकर तथा भक्ति साहित्य पर उच्चस्तरीय समीक्षात्मक ग्रंथों की रचना कर द्विवेदी जी ने हिंदी साहित्य की गरिमा को बढ़ाया है।

बोध प्रश्न

- हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का जन्म कहाँ हुआ?
- द्विवेदी जी के माता-पिता का नाम लिखिए।
- द्विवेदी जी शांतिनिकेतन किस वर्ष गए ?
- शांतिनिकेतन में द्विवेदी जी किनसे प्रभावित हुए थे?
- अपने बाल्यकाल में द्विवेदी जी ने किनसे कविता लिखने की कला सीखी थी?

23.3.2 विचारधारा एवं व्यक्तित्व

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी भारतीय संस्कृति और प्राचीन इतिहास के प्रति आस्थावान हैं। उनकी दृष्टि में भारतीय संस्कृति अत्यंत विशाल तथा कालातीत है, किसी धर्म, जाति या दल के दायरे में उसे सीमित नहीं किया जा सकता, वह संपूर्ण भारत में विद्यमान हैं। मानव एकता और मानवता के ज्योतिर्मय भविष्य के प्रति आश्वस्त आचार्य द्विवेदी जी विचारों से एक प्रकाण्ड विद्वान और जीवन के सही रूप के अन्वेषक दिखाई देते हैं। चिंतक, उन्मुक्त प्रवृत्ति और विनोदी स्वभाव उनके व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं। मानवीय मूल्यों की स्थापना पर उन्होंने विशेष बल दिया है। धोति और कुर्ता में उनका सादगीपूर्ण व्यक्तित्व बड़ा ही आकर्षक लगता है। उनकी बातचीत एवं व्यवहार में इतनी सादगी थी कि हर व्यक्ति उनका परमभक्त बन जाता। बातचीत के दौरान हँसी के फ़व्वारे छूटते। विद्वान होने का गर्व उनमें कतई नहीं था। सौम्य, सरल और शिष्ट व्यवहार में उनकी विद्वत्ता झलकती थी।

उनकी लेखनी से इतिहास अपनी जड़ता खोकर सतत प्रवाहित जीवनधारा लगती है। रवींद्रनाथ टैगोर के दृष्टिकोण एवं विचाराधारा से वे काफ़ी प्रभावित थे। आचार्य रामचंद्र शुक्ल की परंपरा के अध्ययन और चिंतन पक्ष को आगे बढ़ाने का स्तुत्य प्रयास किया है। विभिन्न विधाओं को समेटे उनके निबंध, इतिहास, संस्कृति, साहित्य और ज्ञान-विज्ञान की धारा को प्रवाहित करते हैं। उनके बहुआयामी साहित्यकार व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए डॉ. इंद्रनाथ मदान ने लिखा है- "आचार्य द्विवेदी ने भारतीय इतिहास का दोहन किया है, भारतीय साहित्य का मंथन किया है, रवींद्र साहित्य को आत्मसात किया है, कालिदास-साहित्य में रसपान किया है, आदिकालीन तथा मध्यकालीन साहित्य का अनुशील किया है और डॉ. द्विवेदी ने पाश्चात्य

साहित्य, ज्ञान-विज्ञान तथा भाषा विज्ञान का परिशीलन किया है, जिसके फ़लस्वरूप उनका दृष्टिकोण आचार्य शुक्ल की अपेक्षा अधिक व्यापक है। आचार्य शुक्ल की जीवन दृष्टि के मूल में भी समाज मंगल की भावना तथा समाज कल्याण की धारणा है जो कि काव्य सिद्धांतों को प्रभावित करती है, परंतु आचार्य द्विवेदी की समाज-मंगल-संबंधी जीवन दृष्टि पर रोमांटिक जीवन-बोध का कहीं गहरा प्रभाव पड़ा है।" (उद्धृत- हिंदी निबंध का इतिहास, मृत्युंजय उपाध्याय)। द्विवेदी जी ने निरंतर मानवीय मूल्यों की खोज की है जिसकी झलक उनकी रचनाओं में मिलती है ।

बोध प्रश्न

- आचार्य द्विवेदी जी किसके प्रति आस्थावान थे?
- द्विवेदी जी को प्रकाण्ड पंडित क्यों माना जाता है?
- द्विवेदी जी के व्यक्तित्व में समाज-मंगल की दृष्टि झलकती थी। सही कथन या गलत कथन? यदि सही है तो तर्क के साथ सिद्ध कीजिए।

23.3.3 साहित्यिक परिचय

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का रचना संसार बहुपक्षीय, बहुआयामी और विस्तृत है। उपन्यास, आलोचना, निबंध, इतिहास, कविता आदि अनेकों विधाओं में लेखन कार्य किया है । उनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं : सूर साहित्य (1936), हिंदी साहित्य की भूमिका (1940), प्राचीन भारत में कलात्मक विनोद (1940), साहित्य का मर्म (1941), कबीर (1942), बाणभट्ट की आत्मकथा (1947), नाथ सिद्धों की बानियाँ-संपादित (1947), अशोक के फू ल (1948), नाथ संप्रदाय (1950), कल्पलता (1951), हिंदी साहित्य का आदिकाल (1952), हिंदी साहित्य (1952), मेघदूत : एक पुरानी कहानी (1957), विचार प्रवाह (1959), मृत्युंजय रवींद्र (1962), रवींद्रनाथ ठाकुर, आलोक पर्व, चारु चंद्रलेख, विचार विमर्श, काव्य में लालित्य भावना (1963), नाट्यशास्त्र की भारतीय परंपरा और दशरूपक : संपादन (1963), कालिदास की लालित्य योजना (1965) पुनर्नवा, लाल कनेर-अनुवाद (1973), कुटज (1974), अनामदास का पोथा (1976) आदि। इनके अतिरिक्त कई संपदित किताबें, ज्योतिष संबंधी अनेक निबंध, डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी के साथ संदेश रासक (1960), पं. जगन्नाथ तिवारी के साथ अभिनंदन ग्रंथ काव्य शास्त्र, डॉ. नामवर सिंह के साथ संक्षिप्त पृथ्विराज रासो (1952) आदि। द्विवेदी जी का यह रचना संसार हिंदी साहित्य जगत के लिए अमूल्य निधि हैं।

बोध प्रश्न

- आचार्य द्विवेदी जी ने सूर साहित्य की रचना किस वर्ष की?
- द्विवेदी जी की किन्हीं चार रचनाओं के नाम लिखिए।
- द्विवेदी जी की रचनाओं की विषयवस्तु किस पर आधारित हैं?

23.3.4 हिंदी निबंध साहित्य और हजारीप्रसाद द्विवेदी

प्रिय छात्रो! अब तक आप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का परिचय, व्यक्तित्व तथा साहित्यिक लेखन की जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस पाठ का मुख्य उद्देश्य आप छात्रों को द्विवेदी जी के निबंधों से अवगत कराना है, अत: इस पाठ के अध्ययन से आप द्विवेदी जी के

निबंध लेखन, उसकी विशेषताएँ, भाषा-शैली आदि के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर पाएँगे।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी छायावादोत्तर काल के प्रसिद्ध निबंधकार हैं। वैसे, यदि देखा जाय तो हिंदी साहित्य में निबंध साहित्य का विभाजन आचार्य रामचंद्र शुक्ल को केंद्र में रखकर किया गया है जैसे शुक्ल पूर्व युग, शुक्ल युग तथा शुक्लोत्तर युग। इस दृष्टि से यदि देखें तो आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी शुक्लोत्तर युग के सशक्त, प्रौढ़ तथा अद्वितीय निबंधकार कहे जा सकते हैं। शुक्लोत्तर युग में सांस्कृतिक, साहित्यिक, समीक्षात्मक, ललित निबंध लिखने वालों में से द्विवेदी जी अग्रणी थे। वैसे देखा जाय तो आचार्य रामचंद्र शुक्ल की निबंधकला से प्रभावित होकर कई प्रतिभाशाली लेखक निबंधकार बने जिनमें से आचार्य नंददुलारे वाजपेयी, पं.विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल आदि उल्लेखनीय हैं। इसी श्रृंखला में आगे आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, शांतिप्रिय द्विवेदी, डॉ.नगेंद्र, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ.विनयमोहन शर्मा, प्रभाकर माचवे आदि उल्लेखनीय हैं।

द्विवेदी जी के निबंधों में विषय वैविध्यता देखी जा सकती है। संस्कृति,साहित्य से लेकर दैनंदिन जीवन की गतिविधियों, क्रिया-व्यापारों और अनुभूतियों को विषय वस्तु के रूप में द्विवेदी जी स्वीकार कर लेखनी करने में द्विवेदी जी सिद्धहस्त थे। वे निबंध को व्यक्ति की स्वाधीन चिंतन की उपज मानते थे। आचार्य शुक्ल के निबंधों में आत्मपरक संकेत यत्र-तत्र मिलेंगे किंतु द्विवेदी जी व्यक्तिगत बात की भी विषयगत व्याख्या करते हैं। जैसे कि- आम फ़िर बौरा हो गए, नाखून क्यों बढते हैं?, अशोक के फूल, शीरीष के फूल, मेरी जन्मभूमि, क्या आपने मेरी रचना पढ़ी?, जबकि दिमाग खाली है, व्योमकेश शास्त्रि उर्फ़ हजारीप्रसाद द्विवेदी शीर्षक निबंध देखे जा सकते हैं। उनके निबंधों की विशेषता पर डॉ.बच्चन सिंह जी का यह कथन है- “द्विवेदी जी छायावादोत्तर काल के सबसे महत्वपूर्ण निबंधकार हैं। उनके निबंधों में सांस्कृतिक विरासत के वर्चस्व के साथ नवीन जीवन बोध, उत्कृष्ट जिजीविषा और नई सामाजिक समस्याओं के बीच राह पाने की ललक सर्वत्र दिखाई पडती है। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व लचीला और निरंतर विकासमान है। देश के नई से नई गत्यात्मकता विचारधारा से वे अपने को ही जोड लेते हैं और इस प्रकार अपनी ऐतिहासिक दृष्टि को नए सिरे से समंजित करते रहते हैं। विद्वत्ता और सहृदयता का जो संयोग उनके निबंधों में मिलता है, वह सामान्यत: विरल होता है।“ (हिंदी साहित्य का इतिहास, सं.डॉ. नगेंद्र)। उपरोक्त कथन से द्विवेदी जी के निबंधों की विशेषता एवं विषयवस्तु का हम अंदाजा लगा सकते हैं। उनके निबंध हिंदी निबंध साहित्य के गौरवपूर्ण निधि है।

बोध प्रश्न

- हिंदी निबंध साहित्य को किसके नाम से और कैसे बाँटा गया है?
- शुक्लोत्तर युग के किन्हीं चार निबंध लेखकों के नाम लिखिए ।
- नाखून क्यों बढ़ते हैं किसका निबंध है?

23.3.5 द्विवेदी जी के निबंध

ऊपर यह बताया गया है कि द्विवेदी जी के निबंधों में विषय की वैविध्यता देखने को मिलती है। भारतीय संस्कृति, साहित्य, इतिहास, मानवीय अनुभूति आदि अनेकों वैविध्यमयी विषयों से उनका निबंध लेखन परिपूर्ण है। इस दृष्टि से उनके निबंधों को विवरणात्मक, वर्णनात्मक, भावात्मक, विचारात्मक आदि के अंतर्गत विभाजित किया जा सकता है।

विवरणात्मक निबंध के अंतर्गत ऐसे निबंध आते हैं जिसमें ऐतिहासिक सामग्री प्रस्तुत किया जाता है। जैसे- कलाओं की प्राचीनता, मुख प्रच्छालन और दातून, स्नान भोजन, दोलाविलास आदि। भारत का इतिहास, भारत के जन-जीवन की झांकी भी इस प्रकार के निबंधों में मिलेगी।

वर्णनात्मक निबंधों के अंतर्गत उनके सांस्कृतिक विषयों पर लिखे निबंध आते हैं। जैसे- भारतवर्ष की सांस्कृतिक समस्या, शव साधना, भारतीय फ़लित ज्योतिष, मेरी जन्म भूमि, शकुन-सूक्ति, दीपावली-मंगलेच्छा का पर्व आदि। भारतीय संस्कृति की उज्ज्वल परंपरा इन निबंधों में दिखती है। ये निबंध सांस्कृतिक मान्यताओं और धारणाओं के प्रदर्शक हैं और जीवंत संस्कृति का भी रेखांकन करते हैं।

भावात्मक निबधों में उनके वैयक्तिक या ललित निबंध अते हैं- जैसे आम फ़िर बौरा गए, शिरीष के फूल, बसन्त आ गया, अशोक के फूल, कुटज आदि। इन निबंधों में भावना, कल्पना और अनुभूति का समन्वय देखने को मिलता है। द्विवेदी जी का कवि हृदय इन्हीं निबंधों में मुखरित हुआ है।

विचारात्मक निबंधों में साहित्य समीक्षा विषयक निबंध आते हैं, जैसे समीक्षकों की समीक्षा, सहज भाषा का प्रश्न, भक्तों की परंपरा, कविता का भविष्य, रीतिकव्य, हिंदी को पंजाब की देन, हिंदी में शोध का प्रश्न, कवि प्रसिद्धियाँ, जैन साहित्य आदि। इस प्रकार के निबंधों में व्यावहारिक एवं शास्त्रीय समीक्षा का भव्यरूप विद्यमान है। स्वाधीन चिंतन के अतिरिक्त इन निबंधों में द्विवेदी जी का आलोचक रूप भी देखने को मिलता है।

द्विवेदी जी का लेखन सोद्देश्य है। वे साहित्य-मात्र को मनुष्य के संदर्भ में देखते हैं। उनके अनुसार साहित्य वस्तुत: मनुष्य का वह उच्छलित आनंद हिअ जो उसके अंतर में अँटाए नहीं अँट सका था। इस आनंद का आधार वे एकत्व की अनुभूति को मानते हैं। उनके अनुसार मनुष्य की चरम मनुष्यता-एकत्व की अनुभूति, संवेदना के आधार पर ही संभव है। यही संवेदना ललित कलाओं का प्राण है। उनका दृढ़ विचार है कि मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है। वे समस्त मानवीय चेतना को लक्षित करते हैं। और उनके निबंध में वे जिस मनुष्य की प्रतिष्ठा दिखाते हैं, वह सामाजिक मनुष्य है।

द्विवेदी जी के अनुसार व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज है निबंध। इसे स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं-"निबंधों के व्यक्तिगत होने का अर्थ यह नहीं कि उसमें विचार श्रृंखला न हो। ऐसा होने से तो वे प्रलाप कहे जाएंगे।' उनका यह भी कहना है कि निबंध लेखक विषय के संबंध में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए वैज्ञानिक तटस्थता का पालन नहीं कर सकता है। वह अपनी 'निजता' बनाए रखता है। यही कारण है कि उनके निबंधों में वार्तालाप, व्याख्यान, गप्प और

स्वगत चिंतन आदि के अतिरिक्त सामाजिकता, मनुष्य की असीम शक्ति और आस्था का समावेश भी है। शैली की मोहकता है। द्विवेदी जी की इन्हीं विशेषताओं पर प्रो. शिवनाथ ने लिखा है- “उनका मानववाद उपनिषदों का मानववाद है, रवींद्रनाथ का मानववाद है, जो मानव समाज में किसी प्रकार का भेद या वर्ग मानकर नहीं चलता, जो मानव कहने से सभी वर्गों के मानव को ग्रहण करता है। उनकी मानवता मानव समाज में जहाँ भी उत्पीडन देखती है, ढुलक पडने की पक्षपातिनी है, क्योंकि मानव-समाज के मध्य संचरित होने वाली एक ही आत्मा पर उनका विश्वास है, यह आत्मा आर्थिक दृष्टि से किए गए उच्च वर्ग में भी है, मध्य वर्ग में भी है और निम्नवर्ग में भी है। मानववाद की यह परिकल्पना ही जन-जन को जोडती है, मिलाती है, संवाद की स्थिति लाती है और भारतीयता को प्रोत्साहन देती है।”

आम के बौर, शिरीष के फूल, कुटज और अशोक के फूल को देखकर द्विवेदी जी के मन में जो विचार प्रवाह होता है, उसे कभी वे लोक परंपरा प्राप्त प्रवाद से संबंधित करते हैं, कभी भारतीय इतिहास के अधखुले भाग को कथाओं, सभ्यता और संस्कृति के विकास तंतुओं से संबंद्ध करके धर्म और साहित्यशास्त्र का विश्लेषण करते हैं। कालिदास और कबीर की मस्ती तथा फ़क्कड़पन से तुलना करते हुए वे कहते हैं-“कबीर बहुत कुछ इस शिरीष के समान ही थे मस्त और बेपरवाह पर सरस और मादक कालिदास भी जरूर अनासक्त योगी रहे होंगे। शिरीष के फूल फ़क्कडाना मस्ती से ही उग सकते हैं और मेघदूत का काव्य उसी प्रकार के अनासक्त, अनाविल, उन्मुक्त हृदय से उमड़ सकता है। जो कवि अनासक्त नहीं रह सका, जो फ़क्कड नहीं बन सका, जो किराए का लेखा-जोखा मिलाने में उलझ गया, वह भी क्या कवि है।” इसी प्रकार लोक परंपरा प्राप्त लोकतत्व का मूल्यांकन उन्होंने लोकदृष्टि से किया है, उस पर शास्त्र को हावी होने नहीं दिया है।

उनके ललित निबंधों में वाग्वैचित्र्य की सघनता है। वे सर्वत्र वक्रभंगिमा, हास्य, व्यंग्य और विनोद का सफ़लतापूर्वक निर्वाह करते हैं। ऋतुओं, पुष्पों, पादपों, पर्वों और स्थानों के पीछे सहस्रों वर्षों का मानव-इतिहास छिपा हुआ है, इन सबकी चर्चा वे बडे ही शिद्दत से करते हैं। जब वे इस प्रकार की चर्चा करते हैं तो कभी आर्द्र चित्त से, कभी उदास होकर, कभी विह्वलता से, कभी क्षोभ से तो कभी इतिहास के खंडहरों में पाठक को साथ लेकर रमने लगते हैं और पाठक कभी उसके ज्ञान से चकित होकर कभी अतीत में खोकर कभी उनकी व्याख्याओं और अनुमानों से तुष्ट होता हुआ अद्भुत आनंद का अनुभव करता है।“ (डॉ.रामचंद्र तिवारी) द्विवेदी का कथन है- मनुष्य थका है, वह रुका नहीं है। इस वाक्य मात्र से द्विवेदी जी के मनुष्य के प्रति जो विचार है उसका पता चलता है। इस प्रकार मानव-सत्य को प्रतिष्ठित करने वाले साहित्यकार हैं आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी के निबंधों को किस प्रकार विभाजित किया जा सकता है?
- द्विवेदी जी के ललित निबंधों की क्या विशेषता है?
- द्विवेदी जी ने निबंधों में मानव-सत्य को कैसे प्रतिष्ठित किया है?

23.3.6 द्विवेदी जी के निबंधों का संक्षिप्त विश्लेषण

अशोक के फूल, कुटज, शीरीष के फूल, देवदास, नाखून क्यों बढ़ते हैं, आम फ़िर बौरा गए, वसंत आ गया, वर्षा घनपति से घनश्याम तक आदि द्विवेदी जी के निबंधों में बहुज्ञता दिखाई देती है। कहीं वे कालिदास से तादात्म्य स्थापित करते हैं तो कहीं रहीम की बेकद्रदानी पर उनकी मन:स्थिति का विवेचन करते हुए, कहीं सिलवा लेवी के कथनों पर विचार करते हुए तो कहीं संस्कृत के पंडितों का हवाला देते हुए, कहीं अपनी ओर से वर्ण्य विषय से प्राप्त जीवन दृष्टि की मीमांसा करते हुए तो नज़र आते हैं। इस विवरण को स्पष्ट करने के लिए कुटज से कुछ उदारहरण प्रस्तुत है -

"जीना चाहते हो? कठोर पाषाण को भेदकर, पाताल की छाती चीर कर अपना भोग्य संग्रह करो, वायुमंडल को चूसकर, झंझा तूफ़ान को रगड़कर, अपना प्राप्य वसूल लो, आकाश को चूमकर, अवकाश की लहरी झूमकर, उल्लास खींच लो।"

"याज्ञवल्क्य ने जो बात धक्कामार ढंग से कह दी थी, वह अंतिम नहीं थी"

"जो समझता है कि वह दूसरों का अपकार कर रहा है, वह अबोध है, जो समझता है कि दूसरा अपकार कर रहा है, वह भी बुद्धिहीन है? मनुष्य जी रहा है, केवल जी रहा है, अपनी इच्छा से नहीं, इतिहास विधाता की योजना के अनुसार।"

अशोक के फूल निबंध में अशोक के फूल के माध्यम से द्विवेदी जी ने हजारों वर्ष पुरानी सांस्कृति यात्रा का दर्शन करवाते हैं। वे कहते हैं- "मुझे मानव-जाति की दुर्दम-निर्ममधारा के हजरों वर्ष का रूप साफ़ दिखाई दे रहा है। मनुष्य की जीवनी शाक्ति बडी निर्मम है, वह सभ्यता और संस्कृति के वृथा मोहों को रौंदती चली आ रही है। न जाने कितने धर्माचारों, विश्वासों, उत्सवों और व्रतों को धोती-बहाती यह जीवन-धारा आगे बढ़ी है। संघर्षों से मनुष्य ने नई शक्ति पाई है। हमारे सामने समाज का आज जो रूप है, वह न जाने कितने ग्रहण और त्याग का रूप है।" अशोक का वृक्ष जितना भी मनोहर हो, जितना भी रहस्यमय हो, जितना भी अलंकारमय हो, किंतु है तो वह सामंती सभ्यता का प्रतीक।

द्विवेदी जी कभी-कभी बहुत ही सामान्य लगने वाली बात पर भी प्रश्न कर बैठते हैं। और उसके माध्यम से संपूर्ण मानवता के विकास की यात्रा करते हुए यह दिखाते हैं कि आज के युग में भी मनुष्य की मूल प्रवृत्तियाँ जीवित हैं। नाखून क्यों बढ़ते हैं निबंध में उनका यह प्रश्न है- "नाखून क्यों बढते हैं? इस विषय पर चर्चा करते हुए अंत में बतौर समाधान कहते हैं - "नाखूनों का बढना मनुष्य की उस अंधसहजात वृत्ति का परिणाम है, जो उसके जीवन में सफ़लता ले आना चाहती है, उसको काट देना उस स्वनिर्धारित आत्म-बंधन का फ़ल है, जो उसे चरितार्थता की ओर ले जाती है।" इस निबंध में सफ़लता और चरितार्थता का अंतर स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं - "सफ़लता और चरितार्थता में अंतर है। मनुष्य मारणास्त्रों के संचयन से, बाह्य उपकरणों के बाहुल्य से उस वस्तु को पा भी सकता है जिसे उसने बड़े आडंबर के साथ सफ़लता का नाम दे रखा है। परंतु मनुष्य की चरितार्थता प्रेम में है, मैत्री में है, त्याग में है, अपने को सबके मंगल के लिए नि:शेष भाव से दे देने में है।"

इस प्रकार द्विवेदी जी के निबंधों में मानव के लिए कोई न कोई संदेश अवश्य रहता है।

परंपरा और आधुनिकता निबंध में आधुनिकता पर गहराई से विचार करते हुए उसके तीन लक्षण निर्धारित करते हैं और कहते हैं- "संक्षेप में कहा जाए तो आधुनिकता के तीन लक्षण बहुत स्पष्ट हैं। ऐतिहासिक दृष्टि, इसी दुनिया में मनुष्य को सब प्रकार की नीतियों और पराधीनता से मुक्त करके सुखी बनाने का आग्रह और व्यक्ति-मानव के स्थान पर समष्टि-मानव या संपूर्ण मानव-समाज की कल्याण कामना।" वे परंपरा और आधुनिकता को परस्पर पूरक मानते हैं। विरोधी नहीं। वे कहते हैं- परंपरा आधुनिकता को आधार देती है, उसे शुष्क और नीरस बुद्धि-विलास बनने से बचाती है, उसके प्रयासों को अर्थ देती है, उसे असंयत और विशृंखल उन्माद से बचाती है। ये दोनों परस्पर विरोधी नहीं, परस्पर पूरक हैं। क्या कहा जाए इसे। एक ओर परोक्ष सत्ता में विश्वास दूसरी ओर आधुनिकता की बौद्धिक व्याख्या। इसे विरुद्धों का सामंजस्य ही कहा जा सकता है।"

कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि द्विवेदी जी के निबंध जितने वैविध्यमयी उतनी ही गहरी और अर्थगर्भित है। पाठक के मन में अलग छाप छोड़ने तथा उसे सोचने पर मजबूर करती है।

द्विवेदी जी वर्तमान युग के मूर्धन्य रचनाकार एवं निबंधकार हैं। उनके साहित्य लेखन का केंद्र भाव मानव कल्याण है। उनकी लगभग सभी रचनाएँ मानव मात्र की भलाई एवं चिंतन से ओत-प्रोत रहते हैं। मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है नामक निबंध में वे इस दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं- "मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि में देखने का पक्षपाती हूँ।" वे मनुष्यता को सार्वभौम सत्ता मानते हैं और साहित्य का नियोजन मनुष्य मात्र की भलाई का साधन मानते हैं। इसी भाव को स्पष्ट करते हुए वे लिखते है- जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता परमुखापेक्षित से बचा न सके, जो उसके हृदय को पर दुख कातर और संवेदनशील न बना सके उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।"

इस प्रकार उनकी सोच पूर्णतया मानवतावादी है। सामाजिक संबंधों को वे महत्व देते हैं और यह मानते हैं कि सामाजिक संबंधों का प्रतीक भाषा है। पर भारत वर्ष में भारतीय भषाओं की उपेक्षा, लोक भाषा, जन भाषा का तिरस्कार द्विवेदी जी को अत्यधिक व्यथित किया होगा इसलिए - "फिर से सोचने की आवश्यकता है" नामक निबंध में उन्होंने लिखा है कि- "क्या करोडों की उपेक्षा करके कुछ थोडे से लोगों की सुविधा को बहुत बडा लाभ माना जा सकता है? क्या सचमुच स्वभाषा की उपेक्षा से देश महान बनेगा?" मेरी जन्मभूमि नामक निबंध में गाँव का वर्णन करते हुए सामाजिक समरसता की वे बात करते हैं। दीपावली : सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व नामक निबंध में सामाजिक मंगलेच्छा को शाश्वत विधान में चित्रित करते हैं।

भारतीय साहित्य एवं संस्कृति को निबंधों में अभिव्यक्ति देने में द्विवेदी जी प्रख्यात हैं अत: ललित निबंधकार के रूप में उनकी गणना की जाती है। अपने निबंधों में द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति एवं धर्म का विवेचन किया है। रामायण महाभारत के प्रसंगों की समीक्षा की गई है। कहीं वैदिक बौद्ध धर्म का निरूपण है तो कहीं योग मार्ग का गंभीर विवेचन। कहीं

ज्योतिष पर अपना अभिमत व्यक्त करते हैं तो कहीं केश-प्रसाधन, मुख प्रक्षालन, भोजनोत्तर विनोद पर टीका टिप्पणी करते हैं।

यही कारण है कि द्विवेदी जी के निबंधों में विविधता दृष्टिगोचर होती है। साहित्य, संस्कृति, राजनीति, क्रीडा, विलास, प्रसाधन, प्रकृति, कला, ऋतु-उत्सव, मनोविनोद आदि उनकी नजर से न बच पाए और इन सभी को समेटते हुए उन्होंने निबंधों की रचना की है। उनकी इतिहास दृष्टि जीवन दर्शन तथा सत्यान्वेषण से परिपूर्ण है। इस प्रकार के निबंधों में हृदय बुद्धि का संतुलन, मानवीय प्रेम का दर्शन होता है।

उन्होंने अपने निबंधों में संस्कृति के प्रश्न पर बडी गहराई से विचार किया है। उनका यह चिंतन भारतीय संस्कृति, हिंदू संस्कृति, आर्यसंस्कृति संबंधी दृष्टिकोण से ऊपर उठकर विश्वमानव संस्कृति से संबंध जोडता है। "संस्कृति किसी देश विशेष या जाति विशेष की अपनी मौलिकता नहीं" वे लिखते हैं- "मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति हैं।" सभ्यता और संस्कृति के संबंध पर विचार करते हुए वे लिखते हैं- ज्यों-ज्यों मनुष्य संघबद्ध होकर रहने का अभ्यस्त होता गया, त्यों-त्यों उसे सामाजिक संघटन के लिए नाना प्रकार के नियम कानून बनाने पडे। इस संघटन को दोषहीन और गतिशील बनाने के लिए उसने दण्ड और पुरस्कार की व्यवस्था भी की। इन बातों को एक शब्द में सभ्यता कहते हैं।"

इस प्रकार द्विवेदी जी की आप कोई भी रचना लें उसमें भारतीय संस्कृति, राष्ट्रप्रेम, मानवीय मूल्य की झलक आपको अवश्य मिलेगी।

निबंध के संबंध में द्विवेदी जी के विचार

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी ने अपनी रचना साहित्य सहचर में निबंधों के संबंध में अपना विचार व्यक्त किया है। उसी से कुछ अंशों को यहाँ प्रस्तुत किया गया है जिससे कि आप द्विवेदी जी के निबंध संबंधी विचारों को स्पष्ट रूप से समझ सकें। तो चलिए, द्विवेदी जी के निबंध संबंधी विचारों से अवगत हो लें -

निबंध क्या है? इस प्रश्न का समाधान वे इन शब्दों में करते हैं। प्राचीन संस्कृत साहित्य में निबंध नाम का एक अलग साहित्यांग है। इन निबंधों में धर्मशास्त्रीय सिद्धांतों की विवेचना है। विवेचना का ढंग यह है कि पहले पूर्वपक्ष में ऐसे बहुत से प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं जो लेखक के अभीष्ट सिद्धांत के प्रतिकूल पड़ते हैं। इस पूर्वपक्ष वाली शंकाओं को एक-एक करके उत्तरपक्ष में जवाब दिया जाता है। सभी शंकाओं का समाधान हो जाने के बाद उत्तरपक्ष के सिद्धांत की पुष्टि में कुछ और प्रमाण उपस्थित किये जाते हैं। चूँकि इन ग्रंथों में प्रमाणों का निबंधन होता है इसलिए इन्हें निबंध कहते हैं। इस शंका- समाधान-मूलक पक्ष स्थापन में लेखक की रुचि-अरुचि का प्रश्न नहीं उठता। वह प्रमाणों और उनके पक्ष या विपक्ष में उठ सकने वाले तर्कों से बंधा होता है। इसलिए इन निबंधों में निस्संगता ही प्रधानता रूप से वर्तमान रहती है।

निस्संगता का यह तात्पर्य बताते हैं कि किसी भी वस्तु की विशेषता उसे देखने की दृष्टि पर निर्भर करता है। एक सुंदर फूल इसलिए सुंदर लगता है क्योंकि वह द्रष्टा को सामंजस्य की ओर उन्मुख करता है। वैज्ञानिक विवेचन से सिद्ध हो सकता है कि फू ल और कोयला दोनों ही वस्तुत: एक ही वस्तु हैं, क्योंकि दोनों ही विद्युत अणुओं के जिन्हें इलेक्ट्रान और प्रोटान कहते हैं,

समन्वय है। यह निस्संग बुद्धि का विषय है और द्रष्टा की रुचि-अरुचि पर निर्भर करता है कि वह किस वस्तु को किस नजरिए से देख रहा है। वैज्ञानिक और रचनाकार की सोच में यहीं से भिन्नता दिखाई देती है। वैज्ञानिक कोयले को वैज्ञानिक दृष्टि से देखता है, लेकिन रचनाकार कोयले में भी सुंदरता का दर्शन करवाता है। आगे वे कहते हैं कि निबंधों का प्रचलन नया नहीं है। पुराने जमाने में किसी प्रतिपाद्य सिद्धांत के विरुद्ध जितने प्रमाण हो सकते थे, उनको एक-एक करके उठाना और उनकी समीक्षा करते हुए अपने सिद्धांत पर पहुँचना यही उनका कार्य था, परंतु नए युग में तर्कमूलक की अपेक्षा व्यक्तिगत अधिक हैं। ये व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज है।

23.3.7 द्विवेदी जी के निबंधों में भाषा

विषयानुकूल भाषा लिखने में द्विवेदी जी सिद्धहस्त हैं। संस्कृत, अपभ्रंश, अंग्रेजी, हिंदी, बांग्ला आदि भाषाओं पर अधिकार होने के कारण इनकी भाषा अत्यंत समृद्ध है। इनकी भाषा में संस्कृत की तत्सम शब्दावली, तद्भव, देशज तथा अन्य भाषाओं के शब्दों का प्रयोग अत्यंत कुशलता से हुआ है। भाषा को गतिशील और प्रवाहपूर्ण बनाने के लिए मुहावरे और लोकोक्तियों का खुलकर प्रयोग हुआ है। कहीं-कहीं संस्कृत शब्दों की अधिकता के कारण इनकी भाषा क्लिष्ट भी लगती है। किंतु शब्द चयन सार्थक एवं सटीक है। अरबी, फारसी तथा उर्दू के भी कई शब्द इनके निबंधों में मिलते हैं। भाषा में माधुर्य का समावेश करने के लिए उन्होंने देशज तथा ग्रामीण शब्दों का प्रचुरता से प्रयोग किया है।

23.3.8 द्विवेदी जी के निबंधों में शैली

द्विवेदी जी की रचनाओं में क्रमश: पाँच प्रमुख शैलियों को देखा जा सकता है जैसे-

अ) **विवेचन शैली** : द्विवेदी जी के विचारात्मक, साहित्य, समीक्षात्मक, निबंध विवेचन शैली में हैं। ऐसे निबंधों में तर्क-वितर्क, व्याख्या, निर्णय, परीक्षा सभी का समावेश मिलता है। विचारों की एक लंबी शृंखला क्रमबद्ध ढंग से नियोजित मिलती है। उदाहरण के लिए- "जो वस्तु हमें कला के नाम पर दी जा रही है वह हमारे भीतर मानवोचित गुणों को उद्‌बुद्ध करती है या नहीं। जो वस्तु हमारी मनुष्यता को उद्‌बुद्ध नहीं करती, वह कला हो ही नहीं सकती।" (सभ्यता और संस्कृति तथा अन्य निबंध, पृ. 87-88)

आ) प्रसाद शैली : ऐसे निबंधों में भाषा सरल और सीधे वाक्यों का प्रयोग होता है। अपनी बात सीधी-साधी ढंग से समझाई जाती है। इनमें द्विवेदी जी का व्यक्तित्व, प्यार, सहृदयता, अनुरोध उपस्थित हैं। उनके विवरणात्मक तथा वर्णनात्मक निबंध प्राय: इसी शैली के हैं। जैसे- " ज्योतिषी को सूर्यादि ग्रहाचार का खयाल रखना पडता था। कब कौन-सा ग्रह कैसा रंग पकड़ रहा है, उसकी प्रकृति, विकृति, प्रमाण, वर्ण, किरण, प्रकाश, संस्थान, अस्त, उदय, भिन्नपथ, वक्रता, ग्रहण, युति, आदि के शुभाशुभ फल को बताना पड़ता है।"

इ) व्यंग्य शैली : कुछ विचारात्मक तथा व्यक्तिपरक निबंधों में मीठी चुटकियाँ लेते हुए अत्यंत विनोदपूर्ण बातों का द्विवेदी जी ने प्रयोग किया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है- "आसमान में निरंतर मुक्का मारने में कम श्रम नहीं है और मैं निश्चित जानता हूँ कि रहस्यवादी आलोचना

लिखना कुछ हंसी खेल नहीं है। पुस्तक को छुआ तक नहीं, और आलोचना ऐसी लिखी कि त्रिलोक्य विकम्पित। यह क्या कम साधना है।" (क्या आपने मेरी रचना पढ़ी है)

ई) प्रवाह शैली : कुछ निबंधों में भाव और विचार ज्वार-भाटे की तरह उतार चढ़ाव लिए हुए हैं। ऐसे निबंधों में प्रवाह शैली स्पष्ट झलकती है। जैसे- "हाय ! हतभाग्य भारतवर्ष, तू आज शोच्य है। तुझे वह रत्न मिला था, जो देवताओं को भी नहीं मिला।"

उ) विक्षेप शैली : कहीं-कहीं भाव-विचार धारा प्रवाह न बहकर खंड-खंड होकर, रुक-रुककर अग्रसर हुई है। ऐसे निबंधों में उनकी कल्पना शक्ति तथा काव्यत्व का परिचय मिलता है। इसका एक उदाहरण देखें :

पेड़ क्या है, किसी सुलझे हुए कवि के चित्र का मूर्तमन्त छंद है-धरती के आकर्षण को अभिभूत करके लहरदार वितानों की शृंखला को सावधानी से सम्हालता हुआ, विपुल व्योम की ओर एकाग्रीभूत मनोहर छंद है। कैसी शान है, गुरुत्वाकर्षण के जड़-वेग को अभिभूत करने की कैसी स्पर्धा है-प्राण के आवेग की कैसी उल्लासकार अभिव्यक्ति है'। (देवदास-कुटज से)

इनके अतिरिक्त द्विवेदी जी की शैली में गवेषणात्मक, आलोचनात्मक, हास्य आदि शैलियों का समावेश भी मिलता है। विषयानुकूल भाषा और शैली के प्रयोग में वे सिद्धहस्त हैं।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी के निबंधों में किन-किन भाषाओं के शब्द मिलते हैं?
- द्विवेदी जी ने निबंधों में किन-किन शैलियों का समावेश हुआ है?

23.6 पाठ सार

हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधों से संबंधित इस पाठ के अध्ययन से आपने द्विवेदी जी के रचना संसार तथा रचनाधर्मिता से अवगत हो चुके होंगे। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार एवं पुरोधा हैं। भारतीय संस्कृति, इतिहास, धर्म, शास्त्र आदि सभी विषयों से संबंधित उनकी रचनाएँ हमें जीने की कला सिखाती हैं साथ ही मानवीय मूल्यों के बीज हमार अंतर्मन में बोते हैं। साहित्य का संबंध हृदय से होता है। द्विवेदी जी रचनाएँ पाठक के हृदय तंतुओं के अंदर अपना स्थान बनाने में सक्षम हैं। चूँकि द्विवेदी जी की रचनाएँ मानवीय मूल्यों से अनुप्राणित हैं। साहित्य के बारे में वे लिखते हैं- "हम किसी महान ग्रंथ को इसलिए महान नहीं कहते हैं कि किसी व्यक्ति ने उसे महान कह दिया है, बल्कि इसलिए कि उसके पढने से हम मानव जीवन को निविड़-भाव से अनुभव करते हैं। या तो हम उसमें अपने को ही पाते हैं या अपने इर्द-गिर्द के अनुभूत अर्थों की गाढ़ भाव से अनुभव करते हैं।" इस प्रकार के उच्च विचार तथा आदर्श भरे विचारों से द्विवेदी जी का रचना संसार भरा हुआ है। आदर्श मनुष्य, आदर्श जीवन, आदर्श समाज की स्थापना के लिए द्विवेदी जी की रचनाएँ सदा तैयार दिखेगी।

23.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं –

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी छायावादोत्तर काल के प्रमुख हिंदी साहित्यकार है।

2. द्विवेदी जी ने आलोचना, साहित्येतिहास, उपन्यास और काव्य रचना सहित निबंधकार के रूप में बड़ी मात्रा में साहित्य सृजन किया।
3. द्विवेदी जी ने हिन्दी में व्यक्तिव्यंजक और आत्मपरक निबंध की एक नई श्रेणी के रूप में ललित निबंध विधा का सूत्रपात किया।
4. द्विवेदी जी मनुष्य को साहित्य का चरम लक्ष्य मानते थे। उनके निबंधों का मुख्य उद्देश्य भी मनुष्य ही है।

23.6 शब्द संपदा

1. आत्मपरक लेखन = वह लेखन जिसमें लेखक का आत्म अर्थात निजीपन प्रमुख होता है
2. जिजीविषा = जीने की इच्छा
3. दोहन करना = दुहना
4. पक्षाघात = एक वातरोग जिसमें शरीर का दाहिना भाग बेकाम हो जाता है
5. बहुज्ञता = बहुत सारे विषयों की जानकारी देना/ जानकार होना
6. मीमांसा = गंभीरतापूर्वक तत्व निर्णय और विवेचन करना
7. रसास्वादन = आनंद की अनुभूति प्रदान करना
8. वाग्वैचित्र्य = बोलने की क्षमता, भाषण झाडने की क्षमता
9. समवेत = संपूर्ण, भरपूर
10. सिद्धहस्त = माहिर

23.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(आ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का जीवन परिचय लिखिए।
2. द्विवेदी जी के निबंधों पर संक्षिप्त लेख लिखिए।
3. द्विवेदी जी के निबंधों की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।
4. द्विवेदी जी के निबंधों में भारतीय संस्कृति का चित्रण हुआ है। अपना विचार व्यक्त कीजिए।
5. द्विवेदी जी के निबंधों के अध्ययन करने के बाद द्विवेदी जी के बारे में आपके मन में उभरने वाले भाव को अपने शब्दों में लिखिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के रचनाओं का नाम लिखिए।
2. पठित पाठ के आधार पर आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का परिचय दीजिए।
3. द्विवेदी जी के निबंधों में मानवीय मूल्य का दर्शन होता है। अपने शब्दों में विचार प्रस्तुत कीजिए।
4. द्विवेदी जी के निबंधों में प्रयुक्त भाषा की विशेषता पर प्रकाश डालिए।
5. प्रसाद शैली और व्यंग्य शैली की विवेचना कीजिए।
6. निबंध क्या है? द्विवेदी के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. द्विवेदी जी इनसे प्रभावित थे - ( )
   (अ) रवींद्रनाथ ठाकुर (आ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल (इ) दोनों
2. द्विवेदी जी इस युग के रचनाकार थे ( )
   (अ) द्विवेदी युग (आ) छायावादी युग (इ) छायावादोत्तर
3. कुटज इस कोटि का निबंध है ( )
   (अ) विचार प्रधान (आ) विवेचनात्मक (इ) ललित
4. अशोक के फूल में यह बोध है ( )
   (अ) इतिहास (आ) प्रकृति (इ) कोई नहीं
5. परंपरा और आधुनिकता इनका निबंध है- ( )
   अ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल आ) अचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी इ) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. हजारीप्रसाद द्विवेदी जी की पत्नी का नाम .... है।
2. हिंदी साहित्य की भूमिका ....वर्ष में लिखा गया है।
3. द्विवेदी जी को राष्ट्रपति ने ....उपाधि से सम्मानित किया।
4. द्विवेदी जी का जन्म ....गाँव में हुआ।
5. द्विवेदी जी के निबंधों का मूलतत्व ....है ।

III सुमेल कीजिए -

1. 1907	(अ) साहित्य अकादमी सम्मान
2. 1920	(आ) पद्मभूषण की उपाधि
3. 1923	(इ) जन्म
4. 1930	(ई) रेक्टर पद

5. 1952 (उ) ज्योतिष विषय में आचार्य की उपाधि
6. 1957 (ऊ) द्विवेदी जी की मृत्यु
7. 1968 (ए) मिडिल स्कूल उत्तीर्ण
8. 1973 (ऐ) हिंदी साहित्य का आदिकाल
9. 1979 (ओ) रणवीर संस्कृत पाठशाला में भर्ती

23.8 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनिधि हिंदी निबंधकार : हरिमोहन
2. हिंदी निबंध का इतिहास : मृत्युंजय उपाध्याय
3. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी - व्यक्तित्व और कृतित्व : सं. व्यासमणि त्रिपाठी
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : नगेंद्र
5. साहित्य सहचर : हजारीप्रसाद द्विवेदी
6. कुटज : हजारीप्रसाद द्विवेदी

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
Estd. 1998
MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

इकाई 24 : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी) की विवेचना

रूपरेखा

24.1 प्रस्तावना
24.2 उद्देश्य
24.3 मूलपाठ : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी) की विवेचना
24.3.1 'कुटज' की विषय वस्तु
24.3.2 ललित निबंध का स्वरूप
24.3.3 ललित निबंध के रूप में 'कुटज' का विश्लेषण
24.3.4 'कुटज' की भाषा एवं शैली
24.5 पाठ सार
24.6 पाठ की उपलब्धियाँ
24.7 शब्द संपदा
24.8 परीक्षार्थ प्रश्न
24.9 पठनीय पुस्तकें

24.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! बी.ए. चतुर्थ सत्र के हिंदी गद्य साहित्य से संबंधित पाठ्य पुस्तक के इकाई 24 के अंतर्गत आप आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी द्वारा रचित निबंध 'कुटज' की विवेचना का अध्ययन करेंगे। इससे पहले इकाई 23 में आपने हजारीप्रसाद द्विवेदी और उनके निबंध से संबंधित पाठ का अध्ययन कर चुके हैं और द्विवेदी जी के निबंध से संबंधित जानकारी प्राप्त कर चुके हैं। इस पाठ के अंतर्गत 'कुटज' का अध्ययन करेंगे जिससे प्रायोगिक स्तर पर आप हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध साहित्य की विवेचना कर पाएँगे। आप जानते हैं कि आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी शुक्लोत्तर युग के प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। निबंध, उपन्यास, आलोचना, चिंतनपरक, इतिहास, अनुसंधान आदि सभी विधाओं में द्विवेदी जी ने लेखनी चलायी है। अपनी लगभग सभी रचनाओं में द्विवेदी जी ने भारतीय संस्कृति को उजागर करते हुए मानवीय मूल्यों की स्थापना की है। जटिल गंभीर बातों को भी सरल-सुबोध भाषा और मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना द्विवेदी जी की विशेषता है।

'कुटज' के शीर्षक से द्विवेदी जी का एक निबंध संग्रह लोकभारती प्रकाशन से प्रकशित है। इसमें कुल 17 निबंध संकलित हैं जिनके शीर्षक क्रमश: इस प्रकार हैं - कुटज, राष्ट्रीय संकट और हमारा दायित्व, साहित्य में हिमालय की परंपरा, जीवेम शरद: शतम, अर्थार्षवाक, वैशाली, देवदारू, फिर से सोचने की आवश्यकता है, मानव धर्म, भारत की ऐक्य-साधना : साहित्य के क्षेत्र में, धार्मिक विप्लव और शास्त्र, गुरुनाक देव, हिंदी को पंजाब की देन, आत्मदान का संदेशवाहक-वसंत, दीपावली-सामाजिक मंगलेच्छा का प्रतिमा पर्व, हिंदी का वर्तमान और भविष्य, भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत-वेद। प्रस्तुत इकाई में आप इसके प्रथम निबंध 'कुटज' का अध्ययन करेंगे।

23.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबंध 'कुटज' पर आधारित इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'कुटज' की विषय वस्तु को समझ सकेंगे।
- ललित निबंध की दृष्टि से कुटज की अंतर्वस्तु की विवेचना कर सकेंगे।
- कुटज शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ बता सकेंगे।
- निबंध के तत्वों के आधार पर 'कुटज' का विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'कुटज' की भाषा तथा शैली की विवेचना कर सकेंगे।
- 'कुटज' के माध्यम से आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की विचारधारा को समझ सकेंगे।

24.3 मूल पाठ : 'कुटज' (हजारीप्रसाद द्विवेदी) की विवेचना

24.3.1 'कुटज' की विषय वस्तु

'कुटज' हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक ललित निबंध है। हजारीप्रसाद द्विवेदी की यह विशेषता रही है कि सामान्य से सामान्य दिखने वाली वस्तु में भी जान भर देते हैं और उससे मानव को संदेश देते हैं। 'कुटज' वास्तव में इसी प्रकार का एक माध्यम है। वास्तविकता यह है कि इसके माध्यम से द्विवेदी जी मानव को जीने की कला सिखाते हैं। कुटज को जीवधात्री के रूप में वे चित्रित करते हैं। कुटज को जीवन का प्रतीक बनाकर द्विवेदी ने प्रस्तुत किया है। वे लिखते हैं- "चारों ओर कुपित यमराज के दारुण निःश्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में रुद्ध अज्ञात जल-स्रोत से बरबस रस खींचकर अरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतार में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है, कितनी कठिन जीवन शक्ति है।" कठोर पाषाण सहकर भी कुटज शोभायमान है। जीने की प्रेरणा है।

कुटज के संघर्ष को दिखाते हुए वे मनुष्य को संघर्ष एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए प्रेरित करते हैं। वे लिखते हैं- शिवालिक की सूखी नीरस पहाडियों पर मुस्कुराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत हैं, अलमस्त हैं। इसमें उल्लिखित द्वंद्वातीत शब्द मनुष्य के लिए प्रेरणादायी है। लेखक यह संदेश देते हैं कि जब प्रकृति और वृक्ष के जीवन में द्वंद्व है तो मनुष्य का जीवन संघर्ष रहित कैसे हो सकता है। कुटज के नाम, रूप, उत्पत्ति आदि की शास्त्रीय अवधारणाओं पर विचार करते हुए लेखक कुटज के जीवंत रूप को प्रस्तुत करते हैं और उसके व्यक्तित्व का विश्लेषण करते नज़र आते हैं। अब कुटज केवल एक वृक्ष नहीं बल्कि व्यक्ति रूप में रूपांतरित एक व्यक्तित्व लगता है। कुटज का मानवीकरण किया गया है। जब पाठक की दृष्टि इस रूपांतरण से आत्मसात होती है तो फिर पाठक अवश्य ही भाव-विभोर हो उठता है।

कालिदास की इन पंक्तियों से निबंधकार कुटज की शुरुआत करते हैं- "कहते हैं, पर्वत शोभा-निकेतन होते हैं। फिर हिमालय क तो कहना ही क्या! पूर्व और अपर समुद्र-महोदधि और रत्नाकर-दोनों भुजाओं से थाहता हुआ हिमालय 'पृथ्वी का मानदण्ड' कहा जाय तो गलत क्या है? इसी हिमालय के पाद पर जो शृंखला फ़ैली हुई है, उसे शिवालिक कहा जाता है।

निबंध के प्रारंभ में निबंधकार उस स्थान विशेष की चर्चा करते हैं जहाँ कुटज का जन्म हुआ है, आविर्भाव हुआ है, उस जगह का नाम शिवालिक शृंखला है। हिमालय की निचली पहाड़ियों को शिवालिक शृंखला कहा जाता है। शिवालिक शब्द के अर्थ पर भी विचार करते हुए वे बताते हैं- 'शिवालिक या शिव के जटाजूट का निचला हिस्सा।' शिव की लटियायी जटा ही इतनी सूखी, नीरस और कठोर हो सकती है। यह पर्वत शृंखला शिव के जटाजूट के निचले हिस्से का प्रतिनिधित्व करती है। इसी शिवालिक शृंखला में कुटज का जन्म होता है, जिसकी भूमि पर हरियाली नहीं है, दूब भी सूख गई है, काली-काली चट्टानों के बीच थोडी-थोडी रेती है। यहीं पर कुटज उगता है। इस प्रकार के नीरस वातावरण में उगने के बावजूद यह वृक्ष कुटज पुष्पों से भरा होता है, जो सबके मन को मोह लेता है।

कुटज के स्थान और वातावरण की चर्चा करते हुए द्विवेदी जी कहते हैं- "ये जो ठिगने से लेकिन शानदार दरख्त गर्मी की भयंकर मार खा खकर और भूख प्यास की निरंतर चोट सहकर भी जी रहे हैं, इन्हें क्या कहूँ? सिर्फ़ जी ही नहीं रहे हैं, हँस भी रहे हैं! पाठक के लिए दो प्रश्न छोडते हैं- बेहया हैं क्या? या मस्तमौला? कहते हुए द्विवेदी जी व्यंग्य भी करते हैं और पाठक को सोचने के लिए मजबूर भी करते हैं। "कभी-कभी जो लोग ऊपर से बेहया दिखते हैं, उनकी जडें काफी गहरी पैठी रहती हैं। ये भी पाषाण की छाती फ़ाडकर न जाने किस अतल गह्वर से अपना भोग्य खींच लाते हैं।" अर्थात कुटज ऊपर से बेहया नज़र आता है, उसकी जडें गहरी हैं।

कुटज का स्वरूप अद्‌भुत है। ये वृक्ष इतनी कठिनाई के बीच भी मुस्कुराते रहते हैं। वैसे देखा जाय तो कुटज कोई प्रसिद्ध, प्रख्यात जाना-पहचाना नाम भी नहीं है। "न नाम, न कुल, न शील, पर लगता है ये हमें अनादि काल से जानते हैं।" द्विवेदी जी उसके नाम-रूप की भी चर्चा करते हुए लिखते हैं- बड कौन है? रूप या नाम? इसके उत्तर में वे बताते हैं कि "नाम इसलिए बडा होता है कि उसे सामाजिक स्वीकृति मिली होती है।" "रूप व्यक्ति सत्य है, नाम समाज सत्य।"

इस प्रकार कुटज के माध्यम से द्विवेदी जी बहुत महत्वपूर्ण बिंदुओं की व्यंजना करते चलते हैं। यदि आपने कुटज शब्द के अर्थ को जाना है तो कुटज के अध्ययन से पहले आप यही सोचेंगे कि लेखक ने कुटज नामक एक वृक्ष का वर्णन किया होगा। किंतु जब आप कुटज को पढ़ना शुरु करेंगे तो आपकी यह धारणा बदल जाएगी। आप स्वयं कुटज के स्थान पर अपने-आप को महसूस करेंगे। फिर आप विश्वास करने लगेंगे कि कुटज तो बस बहाना है। उसके मध्यम से निबंधकार मनुष्य के बारे में, उसके जीवन, उसकी परंपरा, उसका इतिहास, उसका संघर्ष, उसका भविष्य आदि सभी के बारे में बात कर रहे हैं।

उन्हें इस बात का दुख भी है कि संस्कृत साहित्य में तथा कवियों ने इस वृक्ष की अवहेलना भी की है। इस संदर्भ में रहीम को याद करते हैं। वे लिखते हैं- "रहीम को मैं बडे आदर के साथ स्मरण करता हूँ। दरियादिल आदमी थे, पाया सो लुटाया। लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फेंक देती है। सुना है, रस चूस लेने के बाद रहीम को भी फेंक दिया गया। एक बादशाह ने आदर के साथ बुलाया, दूसरे ने फेंक दिया! हुआ ही करता है। इससे रहीम का मोल घट नहीं जाता। उनकी फक्कडाना मस्ती कहीं गई नहीं। अच्छे

भले कद्रदान थे। लेकिन बडे लोगों पर भी कभी-कभी ऐसी वितृष्णा सवार होती है कि गलती कर बैठते हैं। मन खराब रहा होगा, लोगों की बेरूखी और बेकद्रदानी से मुरझा गए होंगे-ऐसी ही मन:स्थिति में उन्होंने बिचारे कुटज को भी एक चपत लगा दी। झुंझलाए थे, कह दिया-

वे रहीम अब बिरछ कहँ, जिनकर छाँ गंभीर।
बागन बिच-बिच देखियत, सेंहुड़, कुटज करीर॥

कुटज अदना सा बिरछ हो। छाँह ही क्या बडी बात है, फ़ूल क्या कुछ भी नहीं? छाया के लिए न सही, फ़ूल के लिए तो कुछ सम्मान होना चाहिए। उन्होंने यह भी लिखा है कि- कुटज के पुष्प यक्ष के तब काम आते हैं जब उन पथरीली पहाड़ियों पर और कोई फ़ूल का पौधा न था। द्विवेदी जी ने कुटज को एक व्यक्तित्व रूप में देखा है, अत: व्यक्तित्व चाहे किसी का भी उसका सम्मान तो होना ही चाहिए।

द्विवेदी जी यहीं तक नहीं रुकते। निबंध में वे आगे कुटज शब्द की व्युत्पत्ति के तह तक भी पहुँचते हैं। गिरिकूट पर उत्पन्न होने के कारण यह कुटज है। अर्थात गिरिकूट पर जन्म लेने वाला। एक दूसरी व्युत्पत्ति है, कुटज अर्थात जो कुट से पैदा हुआ है। कुट के दो अर्थ हैं : 1) घड़ा 2) घर। तब क्या कुट घडे से उत्पन्न हैं? घडा क्या गमका है? हो तो भी कुट का अर्थ इन दोनों से मेल नहीं खाता। संस्कृत में कुटहारिका और कुटकारिका दासी को कहते हैं। क्यों कहते हैं! कुटिया य अकुटीर शब्द भी कदाचित इसी शब्द से संबद्ध है। क्या इस शब्द का अर्थ घर ही है? घर में कम-काज करने वाली दासी कुटकारिका और कुटहरिका कही जा सकती है। एक जरा गलत ढंग की दासी कुटनी भी कही जाती है। संस्कृत में उसकी गलतियों को थोड़ा अधिक मुखर बनाने के लिए उसे कुट्टनी कह दिया गया। अगत्स्य मुनि भी नारदजी की तरह दासी के पुत्र थे क्या? घड़े में पैदा होने का तो कोई तुक नहीं है, न मुनि कुटज के सिलसिले में, न फूल; कुटज के। फूल गमले में होते अवश्य हैं, पर कुटज तो जंगल का सैलानी है। उसे घड़े या गमले से क्या लेना-देना?

द्विवेदी जी इसे आग्नेय भाषा परिवार का मानते हैं जो आस्ट्रो-एशियाटिक परिवार का नाम होगा। अब इसे कोल परिवार की भाषा कहते हैं। हो सकता है यह सहब्द इस परिवार का हो। इस शब्द का अर्थ पूई तरह से द्विवेदी भी नहीं बता पाए हैं। वे इतना अवश्य मानते हैं कि यह शब्द आर्य जाति का तो नहीं जान पड़ता। संस्कृत में दूसरी भाषा के शब्द के प्रवेश का कथन कहते हुए वे संस्कृतियों के समन्वय की स्वाभाविक प्रक्रिया का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

कुटज शब्द की व्युत्पत्ति के बाद वे कुटज की विशेषताओं का बखान करते हैं। इस प्रकार के वर्णन में द्विवेदी जी का ललित भाव और ललित भाषा प्रवहमान हुई है। कुटज की पहली विशेषता है, उसकी अपराजेय जीवनी शक्ति। यह नाम-रूप दोनों में है। कितने ही नाम आए और चले गए पर संस्कृत साहित्य में यह नाम जम कर बैठा है। कालिदास को मेघ की अर्चना के लिए कुटज पुष्प ही तो मिले थे। इसीलिए द्विवेदी जी ने उसे गाढ़े का साथी कहा है। अर्थात मुसीबत में साथ देने वाला। कुटज एक ऐसा साथी है जो कठिन दिनों में साथ रहा है। कालिदास ने अपनी रचना में जब रामगिरी पर्वत पर यक्ष को बादल से अनुरोध करने भेजा था तो वहाँ कुटज का ही पेड़ विद्यमान था। उस समय में कुटज के फूल ही उसके काम आए थे। ऐसे स्थान पर जहाँ दूब तक पनप नहीं पाती है। यक्ष ने कुटज के फूल चढ़ाकर ही मेघ को प्रसन्न किया था।

नाम के साथ रूप भी अपराजेय शक्ति के साथ विद्यमान है। द्विवेदी जी के शब्दों में- "चारों ओर कुपित यमराज के दारुण नि:श्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में अवरुद्ध अज्ञात जल-स्रोत से बरबस रस खींचकर अरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतार में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है, कितनी कठिन जीवन शक्ति है। प्राण को प्राण पुलकित करता है, जीवनी शक्ति ही, जीवनी शक्ति को प्रेरणा देती है।" अपराजेय जीवनी शक्ति की व्याख्या उपर्युक्त प्रसंग करता है। यह जीवनी शक्ति है जो गर्म हवाओं में भी रूप को मलिन नहीं होने देती। यह जीवनी शक्ति ही है जो पत्थर को फोड़कर बहुत गहराई से रस निकाल लाती है और तमाम विपदाओं और कठिनाइयों के बीच में जीवंत बनाए रखती है। यह सत्य कुटज के माध्यम से मनुष्य की अपराजेय जीवनी शक्ति की व्याख्या भी है। इसके कारण ही आनंद भी है और जीवन की प्रेरणा भी। यही कुटज की अभिव्यक्ति है।

कुटज के इस रूपांतरण को समझने पर ही निबंध के आशय को समझ पाएँगे। ऐसा प्रतीत होता है, मानो द्विवेदी जी सीधे मनुष्य से संबोधित कर रहे हों। वे पूछते हैं- जीना चाहते हो? कठोर पाषाण को भेदकर, पाताल की छाती चीरकर अपना भोग्य संग्रह करो, वायुमंडल को चूसकर झंझा तूफान को रगड़कर अपना प्राप्य वसूल लो, आकाश को चूमकर अवकाश की लहरी में झूमकर उल्लास खींच लो। यही कुटज का उपदेश है।

द्विवेदी जी का यह वर्णन तथा भाषा प्रयोग उनकी निजी विशेषता रही है। कुटज सिर्फ माध्यम है। यह द्विवेदी जी की आत्माभिव्यंजना ही है जो झरने की भाँति फूट रही है। वे जीवन को कला और तपस्या दोनों मानते हैं। जीवन की कला क्या है और तपस्या क्या है? वे इसे भी स्पष्ट करते हैं।

जीवन जीना अर्थात केवल जीवित रहना नहीं है। जियो तो प्राण ढाल दो जिंदगी में, ढाल दो जीवन रस के उपकरणों में। वे यह सवाल भी करते हैं - लेकिन क्यों? सारा संसार केवल स्वार्थ के लिए जीवित है। याज्ञवल्क्य का उदाहरण देकर इसे स्पष्ट करते हैं। "याज्ञवल्क्य बहुत बडे ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के इए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती, सब अपने मतलब के लिए होते हैं- आत्मस्तुकामाय सर्व पियं भवति! यह तर्क कुछ विचित्र लगने पर भी पश्चिम के हाब्स और हेल्वेशियस जैसे विचारकों ने भी इस बात को स्वीकारा है। द्विवेदी जी स्वार्थ की शास्त्रगत चर्चा करते हुए दुखी होकर कहने लगते हैं- दुनिया में त्याग नहीं है, प्रेम नहीं है, परार्थ नहीं है, परमार्थ नहीं है- है केवल प्रचंड स्वार्थ। इसी स्वार्थ के साथ वे जिजीविषा की भी चर्चा करते हैं। भीतर की जिजीविषा - जीते रहने की प्रचण्ड इच्छा- ही अगर बडी बात है तो फिर यह सारी बडी अब्डी बोलियाँ, जिनके बल पर दल बनाए जाते हैं, शत्रुमर्दन का अभिनय किया जाता है, झूठ हैं। इसके द्वारा कोई-न-कोई अपना बड़ा स्वार्थ सिद्ध करता है। अपनी बात को स्वार्थ और जिजीविषा से भी आगे की ओर ले चलते हैं और कहते हैं कि इन दोनों से भी बढ़कर कोई शक्ति है, जिसे वे समष्टि बुद्धि कहते हैं। अर्थात समष्टि का स्वार्थ ही सबसे बड़ी शक्ति है। समष्टि और सर्व के लिए अपने आपको पूरा दे देना ही पूर्ण सत्य है।

इसी पूर्ण सत्य की स्थापना के लिए वे कुटज को सामने लाते हैं। भावात्मकता और प्रवाहमयता के साथ वे कुटज की बात करते हैं- कुटज क्या केवल जी रहा है। वह दूसरे के द्वार पर भीख माँगने नहीं जाता, कोई निकट आ गया तो भय के मारे अधमरा नहीं हो जाता, नीति और धर्म का उपदेश नहीं देता फि रता, अपनी उन्नति के लिए अफ सरों का जूता नहीं चाटता फि रता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की खुशामद नहीं करता। आत्मोन्नति हेतु नीलम नहीं धारण करता, अंगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दाँत नहीं निपोरता, बगले नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है, काहे वास्ते, किस उद्देश्य से? कोई नहीं जानता मगर कुछ बडी बात है। स्वार्थ के दायरे से बाहर की बात है। भीष्म पितामह की भाँति अवधूत की भाषा में कह रहा है, 'चाहे सुख हो या दुख, प्रिय हो या अप्रिय, जो मिल जाए उसे शान के साथ, हृदय से बिल्कुल अपराजित होकर सोल्लास ग्रहण करो। हार मत मानो।'

इस निबंध में 'दलित द्राक्षा की भाँति निचोड़कर दे देना' को ही 'कुटज का मूर्त रूप' के रूप में व्याख्यायित किया गया है। केवल जीना और स्वार्थ के साथ जीना नहीं चाहिए। स्वार्थ के कारण ही झुकना पड़ता है। खुशामद करनी पड़ती है, ढोंग करना पड़ता है। इस प्रकार के कई निंदनीय कार्य करना पड़ता है। कुटज इन सबसे विलग होकर जीता है। वह हृदय से अपराजेय होकर जीता है। वह अपने लिए नहीं जीता, सबके लिए जीता है, वह सुख में दुख में, प्रिय-अप्रिय में सब स्थितियों में जो भी मिल जाए-सुख मिले या दुख, प्रिय मिले या अप्रिय सबको आनंद के साथ ग्रहण करता है। यही अवधूत भाषा है। कुटज निर्भय है। कुटज की तीन विशेषताओं का उल्लेख करते हैं- अकुतोभया वृत्ति, अपराजित स्वभाव और अविचल जीवन दृष्टि।

इतना ही नहीं, वे कुटज को मिथ्याचारों से भी मुक्त मानते हैं। निबंध के अंतिम चरणों में द्विवेदी जी की मान्यताएँ प्रबल और स्पष्ट दिखाई देती हैं। ये मान्यताएँ भारतीय चिंतन के मुक्तकण हैं। प्रथम, व्यक्ति न किसी का उपकार कर सकता है, न अपकार। दूसरी, मनुष्य केवल जी रहा है। यह जीना इतिहास विधाता की इच्छा और योजना के अनुसार है। तीसरी, मनुष्य के द्वारा किसी को न सुख पहुँचाया जा सकता है न दुख। सुख पहुँच जाए यह अच्छी बात है, इस पर अभिमान नहीं करना चाहिए। सुखी वह है जिसका मन वश में है और दुखी वह है जिसका मन वश में नहीं है। सुख और दुख मन के विकल्प हैं। जिसका मन वश में नहीं है वह छल-छंद रचत है। धोखा देता है। कुटज इन सबसे मुक्त है। इसी बात को, यही संदेश द्विवेदी जी कुटज के माध्यम से पहुँचाते हैं। कुटज को प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं कि कुटज वैरागी है। राजा जनक की तरह संसार में रहकर भोगों को भोगकर भी उनसे मुक्त। कुटज अपने मन पर सवारी करता है, मन को अपने पर सवारी करने नहीं देता।

अंतत: यह कह सकते हैं कि द्विवेदी जी ने कुटज वृक्ष को केंद्र में रखकर मानव को जीवन की कला का पाठ पढ़ाते हैं। यह अपने आप में चिंतन का सिद्ध रूप है। इसकी प्राप्ति के लिए स्वचिंतन के साथ मन को वश में करना जरूरी है। मन पर लगाम डालना अनिवार्य है। स्वार्थ को त्यागकर, व्यष्टि हित की परिधि से बाहर निकलकर समष्टि चेतना को सिंचित करना इस निबंध का परम उद्देश्य है। यही इस निबंध की विषय वस्तु है, यही सार है, यही प्रतिपाद्य है।

बोध प्रश्न

- कुटज क्या है?
- कुटज का जन्म कहाँ होता है?
- शिवालिक के बारे में द्विवेदी जी का क्या कथन है?
- कुटज मानव को क्या सिखाती है?
- कुटज किस पर सवारी करता है।
- कुटज के वृक्ष को रस कहाँ से मिलती है?
- कुटज के संबंध में रहीम की दो पंक्ति लिखिए।

24.3.2 ललित निबंध का स्वरूप

प्रिय छात्रो! 'कुटज' के विश्लेषण से पहले 'ललित निबंध' के बारे में कुछ जानकारी जरूरी है। हिंदी में ललित निबंध विधा का सूत्रपात हजारीप्रसाद द्विवेदी जि ने ही किया। उन्हें इस विधा का जनक कहा जाता है। यह विधा वस्तुपरक निबंध से अलग है। ललित निबंध एक व्यक्तिप्रधान, व्यक्तित्व प्रधान अथवा व्यक्तिगत और आत्मपरक निबंध होता है, जिसमें काव्यात्मक भाषा का प्रयोग होता है। कल्पना प्रवणता और मन की उन्मुक्त भटकन आदि ललित निबंध की पहचान है। मन की मौज या फक्कड़पन, अखंड विश्व दृष्टि आदि इस प्रकार के निबंधों की विशेषता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के अतिरिक्त अज्ञेय, शिवप्रसाद सिंह, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, विवेकी राय और विश्वनाथ अय्यर आदि लेखकों का इस विधा को समृद्ध करने में प्रमुख योगदान है। एक समर्थ निबंधकार की यही विशेषता होती है कि वह अपने विचारों में से बहुत कुछ स्वयं छांट देता है। प्रस्तुत के विषय में सब कुछ न कहकर अप्रस्तुत से उसको जोडने के लिए केवल उन्हीं अंशों को उभारता है, जो व्यापक और गहराई लिए हुए हैं।

ललित निबंध लेखक की प्रेरणा का बहुत बडा आधार है उसका बहुश्रुत होना। बहुश्रुत का अर्थ किताबी कीड़ा या शास्त्रों का जानकार मात्र होना नहीं है, वरन ज्ञान के विविध स्रोतों से रस ग्रहण करने वाला हो और उन विभिन्न प्रकार के रसों एमं प्रवाहशीलता के दर्शन का अभ्यासी हो। ऐसे निबंध में अनुभव की यात्रा के दर्द हों और उनसे जुडे अपरिहार्य संदर्भ सूत्र भी। फलत: कहीं वह समसामयिकता से जुडेगा और कहीं लोकधुन, लोक संस्कृति, ऐतिहासिक, पौराणिक आदि। कुलमिलाकर कह सकते हैं कि भावना और विचार का एक सहज समन्वय ललित निबंध का वैशिष्ट्य है। यह समन्वय पाठक के हृदय को द्रवीभूत भी करता है और उसकी बुद्धि को प्रेरित भी करता है। कुटज में द्विवेदी जी शास्त्र और भाव दोनों का अश्रय लेकर ललित शैली में तथ्य और सत्य को आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं। कुटज एक फ़ूलों वाला वृक्ष है पर उसका मानवीकरण करते हुए, द्विवेदी जी ने उसे मित्र, सखा और उससे भी अधिक एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

बोध प्रश्न

- ललित निबंध से आप क्या समझते हैं?
- ललित निबंध में बुद्धि पक्ष को अधिक महत्व दिया जाता है। यह कथन सही है या गलत?
- कुटज निबंध में द्विवेदी जी ने तथ्य और सत्य का उद्घाटन किया है। यह सही है या गलत?

24.3.3 ललित निबंध के रूप में कुटज का विश्लेषण

छात्रो! ऊपर ललित निबंध पर जो चर्चा की गई है, उसके अध्ययन से आप जान चुके होंगे कि ललित निबंध एक विशेष प्रकार का निबंध है जिसमें भाव एवं विचार दोनों का समावेश होता है। द्विवेदी जी के निबंधों में भाव और विचार दोनों का समावेश बराबर रहता है। द्विवेदी जी का पांडित्य भी बराबर उनके साथ रहता है। निबंध लेखन में आत्मीयता, स्वच्छंदता, सरलता, आडम्बरहीनता, घनिष्ठता आदि के साथ लेखक का वैयक्तिक दृष्टिकोण झलकता है। निबंध एक ऐसी कलाकृति है जिसके नियंमों का निर्माता स्वयं लेखक ही होता है। इसके लिए लेखक को परिपक्क, विचारशील तथा गंभीर व्यक्तित्व का होना अवश्यक है तभी निबंध लेखक की निकटता और आत्मीयता वास्तविक होती है। वस्तुत: ललित निबंध चिंतन प्रधान होते हैं, किंतु लेखक अपनी प्रकृति, स्वभाव, परिस्थिति के अनुकूल भावना को प्रधानता देते हैं। हजारीप्रसाद द्विवेदी जी शास्त्र और भाव दोनों का आश्रय लेकर निबंधों का लेखन करते हैं। कुटज भी इसी प्रकार का एक ललित निबंध है जिसमें शास्त्र,भाव तथ्य सत्य को आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करते हैं। कुटज जैसे फूलों से लदे वृक्ष का मानवीकरण करते हुए उसे मित्र सखा और उससे अधिक आदर्श रूप में प्रस्तुत करते हुए मानव को जीवन का संदेश देते हैं।

लेखक कुटज की विशेषताओं को बताने से पहले उस भूमि पर प्रकाश डालते हैं जहाँ वह उगता है। यह स्थान हिमालय की पर्वत शृंखलाएँ जिन्हें शिवालिक कहा जाता है। शिवालिक के विश्लेषण में लेखक ने स्थूल वर्णन न करते हुए भावमूलक वर्णन किया है। शिवालिक पर एक आत्मीय विश्लेषण लेखक ने किया है। भाषा भी रोमांचक और प्रवाहमयी है। शिवालिक की चर्चा करते हुए वे कुटज के अस्तित्व को भी मजबूत करते जाते हैं इसलिए वे कहते हैं- “शिवालिक की सूखी नीरस पहाड़ियों पर मुस्कुराते हुए ये वृक्ष द्वंद्वातीत है।” इस वर्णन के माध्यम से लेखक इस बात पर बल देते हैं कि इस वृक्ष का जीवन सामान्य नहीं है वरन कठोर परिस्थितियों में भी वह जीवंत है, सिर्फ़ जी नहीं रहा है, बल्कि हँस भी रहा है।

स्थान वर्णन के बाद लेखक नाम और रूप की सैद्धांतिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, कुटज शब्द की भाषाशास्त्र के अनुसार व्याख्या भी करते हैं। यह विश्लेषण शुष्क और नीरस न होकर भाव को भी समन्वित करती हुई चलती है। हृदय और बुद्धि का समन्वय इस निबंध की विशेषता है। ऊपर बताया गया है कि द्विवेदी जी ने इस निबंध में कुटज का मानवीकरण किया है। यह पुरुष विशेष है। कुटज के वर्णन करने हेतु वे संस्कृत साहित्य का भी सहारा लेते हैं। संस्कृत के कालिदास का मेघदूत और कुटज के पुष्पों का अर्घ्य के बीच के संबंध को बड़े ही मनोहारी ढंग से द्विवेदी जी ने अभिव्यक्त किया है। उनका कहना है कि जिस पुष्प को कालिदास ने उपयोग किया उसको तो ज्यादा सम्मान एवं इज्जत मिलनी चाहिए। इस संदर्भ में निबंधकार रहीम को याद करते हुए कहते हैं कुछ कवियों ने इसे न सम्मान दिया, छाँव न सही इसके पुष्पों को तो सम्मान मिलनी ही चाहिए। यहाँ पर द्विवेदी जी इस सत्य का उद्घाटन करते दिखते हैं कि मनुष्य को हर हाल में जो सम्मान मिलना है, उसे मिलना ही चाहिए। लेकिन दुनिया है कि मतलब से मतलब है, रस चूस लेती है, छिलका और गुठली फ़ेंक देती है।

इस प्रकार निबंधकार कुटज के साथ निकटता से जुडते जाते हैं और पाठक को भी सम्मोहित किए जाते हैं। कुटज से उनके संतप्त चित्त को सांत्वना मिलती है। बड़्भागी फ़ूल है यह! धन्य हो कुटज, तुम गाढ़े के साथी हो आदि वर्णनों से कुटज के महत्व का प्रतिपादन करते हैं।

भाषाशास्त्री होने के कारण वे कुटज के आविर्भाव और व्युत्पत्ति के तह तक चर्चा करते हैं। उसकी प्राचीनता, उसका भाषा परिवार, उसकी व्युत्पत्ति उसके विविध आयामों पर शास्त्रोक्त मीमांसा करते हुए द्विवेदी जी प्रकृति लालित्य के मध्य उसकी पुन: प्रतिष्ठा करते प्रतीत होते हैं। वे लिखते हैं- मगत कुटज है कि संस्कृत की निरंतर स्फ़ीयमान शब्द राशि में जो जमके बैठा सो बैठा ही है। चारों ओर कुपित यमराज के दारुण विश्वास के समान धधकती लू में यह हरा भी है और भरा भी है, दुर्जन के चित्त से भी अधिक कठोर पाषाण की कारा में अवरुद्ध अज्ञात जलस्रोत से बरबस रस खींचकर सरस बना हुआ है और मूर्ख के मस्तिष्क से भी अधिक सूने गिरि कांतर में भी ऐसा मस्त बना है कि ईर्ष्या होती है। कितनी कठिन जीवन शक्ति है। कुटज को जीवन शक्ति के महत्तम प्रतीक के रूप में भी द्विवेदी जी चित्रित करते हैं। इस प्रकार गंभीर चिंतन को भी हृदय के धरातल पर प्रस्तुत करना उनकी विशेषता रही है।

स्वच्छंदता ललित निबंध का एक वैशिष्ट्य है। स्वच्छंदता का अर्थ निबंध के संदर्भ में अनियंत्रित होना नहीं है वरन वह लेखक की निजता के मुक्त सन्निवेश से संबंधित है। मुक्ताभाव में हजारीप्रसाद द्विवेदी अपने विचारों को इस निबंध में स्थान देते हैं। आत्मीयता और आडंबरहीनता भी ललित निबंध की विशेष पहचान है। कुटज में लेखक कुटज के साथ अत्यंत आत्मीय हो जाते हैं। यहाँ तक कि यही अत्मीयता पाठक के साथ भी रहती है। इस निबंध में भी आडंबरता कहीं नज़र नहीं आती है। कुटज में द्विवेदी जी ने कथावस्तु एवं वर्णन का इस प्रकार ताना बाना बुनते हैं कि पाठक अपने आप को परकाय प्रवेश की स्थिति में पाता है क्योंकि लेखक ने भी लेखनी के दौरान परकाय प्रवेश शायद की होगी। अत: कुटज के साथ आत्मसात होने में न लेखक और न पाठक पीछे रहता है।

यह कुटज न केवल दुर्गम परिस्थितियों में जीता है बल्कि जीने की प्रेरणा भी देता है। कुटज के साथ मिलकर लेखक का व्यक्तिगत जीवन, उपदेश, जीवनादर्श प्रतिबिंबित होती है। कुटज द्वंद्वातीत है, अनादिकाल से जानता है, मैं भी कुटज को पहचानता हूँ, अवश्य पहचानता हूँ आदि से द्विवेदी जी के एकात्मता औउर भाव स्पष्ट होते हैं। इसलिए वे उसे दोस्त मानकर चिर परिचित दोस्त भी कहते हैं। इस प्रकार कुटज के जीवन संघर्ष के विभिन्न रूपों का चित्रण करते हुए द्विवेदी जी यह दिखाना चाहते हैं कि मैं का सबके लिए और सबकुछ दे देना अर्थात व्यष्टि की स्वार्थपरक चिंताओं को समष्टि चिंता और समष्टि हित में बदल देना ही जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। कुटज में सरसता, सहजता, प्रवाह सभी प्रकार के गुण विद्यमान हैं। यह निबंध अपने लघु आकार में एक महाकाव्य की गरिमा को समेटे जीवन को जीवनशक्ति प्रदान करना तथा निस्वार्थ होकर व्यक्ति का समाज के लिए नि:शेष हो जाना इसका उद्देश्य है।

बोध प्रश्न

- कुटज का निबंधकार ने मानवीकरण किया है। आपका क्या विचार है?

- कुटज जीवन की कला सिखाता है। लेखक के इन विचारों से क्या आप सहमत हैं? यदि हैं तो तर्क के साथ अपना विचार रखें।
- कुटज में समष्टि से व्यष्टि की यात्रा को दिखाया गया है। क्या यह वाक्य उचित है या नहीं? आपके उत्तर की पुष्टि कीजिए।

24.3.4 कुटज की भाषा एवं शैली

कुटज निबंध की भाषा अत्यंत सरल, सहज तथा प्रवाहशील है। उसमें लालित्य एवं काव्यमयता भी है। निबंध की शुरू की पंक्तियों को ही लीजिए- कहते हैं,पर्वत शोभा-निकेतन होते हैं। फि र हिमालय का तो कहना ही क्या! इस वाक्य में लेखक पर्वतों के बारे में तो बात कर रहे हैं और पहली ही पंक्ति में वे हिमालय पर्वत की महत्ता को सिद्ध कर देते हैं। कहना ही क्या! इस वाक्य से वे अपनी बात को एवं विचारों को पूरे बल के साथ रखते हैं। यह उनकी भाषिक विशेषता है। तत्सम, तद्भव, अंग्रेजी आदि शब्दों का प्रयोग अवश्यकतानुसार मिलता है। तत्सम शब्दों की बहुलता होने पर भी निबंध की भाषा बोझिल नहीं लगती। इसमें प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द हैं-पर्वत, शोभा-निकेतन, समुद्र, रत्नाकर, पृथ्वी, महोदधि, शृंखला, भयंकर, अंतर्निरुद्ध, रक्ताभ, द्वंद्वातीत, गिरिगौरव, गिरिकूट, स्मृति, शिक्षित, व्याकुल, विशेष, अरविन्द, नीलोत्पल, पौरुष-व्यंजक, शुभ्रकिरीटिनी, उत्पन्न, विचारोत्तेजक, अग्निकोण, दक्षिण-पूर्व, पण्डितों, कमल, कुण्डल, हिमाच्छादित, परमार्थ, शत्रुमर्दन आदि।

देशज शब्द : थाहना, लोटी हुई, लटियाई, जटाजूट, झाड़-झंखाड़, छाती फ़ाड़कर, छितराया, कचरा-निचोडा, झाँकता रहा, झबराया, बड़भागी, काहे वास्ते?, बिचारे, झुंझुलाये, खेती-बागवानी, छानबीन, लहराया, धधकती लू, बरबस, पथरीली, छाती चीरकर, चूसकर, रगडकर, चूमकर, झूमकर, धक्कामार, निचोड़कर, निछावर,

अरबी-फ़ारसी : मालगुजारी, इज़हार करना, बेहया, इलाका, काफी दूर, मस्तमौला, शानदार, अदा, हाजिर, मल्लिका, इज्जत, दरियादिल, नसीब, ज्यादा, दुनिया, बादशाह, खराब, गलतबयानी, शामिल, हैरानी, अफ सर, खुशामद

विदेशी : ह्वाट्स देर इन ए नेम, सोशल सेक्शन, आस्ट्रो-एशियाटिक,

इस निबंध वाक्य रचना विषय के अनुरूप है जिसमें कहीं छोटे-छोटे और कहीं बडे-बडे वाक्यों की रचना की गई है। अवश्यकतानुसार जिज्ञासा उत्पन्न करने के लिए प्रश्नवाचक वाक्यों की रचना की गई है। जैसे- रूप मुख्य है या नाम? नाम बड़ा है या रूप? पद पहले या पदार्थ? भाषा कहीं-कहीं विवरण के साथ, व्याख्यानपरक है तो कहीं व्याख्यात्मक, कहीं चित्रात्मक तो कहीं शास्त्रीय, जैसे-

'इन्हीं में से एक छोटा-सा बहुत ही ठिगना पेड है, पते चौडे भी हैं, बडे भी हैं। फ़ूलों से तो ऐसा लदा है कि कुछ पूछिए नहीं! अजीब सी अदा है, मुस्कुराता जान पड़ता है।

कुटज अर्थात जो कुट से पैदा हुआ हो। 'कुट' घडे को भी कहते हैं, घर को भी कहते हैं। कुट अर्थात घडे से उत्पन्न होने के कारण अगस्त्य मुनि भी कुटज कहे जाते हैं।

उपर्युक्त उदाहरणों में प्रथम में विवरण तो है साथ ही चित्रात्मकता है और चित्रात्मकता के साथ लेखक की आत्मीयता प्रकट हुई है। मानवीकरण तो है ही। दूसरे में शास्त्र-चर्चा है अत:

भाषा सपाट है किंतु बुद्धिमूलक। बुद्धि के द्वारा विषय के अर्थ को सुस्पष्ट करते समय वे संस्कृत, हिंदी और देशी-विदेशी विद्वानों के गद्य पद्य के मिले जुले उद्धरण भी प्रस्तुत करते हैं जिसके द्वारा विषय की प्रामाणिकता की पुष्टि तो होती है पर साथ ही भाषा भी समर्थ और बहुआयामी बन जाती है।

इसके विपरीत द्विवेदी जी जब विषय को आत्मीय दृष्टि प्रदान करते हैं तब भाषा में प्रवाह, लालित्य तथा काव्यात्मकता का सन्निवेश हो जाता है। एक उदाहरण प्रस्तुत है- "बहरहाल यह कुटज-कुटज है, मनोहर कुसुम-स्तबकों से झबराया, उल्लास लोल चारुस्मित कुटज। कालिदास ने आषाढस्य प्रथम दिवसे रामगिरि पर यक्ष को जब मेघ की अभ्यर्थना के लिए नियोजित किया तो कम्बख्त को ताजे कुटज पुष्पों की अंजलि देकर ही संतोष करना पडा-चंपक नहीं, बकुल नहीं, नीलोत्पल नहीं, अरविंद नहीं-फ कत कुटज के फूल।" इस उदाहरण में कितने ही बिंब बने हैं, चाक्षुष बिंब, दृश्य बिंब, मानस बिंब आदि। इसमें बुद्धि भी है, भावात्मकता भी और आत्मीयता भी।

इतना ही नहीं आवश्यकतानुसार पुनरुक्ति शब्द, मुहावरे, व्यंग्य आदि भी मिलते हैं। उदाहरण के लिए "अपनी उन्नति के लिए अफ सरों का जूता नहीं चाटता फिरता, दूसरों को अवमानित करने के लिए ग्रहों की खुशामद नहीं करता। आत्मोन्नति हेतु नीलम नहीं धारण करता, अंगूठियों की लड़ी नहीं पहनता, दाँत नहीं निपोरता, बगलें नहीं झाँकता। जीता है और शान से जीता है-काहे वास्ते, किस उद्देश्य से?'

पहचानता हूँ, उजाड़ के साथी, तुम्हें अच्छी तरह पहचानता हूँ, मनस्वी मित्र, तुम धन्य हो- इस वार्तालाप में कुटज का मानवीकरण हुआ है। वार्तालाप की सहजता और अपनापन कुटज की एक शैली है।

व्याख्यान शैली का एक नमूना : "जो समझता है कि वह दूसरों का उपकार कर रहा है वह अबोध है, जो समझता है कि दूसरे उसका उपकार कर रहे हैं, वह बुद्धिहीन है। कौन किसका अपकार कर रहा है? मनुष्य जी रहा है, केवल जी रहा है, अपनी इच्छा से नहीं, इतिहास विधाता की योजना के अनुसार। किसी को उससे सुख मिल जाए बहुत अच्छी बात है, नहीं मिल सका कोई बात नहीं, परंतु उसे अभिमान नहीं होना चाहिए। सुख पहुँचाने का अभिमान यदि गलत है तो दुख पहुँचाने का अभिमान तो नितांत गलत है।"

गप्पमूलक शैली (कथा कहने की शैली) का एक नमूना : याज्ञवल्क्य बहुत बड़े ब्रह्मवादी ऋषि थे। उन्होंने अपनी पत्नी को विचित्र भाव से समझाने की कोशिश की कि सब कुछ स्वार्थ के लिए है। पुत्र के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता, पत्नी के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती-सब अपने मतलब के लिए प्रिय होते हैं-आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति! विचित्र नहीं है यह तर्क? संसार में जहाँ कहीं प्रेम है सब मतलब के लिए।"

कुटज के पूरे निबंध में स्वगत चिंतन शैली व्याप्त है। नाम की विशेषता, रूप की बात, मानवता का संदेश, जीवन की कला आदि सभी के पीछे लेखक का स्वगत चिंतन ही है। पूरे निबंध में विचार, आत्माभिव्यंजना, भावाभिव्यंजना आदि सभी तत्वों का समावेश हुआ है और यह ललित निबंध का उत्कृष्ट उदाहरण है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी जी की भाषा में प्रवाहमयता की कमी है। क्या आप इस बात को स्वीकार करते हैं? आपके उत्तर की पुष्टि कीजिए।
- कुटज में प्रयुक्त किन्हीं पाँच देशज शब्द लिखिए।
- द्विवेदी जी की रचनाओं में तत्सम शब्दों की भरमार होने पर भी भाषा बोझिल नहीं लगती है। आपके अनुसार इसका क्या कारण हो सकता है?

24.5 पाठ सार

प्रिय छात्रो! आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार एवं पुरोधा हैं। 'कुटज' उनका प्रतिनिधि ललित निबंध है। इस निबंध में लेखक ने भारतीय संस्कृति, इतिहास, धर्म, शास्त्र आदि से संबंधित प्रसंगों की सहायता से 'कुटज' नामक वृक्ष के माध्यम से जीने की कला का मर्म समझाया है। यह रचना पाठक के मन में मानवीय मूल्यों के बीज बोने में सक्षम है। एक सामान्य से पहाड़ियों पर उगने वाले वृक्ष का मानवीकरण करते हुए द्विवेदी जी मानव को जीने की कला सिखाते हैं और इस वर्णन-विश्लेषण के लिए उन्होंने जिस भाषा-शैली का प्रयोग किया है, उसमें उन्हें अत्यंत सफलता मिली है। कुटज संघर्षों का सामना करते हुए न केवल अपने लिए, बल्कि समष्टि के हित के लिए जीने की प्रेरणा देता है।

24.6 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी में 'ललित निबंध' विधा के जनक हैं।
2. 'कुटज' हजारीप्रसाद द्विवेदी का एक प्रतिनिधि ललित निबंध है।
3. द्विवेदी जी की निबंध कला का विशेषता है कि वे सामान्य से सामान्य दिखने वाली वस्तु में भी जान भर देते हैं और उसके माध्यम से मानव को संदेश देते हैं। 'कुटज' भी वास्तव में इसी प्रकार का एक माध्यम है।
4. 'कुटज' के माध्यम से लेखक ने मानव को जीने की कला का मर्म सिखाया है।
5. कुटज के संघर्ष को दिखाते हुए लेखक मनुष्य को संघर्ष एवं कठिनाइयों का सामना करने के लिए प्रेरित करते हैं।
6. 'कुटज' निबंध की भाषा अत्यंत सरल, सहज तथा प्रवाहशील है। उसमें लालित्य एवं काव्यमयता भी है।

24.7 शब्द संपदा

1. अनुसंधान = शोध, खोज, रिसर्च
2. अपरिपक्व = अनुभव की कमी, दक्षता न होना
3. अवगुण्ठनरहित = छिपाना नहीं, बिना आवरण के
4. उद्भावना = कल्पना, मन की अद्भुत सूझ-बूझ

5. जिजीविषा = जीने की इच्छा
6. तत्संबंधी = किसी तथ्य या बात से संबंध रखने वाला, विषयक
7. बहुज्ञता = बहुत सारे विषयों की जानकारी होना
8. विवेचना = व्याख्या, विश्लेषण करना
9. व्यष्टि = एक मात्र मानव, वैयक्तिक, व्यक्तिगत
10. समष्टि = सामूहिकता, समवेत सत्ता, समाज में लोगों का एक साथ रहना

24.8 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'कुटज' निबंध का सारांश लिखिए।
2. ललित निबंध की कसौटी पर कुटज की व्याख्या कीजिए।
3. कुटज के माध्यम से निबंधकार व्यष्टि से समष्टि हित तथा मानव को जीवन की कला की अनुभूति करवाते हैं। निबंध के आधार पर इसका विश्लेषण कीजिए।
4. कुटज का जीवन संघर्षमय है। निबंधकार किस प्रकार से इस बात का बोध कराते हैं?

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. हिमालय और शिवालिक का वर्णन निबंधकार किस प्रकार करते हैं?
2. नाम और रूप के बारे में द्विवेदी जी के क्या विचार हैं?
3. कुटज की व्युत्पत्ति के संबंध में द्विवेदी जी क्या-क्या तर्क प्रस्तुत करते हैं?
4. कुटज के वर्णन में रहीम का प्रसंग क्यों आया है?
5. कुटज निबंध के अंत में निबंधकार क्या सिद्ध करने का प्रयास करते हैं?
6. कुटज को गाढे का साथी क्यों कहा गया है?
7. कुटज की भाषिक विशेषता पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. गाढे का साथी कहा गया है - ( )

अ) कुटज को आ) हिमालय को इ) शिवालिक को

2. कालिदास ने कुटज के पुष्पों को मेघ पर अर्पित किया। ( )

अ) सही कथन आ) गलत कथन इ) कोई नहीं

3. कुटज इस कोटि का निबंध है - ( )

अ) विचार प्रधान आ) विवेचनात्मक इ) ललित

4. कुटज इसे प्रदान करती है- ( )

अ) जीवन दृष्टि आ) जीने की कला इ) दोनों

5. इस मुनि को भी कुटज कहते हैं- ( )

अ) दुर्वासा मुनि आ) अगत्स्य मुनि इ) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. कुटज शिवालिक पहाड़ियों पर उगने वाला एक.......................... है।
2. वर्णनात्मक निबंधों में वस्तु का .... किया जाता है।
3. शिवालिक पहाडी शृंखला ....के निचले भाग में है।
4. द्वंद्वातीत शब्द का प्रयोग निबंधकार ने ....के लिए किया है।

III. सुमेल कीजिए -

1. जीवन का प्रतीक	(अ) याज्ञवल्क्य
2. कुटज का उपदेश	(आ) अगस्त्य मुनि
3. घडे से उत्पन्न	(इ) उल्लास खींच लो
4. ब्रह्मवादी	(ई) कुटज

24.9 पठनीय पुस्तकें

1. प्रतिनिधि हिंदी निबंधकार : हरिमोहन

2. हिंदी निबंध का इतिहास : मृत्युंजय उपाध्याय

3. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी - व्यक्तित्व और कृतित्व : सं. व्यासमणि त्रिपाठी

4. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र

5. साहित्य सहचर : हजारीप्रसाद द्विवेदी

6. कुटज : हजारीप्रसाद द्विवेदी

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: B.A – HINDI(Core)

IV – SEMESTER EXAMINATION - 2022

TITLE & PAPER CODE : हिंदी गद्य साहित्य (BAHN401CCT)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्न लिखित विकल्पों में से सही विकल्प चुनिए। **10X1=10**

i. भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म स्थान है। ( )

(A) काशी (**B**) जबलपुर (C) जयपुर (D) पटना

ii. 'मैला आँचल' किस प्रकार का उपन्यास है? ( )

(अ) कथावस्तु प्रधान (आ) परिवेश प्रधान

(इ) इतिहास प्रधान (ई) चरित्र प्रधान

iii. इनमें से एक जैनेंद्र का उपन्यास नहीं है? ( )

(अ) सुनीता (आ) त्यागपत्र (इ) परख (ई) चित्रलेखा

iv.मृणाल की सहेली का नाम है – ( )

(अ) प्रियदर्शिनी (आ) शीला (इ) राजनंदिनी (ई) मीना

v. निबंध किस काल की रचना है? ( )

(अ) मध्य काल (आ) आधुनिक काल (इ) रीति काल (ई) आदिकाल

vi.प्रसाद जी का परिवार किस वस्तु का व्यापार करता था? ( )

(अ) सुँघनी (आ) सिगरेट (इ) पान (ई) इनमें से कोई नहीं

vii. 'टोकरी भर मिट्टी' कहानी के रचनाकार कौन हैं? ( )

(अ) चंद्रधर शर्मा गुलेरी (आ) माधव सप्रे (इ) कमलेश्वर (ई) इनमें से कोई नहीं

viii. 'परदा' कहानी के लेखक हैं? ( )

(अ) प्रेमचंद (आ) जयप्रकाश कर्दम (इ) यशपाल (ई) असग़र वजाहत

ix. हिमाद्रि तुंग शृंग से' यह गीत किस नाटक का अंग है? ( )

(अ) स्कन्दगुप्त (आ) जनमेजय का नागयज्ञ (इ) चंद्रगुप्त (ई) ध्रुवस्वामिनी

x. कालिदास ने कुटज के पुष्पों को मेघ पर अर्पित किया। ( )

अ) सही कथन आ) गलत कथन इ) दोनों ही ई) कोई नहीं

भाग – 2

निम्न लिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना अनिवार्य है। **5X6 =30**

2. भारतेंदु युग के गद्य लेखकों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
3. स्वातंत्र्योत्तर युग के प्रमुख गद्य-लेखकों पर प्रकाश डालिए।
4. मृणाल के जीवन से क्या संदेश मिलता है?
5. प्रेमचंद युग के कहानीकारों का परिचय दीजिए।
6. 'नमक का दरोगा' कहानी का मुख्य पात्र का परिचय देते हुए चरित्र चित्रण कीजिए।
7. 'कहानी' के विविध पर्यायों की चर्चा करते हुए इस नाम की सटीकता सिद्ध कीजिए।
8. यशपाल के कहानियों की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।
9. 'आकाशदीप' कहानी के संवाद योजना पर प्रकाश डालियें।

भाग- 3

निम्न लिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। **3X10=30**

10. 'त्यागपत्र' उपन्यास के नारी पात्र मृणाल का चरित्र चित्रण कीजिए।
11. मिथकीय और ऐतिहासिक उपन्यासों से क्या अभिप्राय है?
12. कहानी के तत्वों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
13. नई कहानी आंदोलन को विश्लेषित कीजिए।
14. रामचंद्र शुक्ल के निबंध की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।

****